ॐ

जैनागम थोक संग्रह

अनुवादक—

प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमल-
जी महाराज के सुशिष्य युवाचार्य
पण्डित श्री छगनलालजी
महाराज

प्रकाशक—

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम

श्री जैनोदय प्रिं० प्रेस, रतलाम.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ॐ

जैनागम थोक संग्रह

अनुवादक–

प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमल-
जी महाराज के सुशिष्य युवाचार्य
पण्डित श्री छगनलालजी
महाराज

प्रकाशक–

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम.

प्रथमावृत्ति १०००	मूल्य सवा रुपया	वीराब्द २४६० विक्रम सं. १९९१

श्री जैनोदय प्रिं० प्रेस, रतलाम.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकः—

मास्टर मीश्रीमल

मंत्रीः—श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,

रतलाम.

मुद्रक—

मैनेजर—श्री जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस, रतलाम.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निवेदन

जैन साहित्य विशाल है। महान् हित साधक है। संसार की दावाग्नि से संतप्त जीवों को शान्ति पहुँचाने वाला है।

परन्तु वह अधिकांश प्राकृत (अर्धमागधी) और संस्कृत में है। जैन साहित्य में प्रवेश करने के वास्ते थोकड़ों का ज्ञान अनिवार्य्य आवश्यक है।

गुजराती साहित्य के सुपरिचित लेखक धीरज भाई ने परिश्रम पूर्वक थोकड़ों का संग्रह किया है। उनका और प्रकाशक महोदय का प्रयत्न स्तुत्य है।

युवाचार्य्य पं० मुनिश्री छगनलालजी म० ने उसका हिन्दी अनुवाद करना उपयोगी समझा। एतदर्थ हमने प्रकाशक महोदय से अनुमति माँगी। उन्होंने सहर्ष अनुमति दी। उनका आभार प्रदर्शन करते हुए आज हम हिन्दी पाठकों के लाभार्थ यह स्तोक-संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं। यदि इस से मुमुक्षों भव्य महानुभावों को कुछ लाभ पहुँचा तो हम अपने परिश्रम को सार्थक समझेंगे।

खलचीपुरा निवासी श्रीमान् मगनमलजी सा० कुदृदाल ने इस के संशोधन का परिश्रम उठाया इसलिये उनका आभार मानता हूँ।

मंत्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति. रतलाम.

के

जन्म दाता

श्रीमान् प्रसिद्धवक्ता पंडित मुनि श्री चौथमलजी महाराज

सदस्य गण

स्तम्भ

श्रीमान्	दानवीर रा. बा. सेठ कुंदनमलजी लालचन्दजी	ब्यावर
,,	,, सरूपचंदजी भागचंदजी	कलमसरा
,,	,, पुनमचंदजी चुन्नीलालजी	न्यायडोंगरी
,,	,, बहादरमलजी सूरजमलजी	यादगिरी
,,	,, नेमीचंदजी सरदारमलजी	नागपुर
,,	,, तखतमलजी सौभागमलजी	जावरा

संरक्षक

,,	सेठ प्रेमलजी लालचंदजी	गुलेदगढ़
,,	,, लाला रतनलालजी	आगरा
,,	,, छोटमलजी	उज्जैन
श्रीमती	पिस्ताबाई, लोहामन्डी	आगरा
,,	राजीबाई, बरोरा	सी० पी०
,,	अनारबाई, लोहामन्डी.	आगरा
,,	चन्द्रपतिबाई	सब्जीमंडी. देहली
श्रीमान्	सेठ छोटेलालजी जेठमलजी	कनेरा (मेवाड़)
,,	,, वकील रतनलालजी	उदयपुर
,,	,, कालूरामजी सा० कोठारी	ब्यावर
,,	,, कुंदनमलजी सरूपचंदजी	ब्यावर
,,	,, देवराजजी सुराना	ब्यावर

श्री महावीर जैन नवयुवक मंडल, चितौड़गढ़ (मेवाड़)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहायक

श्रीमान् चम्पालालजी अलीजार,	ब्यावर
,, जुहारमलजी हेमाजी सादड़ी वाले	पूना
,, मोहनलालजी सा० वकील	उदयपुर

मेम्बर

,, नाथूलालजी छगनलालजी	मल्हारगढ़
,, रूपचंदजी श्रीमाल	इन्दौर
,, हजारीमलजी नागूलालजी	बालोदा
,, मन्नालालजी चांदमलजी	ताल
,, चम्पालालजी छगनलालजी	मन्दसौर
,, खेमचंदजी जड़ावचंदजी	मन्दसौर
,, हुकमीचंदजी शिवलालजी	मन्दसौर
,, पूरखचंदजी हस्तीमलजी	छुईखदान
,, बन्डूलालजी हरकचंदजी	नसीराबाद
,, सजनराजजी साहब	ब्यावर
,, चंदनमलजी मिश्रीमलजी	ब्यावर
,, मिश्रीमलजी बाबेल	ब्यावर
,, खींवेसरा रिखबदासजी	ब्यावर
,, हरदेवमलजी सुवालालजी	ब्यावर
,, दौलतरामजी सा०	भोपाल
श्री संघ, नाई	(मेवाड़)
,, छगनलालजी सा०	उदयपुर
,, छगनमलजी बस्तीमलजी	ब्यावर
,, रिखबदासजी बालचंदजी	बम्बई
,, चुन्नीलालजी भाईचंदजी	बम्बई
,, रसिकलालजी हीरालालजी	बम्बई
,, सेंसमलजी जीवराजजी	औरंगाबाद
,, पनजी दौलतरामजी	अहमदनगर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रमणिका

नं०	विषय	पृष्ठ
१	नव तत्त्व संग्रह	१
२	पच्चीस क्रिया	२३
३	छः काय के बोल	३०
४	पच्चीस बोल	६५
५	सिद्ध द्वार	७७
६	चौवीस दण्डक	८३
७	आठ कर्म की प्रकृति	१२५
८	गतागति द्वार	१४१
९	छः आरों का वर्णन	१५५
१०	दश द्वार के जीव स्थानक	१७२
११	श्री गुण स्थान द्वार	१९३
१२	तेंतीस बोल	२२२
१३	नंदी सूत्र में ५ ज्ञान का विवेचन	२५०
१४	तेंतीस पदवी	२८१
१५	पांच शरीर	२९३
१६	पांच इन्द्रिय	३०१
१७	रूपी अरूपी का बोल	३०७
१८	बड़ा बांसठिया	३१०
१९	बावन बोल	३३५
२०	श्रोता अधिकार	३५१
२१	९८ बोल का अल्प बहुत्व	३६१
२२	पुद्गल परावर्त	३७०
२३	जीवों की मार्गणा का ५६३ प्रश्न	३८१
२४	चार कषाय	४१५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५ श्वासोश्वास	४१७
२६ अस्वाध्याय	४१६
२७ बत्तीस सूत्रों के नाम	४२१
२८ अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार	४२२
२९ गर्भ विचार	४२८
३० नक्षत्र और विदेश गमन	४४८
३१ पांच देव	४५५
३२ आराधिक विराधिक	४६०
३३ तीन जाग्रिका (जागरण)	४६२
३४ छः काय के भव	४६७
३५ अवधि पद	४६८
३६ धर्म ध्यान	४७१
३७ छः लेश्या	४८२
३८ योनि पद	४८९
३९ आठ आत्मा का विचार	४९१
४० व्यवहार समकित के ६७ बोल	४९५
४१ काय-स्थिती	५०१
४२ योगों का अल्प बहुत्व	५१०
४३ पुद्गलों का अल्प बहुत्व	५१२
४४ आकाश श्रेणी	५१६
४५ बल का अल्प बहुत्व	५१८
४६ समकित के ११ द्वार	५२१
४७ खण्डाजोयणा	५२३
४८ धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण	५३९
४९ मार्गानुसारी के ३५ गुण	५४१
५० श्रावक के २१ गुण	५४३
५१ जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल	५४४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२ तीर्थंकर गोत्र नाम बांधने के २० कारण	५४६
५३ परम कल्याण के ४० बोल	५४८
५४ तीर्थंकर के ३४ अतिशय	५५२
५५ ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा	५५४
५६ देवोत्पत्ति के १४ बोल	५५७
५७ षट् द्रव्य पर ३१ द्वार	५५८
५८ चार ध्यान	५६८
५९ आराधना पद	५७१
६० बिरह पद	५७३
६१ संज्ञा पद	५७५
६२ वेदना पद	५७८
६३ समुद्घात पद	५८१
६४ उपयोग पद	५८९
६५ उपयोग अधिकार	५९०
६६ नियंठा	५९२
६७ संजया (संयति)	६०५
६८ अष्ट प्रवचन (५ समिति ३ गुप्ति)	६१६
६९ ५२ अनाचार	६२०
७० आहार के १०६ दोष	६२४
७१ साधु समाचारी	६३४
७२ अहोरात्रि की घड़ियों का यन्त्र	६३७
७३ दिन पहर माप का यन्त्र	६३८
७४ रात्रि पहर देखने (जानने) की विधि	६४०
७५ १४ पूर्व का यन्त्र	६४२
७६ सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल	६४३
७७ १४ राज लोक	६४६
७८ नारकी का नरक वर्णन	६४९
७९ भवनपति विस्तार	६५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८० वाण व्यन्तर विस्तार ६६०
८१ ज्योतिषी देव विस्तार ६६४
८२ वैमानिक देव ६७१
८३ संख्यादि २१ बोल अर्थात् डालापाला ६७८
८४ प्रमाण नय ६८२
८५ भाषा पद ६९६
८६ आयुष्य के १८०० भांगा ७०३
८७ सोपक्रम-निरुपक्रम ७०५
८८ ह्रियमण--वड्डमाण ७०७
८९ सावचया सोवचया ७०८
९० कत संचय ७०९
९१ द्रव्य (जीवाजीव) ७११
९२ संस्थान द्वार ७१३
९३ संस्थान के भांगे ७१५
९४ खेताणु--वाई ७१६
९५ अवगाहन का अल्प बहुत्व ७२१
९६ चरम पद ७२३
९७ चरमा-चरम ७२७
९८ जीव परिणाम पद ७२९
९९ अजीव परिणाम ७३२
१०० बारह प्रकार का तप ७३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ ॐ ❀

थोकड़ा संग्रह

(१) श्री नव तत्त्व

विवेकी [1]समदृष्टि जीवों को नव [2]तत्त्व जानना आवश्यक है ।

नव तत्त्वों के नाम ।

१ जीव[3] तत्त्व, २ अजीव[4] तत्त्व, ३ पुन्य[5] तत्त्व, ४ पाप[6]

---

१ जीवादि नव तत्त्वों की शंसय रहित एवं शुद्ध मान्यता वाले तथा अनध्यसाय निर्णय बुद्धि वाले को समदृष्टि कहते हैं ।

२ तत्त्व-सार पदार्थ को तत्त्व कहते हैं जैसे दूध में सार पदार्थ मलाई है । आत्मा का स्वभाव जानपना है परन्तु मोक्ष जाने में जीवादि नव पदार्थ का यथार्थ जान पना होना सो तत्त्व है ।

३ जिस वस्तु में जानने देखने की शक्ति होवे वह जीव है । यह अरूपी (आकार रहित) है और सदा काल जीवता है ।

४ जो वस्तु ज्ञान रहित है वह अजीव है, अजीव रूपी (आकार वाला) तथा अरूपी दोनों प्रकार का है ।

५ जो आत्मा को (जीव को) पवित्र बनाता है, ऊंची स्थिति पर लाता है सुख की सामग्री मिलाता है वह पुण्य है ।

६ जो जीव को अपवित्र बनाता है, नीची स्थिति में डालता है । दुःख की (प्रतिकूल) सामग्री मिलाता है वह पाप है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्त्व, ५ आश्रव[७] तत्त्व, ६ संवर[८] तत्त्व, ७ निर्जरा[९] तत्त्व, ८ बंध[१०] तत्त्व, ९ मोक्ष[११] तत्त्व ।

प्रथम जीव तत्त्व के लक्षण तथा भेद ।

जीव तत्त्व-जो चैतन्य लक्षण, सदा, स-उपयोगी असंख्यात प्रदेशी, सुख दुःख का बोधक, सुख दुःख का वेदक एवं अरूपी हो उसे जीव तत्त्व कहते है। जीव का एक भेद है कारण, सब जीवों का चैतन्य लक्षण एक ही प्रकार का है इस लिये संग्रह नय से जीव एक प्रकार का होता है।

जीव के दो भेद-१ त्रस, २ स्थावर, अथवा १ सिद्ध, २ संसारी।

जीव के तीन भेद-१ स्त्री वेद, २ पुरुष वेद, ३नपुंसक वेद, अथवा १ भव्य सिद्धिया, २ अभव्य सिद्धिया ३ नोभव्य सिद्धिया नोअभव्य सिद्धिया ।

---

७ जीव के साथ कर्मों का संयोग होना-जड़ (अजीव) वस्तु का मेल होना आश्रव है।

८ जीव के साथ कर्मों का संयोग रूक जाना, जड़ से मेल नहीं होना संवर है।

९ जीव के साथ अनादि काल से जड़ पदार्थ (कर्म) मिला हुवा है उस जड़ पदार्थ-कर्म-का थोड़ा २ दूर होना निर्जरा है।

१० जीव के साथ जड़ वस्तु-कर्म-का संयोग होने के बाद दोनों का (लोह अग्नि वत्) एक मेक हो जाना बन्ध है।

११ जीव का कर्मों से अलग होजाना-पूरा२ छुटकारा होना मोक्ष है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव के चार भेद—१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ मनुष्य, ४ देव, अथवा १ चक्षु दर्शनी, २ अचक्षु दर्शनी, ३ अवधि दर्शनी, ४ केवल दर्शनी।

जीव के पांच भेद—१ एकेन्द्रिय, २ बेन्द्रिय, ३ तेन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५ पंचेन्द्रिय, अथवा १ संयोगी, २ मन योगी, ३ वचन योगी, ४ काय योगी, ५ अयोगी।

जीव के छः भेद—१ पृथ्वी काय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ त्रस काय, अथवा १ सकषायी, २ क्रोध कषायी, ३ मान कषायी, ४ माया कषायी, ५ लोभ कषायी, ६ अकषायी।

जीव के सात भेद—१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ तिर्यञ्चाणी, ४ मनुष्य, ५ मनुष्याणी ६ देव, ७ देवांगना।

जीव के आठ भेद—१ सलेश्यी, २ कृष्ण लेश्यी, ३ नील लेश्यी, ४ कापोत लेश्यी, ५ तेजो लेश्यी, ६ पद्म लेश्यी, ७ शुक्ल लेश्यी, ८ अलेश्यी।

जीव के नव भेद—१ पृथ्वी काय, २ अप काय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ बेन्द्रिय, ७ तेन्द्रिय, ८ चौरिन्द्रिय, ९ पञ्चेन्द्रिय।

जीव के दश भेद—१ एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रिय, ३ त्री-इन्द्रिय, ४ चौइन्द्रिय, ५ पञ्चेन्द्रिय, इन पाँचों के अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये दश।

जीव के इग्यारे भेद—१ एकेन्द्रिय, २ बेन्द्रिय,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ त्री-इन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५ नारकी, ६ तिर्यञ्च, ७ मनुष्य, ८ भवनपति, ९ वाणव्यन्तर १० ज्योतिषी, ११ वैमानिक ।

जीव के बारह भेद–१ पृथ्वी काय, २ अप काय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ त्रस काय, इन छः का अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये १२ ।

जीव के तेरह भेद–१ कृष्ण लेश्यी, २ नील लेश्यी, ३ कापोत लेश्यी, ४ तेजो लेश्यी, ५ पद्म लेश्यी, ६ शुक्ल लेश्यी, इन छः का अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये बारह और १ अलेश्यी एवं १३ ।

जीव के चौदह भेद-१ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त, २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता, ३ बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता, ४ बादर एकेन्द्रिय का पर्याप्ता, ५ बेइन्द्रिय का अपर्याप्ता, ६ बेइन्द्रिय का पर्याप्ता, ७ त्री-इन्द्रिय का अपर्याप्ता, ८ त्री-इन्द्रिय का पर्याप्ता, ९ चौरिन्द्रिय का अपर्याप्ता, १० चौरिन्द्रिय का पर्याप्ता, ११ असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का अपर्याप्ता, १२ असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्ता, १३ संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का अपर्याप्ता, १४ संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्ता ।

विस्तार नय से जीव के ५६३ भेदः–

१ नारकी के चौदह भेद, २ तिर्यञ्च के अड़तालीस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ मनुष्य के तीन सो तीन, और ४ देवता के एकसो अठाणु ।

नारकी के भेदः-१ घम्मा, २ वंसा ३ सीला, ४ अंजना ५ रिष्टा, ६ मघा, और ७ माघवती, इन सातों नरकों में रहने वाले (नेरियों) जीवों के अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं १४ भेद ।

तिर्यञ्च के ४८ भेदः- १ पृथ्वी काय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ये चार सूक्ष्म और चार बादर (स्थूल) एवं ८ इन आठ के अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १६ ।

वनस्पति के छः भेदः-१ सूक्ष्म, २ प्रत्येक, और ३ साधारण इन तीन के अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये ६ मिल कर २२ भेद, १ बेइन्द्रिय, २ त्री-इन्द्रिय ३ चौरिन्द्रिय इन ३ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये छः मिलकर २८ ।

तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय के २० भेदः-१ जलचर, २ स्थलचर, ३ उरपर, ४ भुजपर, ५ खेचर। ये पाँच गर्भज और पाँच संमूर्छिम एवं १० इन १० के अपर्याप्ता और पर्याप्ता। ये २० मिल कर तिर्यञ्च के कुल (१६+६+६+२०) ४८ भेद हुवे ।

मनुष्य के ३०३ भेदः-१५ कर्मभूमि के मनुष्य, ३० अकर्म भूमि के और ५६ अंतर द्वीप के एवं १०१ चेत्र के गर्भज मनुष्य का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं २०२ और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०१ क्षेत्र के संमूर्छिम मनुष्य (चौदह स्थानोत्पन्न) का अपर्याप्ता । इस प्रकार मनुष्य के ३०३ भेद हुवे ।

देवता के भेदः-१० असुर कुमारादिक और १५ परमाधर्मी एवं २५ भेद भवनपति के, १६ प्रकार के पिशाचादि देव व १० प्रकार के जृंभिका एवं २६ भेद वाणव्यन्तर के, ज्योतिषी देव के १० भेद-५ चर ज्योतिषी और ५ अचर (स्थिर)ज्योतिषी। तीन किल्विषी १२ देव लोक, ६ लोकान्तिक, ६ ग्रैवेयक (ग्रीवेक) ५ अनुत्तर विमान । इन ६६ (१०+१५+१६+१०+१०+३+१२+६+६+५) जाति के देवों का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं देवता के १६८ भेद जानना ।

एवं सब मिलाकर ५६३ भेद जीव तत्त्व के जानना इन जीव को जानकर इनकी दया पालनी चाहिये जिससे इस भव में व पर भव में परम सुख की प्राप्ति हो ॥

॥ इति श्री जीव तत्त्व ॥

(२) अजीव तत्त्व के लक्षण तथा भेद ।

अजीव तत्त्वः-जो जड़ लक्षण, चैतन्य रहित, वर्णादिक रुप सहित तथा रहित, सुख दुःख को नहीं वेदने वाला हो उसे अजीव तत्त्व कहते हैं ।

अजीव के १४ भेद-१ धर्मास्तिकाय का स्कंध,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ उसका देश, ३ तथा उसका प्रदेश, ४ अधर्मास्तिकाय का स्कंध, ५ देश तथा ६ प्रदेश, ७ आकास्ति काय का स्कंध, ८ देश तथा ९ प्रदेश, १० काल ये १० भेद अरुपी अजीव के, १ पुद्गलास्ति काय का स्कंध, २ देश तथा ३ प्रदेश—तीन तो ये और चौथा परमाणु पुद्गल एवं चार भेद रुपी अजीव के मिला कर अजीव के १४ भेद हुये।

विस्तार नय से अजीव के ५६० भेद—

३० भेद अरुपी अजीव के—१ धर्मास्ति काय, द्रव्य से एक, २ क्षेत्र से लोक प्रमाण, ३ काल से आदि अंत रहित, ४ भाव से अरुपी, ५ गुण से चलन सहाय। ६ अधर्मास्ति काय द्रव्य से एक, ७ क्षेत्र से लोक प्रमाण, ८ काल से आदि अंत रहित ९ भाव से अरुपी, १० गुण से स्थिर सहाय, ११ आकास्ति काय द्रव्य से एक, १२ क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण, १३ काल से आदि अंत रहित, १४ भाव से अरुपी, १५ गुण से अवगाहनादान तथा विकाश लक्षण, १६ काल द्रव्य से अनंत, १७ क्षेत्र से अढ़ी द्वीप प्रमाण, १८ काल से आदि अंत रहित, १९ भाव से अरुपी, २० गुण से वर्तना लक्षण, ये २० और १० भेद ऊपर कहे हुवे इस प्रकार कुल ३० भेद अरुपी अजीव के हुवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपी अजीव के ५३० भेद–५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ५ संस्थान, ८ स्पर्श, इन २५ में से जिसमें जितने बोल पाये जाते हैं वे सब मिला कर कुल ५३० भेद होते हैं।

विस्तार ५ वर्ण–१ काला, २ नीला, ३ लाल, ४ पीला, ५ सफेद, इन पांचों वर्णों में २ गन्ध, ५ रस, ५ संस्थान, और ८ स्पर्श, ये २० बोल पाये जाते हैं इस प्रकार ५×२०=१०० बोल वर्णाश्रित हुवे।

२ गन्ध–१ सुरभि गंध २ दुरभि गंध इन दोनों में ५ वर्ण, ५ रस, ५ संस्थान और ८ स्पर्श ये २३ बोल पाये जाते हैं इस प्रकार २×२३=४६ बोल गंध आश्रित हुवे।

५ रस–१ मिष्ट, २ कटुक, ३ तीक्ष्ण, ४ खट्टा, ५ कषायित इन ५ रसों में ५ वर्ण, २ गंध, ८ स्पर्श, और ५ संस्थान ये २० बोल पाये जाते हैं इस तरह ५×२०=१०० बोल रसाश्रित हुवे।

५ संस्थान–१ परिमंडल संस्थान–चुड़ी के आकारवत्, २ वर्तुल संस्थान–लड्डू समान, ३ त्रंश संस्थान–सिंघाड़े समान, ४ चतुरंस्त्र संस्थान–चौकी समान, ५ आयत संस्थान–लम्बी लड़की समान, इन संस्थानों में ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श ये २० बोल पाये जाते हैं इस तरह ५×२०=१०० बोल संस्थान आश्रित हुवे।

८ स्पर्श—१ कर्कश, (कठोर) २ कोमल, ३ गुरु, ४ लघु, ५ शीत, ६ उष्ण, ७ स्निग्ध, ८ रुक्ष, एक–एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्श में ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ६ स्पर्श और ५ संस्थान इस प्रकार २३-२३ बोल पाये जाते हैं। अर्थात् आठ स्पर्श में से दो स्पर्श कम कहना कर्कश का पूछा होवे तो कर्कश और कोमल, ये दो छोड़ना। इसी प्रकार लघु का पूछा होवे तो लघु व गुरु छोड़ना, शीत का पूछा होवे तो शीत व उष्ण छोड़ना, स्निग्ध का पूछा होवे तो स्निग्ध व रुक्ष छोड़ना, ऐसे हरेक स्पर्श का समझ लेना। एक-एक स्पर्श के २३-२३ के हिसाब से २३×८=१८४ बोल स्पर्श आश्रित हुवे।

१०० वर्ण के, ४६ गन्ध के १०० रसके, १०० संस्थान के और १८४ स्पर्श के इस प्रकार सब मिलाकर ५३० भेद रुपी अजीव के हुवे। इनमें अरुपी अजीव के ३० भेद मिलाने से कुल ५६० भेद अजीव के जानना। इस प्रकार अजीव के स्वरूप को समझ कर इन पर से जो मोह उतारेगा वो इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पावेगा।

॥ इति अजीव तत्त्व ॥

(३) पुन्य तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

पुन्य तत्त्व—जो शुभ करणी के व शुभ कर्म के उदय से शुभ उज्वल पुद्गल का बन्ध पड़े व जिसके फल भोगते समय आत्मा को मीठे लगे उसे पुन्य तत्त्व कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके नव भेद्–१ अन्न पुन्य २ पानी पुन्य ३ लयन पुन्य(मकानादि)४ शयन पुन्य(पाटलादि)५ वस्त्र पुन्य ६ मनः पुन्य ७ वचन पुन्य ८ काय पुन्य ९ नमस्कार पुन्य । इन नव प्रकार से जो पुन्य उपार्जन करता है वह ४२ प्रकार से शुभ फल भोगता है ।

४२ प्रकार के शुभ फलः–१ शाता वेदनी २ तिर्यंच आयुष्य युगल में ३ मनुष्यायुष्य ४ देव आयुष्य ५ मनुष्य गति ६ देव गति ७ पंचेन्द्रिय की जाति ८ औदारिक शरीर ९ वैक्रिय शरीर १० आहारिक शरीर ११ तेजस शरीर १२ कार्मण शरीर १३ औदारिक अङ्गोपाङ्ग १४ वैक्रिय अङ्गोपाङ्ग १५ आहारिक अङ्गोपाङ्ग १६ वज्र ऋषभ नाराच संघयन १७ समचतुरस्र संस्थान १८ शुभ वर्ण १९ शुभ गन्ध २० शुभ रस २१ शुभ स्पर्श २२ मनुष्यानुपूर्वि २३ देवानुपूर्वि २४ अगुरु लघु नाम २५ पराघात नाम २६ उश्वास नाम २७ आताप नाम २८ उद्योत नाम २९ शुभ चलने की गति ३० निर्माण नाम ३१ तीर्थंकर नाम ३२ त्रस नाम ३३ बादर नाम ३४ पर्याप्त नाम ३५ प्रत्येक नाम ३६ स्थिर नाम ३७ शुभ नाम ३८ सौभाग्य नाम ३९ सुस्वर नाम ४० आदेय नाम ४१ यशो कीर्ति नाम ४२ ऊंच गोत्र ।

पुन्य के इन भेदों को जान कर जो पुन्य आदरेंगे उन्हें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस भव में व पर भव में निराबाध सुखों की प्राप्ति होवेगी।

॥ इति पुन्य तत्त्व ॥

(४) पाप तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

पाप तत्त्वः-जो अशुभ करणी से, अशुभ कर्म के उदय से, अशुभ, मैला पुद्गल का बंध पड़े व जिसके फल भोगते समय आत्मा को कड़वे लगे उसे पाप तत्त्व कहते हैं।

पाप के १८ भेदः-१ प्राणातिपात २ मृषावाद ३ अदत्तादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ क्लेश १३ अभ्याख्यान १४ पैशुन्य १५ परपरिवाद १६ रति अरति १७ माया मृषा १८ मिथ्या दर्शन शल्य इन १८ भेद प्रकार से जीव पाप उपार्जन करता है वह ८२ प्रकार से भोगता है।

८२ प्रकार से भोगे जाते हैं-१ मति ज्ञानावरणीय २ श्रुत ज्ञानावरणीय ३ अवधि ज्ञानावरणीय ४ मनःपर्यव ज्ञानावरणीय ५ केवल ज्ञानावरणीय ६ निद्रा ७ निद्रानिद्रा ८ प्रचला ९ प्रचला प्रचला १० थिणाद्धि निद्रा ११ चक्षु दर्शनावरणीय १२ अचक्षु दर्शनावरणीय १३ अवधि दर्शनावरणीय १४ केवल दर्शनावरणीय १५ अशाता वेदनीय १६ मिथ्यात्व मोहनीय १७ अनंतानु-

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

बंधी क्रोध १८ मान १९ माया २० लोभ २१ अप्रत्याख्यानी क्रोध २२ अप्रत्याख्यानी मान २३ अप्रत्या० माया २४ अप्रत्या० लोभ २५ प्रत्याख्यानी क्रोध २६ प्रत्या० मान २७ प्रत्या० माया २८ प्रत्या० लोभ २९ संज्वल का क्रोध ३० संज्वल का मान ३१ संज्वल का माया ३२ संज्वल का लोभ ३३ हास्य ३४ रति ३५ अरति ३६ भय ३७ शोक ३८ दुर्गंच्छा ३९ स्त्री वेद ४० पुरुष वेद ४१ नपुंसक वेद ४२ नरक आयुष्य ४३ नरक गति ४४ तिर्यंच गति ४५ एकेन्द्रिय पना ४६ बेइन्द्रिय पना ४७ त्रीइन्द्रिय पना ४८ चौरिन्द्रिय पना ४९ ऋषभ नाराच संघयन ५० नाराच संघयन ५१ अर्ध नाराच संघयन ५२ कीलिका संघयन ५३ सेवार्त संघयन ५४ न्यग्रोध परिमंडल संस्थान ५५ सादिक संस्थान ५६ वामन संस्थान ५७ कुब्ज संस्थान ५८ हुण्डक संस्थान ५९ अशुभ वर्ण ६० अशुभ गन्ध ६१ अशुभ रस ६२ अशुभ स्पर्श ६३ नरकानुपूर्वी ६४ तिर्यंचानुपूर्वी ६५ अशुभ गति ६६ उपघात नाम ६७ स्थावर नाम ६८ सूक्ष्म नाम ६९ अपर्याप्त पना ७० साधारण पना ७१ अस्थिर नाम ७२ अशुभ नाम ७३ दुर्भाग्य नाम ७४ दुःस्वर नाम ७५ अनादेय नाम ७६ अयशो कीर्ति नाम ७७ नीच गोत्र ७८ दानान्तराय ७९ लाभान्तराय ८० भोगान्तराय ८१ उपभोगान्तराय ८२ वीर्यान्तराय एवं ८२ प्रकार से पाप के फल भोगे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाते हैं। ये पाप जान कर जो पाप के कारण को छोड़ेंगे वे इस भव में तथा पर भव में निराबाध परम सुख पावेंगे।

॥ इति पाप तत्त्व ॥

(५) आश्रव तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

आश्रव तत्त्व—जीव रूपी तालाब के अन्दर अव्रत तथा अप्रत्याख्यान द्वारा, विषय कषाय का सेवन करने से इन्द्रियादिक नालों के अन्दर से जो कर्म रूपी जल का प्रवाह आता है उसे आश्रव कहते हैं।

यह आश्रव जघन्य २० प्रकार से और उत्कृष्ट ४२ प्रकार से होता है।

जघन्य २० प्रकार—१ श्रोतेन्द्रिय असंवर २ चक्षु इन्द्रिय असंवर ३ घ्राणेन्द्रिय असंवर ४ रसेन्द्रिय असंवर ५ स्पर्शेन्द्रिय असंवर ६ मन असंवर ७ वचन असंवर ८ काय असंवर ९ वस्त्र वर्तनादि भण्डोपकरण अयत्ना से लेवे तथा रक्खे १० सुची कुशाग्र मात्र भी अयत्ना से काम में लेवे ११ प्राणातिपात १२ मृषावाद १३ अदत्तादान १४ मैथुन १५ परिग्रह १६ मिथ्यात्व १७ अव्रत १८ प्रमाद १९ कषाय २० अशुभ योग।

विशेष रीति से आश्रव के ४२ भेद.

५ आश्रव, ५ इन्द्रिय विषय, ४ कषाय ३ अशुभ योग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५क्रिया, ये४२ भेद आश्रव के जान कर जो इन्हें छोड़ेगा वह इस भव में तथा पर भव में निरा बोध परम सुख पावेगा।

॥ इति आश्रव तत्त्व ॥

(६) संवर तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

संवर तत्त्व-जीव रूपी तालाब के अन्दर इन्द्रियादिक नालों व छिद्रों के द्वारा आने वाले कर्म रूपी जल के प्रवाह को व्रत प्रत्याख्यानादि द्वारा जो रोकता है उसे संवर तत्त्व कहते हैं संवर के सामान्य से २० भेद व विशेष ५७ भेद है।

सामान्य २० भेदः-१ श्रुतेन्द्रिय निग्रह (संवरे) २ चक्षु इन्द्रिय निग्रह ३ घ्राणेन्द्रिय निग्रह ४ रसेन्द्रिय निग्रह ५ स्पर्शेन्द्रिय निग्रह ६ मन निग्रह ७ वचन निग्रह ८ काया निग्रह ९ भण्डोपकरण यत्ना से लेवे तथा रक्खे १० सुचीं कुशाग्र भी यत्ना से काम में लेवे ११ दया १२ सत्य १३ अचौर्य १४ ब्रह्मचर्य १५ अपरिग्रह (निर्ममत्व) १६ सम्यक्त्व १७ व्रत १८ अप्रमाद १९ अकषाय २० शुभ योग।

संवर के ५७ भेदः-

पांच समितिः-१ इर्या समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदान भण्डमात्र निक्षेपना समिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ उच्चार पासवण खेल जल संघायण परिठावणिया समिति।

तीन गुप्तिः—६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति।

२२ परिषहः—९ क्षुधा परिषह १० तृषा परिषह ११ शीत १२ ताप १३ डंस-मत्सर १४ अचल १५ अरति १६ स्त्री १७ चरिया १८ निसिहिया १९ शय्या २० आक्रोश २१ वध २२ याचना २३ अलाभ २४ रोग २५ तृण स्पर्श २६ मैल २७ सत्कार पुरस्कार २८ प्रज्ञा २९ अज्ञान ३० दर्शन (इन २२ परिषह का जय)

१० यति धर्मः—३१ शांति ३२ निर्लोभता ३३ सरलता ३४ कोमलता ३५ अल्पोपधि ३६ सत्य ३७ संयम ३८ तप ३९ ज्ञान दान ४० ब्रह्मचर्य (इन १० यति धर्म का पालन करना)

१२ भावनाः—४१ अनित्य भावनाः-संसार के सब पदार्थ धन, यौवन, शरीर, कुटुम्बादिक अनित्य, अस्थिर हैं व नाशवान हैं इस प्रकार विचार करना।

४२ अशरण भावनाः—जीव को जब रोग पीड़ादिक उत्पन्न होवे तब कोई शरण देने वाला नहीं, लक्ष्मी, कुटुंब परिवार आदि कोई साथ में नहीं आता ऐसा विचार करना।

४३संसार भावनाः—जीव कर्म करके संसार में चोरासी लाख जीव योनि के अन्दर नव नवी भ्रमान भटके। पिता मर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर पुत्र हो जाता है,पुत्र पिता हो जाता है,मित्र शत्रु होजाता है,शत्रु मित्र हो जाता है इत्यादिक अनेक प्रकार से जीव नई नई अवस्था को धारण करता है ऐसा विचार करे।

४४ एकत्व भावना:-जीव परलोक से अकेला आया व अकेला ही जायगा। अच्छे बुरे कर्म को अकेला ही भोगेगा जिनके लिये पाप कर्म किये वे भोगते समय कोई साथ नहीं देगें इस प्रकार सोचे।

४५ अन्यत्व भावना:--इस जीव से शरीर पुत्र कलत्रादि धन धान्य, द्विपद चतुष्पद आदि सर्व परिग्रह अन्य है ये मेरे नहीं, व मैं इनका नहीं ऐसा सोचे।

४६ अशुचि भावना:- यह शरीर सात धातुमय है व जिसमें से मल मूत्र श्लेष्मादिक सदैव निकलता है स्नान आदि से शुद्ध बनता नहीं, ऐसा विचार करे।

४७ आश्रव भावना:--ये संसारी जीव मिथ्यात्व अव्रत कषाय प्रमादादि आश्रव द्वारा निरन्तर नये नये कर्म बांध रहे हैं, ऐसा सोचे।

४८ संवर भावन :--व्रत, संवर, साधु के पंच महाव्रत, श्रावक के बारह व्रत, सामायिक पौषधोपवास आदि करने से जीव नये कर्म बांधता नहीं, किंवा पूर्व कर्मों को पतले करता है। ऐसा करने के लिये विचार करे।

४९ निर्जरा भावना:—चार प्रकार की तपस्या करने से निविड़ कर्म टूट कर दीर्घ संसार पार होता है व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक लब्धियें भी प्राप्त होती है। ऐसा समझ कर तपस्या करने का विचार करे।

५० लोक भावनाः—चौदह राज प्रमाण जो लोक है उसका विचार करे।

५१ बोध भावनाः—राज्य देव, पदवी, ऋद्धि कल्पद्रुमादि ये सर्व सुलभ हैं, अनंती वार मिले पर बोध बीज समकित का मिलना दुर्लभ है ऐसा सोचे।

५२ धर्म भावनाः--सर्वज्ञ ने जो धर्म प्ररुपा है वह संसार समुद्र से पार उतारने वाला है। पृथ्वी निरावलम्ब निराधार है। चन्द्रमा और सूर्य समय पर उदय होते हैं। मेघ समय पर वृष्टि करते हैं। इस प्रकार जगत् में जो अच्छा होता है, वह सब सत्य धर्म के प्रभाव से, ऐसा विचार करे। पंच चारित्र ५३ सामायिक चारित्र ५४ छेदोपस्थानिक चारित्र ५५ परिहार विशुद्ध चारित्र ५६ सूक्ष्म संपराय चारित्र ५७ यथाख्यात चारित्र इस प्रकार ५७ भेद संवर के जान कर आचरण करने से निराबाध (पीड़ा रहित) परम सुख की प्राप्ति होगी।

॥ इति संवर तत्त्व ॥

(७) निर्जरा तत्त्व के लक्षण तथा भेदः—

बारह प्रकार की तपस्या द्वारा कर्मों का जो क्षय होता है उसे निर्जरा तत्त्व कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके १२ भेद—१ अनशन २ उनोदरि ३ वृत्ति संक्षेप (भिक्षाचारि) ४ रस परित्याग ५ कायक्लेश ६ प्रति संलीनता । (यह छ बाह्य तप) ७ प्रायश्चित ८ विनय ९ वैयावृत्य १० स्वाध्याय ११ ध्यान १२ कायोत्सर्ग । (यह छः अभ्यन्तर तप)

इन बारह प्रकार के तप को जान कर जो इन्हें आदरेगा वह इस भव में व परभव में निराबाध परम सुख पायेगा ।

॥ इति निर्जरा तत्त्व ॥

८ बन्ध तत्त्व के लक्षण तथा भेद ॥

क्षीर नीर, धातु मृत्तिका, पुष्प—अतर, तिल—तेल इत्यादि की तरह आत्मा के प्रदेश तथा कर्मों के पुद्गल का परस्पर सम्बन्ध होने को बन्ध तत्त्व कहते हैं ।

बन्ध के चार भेद—१ प्रकृति बन्ध—आठ कर्मों का स्वभाव २ स्थिति बन्ध—आठों कर्मों के रहने के समय का मान ३ कर्मों के तीव्र मंदादिक रस सो अनुभाग बन्ध ४ कर्म पुद्गल के दल जो आत्मा के प्रदेश के साथ बन्धे हुवे हैं, वे प्रदेश बन्ध । यह चार प्रकार का बन्ध का स्वरुप मोदक के दृष्टान्त के समान है । जैसे कई प्रकार के द्रव्यों के संयोग से बना हुवा मोदक (लड्डू) की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृति वात पितादि की घातक होती है। तैसे ही आठों कर्म जिस जिस गुण के घातक हो वो १ प्रकृति बन्ध। जैसे वह मोदक पक्ष, मास, दो मास तक रह सक्ता है सो २ स्थिति बन्ध। जैसे वह मोदक कटुक तीक्ष्ण रस वाला होता है तैसे कर्म रस देते हैं सो ३ अनु भाग बन्ध। जैसे वह मोदक न्युनाधिक परिमाण वाला होता है तैसे कर्म पुद्गल के दल भी छोटे बड़े होते हैं सो ४ प्रदेश बन्ध। इस प्रकार बन्ध का ज्ञान होने पर जो यह बन्ध तोड़ेगा वह निराबाध परम सुख पावेगा।

॥ इति बन्ध तत्त्व ॥

६ मोक्ष तत्त्व के लक्षण तथा भेद

बन्ध तत्त्व का उलटा मोक्ष तत्त्व है अर्थात् सकल आत्मा के प्रदेश से सर्व कर्मों का छूटना, सर्व बन्धों से मुक्त होना, सकल कार्य की सिद्धि होना तथा मोक्ष गति को प्राप्त होना सो मोक्ष तत्त्व।

मोक्ष प्राप्ति के चार साधनः—१ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र ४ तप।

सिद्ध पन्द्रह तरह के होते हैंः—१ तीर्थ सिद्धा २ अतीर्थ सिद्धा ३ तीर्थंकर सिद्धा ४ अतीर्थंकर सिद्धा ५ स्वयं बोध सिद्धा ६ प्रत्येक बोध सिद्धा ७ बुद्ध बोहि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धा ८ स्त्री लिङ्ग सिद्धा ९ पुरुष लिङ्ग सिद्धा १० नपुसंक लिङ्ग सिद्धा ११ स्वयं लिङ्ग सिद्धा १२ अन्य लिङ्ग सिद्धा १३ गृहस्थ लिङ्ग सिद्धा १४ एक सिद्धा १५ अनेक सिद्धा ।

मोक्ष के नव द्वार

१ सद् २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ स्पर्शना ५ काल ६ भाग ७ भाव ८ अंतर ९ अल्प बहुत्व ।

१ सद् पद प्ररूपणाद्वारः-मोक्ष गति पूर्व समय में थी, वर्तमान समय में है व आगामी काल में रहेगी उसका अस्तित्व है, आकाश कुसुमवत् उसकी नास्ति नहीं ।

२ द्रव्य द्वारः-सिद्ध अनन्त हैं, अभव्य जीव से अनन्त गुणे अधिक हैं एक वनस्पति काय के जीवों को छोड़ कर दूसरे २३ दंडक के जीवों से सिद्ध अनन्त हैं ।

३ क्षेत्र द्वारः-सिद्ध शिला प्रमाण (विस्तार में) है यह सिद्ध शिला ४५ लाख योजन लम्बी व पोली है मध्य में आठ योजन की जाड़ी है । किनारों के पास से मक्षिका के पाँख से भी पतली है । शुद्ध सोना के समान शंख, चन्द्र, बगुला, रत्न, चाँदी का पट, मोती का हार व क्षीर सागर के जल से अधिक उज्वल है । उसकी परिधि १,४२,३०,२४९ योजन, १ गाउ १७६६ धनुष्य व पोने छ अंगुल झाझेरी है । सिद्ध के रहने का स्थान सिद्ध शिला के ऊपर योजन के छेले गाऊ के छट्ठे भाग में है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(अर्थात् ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल प्रमाणे क्षेत्र में सिद्ध भगवान रहते हैं)

४ स्पर्शना द्वारः—सिद्ध क्षेत्र से कुछ अधिक सिद्ध की स्पर्शना है।

५ काल द्वारः—एक सिद्ध आश्री इनकी आदि है परन्तु अन्त नहीं, सर्व सिद्ध आश्री आदि भी नहीं व अन्त भी नहीं।

६ भाग द्वारः—सर्व जीवों से सिद्ध के जीव अनन्त वें भाग हैं व सर्व लोक के असंख्यातवें भाग हैं।

७ भाव द्वारः—सिद्धों में क्षायिक भाव तो केवल ज्ञान, केवल दर्शन और क्षायिक समकित्व है और पारिणामिक भाव—यह सिद्ध पना है।

८ अन्तरभावः—सिद्धों को फिर लौटकर संसार में नहीं आना पड़ता है, जहां एक सिद्ध तहां अनन्त और जहां अनन्त वहां एक सिद्ध इसलिये सिद्धों में अन्तर नहीं।

९ अल्प बहुत्व द्वारः—सब से कम नपुसंक सिद्ध, उससे स्त्री संख्यात गुणी सिद्ध और उससे पुरुष संख्यात गुणे। एक समय में नपुसंक १० सिद्ध होते हैं, स्त्री २० और पुरुष १०८ सिद्ध होते हैं।

मोक्ष में कौन जाते हैं:—१ भव्य सिद्धक २ बादर ३ त्रस ४ संज्ञी ५ पर्याप्ती ६ वज्र ऋषभ नाराच संघ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यनी ७ मनुष्य गति वाले ८ अप्रमादी ६ क्षायिक सम्यक्त्वी १० अवेदी ११ अकषायी १२ यथाख्यात चारित्री १३ स्नातक निर्ग्रंथी १४ परम शुक्ल लेश्यी १५ पंडित वीर्यवान १६ शुक्ल ध्यानी १७ केवल ज्ञानी १८ केवल दर्शनी १६ चरम शरीरी । इस तरह १६ बोल वाले जीव मोक्ष में जाते हैं । जघन्य दो हाथ की उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की अवगाहन वाले जीव मोक्ष में जाते हैं, जघन्य नव वर्ष के उत्कृष्ट क्रोड़ पूर्व के आयुष्य वाले कर्म भूमि के जीव मोक्ष में जाते हैं । जब सब कर्मों से आत्मा मुक्त होवे तब वह अरूपी भाव को प्राप्त होती है, कर्म से अलग होते ही एक समय में लोक के अग्र भाग पर आत्मा पहुंच कर अलोक को स्पर्श कर रह जाती है । अलोक में नहीं जाती कारण कि वहां धर्मास्ति काय नहीं होती इसलिये वहीं स्थिर हो जाती । दूसरे समय में अचल गति प्राप्त कर लेती है । वहां से न तो चव कर कोई आती और न हलन चलन की क्रिया होती, अजर अमर, अविनाशी पद को प्राप्त हो जाती व सदा काल आत्मा अनंत सुख की ल्हेर में निमग्न रहती है ।

॥ इति मोक्ष तत्त्व ॥

॥ इति श्री नवतत्त्व सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पच्चीस क्रिया।

१ काईया क्रियाः—के दो भेद १ अणुवरय काईया २ दुपउत्त काईया।

१ अणुवरय काईया—जब तक यह शरीर पाप से निवर्ते नहीं, वहां तक उसकी क्रिया लगे।

२ दुपउत्त काईया—दुष्ट प्रयोग में शरीर प्रवर्ते तो उसकी क्रिया लगे।

२ आहिगरणियाः—क्रिया के दो भेद १ संजोजनाहिगरणिया २ निव्वत्तणाहिगरणिया।

१ खड्ग मुशल शस्त्रादिक प्रवर्तावे तो संजोजनाहिगरणिया क्रिया लगे।

२ नये अद्धिकरण शस्त्रादिक संग्रह करे तो निव्वत्तणाहिगरणिया क्रिया लगे।

३ पाउसिया क्रियाः—के दो भेद १ जीव पाउसिया २ अजीव पाउसिया।

१ जीव पर द्वेष करे तो जीव पाउसिया क्रिया लगे।

२ अजीव पर द्वेष करे तो अजीव पाउसिया क्रिया लगे।

४ पारितावणियाः—क्रिया के दो भेद १ सहत्थ पारितावणिया २ परहत्थ पारितावणिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ स्वयं (खुद) अपने आपको तथा दूसरों को परितापना उपजावे तो सहत्थ पारितावणिया क्रिया लगे।

२ दूसरों के द्वारा अपने आपको तथा अन्य किसी को परितापना उपजावे तो परहत्थ पारितावणिया क्रिया लगे।

५ पाणाईवाईया क्रियाः—के दो भेद १ सहत्थ पाणाईवाईया २ परहत्थ पाणाईवाईया।

१ अपने हाथों से अपने तथा अन्य दूसरों के प्राण हरन करे तो सहत्थ पाणाईवाईया क्रिया लगे ।

२ किसी अन्य द्वारा अपने तथा दूसरों के प्राण हरे तो परहत्थ पाणाईवाईया क्रिया लगे ।

६ अपच्चखाण क्रिया—के दो भेद १ जीव अपच्चखाण क्रिया २ अजीव अपच्चखाण क्रिया ।

१ जीव का प्रत्याख्यान नहीं करे तो जीव अपच्चखाण क्रिया लगे ।

२ अजीव (मदिरादिक) का प्रत्याख्यान नहीं करे तो अजीव अपच्चखाण क्रिया लगे ।

७ आरंभिया क्रिया—के दो भेद १ जीव आरंभिया २ अजीव आरंभिया ।

१ जीवों का आरम्भ करे तो जीव आरंभिया क्रिया लगे ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२ अजीव का आरम्भ करे तो अजीव आरंभिया क्रिया लगे ।

८ पारिग्गहिया क्रिया–के दो भेद–१ जीव पारिग्गहिया २ अजीव पारिग्गहिया ।

१ जीव का परिग्रह रक्खे तो जीव पारिग्गहिया क्रिया लगे ।

२ अजीव का परिग्रह रक्खे तो अजीव पारिग्गहिया क्रिया लगे ।

६ मायावत्तिया क्रिया–के दो भेद १ आयभाव वंकणया २ परभाव वंकणया ।

१ स्वयं अभ्यन्तर वांका (कुटिल) आचरण आचरे तो आयभाव वंकणया क्रिया लगे ।

२ दूसरों को ठगने के लिये वांका (कुटिल) आचरण आचरे तो पर भाव वंकणया क्रिया लगे ।

१० मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया–के दो भेद १ उणाइरित मिच्छादंसण वत्तिया २ तवाइरित मिच्छा दंसण वत्तिया ।

१ कम जादा श्रद्धान करे तथा प्ररूपे तो उणाइरित मिच्छा दंसण वत्तिया क्रिया लगे ।

२ विपरीत श्रद्धान करे तथा प्ररूपे तो तवाइरित मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया लगे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११ दिट्ठिया क्रिया—के दो भेद १ जीव दिट्ठिया २ अजीव दिट्ठिया।

१ अश्व गजादिक—को देखने के लिये जाने से जीव दिट्ठिया क्रिया लगे।

२ चित्रामणादि—को देखने के लिये जाने से अजीव दिट्ठिया क्रिया लगे।

१२ पुट्ठिया क्रिया—के दो भेद १ जीव पुट्ठिया २ अजीव पुट्ठिया।

१ जीव का स्पर्श करे तो जीव पुट्ठिया क्रिया लगे।

२ अजीव ने स्पर्शे तो अजीव पुट्ठिया क्रिया लगे।

१३ पाडुच्चिया क्रिया—के दो भेद १ जीव पाडुच्चिया २ अजीव पाडुच्चिया।

१ जीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो जीव पाडुच्चिया क्रिया लगे।

२ अजीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो अजीव पाडुच्चिया क्रिया लगे।

१४ सामंतो वणिवाईया क्रिया—के दो भेद १ जीव सामंतो वणिवाईया २ अजीव सामंतो वणिवाईया।

१ जीव का समुदाय रक्खे तो जीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे।

२ अजीव का समुदाय रक्खे तो अजीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५ साहत्थिया—के दो भेद १ जीव साहत्थिया २ अजीव साहत्थिया ।

१ जीव का अपने हाथों के द्वारा हनन करे तो जीव साहत्थिया क्रिया लगे ।

२ खड्गादि के द्वारा जीव को मारे तो अजीव साहत्थिया क्रिया लगे ।

१६ नेसत्थिया क्रिया—के दो भेद १ जीव नेसत्थिया २ अजीव नेसत्थिया ।

१ जीव को डाल देवे तो जीव नेसत्थिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को डाल देवे तो अजीव नेसत्थिया क्रिया लगे ।

१७ आणवणिया क्रिया—के दो भेद १ जीव आणवणिया २ अजीव आणवणिया ।

१ जीव को मंगावे तो जीव आणवणिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को मंगावे तो अजीव आणवणिया क्रिया लगे ।

१८ वेदारणिया क्रिया—के दो भेद १ जीव वेदारणिया २ अजीव वेदारणिया ।

१ जीव को वेदारे तो जीव वेदारणिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को वेदारे तो अजीव वेदारणिया क्रिया लगे ।

१९ अणाभोग वत्तिया क्रिया—के दो भेद १ अणाउत आयणता २ अणाउत्त पम्मज्जणता ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ असावधानता से वस्त्रादिक का ग्रहण करने से अणाउत्त आयणता क्रिया लगे।

२ उपयोग बिना पात्रादि को पूंजने से अणाउत पम्मज्जणता क्रिया लगे।

२० अणवकंख वत्तिया क्रिया—के दो भेद १ आय-शरीर अणवकंख वत्तिया २ परशरीर अणवकंख वत्तिया।

१ अपने शरीर के द्वारा पाप करने से आयशरीर अणवकंख वत्तिया क्रिया लगे।

२ अन्य के शरीर द्वारा पाप कर्म करने से परशरीर अणवकंख वत्तिया क्रिया लगे।

२१ पेज्ज वत्तिया क्रिया—के दो भेद १ माया वत्तिया २ लोभ वत्तिया।

१ माया से (कपट पूर्वक) राग धारण करे तो माया वत्तिया क्रिया लगे।

२ लोभ से राग धारण करे तो लोभ वत्तिया क्रिया लगे।

२२ दोस वत्तिया क्रिया—के दो भेद १ कोहे २ माणे।

१ क्रोध से कोहे क्रिया लगे।

२ मान से 'माणे' क्रिया लगे।

२३ प्पउग क्रिया—के तीन भेद १ मणप्पउग २ वयप्पउग ३ कायप्पउग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ मन के योग अशुभ प्रवर्तावे से मणप्पउग क्रिया लगे।

२ वचन के योग अशुभ प्रवर्तावे से वयप्पउग क्रिया लगे।

३ काया के योग अशुभ प्रवर्तावे से कायप्पउग क्रिया लगे।

२४ सामुदाणिया क्रिया—के तीन भेद अणंतर सामुदाणिया, परंपर सामुदाणिया तदुभय, सामु०।

१ अणंतर सामुदाणिया जो अन्तर सहित क्रिया लगे।

२ परंपर सामुदाणिया जो अन्तर रहित क्रिया लगे।

३ तदुभय सामुदाणिया जो अन्तर सहित और रहित क्रिया लगे।

२५ इरिया वहिया क्रिया—मार्ग में चलने से यह क्रिया लगती है।

॥ इति पच्चीस क्रिया सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छः काय के बोल

छः काय के नाम—१ इन्द्र (इन्दी) स्थावर, २ ब्रह्म (बंभी) स्थावर, ३ शिल्प (सप्पी) स्थावर, ४ सुमति (समिति) स्थावर, ५ प्रजापति (पयावच्च) स्थावर, ६ ६ जंगम स्थावर।

छः काय के गोत्र–१ [1]पृथ्वी काय, २ [2]अपकाय, ३ [3]तेजस काय, ४ [4]वायु काय, ५ [5]वनस्पति काय, ६ [6]त्रस काय।

पृथ्वी काय

पृथ्वी काय के दो भेद–१ सूक्ष्म २ बादर(स्थूल)।

सूक्ष्म पृथ्वी कायः–सब लोक में भरे हुवे हैं जो हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आंखों से दीखे नहीं व जिसके दो टुकड़े होवे नहीं उसे सूक्ष्म पृथ्वी काय कहते हैं।

बादर (स्थूल) पृथ्वी कायः–लोक के देश भाग में भरे हुवे हैं जो हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्निमें जले, जल में डूबे, आंखों से दीखे व जिसके दो टुकड़े हो जावे

---

१ मिट्टी २ जल ३ अग्नि ४ पवन ५ कन्द मूल फलादि ६ हलन चलन करने वाले प्राणि (जीव)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसे बादर पृथ्वी काय कहते हैं। इसके दो भेद—१ सुंवाली (कोमल) २ खरखरी (कठिन) व (कठोर)।

१ कोमल के सात भेद—१ काली मिट्टी २ नीली मिट्टी ३ लाल मिट्टी ४ पीली मिट्टी ५ श्वेत मिट्टी ६ गोपी चन्दन की मिट्टी ७ पर पड़ी (पण्डु) मिट्टी।

१ कठोर पृथ्वी बादर काय के २२ भेदः—

१ खदान की मिट्टी २ मुरड़ कंकर (मरड़िया) की मिट्टी ३ रेत—वेलु की मिट्टी ४ पाषाण—पत्थर की मिट्टी ५ बड़ी शिलाओं की मिट्टी ६ समुद्र की चारी (खार) ७ निमक की मिट्टी ८ तरुआ की मिट्टी ९ लोहे की मिट्टी १० सीसे की मिट्टी ११ ताम्बे की मिट्टी १२ रुपे (चांदी) की मिट्टी १३ सोने की मिट्टी १४ वज्र हीरे की मिट्टी १५ हरिताल की मिट्टी १६ हिंगलु की मिट्टी १७ मंनसील की मिट्टी १८ पारे की मिट्टी १९ सुरमे की मिट्टी २० प्रवाल की मिट्टी २१ अबरख (भोडर) की मिट्टी २२ अबरख के रज की मिट्टी।

१८ प्रकार के रत्न—१ गोमी रत्न २ रुचक रत्न ३ अंक रत्न ४ स्फटिक रत्न ५ लोहीताक्ष रत्न ६ मरकत रत्न ७ मसलग (मसारगल) रत्न ८ भुज मोचक रत्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९ इन्द्र नील रत्न १० चन्द्र नील रत्न ११ गेरुड़ी (गरुक) रत्न १२ हंस गर्भ रत्न १३ पोलाक रत्न १४ सौगन्धिक रत्न १५ चन्द्र प्रभा रत्न १६ वैरुली रत्न १७ जल कान्त रत्न १८ सूर्य कान्त रत्न एवं सर्व ४७ प्रकार की पृथ्वी काय ।

इसके सिवाय पृथ्वी काय के और भी बहुत से भेद हैं । पृथ्वी काय के एक कंकर में असंख्यात जीव भगवंत ने सिद्धान्त में फरमाया है । एक पर्याप्ता की नेश्रा से असंख्यात अपर्याप्त है ! जो इन जीवों की दया पालेगा वह इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पावेगा ।

पृथ्वी काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का उत्कृष्ट नीचे लिखे अनुसारः—

कोमल मिट्टी का आयुष्य एक हजार वर्ष का ।
शुद्ध मिट्टी का आयुष्य बारह हजार वर्ष का ।
वालु रेत का आयुष्य चौदह हजार वर्ष का ।
मंन सिल का आयुष्य सोलह हजार वर्ष का ।
कंकरों का आयुष्य अट्ठारह हजार वर्ष का ।
वज्र हीरा तथा धातु का आयुष्य बावीश हजार वर्षका ।
पृथ्वी काय का संस्थान मसुर की दाल के समान है ।
पृथ्वी काय का " कुल " बारह लाख केराड़ जानना ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप काय।

अप काय के दो भेद—१ सूक्ष्म २ बादर।

सूक्ष्मः—सारे लोक में भरे हुवे हैं, हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आंखो से दीखे नहीं व जिसके दो भाग हो सकते नहीं उसे सूक्ष्म अपकाय कहते हैं।

बादरः—लोक के देश भाग में भरे हुवे हैं, हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, आंखो से नजर आवे उसे बादर अपकाय कहते हैं।

इसके १७ भेदः—१ ढार का जल २ हिम का जल ३ धूंवर का जल ४ मेघरवा का जल ५ ओस का जल ६ ओले का जल ७ बरसात का जल ८ ठण्डा जल ९ गरम जल १० खारा जल ११ खट्टा जल १२ लवण समुद्र का जल १३ मधुर रस के समान जल १४ दूध के समान जल १५ घी के समान जल १६ ईख (शेलड़ी) के रस जैसा जल १७ सर्व रसद समान जल।

इसके सिवाय अपकाय के और भी बहुत से भेद हैं। जल के एक बिन्दु में भगवान ने असंख्यात जीव फरमाये हैं। एक पर्याप्त की नेश्रा से असंख्य अपर्याप्त है। इनकी अगर कोई जीव दया पालेगा तो वह इस भव में व पर भव में निराबाद सुख पावेगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप काय का आयुष्य जघन्य अन्तर मुहूर्त का, उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का। जल का संस्थान जल के परपोटे समान। " कुल " सात लाख करोड़ जानना।

तेजस काय।

तेजस काय के २ भेद—१ सूक्ष्म २ बादर।

सूक्ष्मः—सर्व लोक में भरे हुवे हैं। हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आँखो से दीखे नहीं व जिसके दो भाग होवे नहीं, उसे सूक्ष्म तेजस्काय कहते हैं।

बादरः—तेजस् काय अढाई द्वीप में भरे हुवे हैं। हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, आँखो से दीखे व जिस के दो भाग होवे उसे बादर तेजस् काय कहते हैं।

बादर अग्नि काय के १४ भेद—१ अङ्गारे की अग्नि २ भोभर (उष्ण राख) की अग्नि ३ टुटती ज्वाला की अग्नि ४ अखण्ड ज्वाला की अग्नि ५ निम्भाड़ (कुम्भकार का अलाव-भट्टी) की अग्नि ६ चकमक की अग्नि ७ बिजली की अग्नि ८ तारा की अग्नि ९ अरणी (काष्ट) की अग्नि १० बांस की अग्नि ११ अन्य काष्टादि के घर्षण से उत्पन्न होने वाली अग्नि १२ सूर्यकान्त (आई गलास)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से उत्पन्न होने वाली अग्नि १३ दावानल की अग्नि १४ बड़वानल की अग्नि ।

इसके सिवाय अग्नि के और भी अनेक भेद हैं । एक अग्नि की चिनगारी में भगवान् ने असंख्यात जीव फरमाये हैं । एक पर्याप्त की नेश्रा से असंख्यात अपर्याप्त है । जो जीव इनकी दया पालेगा वह इस भव में व पर भव में निराबाध सुख पावेगा । तेजस् काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि (दिन रात) का । इसका संस्थान सुइयों की भारी के आकारवत् है । तेजस् काय का 'कुल' तीन लाख करोड़ जनना ।

वायु काय ।

वायु काय के दो भेद–१ सूक्ष्म २ बादर ।

सूक्ष्म–सर्व लोक में भरे हुवे हैं । हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आँखों से दीखे नहीं व जिसके दो भाग होवे नहीं, उसे सूक्ष्म वायु काय कहते हैं ।

बादर–लोक के देश भाग में भरे हुवे हैं । हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, आंखों से दीखे व जिसके दो भाग होवे उसे बादर वायु काय कहते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बादर वायु काय के १७ भेदः-१ पूर्व दिशा की वायु २ पश्चिम दिशा की वायु ३ उत्तर दिशा की वायु ४ दक्षिण दिशा की वायु ५ ऊर्ध्व दिशा की वायु ६ अधो दिशा की वायु ७ तिर्यक् दिशा की वायु ८ विदिशा की वायु ९ चक्र पड़े सो भंवर वायु १० चारों कोनों में फिरे सो मंडल वायु ११ उर्द्ध चढ़े सो गुंडल वायु १२ बाजिन्त्र जैसे आवाज करे सो गुंज वायु १३ वृक्षों को उखाड़ डाले सो झंझ (प्रभंजन) वायु १४ संवर्तक वायु १५ घन वायु १६ तनु वायु १७ शुद्ध वायु ।

इसके सिवाय वायु काय के अनेक भेद हैं। वायु के एक फड़के में भगवान ने असंख्यात जीव फरमाये हैं। एक पर्याप्त की नेश्रा से असंख्यात अपर्याप्त है । खुले मुंह बोलने से, चिमटी बजाने से, अङ्गुलि आदि का कड़िका करने से, पंखा चलाने से, रेंटिया कातने से, नली में फूकने से, सूप (सुपड़ा) झाटकने से, मूसल के खांड ने से, घंटी बजाने से, ढोल बजाने से, पीपी आदि बजाने से इत्यादि अनेक प्रकार से वायु के असंख्यात जीवों की घात होती है। ऐसा जान कर वायु काय के जीवों की दया पालने से जीव इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पावेगा। वायु काय का आयुष्य जघन्य अन्त-र्मुहूर्त का, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का। वायु काय का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्थान ध्वजा पताका के आकार है। वायु काय का "कुल" सात लाख करोड़ जानना।

वनस्पति काय

वनस्पति काय के दो भेदः-१ सूक्ष्म २ बादर।

सूक्ष्म—सर्व लोक में भरे हुवे हैं। हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि से जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आँखों से दीखे नहीं व जिसके दो भाग होवे नहीं उसे सूक्ष्म वनस्पति काय कहते हैं।

बादर—लोक के देश में भरे हुवे हैं, हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, आँखों से दिखे व जिसके दो भाग होवे, उसे बादर वनस्पति काय कहते हैं।

वनस्पति काय के दो भेदः-१ प्रत्येक २ साधारण

प्रत्येक के बारह भेद-१ वृक्ष २ गुच्छ ३ गुल्म ४ लता ५ वेल ६ पावग ७ तृण ८ वल्ली ९ हरित काय १० औषधि ११ जल वृक्ष १२ कोसण्ड एवं बारह।

१ वृक्ष के दो भेद १ अट्ठी २ बहु अट्ठी

एक अट्ठी-एक बीज वाले और

बहु अट्ठी-याने बहु बीज वाले

एक अट्ठी—१ हरड़े, २ बेड़ा ३ आँवला ४ अरीठा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ भीलामां ६ आसापालव ७ आम ८ महुए ९ रायन १० जामन ११ बेर १२ निम्बोली (री) इत्यादि ।

बहु अट्ठी-१ जामफल २ सीताफल ३ अनार ४ बील फल ५ कोंठा (कबीठ) ६ कैर ७ निम्बू ८ टीमरु ९ बड़ के फल १० पीपल के फल इत्यादि बहु अट्ठी के बहुत से भेद हैं।

२ गुच्छ-नीचा व गोल वृक्ष हो उसे गुच्छ कहते हैं जैसे १ रिंगनी २ भोरिंगनी ३ जवासा ४ तुलसी ५ आव-ची बावची इत्यादि गुच्छ के अनेक भेद हैं।

३ गुल्म-फूलों के वृक्ष को गुल्म कहते हैं। १ जाई २ जुई ३ डमरा ४ मरवा ५ केतकी ६ केवड़ा इत्यादि गुल्म के अनेक भेद हैं।

४ लता-१ नाग लता २ अशोक लता ३ चंपक लता ४ भोंइ लता ५ पद्म लता इत्यादि लता के अनेक भेद हैं।

५ वेला-जिस वनस्पति के वेला चाले सो वेला। १ ककड़ी २ तरोई ३ करेला ४ किंकोड़ा ५ कोला ६ कोठिं-बड़ा ७ तुम्बा ८ खरबुजे ९ तरबुजे १० वल्लर आदि ।

६ पावग-(पव्वय) जिसके मध्य में गांठे हो उसे पावग कहते हैं। १ ईख २ एरंड ३ सरकड़ ४ बेंत ५ नेतर ६ वांस इत्यादि पावग के अनेक भेद हैं।

७ तृण-१ डाभ का तृण २ आरातारा का तृण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ कड़वाली का तृण ४ भेभवा का तृण ५ धरो का तृण ६ कालिया का तृण इत्यादि तृण के अनेक भेद हैं।

८ वलीया-(वलय) जो वृक्ष ऊपर जाकर गोलाकार बने हों, वे वलीयाः-१ सुपारी २ खारक ३ खजूर ४ केला ५ तज ६ इलायची ७ लोंग ८ ताड़ ९ तमाल १० नारियल आदि वलीया के अनेक भेद हैं।

९ हरित काय—शाक भाजी के वृक्ष सो हरित कायः-१ मूला की भाजी २ मेथी की भाजी ३ तांदलजा की (चंदलोई की) भाजी ४ सुवा की भाजी ५ लुणी की भाजी ६ वाथरे की भाजी आदि हरित काय के अनेक भेद हैं।

१० औषधि-चोवीश प्रकार के धान्य को औषधि कहते हैं।

धान्य के नाम-१ गोधूम (गेंहूं) २ जव ३ जुवार ४ बाजरी ५ डांगेर (शाल) ६ वरी ७ बंटी (वरटी) ८ चावटों ९ कांगनी १० चिणयो भिणयो ११ कोद्रा १२ मक्की। इन बारह की दाल न होने से ये 'लहा (लासा)धान्य कहलाते हैं। १ मूग २ मोंठ ३ उड़द ४ तुवर ५ भालर (काबली चने) ६ वटले ७ चँवले ८ चने ९ कुलत्थी १० कांग (राजगरे के समान एक जाति का अनाज) ११ मसुर १२ अलसी इन बारह की दाल होने से इन्हे 'कठोल' कहत हैं।

लहा और कठोल इन दोनों प्रकार के धान्य को औषधि कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११ जल वृक्ष—१ पोयणा (छोटे कमल की एक जाति) २ कमल पोयणा ३ घींतेलां (जलोत्पन्न एक फल) ४ सिंघाड़े ५ कमल कांकडी (कमलगट्टा) ६ सेवाल आदि जल वृक्ष के अनेक भेद हैं।

१२ कोसंड (कुहाण)—१ वेल्ली के वेले २ वेल्ली के टोप आदि जमीन फोड़ कर जो निकाले सो कोसंड । इस प्रत्येक वनस्पति में उत्पन्न होते वक्त व जिनमें चक्र पड़े उनमें अनन्त जीव, हरी रहे, उस समय तक असंख्यात जीव व पकने बाद जितने बीज हों उतने या संख्यात जीव होते हैं।

प्रत्येक वनस्पति का वृक्ष दश बोल से शोभा देता है— १ मूल २ कंद ३ स्कंध ४ त्वचा ५ शाखा ६ प्रवाला ७ पत्र ८ फूल ९ फल १० बीज ।

साधारण वनस्पति के भेद

कंद मूल आदि की जाति को साधारण वनस्पति कहते हैं। १ लसण २ डुंगली ३ अदरक ४ सूरण (कन्द) ५ रतालु ६ पेंडालु (तरकारी विशेष) ७ घटाटा ८ थेक (जुवार जैसे दाने की एक जाति) ९ सकर कन्द १० मूला का कन्द ११ नीली हलद १२ नीली गली (घास की जड़) १३ गाजर १४ अंकुरा १५ खुरसाणी १६ थुअर १७ मोथी १८ अमृत वेल १९ कुंवार (गंवार पाटा) २० बीड़ (घास विशेष) २१ बड़वी (अरवी) का गांठिया २२ गरमर आदि कन्द मूल के अनेक भेद हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्हें साधारण वनस्पति कहते हैं। सुई की अग्र (अनी) ऊपर आवे इतने छोटे से कन्द मूल के टुकड़े में उन निगोदिये जीवों के रहने की असंख्यात श्रेणी हैं। एक एक श्रेणी में असंख्यात प्रतर हैं। एक एक प्रतर में असंख्यात गोले हैं। एक एक गोले में असंख्यात शरीर हैं। एक एक शरीर में अनन्त अनन्त जीव हैं। इस प्रकार ये साधारण वनस्पति के भेद जानना। यदि जीव इस वनस्पति काय की दया पालेगा तो वह इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पायेगा। वनस्पति का आयुष्य जघन्य अन्तर मुहूर्त का, उत्कृष्ट दश हजार वर्ष का। इनमें से निगोद का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त। चवे और उत्पन्न होवे। वनस्पति काय का संस्थान अनेक प्रकार का। इनका " कुल " २८ लक्ष करोड़ जानना।

त्रस काय के भेद

त्रस काय—त्रस जीव जो हलन, चलन क्रिया कर सके। धूप में से छाया में जावे व छाया में से धूप में जावे उसे त्रस काय कहते हैं। उसके चार भेद—१ बे इन्द्रिय २ त्रीइन्द्रिय ३ चौरिन्द्रिय ४ पंचेन्द्रिय।

बेइन्द्रिय के भेद—जिसके काय और मुख ये दो इन्द्रिय होवे उसे बेइन्द्रिय कहते हैं। जैसे—१ शंख २ कोड़ी

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

३ शीप ४ जलोक ५ कीड़े ६ पोरे ७ लट ८ अलसिये ९ कृमी १० चरमी ११ कातर (जलजन्तु) १२ चुडेल १३ मेर १४ एल १५ वांतर (वारा) १६ लालि आदि बे-इन्द्रिय के अनेक भेद हैं। बेइन्द्रिय का आयुष्य जघन्य अन्त-मुहूर्त का, उत्कृष्ट बारह वर्ष का। इनका "कुल" सात लक्ष करोड़ जानना।

त्री-इन्द्रिय—जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ये तीन इन्द्रिय होवे उसे त्री-इन्द्रिय कहते हैं। जैसे—१ जूँ २ लीख ३ खटमल (मांकड़) ४ चांचड़ ५ कंथवे ६ धनेरे ७ उदई (दीमक) ८ इल्ली (झिमेल) ९ मुंड १० कीड़ी ११ मकोड़े १२ जींघोड़े १३ जुँआ १४ गधैये १५ कानखजुरे १६ सवा १७ ममोले आदि त्री-इन्द्रिय के अनेक भेद हैं। इनका आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ४९ दिन का। इनका "कुल" आठ लक्ष करोड़ जानना।

चौरिंद्रिय—जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ४ चक्षु (आंख) ये चार इन्द्रिय होवे उसे चौरिन्द्रिय कहते हैं। जैसे—१ भँवरे २ भँवरी ३ बिच्छु ४ मक्खी ५ तीड़ (टीढ़) ६ पतङ्ग ७ मच्छर ८ मसेल ९ डांस १० मंस ११ तमरा १२ करोलिया १३ कंसारी १४ तीड़ गोडा १५ कुंदी १६ केंकड़े १७ बग १८ रुपेली आदि चौरिन्द्रिय के अनेक भेद हैं। इनका आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट छः माह का। "कुल" नव लक्ष करोड़ जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचेन्द्रिय के भेदः-जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ४ नेत्र ५ कान ये पांच इन्द्रिय हो उसे पंचेन्द्रिय कहते हैं। इनके चार भेद १ नरक २ तिर्यंच ३ मनुष्य ४ देव।

१ नरक का विस्तार।

नरक के सात भेद- १घमा २ वंशा ३ शिला ४ अंजना ५ रीष्टा ६ मघा ७ माघवती।

सात नरक के गोत्र—१ रत्न प्रभा २ शर्कर प्रभा ३ वालु प्रभा ४ पंक प्रभा ५ धूम्र प्रभा ६ तमस् प्रभा ७ तमः तमस् प्रभा। सात नरक के ये सात गोत्र गुण निष्पन्न हैं. जैसेः—

१ रत्न प्रभा में रत्न के कुण्ड हैं।
२ शर्कर प्रभा में मरड़िया आदि कंकर हैं।
३ वालु प्रभा में वेलु (रेत) हैं।
४ पंक प्रभा में रक्त मांस का कीचड़ (कादव) है।
५ धूम्र प्रभा में धूम्र (धुँवा) है।
६ तमस् प्रभा में अंधकार है।
७ तमः तमस् प्रभा में घोरानघोर (घोरातिघोर) अंधकार है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरक का विवेचन ।

१ पहली रत्न प्रभा नरकः-का पिंड एक लाख अस्सी हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार का दल नीचे व एक हजार का दल ऊपर छोड़ बीच में एक लाख ७८ हजार योजन की पोलार है। जिसमें १३ पाथड़ा व १२ आंतरा है इन में ३० लाख नरकावास है जिनमें असंख्यात नेरिये और उनके रहने के लिये असंख्यात कुम्भियें हैं। इस के नीचे चार बोल है। १ बीस हजार योजन का घनोदधि है। २ असंख्यात योजन का धनवाय है ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है।

२ शर्कर प्रभा नरकः—का पिंड एक लाख बतीश हजार योजन का है। जिनमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच में एक लाख और तीश हजार का पोलार है इन में ११ पाथड़ा व १० आंतरा है जिनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये २५ लाख नरकावास और असंख्यात कुम्भियें हैं। इस के नीचे चार बोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि है २ असंख्यात योजन का घनवाय है ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है।

३ बालु प्रभा नरकः—इसका पिंड एक लाख और २८ हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड कर बीचमें एक लाख और २६ हजार योजन का पोलार है। इनमें ६ पाथड़ा ८ आंतरा है जिनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये १५ लाख नरकावास व असंख्यात कुम्भियें हैं। इस के नीचे चार बोल—१ बीश हजार योजन का घनोदधि है २ असंख्यात योजन का धनवाय है ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है।

४ पंक प्रभा नरकः—का पिंड एक लाख और बीस हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीचमें एक लाख और अट्ठारह हजार योजन का पोलार है। जिनमें ७ पाथड़ा व ६ आंतरा है। इनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये दश लाख नरकावास व असंख्यात कुम्भियें हैं। इस के नीचे चार बोल १ बीश हजार योजन का घनोदधि है, २ असंख्यात योजन का घनवाय है, ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है, ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है।

५ धूम्र प्रभा नरकः-का पिंड एक लाख अट्ठारह हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का ऊपर छोड़ कर बीचमें एक लाख सोलह हजार का पोलार है जिनमें ५ पाथड़ा व ४ आंतरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। इनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये तीन लाख नरकावास व असंख्यात कुम्भियें हैं। इसके नीचे चार बोल—१ बीश हजार योजन का घनोदधि है, २ असंख्यात योजन का घनवाय है, ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है, ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है।

६ **तमस् प्रभा नरकः**—का पिंड एक लाख सोलह हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच में एक लाख चौदह हजार का पोलार है जिनमें ३ पाथड़ा व २ आंतरा है। इन में असंख्यात नेरियों के रहने के लिये ९९९९५ नरकावासा व असंख्यात कुम्भियें हैं इस के नीचे चार बोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि २ असंख्यात योजन का घनवाय ३ असंख्यात योजन का तनुवाय ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है।

७ **तमः तमस् प्रभा नरकः**-का पिंड एक लाख आठ हजार योजन का है। ५२॥ हजार योजन का दल नीचे व ५२॥ हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच में तीन हजार योजन का पोलार है। जिसमें एक पाथड़ा है आंतरा नहीं। यहां असंख्यात नेरियों के रहने के लिये असंख्यात कुम्भियें व पांच नरकावासा है। **पांच नरकावासा**—१ काल २ महा काल ३ रुद्र ४ महा रुद्र ५ अप्रतिष्टान। इस के नीचे चार बोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि है २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंख्यात योजन का घनवाय है ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है इस के बारह योजन नीचे जाने पर अलोक आता है ।

नरक की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की । इनका " कुल " पचीस लाख करोड़ जानना ।

२ तिर्यंच का विस्तार

तिर्यंच के पांच भेद १ जलचर २ स्थलचर ३ उरपर ४ भुजपुर ५ खेचर इन में से प्रत्येक के दो भेद १ संमूर्छिम २ गर्भज ।

१ जलचर–जल में चले सो जलचर तिर्यंच जैसे—
१ मच्छ २ कच्छ ३ मगरमच्छ ४ कछुआ ५ ग्राह ६ मेंढ़क ७ सुसुमाल इत्यादिक जलचर के अनेक भेद हैं। इनका कुल १२॥ लाख करोड़ जानना ।

२ स्थलचर–जमीन पर चले सो स्थलचर तिर्यंच इन के विशेष नामः–

१ एक खुरवाले–घोड़, गधे, खच्चर इत्यादि

२ दो खुरवाले–(कटे हुए खुरवाले) गाय भैंस बैल, बकरे, हिरन रोज ससलिये आदि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ गंडीपद-(सोनार के एरण जैसे गोल पांव वाले) ऊंट, गेंडे, आदि ।

४ श्वानपद-(पंजे वाले जानवर) बाघ, सिंह, चीता, दीपड़े (धब्बे वाले चीते) कुत्ते, बिल्ली, लाली, गीदड़, जरख, रींछ, बन्दर इत्यादि । स्थलचर का "कुल" दस लाख करोड़ जानना ।

३ उरपर-(सर्प) के भेदः-हृदय बल से ज़मीन पर चलने वाले सो उरपर । इनके चार भेद १ अहि २ अजगर ३ असालिया ४ महुरग ।

१ अहि-पांचों ही रंग के होते हैं-१ काला २ नीला ३ लाल, ४ पीला ५ सफेद ।

२ मनुष्यादि को निगल जावे सो अजगर ।

३ असालिया-यह दो घड़ी में १२ योजन (४८ कोस) लम्बा हो जाता है चक्रवर्ती (बलदेवादि) की राजधानी के नीचे उत्पन्न होता है । इसे भस्म नामक दाह होता है जिससे आस पास की ४८ कोस की पृथ्वी गल जाती है जिससे आस पास के ग्राम, नगर, सेना, सब दब कर मर जाते हैं । इसे असालिया कहते हैं ।

४ उत्कृष्ट एक हजार योजन का लम्बा शरीर वाला महुरग (महोर्ग) कहलाता है यह अढ़ाई द्वीप के बाहर रहता है ।

उरपर (सर्प) का "कुल" दश लाख करोड़ जानना ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

४ भुजपर-(सर्प)-जो भुजाओं (हाथों) के बल चले सो भुजपर कहलाते हैं। इनके विशेष नाम-१ कोल २ नकुल (नोलिया) ३ चूहा ४ विस्मरा ५ ब्राह्मणी ६ गिलहरी ७ काकीड़ा ८ चंदन गोह (ग्राह) ९ पाटला गोह (ग्राह विशेष) इत्यादि अनेक नाम हैं। इनका "कुल" नव लाख करोड़ जानना।

५ खेचर—आकाश में उड़ने वाले जीव खेचर (पक्षी) कहलाते हैं। इनके चार भेदः-१ चर्म पंखी २ रोम पंखी ३ समुद्ग पंखी ४ वीतत (विस्तृत) पंखी।

१ चर्म पंखी—बगुला, चामचिड़ी कानकटिया, चमगीदड़ इत्यादि चमड़े की पांख वाले सो चर्म पंखी।

२ मयुर (मोर), कबूतर, चकले (चिड़ी), कौवे, कमेड़ी, मैना, पोपट, चील, बुगले, कोयल, ढेल, शकरे, होल, तोते, तीतर, बाज इत्यादि रोम (बाल) की पांख वाले सो रोम पंखी ये दो प्रकार के पक्षी अढ़ाई द्वीप के बाहर भी मिलते हैं और अन्दर भी।

३ समुद्ग पंखी—डब्बे जैसे भीड़ी हुई गोल पांख वाले सो समुद्ग पंखी।

४ विचित्र प्रकार की लम्बी व पोली पांख वाले सो वीतत पंखी ये दोनों प्रकार के पक्षी अढाई द्वीप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के बाहर ही मिलते हैं । खेचर (पक्षी) का " कुल " बारह लाख करोड़ जानना ।

गर्भज तिर्यंच की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्योपम की, संमूर्छिम तिर्यंच की स्थिति जघन्य अन्तर्मूहूर्त की उत्कृष्ट पूर्व करोड़ की (विस्तार दण्डक से जानना)

३ मनुष्य के भेद

मनुष्य के दो भेद १ गर्भज २ संमूर्छिम ।

गर्भज के तीन भेद १ पन्द्रह कर्मभूमि के मनुष्य २ तीस अकर्म भूमि के मनुष्य ३ छप्पन्न अन्तर द्वीप के मनुष्य ।

१ पन्द्रह कर्म भूमि मनुष्य के १५ क्षेत्र

१ भरत २ ऐरावत ३ महाविदेह ये तीन क्षेत्र एक लाख योजन वाले जम्बू द्वीप के अन्दर हैं । इसके (चारों ओर) बाहर (चुड़ी के आकार) दो लाख योजन का लवण समुद्र है । इसके बाहर चार लाख योजन का धातकी खण्ड जिसमें २ भरत २ ऐरावत २ महाविदेह एवं ६ क्षेत्र हैं । इसके बाद आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र है जिसके बाहर आठ लाख योजन का अर्ध पुष्कर द्वीप है जिसमें २ भरत २ एरावत २ महाविदेह ये ६ क्षेत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं एवं पन्द्रह क्षेत्र हुवे जिनमें असी (हथियार से) मसी (लेखनादि व्यापार से) और कृषि (खेती से) उपजीविका करने वाले हैं । इन क्षेत्रों में विवाह आदि कर्म होते हैं व मोक्ष मार्ग का साधन भी है।

२ तीस अकर्म भूमि मनुष्य के क्षेत्र

१ हेमवय १ हिरण्य वय १ हरि वास १ रम्यक वास १ देव कुरु १ उत्तर कुरु ये ६ क्षेत्र एक लाख योजन वाले जम्बु द्वीप में है इसके बाहर दो लाख योजन का लवण समुद्र है जिसके बाहर चार लाख योजन का धातकी खण्ड है जिसमें २ हेमवय २ हिरण्य वय २ हरिवास २ रम्यक वास २ देव कुरु २ उत्तर कुरु ये १२ क्षेत्र हैं इसके बारह आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र है इसके बाहर आठ लाख योजन का अर्ध पुष्कर द्वीप है जिसमें २ हेमवय २ हिरण्य वय २ हरिवास २ रम्यक वास २ देव कुरु २ उत्तर कुरु ये १२ क्षेत्र हैं एवं तीस क्षेत्र अकर्म भूमि के हैं जिनमें न खेती आदि होती है, न विवाह आदि कर्म होते हैं और न वहां कोई मोक्ष मार्ग का ही साधन है।

३ छप्पन अन्तर द्वीप के क्षेत्र

मेरु पर्वत के उत्तर में भरत क्षेत्र की सीमा पर १००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योजन ऊंचा २५ योजन पृथ्वी में उंडा (गहरा) १०५२ १२/१९ [१२ कला] योजन चौड़ा, २४९३२ योजन और ३/४ कला लम्बा पीले सोने का 'चुल्लहेमवन्त' पर्वत है। इसकी बांह ५३५० योजन और १५ कला की है, धनुष्य पीठीका २५२३० योजन और ४ कला की है, इस पर्वत के पूर्व पश्चिम सिरे से चोरासीसो, चोरासीसो योजन जाजेरी लम्बी दो डाढे [शाखा] निकाली हुई हैं। एक २ शाखा पर सात सात अन्तर द्वीप हैं जगती [तलेटी] से ऊपर डाढा की ओर ३०० योजन जाने पर ३०० योजन लम्बा व चौड़ा पहला अन्तर द्वीप आता है वहां से चार सो योजन जाने पर, चार सो योजन लम्बा व चौड़ा दूसरा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ५०० योजन आगे जाने पर ५०० योजन लम्बा व चौड़ा तीसरा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ६०० योजन आगे जाने पर ६०० योजन लम्बा व चौड़ा चौथा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ७०० योजन आगे जाने पर ७०० योजन का लम्बा व चौड़ा पांचवा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ८०० योजन आगे जाने पर ८०० योजन लम्बा व चौड़ा छट्ठा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ९०० योजन आगे जाने पर ९०० योजन लम्बा व चौड़ा सातवां अन्तर द्वीप आता है।

इस प्रकार एक २ शाखा पर, सात सात अन्तर द्वीप

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

हैं। इन्हें चार से गुणा करने पर [चार शाखा पर] २८ अन्तर द्वीप हुवे। ये अन्तर द्वीप 'चुल्ल हेमवन्त' पर्वत पर हैं। ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र की सीमा पर 'शिखरी' नामक पर्वत है,जो 'चुल्ल हेमवन्त' पर्वत के समान है। इस शिखरी नामक पर्वत के पूर्व पश्चिम के सिरों पर भी २८ अन्तर द्वीप हैं। एवं दो पर्वत के सिरों पर कुल छप्पन अन्तर द्वीप हैं।

संमूर्छिम मनुष्य के भेद।

संमूर्छिम मनुष्य-गर्भज मनुष्य के एक सो एक क्षेत्र में १४ स्थानक (जगह) पर उत्पन्न होते हैं।

१४ स्थानक के नाम

१ उच्चारे सुवा-बड़ी नीति-विष्टा-में।
२ पासवण सुवा-लघु नीति-पेशाब (मूत्र) में।
३ खेले सुवा-खेंखार में।
४ संघाणे सुवा-श्लेषम-नाक के सेड़े-में।
५ वंते सुवा-वमन-उल्टी-में।
६ पित्ते सुवा-पित्त में।
७ पुइये सुवा-रस्सी-पीप में।
८ सोणियेसुवा-रुधिर-रक्त-में।
९ सुक्के सुवा-वीर्य-रज-में।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१० सुक्क पोग्गल पडिसाडिआए सुवा-वीर्य के सूखे पुद्गल पुनः गीले होवे उसमें ।

११ विगय जीव कलेवरे सुवा-मनुष्य के मृतक शरीर में ।

१२ इत्थि पुरिस संजोगे सुवा-स्त्री पुरुष के संयोग में ।

१३ नगर निधमनियाए सुवा-नगर की गटर आदि में ।

१४ सव्व असुई ठाणे सुवा-सर्व मनुष्य सम्बन्धी अशुची स्थानक में ।

गर्भज मनुष्य की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट तीन पल्योपम की । संमूर्छिम मनुष्य की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की, उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त की । मनुष्य का " कुल " बारह लाख करोड़ जानना ।

४ देव के भेद ।

देव के चार भेद-१ भवनपति २ वाणव्यन्तर ३ ज्योतिषी ४ वैमानिक ।

१ भवनपति के २५ भेदः-१ दश असुर कुमार २ पन्द्रह परमाधामी एवं २५ ।

दश असुर कुमार-१ असुर कुमार २ नाग कुमार ३ सुवर्ण कुमार ४ विद्युत कुमार ५ अग्नि कुमार ६ द्वीप कुमार ७ उदधि कुमार ८ दिशा कुमार ९ पवन कुमार १० स्थनित कुमार ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पन्द्रह परमाधार्मी–१ आम्र (अम्ब) २ आम्र रस ३ शाम ४ सबल ५ रुद्र ६ महा रुद्र ७ काल ८ महा-काल ९ असि पत्र १० धनुष्य ११ कुम्भ १२ वालु १३ वेतरणी १४ खरस्वर १५ महा घोष।

एवं कुल २५ प्रकार के भवनपति कहे। पहेली नरक में एक लाख अठयोत्तर हजार योजन का पोलार है। जिसमें बारह आंतरा है। जिसमें से नीचे के दश आंतरे में भवनपति देव रहते हैं।

वाण व्यन्तर देवः–वाण व्यन्तर देव के २६ भेद १ सोलह जाति के देव २ दश जाति के जृंभिका देव, एवं २६ भेद।

१सोलह जाति के देवः—१ पिशाच २ भूत ३ यक्ष ४ राक्षस ५ किन्नर ६ किंपुरुष ७ महोरग ८ गंधर्व ९ आण पन्नी १० पाण पन्नी ११ इसीवाई १२ भूइवाई १३ कंदीय १४ महा कंदीय १५ कोहंड १६ पतंङ्ग।

दश जाति के जृंभिकाः १ आण जृंभिका २ पाण जृंभिका ३ लयन जृंभिका ४ शयन जृंभिका ५ वस्त्र जृंभिका ६ फूल जृंभिका ७ फल जृंभिका ८ कोफल जृंभिका ९ विद्युत जृंभिका १० अविद्युत जृंभिका एवं (१६+१०) २६ जाति के वाण व्यन्तर देव हुवे। पृथ्वी का दल एक हजार योजन का है। जिसमें से सो योजन का दल नीचे व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सो योजन का दल ऊपर छोड कर,बीच में आठ सो योजन का पोलार है। जिसमें सोलह जाति के व्यन्तर के नगर हैं। ये नगर कुछ तो भरत क्षेत्र के समान हैं। कुछ इन से बड़े महाविदेह क्षेत्र समान हैं। और कुछ जंबु द्वीप समान बड़े हैं।

पृथ्वी का सो योजन का दल जो ऊपर है, उसमें से दश योजन का दल नीचे व दश योजन का दल ऊपर छोड़ कर, बीच में अस्सी योजन का पोलार है। इन में दश जाति के जृंभिका देव रहते हैं जो संध्या समय, मध्य रात्रि को, सुबह व दोपहर को 'अस्तु' 'अस्तु' करते हुवे फिरते रहते हैं (जो हंसता हो वो हंसते रहना, रोता हो वो रोते रहना, इस प्रकार कहते फिरते हैं) अतएव इस समय ऐसा वैसा नहीं बोलना चाहिये। पहाड़, पर्वत व वृक्ष ऊपर तथा वृक्ष नीचे व मन को जो जगह अच्छी लगे वहां ये देव आकर बैठते हैं तथा रहते हैं।

ज्योतिषी देवः-इनके दश भेद १ चन्द्रमा २ सूर्य ३ ग्रह ४ नक्षत्र ५ तारे। ये पांच ज्योतिषी देव अढाई द्वीप में चर हैं व अढाई द्वीप के बाहर ये पांच अचर (स्थिर) हैं। इन देवों की गाथाः—

तारा, रवि, चंद, रिक्खा, बुह, सुका, जूव, मंगल, सणीआ,
सग सय नेउआ,दस,असिय,चउ,चउ,कमसो तीया चउसो।१।

अर्थः—पृथ्वी से ७९० योजन ऊंचा जाने पर ताराओं का विमान आता है, पृथ्वी से ८०० योजन

ऊंचा जाने पर सूर्य का विमान आता है, पृथ्वी से ८८० योजन ऊंचा जाने पर चन्द्रमा का विमान आता है। पृथ्वी से ८८४ योजन ऊंचा जाने पर नक्षत्र का विमान आता है, ८८८ योजन जाने पर बुध का तारा आता है, ८६१ योजन जाने पर शुक्र का तारा आता है, ८६४ योजन ऊंचा जाने पर बृहस्पति का तारा आता है, ८६७ योजन ऊंचा जाने पर मंगल का तारा आता है, पृथ्वी से ६०० योजन ऊंचा जाने पर शनिश्चर का तारा आता है।

इस प्रकार ११० योजन ज्योतिष चक्र जाड़ा है। पांच चर है पांच स्थिर है। अढाई द्वीप में जो चलते हैं वो चर और अढाई द्वीप के बाहर जो चलतें नहीं वे स्थिर हैं। जहां सूर्य है वहां सूर्य और जहां चन्द्र है वहां चन्द्र।

वैमानिक के भेद—वैमानिक के ३८ भेद। ३ किल्विषी, १२ देवलोक, ६ लोकांतिक, ६ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान एवं ३८।

किल्विषी देवः-तीन पल्योपम की स्थिति वाले प्रथम किल्विषी पहले दूसरे देवलोक के नीचे के भाग में रहते हैं २ तीन सागर की स्थिति वाले दूसरे किल्विषी तीसरे चोथे देवलोक के नीचे के भागमें रहते हैं ३ तरह सागर की स्थिति वाले तीसरे किल्विषी छट्टे देवलोक के नीचे के भागमें रहते हैं ये देव ढ़ेढ़ (भङ्गी) देव पणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्पन्न हुवे हैं। वो कैसे ? तीर्थंकर, केवली, साधु, साध्वी के अपवाद बोलने से ये किल्बिषी देव हुवे हैं।

बारह देवलोक—१ सुधर्मा देवलोक २ इशान देवलोक ३ सनंत कुमार देवलोक ४ महेन्द्र देवलोक ५ ब्रह्म देवलोक ६ लांतक देवलोक ७ महाशुक्र देवलोक ८ सहस्रार देवलोक ९ आणत देवलोक १० प्राणत देवलोक ११ आरण्य देवलोक १२ अच्यूत देवलोक।

बारह देवलोक कितने ऊंचे, किस आकार के, व इन के कितने कितने विमान हैं, इसका विवेचन ज्योतिषी चक्र के ऊपर असंख्यात योजन की करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर पहेला सुधर्मा व दूसरा इशान ये दो देवलोक आते हैं जो लगड़ाकार हैं। व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार (समान) है और दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) हैं। पहले में ३२ लाख और दूसरे में २८ लाख विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन की करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचे जाने पर तीसरा सनंत कुमार व चौथा महेन्द्र ये दो देवलोक आते हैं। जो लगड़ा (ढांचा) के आकार हैं। एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है। दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) हैं। तीसरे में बारह लाख व चौथे में आठ लाख विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन का करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर पांचवां ब्रह्म देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकार का है। इस में चार लाख विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन का करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर छट्ठा लांतक देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इस में ५० हजार विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन का करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर सातवां महा शुक्र देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इस में ४० हजार विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर आठवां सहसार देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इस में ६ हजार विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर नौवां आनत और दशवां प्राणत ये दो देवलोक आते हैं। जो लगड़ाकार हैं। व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है। दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के समान हैं। दोनों देवलोक में मिल कर ४०० विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर इग्यारवां आरण्य और बारहवां अच्यूत देवलोक आते हैं। जो लगड़ाकार हैं। व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है, दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के समान हैं। दोनों देव लोक में मिलकर ३०० विमान हैं। एवं बारह देव लोक के सर्व मिला कर ८४, ९६, ७०० विमान हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नव लोकांतिक देव ।

पांचवे देवलोक में आठ कृष्ण राजी नामक पर्वत है जिसके अन्तर में (बीच में) ये नव लोकांतिक देव रहते हैं। इनके नाम—गाथाः—

सारस्सय, माइच्च, वन्हि, वरुण, गज तोया ।
तुसीया अव्वबाहा, अगीया, चेव, रीठा, य ॥

अर्थः—१ सारस्वत लोकांतिक २ आदित्य लोकांतिक ३ वहनि लोकांतिक ४ वरूण ५ गर्द्तोया ६ तुषिया ७ अव्याबाध ८ अंगीत्य ९ रिष्ट । ये नव लोकांतिक देव-जब तीर्थंकर महाराज दीक्षा धारन करने वाले होते हैं, उस समय कानों में कुण्डल, मस्तक पर मुकुट, बांह पर बाजु-बंध, कण्ठ में नवसर हार पहन कर घुघरियों के घमकार सहित आकर इस प्रकार बोलते हैं—"अहो त्रिलोक नाथ! तीर्थ मार्ग प्रवर्तावो, मोक्ष मार्ग चालु करो। " इस प्रकार बोलने का—इन देवों का जीत व्यवहार (परंपरा से रिवाज चला आता) है ।

नव ग्रीय वेक

गथाः--भद्दे, सुभद्दे, सुजाए, सुमाणसे, पीयदंसणे ।
सुदंसणे, अमोहे, सुपडीबद्धे, जसोधरे ॥

अर्थः—बारहवें देवलोक ऊपर असंख्यात योजन के करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर नव ग्रीयवेक की पहली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रीक आती है। ये देवलोक गागर बेवड़ के समान हैं। इनके नामः--१ भद्र २ सुभद्र ३ सुजात, इस पहली त्रीक में १११ विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर दूसरी त्रीक आती है। यह भी गागर बेवड़े के (आकार) समान है। इनके नाम ४ सुमानस ५ प्रिय दर्शन ६ सुदर्शन इस त्रीक में १०७ विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर तीसरी त्रीक आती है, जो गागर बेवड़े के समान है। इनके नाम ७ अमोघ ८ सुप्रतिबुद्ध ९ यशोधर इस त्रीक में १०० विमान हैं।

पांच अनुत्तर विमान

नववीं ग्रीयवेक के ऊपर असंख्यात योजन की करोड़ा करोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर पांच अनुत्तर विमान आते हैं। इनके नामः-१ विजय २ विजयंत ३ जयंत ४ अपराजित ५ सर्वार्थ सिद्ध। ये सर्व मिल कर ८४, ९७,०२३ विमान हुवे। देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की। देव का "कुल" २६ लाख करोड़ जानना।

सिद्ध शिला का वर्णन।

सर्वार्थ सिद्ध विमान की ध्वजा पताका से १२ योजन ऊंचा जाने पर सिद्ध शिला आती है। यह ४५ लाख योजन की लम्बी चौडी व गोल और मध्य में ८ योजन की जाडी, और चारों तरफ से क्रम से घटती २ किनारे पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मक्खी के पंख से भी अधिक पतली है। शुद्ध सुवर्ण से भी अधिक उज्वल, गोचीर समान, शंख, चंन्द्र, बंक (बगुला) रत्न, चांदी, मोती का हार, व चीर सागर के जल से भी अत्यन्त उज्वल है। इस सिद्ध शिला के के बारह नाम–१ इषत् २ इषत् प्रभार ३ तनु ४ तनु तनु ५ सिद्धि ६ सिद्धालय ७ मुक्ति ८ मुक्तालय ९ लोकाग्र १० लोकस्तुभिका ११ लोक प्रति बोधिका १२ सर्व प्राणी भूत जीव सत्व सौख्यावाहिका। इसकी परिधि (घेराव) १, ४२, ३०, २४९ योजन, एक कोस १७६६ धनुष पोने छे आङ्गुल जाजेरी है। इस शिला के एक योजन ऊपर जाने पर–एक योजन के चार हजार कोस में से ३९९९ कोस नीचे छोड़ कर शेष एक कोस के छे भाग में से पांच भाग नीचे छोड़ कर शेष एक भाग में सिद्ध भगवान विराज मान हैं। यदि ५०० धनुष की अवगाहना वाले सिद्ध हुवे हो तो ३३३ धनुष और ३२ आङ्गुल की (चेत्र) अवगाहना होती है। सात हाथ के सिद्ध हुवे हो तो चार हाथ और सोलह आङ्गुल की (चेत्र) अवगाहना होती है। व दो हाथ के सिद्ध हुवे हो तो एक हाथ और आठ अङ्गुल की (चेत्र) अवगाहना होती है। ये सिद्ध भगवान कैसे हैं ? अवर्णी, अगन्धी अरसी, अस्पर्शी, जन्म जरा मरण रहित और आत्मिक गुण सहित हैं। ऐसे सिद्ध भगवान को मेरा समय समय पर वंदना नमस्कार होवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छः काय का स्वरूप।

नाम	कुल करोडा करोड	[1]आयुष्य	वर्ण	संस्थान	[2]मुहूर्त में उ० जन्म मरण
१ पृथ्वी काय	१२ लाख	२२००० वर्ष	पीला	मसुर की दाल	१२८२४
२ अप काय	७ लाख	७००० "	सफेद	जल का परपोटा	१२८२४
३ तेजस् काय	३ लाख	३ अहोरात्रि	लाल	सुइयों की भारी	१२८२४
४ वायु काय	७ लाख	३००० वर्ष	नीला	ध्वजा पताका	१२८२४
५ वनस्पति काय	२८ लाख	१०००० वर्ष	विविध	विविध	३२०००प्र.व.
६ त्रस काय					६५५३६सा.व.
बेइन्द्रिय	७ लाख	१२ वर्ष	"	"	८०
तेइन्द्रिय	८ लाख	४९ दिन	"	"	६०

१ जघन्य अन्तर मुहूर्त का २ जघन्य १ भव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाम	कुल करोडा करोड	[1]आयुष्य	वर्ण	संस्थान	[2]मुहूर्त में उ. जन्म मरण
चौइन्द्रिय	९ लाख	६ मास	"	"	४०
नरक	२५ लाख	ज. १०००० व. उ. ३३ सागर	"	"	१
तिर्यंच	५३॥ लाख	३ पल्योपम	"	"	१
मनुष्य	१२ लाख	३ पल्योपम	"	"	१
देवता	२६ लाख	ज. १०००० व. उ. ३३ सागरोपम	"	"	१

१ जघन्य अन्तर मुहूर्त का २ जघन्य १ भव।

॥ इति छः काय का बोल सम्पूर्ण ॥

२५ बोल ।

१ पहले बोले [1]गति चार—१ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति ।

२ दूसरे बोले [2]जाति पांच—१ एकेन्द्रिय २ बेइन्द्रिय ३ त्रीइन्द्रिय ४ चौरिन्द्रिय ५ पंचेन्द्रिय ।

३ तीसरे बोले [3]काय छः—१ पृथ्वी काय २ अप काय ३ तेजस् काय ४ वायु काय ५ वनस्पति काय ६ त्रस काय ।

४ चौथे बोले [4]इन्द्रिय पांच—१ श्रोतेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

५ पांचवे बोले [5]पर्याप्ति छः—१ आहार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति ३ इन्द्रिय पर्याप्ति ४ श्वासोश्वास पर्याप्ति ५ भाषा पर्याप्ति ६ मनः पर्याप्ति ।

६ छट्ठे बोले [6]प्राण दश—१ श्रोतेन्द्रि बल प्राण २

---

१ जहां पर जीवों का आवागमन (आना जाना) होवे वह गति है ।

२ एक सा होना—एकाकार होना जाति है ।

३ समूह तथा बहु प्रदेशी वस्तु को काय कहते हैं ।

४ शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि वस्तुओं का जिसके द्वारा ग्रहण होता है उसे इन्द्रिय कहते हैं । ये पांच हैं—१ कान २ आंख ३ नाक ४ जीभ ५ शरीर (गले से पैर तक—धड़)

५ आहारादि रूप पुद्गल को परिणमन करने की शक्ति (यन्त्र) को पर्याप्ति कहते हैं ।

६ पर्याप्ति रूप यन्त्र को मदद करने वाले वायु (Steem) को प्राण कहते हैं ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

चक्षु इन्द्रिय बल प्राण ३ घ्राणेन्द्रिय बल प्राण ४ रसेन्द्रिय बल प्राण ५ स्पर्शेन्द्रिय बल प्राण ६ मनः बल प्राण ७ वचन बल प्राण ८ काय बल प्राण ९ श्वासोश्वास बल प्राण १० आयुष्य बल प्राण।

७ सातवें बोले [७]शरीर पांच—१ औदारिक २ वैक्रिय ३ आहारिक ४ तैजस् ५ कार्मण।

८ आठवें बोले [८]योग पन्द्रह—१ सत्य मन योग २ असत्य मन योग ३ मिश्र मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ सत्य वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग ११ वैक्रिय शरीर काय योग १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग १३ आहारिक शरीर काय योग १४ आहारिक मिश्र शरीर काय योग १५ कार्मण काय योग। चार मनका, चार वचन का व सात काय का एवं पन्द्रह योग।

९ नववें बोले [९]उपयोग बारह।

पांच ज्ञान का—१ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ अवधि ज्ञान ४ मनः पर्यव ज्ञान ५ केवल ज्ञान।

---

७ जो नाश को प्राप्त होता हो या जिसके नष्ट होने से-अदृश्य होने से जीव का नाश माना जाता है उसे शरीर कहते हैं।

८ मन, वचन काया की प्रवृत्ति को-चपलता को (प्रयोग को) जोग (योग) कहते हैं।

९ जानने पहिचानने की शक्ति को उपयोग कहते हैं, यही जीव का लक्षण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन अज्ञान का--१ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विभंग अज्ञान।

चार दर्शन के--१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन एवं बारह उपयोग।

१० दशवें बोले "कर्म आठ--१ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र और ८ अन्तराय।

११ इग्यारहवें बोले गुण "स्थानक चौदह।

१ मिथ्यात्व गुणस्थानक २ सास्वादान गुणस्थानक ३ मिश्र गुणस्थानक ४ अव्रती समदृष्टि गुणस्थानक ५ देश व्रती गुणस्थानक ६ प्रमत्त संयति गुणस्थानक ७ अप्रमत्त संयति गुण स्थानक ८ (नियट्ठी) निवर्तीबादर गुण स्थानक ९ (अनियट्ठ) अनिवर्ती बादर गुण स्थानक १० सूक्ष्म संपराय गुण स्थानक ११ उपशान्त मोहनीय गुण स्थानक १२ क्षीण मोहनीय गुणस्थानक १३ सयोगी केवली गुण स्थानक १४ अयोगी केवली गुण स्थानक।

१२ बारहवें बोले पांच इन्द्रिय के २३ "विषय

---

१० जीव को पर भव में घुमावे, विभाव दशा में बनावे व अन्य रूप से दिखावे सो कर्म है।

११ सकर्मी जीवों की उन्नति की भिन्न २ अवस्था को गुणस्थान कहते हैं। अवस्था अनन्त है परन्तु गुणस्थान १४ ही है कक्षा (Class) वत्।

१२ जिस इन्द्रिय से जो २ वस्तु ग्रहण होती है वही उस इन्द्रिय का विषय है। कान का विषय शब्द।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ श्रोतेन्द्रिय के तीन विषय–१ जीव शब्द २ अजीव शब्द ३ मिश्र शब्द ।

२ चक्षु इन्द्रिय के पांच विषय-१ कृष्ण वर्ण २ नील वर्ण ३ रक्त वर्ण ४ पीत (पीला) वर्ण ५ श्वेत (सफेद) वर्ण ।

३ घ्राणेन्द्रिय के दो विषय–१ सुरभि गन्ध २ दुरभि गन्ध ।

४ रसेन्द्रिय के पांच विषय–१ तीक्ष्ण (तीखा) २ कटुक (कड़वा) ३ कषायित (कषायला) ४ क्षार (खट्टा) ५ मधुर (मिष्ट मीठा) ।

५ स्पर्शेन्द्रिय के आठ विषय–१ कर्कश २ मृदु ३ गुरू ४ लघु ५ शीत ६ उष्ण ७ स्निग्ध (चिकना) ८ रूक्ष (लुखा) एवं २३ विषय ।

१३ तेरहवें बोले [13] मिथ्यात्व दश–१ जीव को अजीव समझे तो मिथ्यात्व २ अजीव को जीव समझे तो मिथ्यात्व ३ धर्म को अधर्म समझे तो मिथ्यात्व ४ अधर्म को धर्म समझे तो मिथ्यात्व ५ साधु को असाधु समझे तो मिथ्यात्व ६ असाधु को साधु समझे तो मिथ्यात्व ७ सुमार्ग (शुद्ध मार्ग) को कुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व ८ कुमार्ग को सुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व ९ सर्व दुःख से

१३ जीवादि नव तत्वों की संशय युक्त वा विपरीत मान्यता होना तथा अनध्यसाय–निर्णय बुद्धि का न होना मिथ्यात्व है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुक्त को अमुक्त समझे तो मिथ्यात्व और १० सर्व दुख स अमुक्त को मुक्त समझे तो मिथ्यात्व।

१४ चौदहवें बोले नव ×तत्त्व के ११५ बोल।

प्रथम नव तत्त्व के नाम–१ जीव तत्त्व २ अजीव तत्त्व ३ पुन्य तत्त्व ४ पाप तत्त्व ५ आश्रव तत्त्व ६ संवर तत्त्व ७ निर्जरा तत्त्व ८ बन्ध तत्त्व ९ मोक्ष तत्त्व इन नव तत्त्व के लक्षण तथा भेद–प्रथम नव तत्त्व के अन्दर विस्तार पूर्वक लिखा गया है अतः यहां केवल संक्षेप में ही लिखा जाता है।

१ जीव तत्व के १४ बोल, २ अजीव तत्व के १४ बोल, ३ पुन्य के ९ बोल, ४ पाप के १८ बोल, ५ आश्रव के २० बोल, ६ संवर के २० बोल, ७ निर्जरा के १२ बोल, ८ बन्ध के ४ बोल और ९ मोक्ष के ४ बोल। एवं नव तत्त्व के सर्व ११५ बोल हुवे।

१५ पन्द्रहवें बोले =आत्मा आठ–१ द्रव्य आत्मा २ कषाय आत्मा ३ योग आत्मा ४ उपयोग आत्मा ५ ज्ञान आत्मा ६ दर्शन आत्मा ७ चारित्र आत्मा ८ वीर्य आत्मा।

१६ सोलहवें बोले *दण्डक २४–सात नरक के

× सार पदार्थ को तत्त्व कहते हैं।

= अपनाप—अपनापन ही आत्मा है। जीव की शक्ति किसी भी रूप में होना ही आत्मा है।

* जिस स्थान पर तथा जिस रूप में रह कर आत्मा कर्मों से दण्डाती है, वह दण्डक है। भेद अनन्त हैं परन्तु समावेश चोवीश में है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नेरियों का एक दण्डक १, दश भवनपति देव के दश दण्डक, ११, पृथ्वी काय का एक, १२, अप काय का एक, १३, तेजस् काय का एक, १४, वायु काय का एक, १५, वनस्पति काय का एक, १६ बेइन्द्रिय का एक, १७, त्रीइन्द्रिय का एक, १८, चौरिन्द्रिय का एक, १६, तिर्यंच पंचेन्द्रिय का एक२०,मनुष्य का एक,२१, वाणव्यन्तर का एक, २२,ज्योतिषी का एक, २३, वैमानिक का एक, २४।

१७ सत्तरवें बोले =लेश्या छः—१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

१८ अट्ठारवें बोले †दृष्टि तीन—१ सम्यक्त्व (सम्यग) दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि ३ मिश्र दृष्टि।

१६ उन्नीसवें बोले ×ध्यान चार—१ आर्त ध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान।

२० बीसवें बोले षड्(छ) *द्रव्य के ३० भेद।

१ धर्मास्ति काय के पांच भेद—१ द्रव्य से एक

= कषाय तथा योग के साथ जीव के शुभाशुभ भाव को लेश्या कहते हैं। योग तथा कषाय रूप जल में लहरों का होना ही लेश्या है।

† आत्मा अनात्मा को किसी भी तरह देखना मानना और श्रद्धा करना ही दृष्टि है।

× चित-मन-की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं। ध्येय वस्तु प्रति ध्याता की स्थिरता को ध्यान कहते हैं।

* आकारादि के बदलने पर भी पदार्थ वस्तु का कायम रहना ही द्रव्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अन्त रहित ४ भाव से अवर्णी, अगंधी, अरसी, अस्पर्शी (अरूपी) अमूर्ति मान ५ गुण से चलन गुण। इसे पानी में मछली का दृष्टान्त।

२ अधर्मास्ति काय के पांच भेद-१ द्रव्य से एक द्रव्य २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अंत रहित ४ भाव से अमूर्ति मान ५ गुण से स्थिर गुण अधर्मास्ति काय को-थके हुवे पक्षी को वृक्ष का आश्रय (विश्राम)-का दृष्टान्त।

३ आकाशास्ति काय के पांच भेद-१ द्रव्य से एक द्रव्य २ क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण ३ काल से आदि अन्त रहित ४ भाव से अमूर्तिमान ५ गुण से आकाश विकाश गुण। आकाशास्ति काय को दुग्ध में शर्करा का दृष्टान्त।

४ काल द्रव्य के पांच भेद-१ द्रव्य से अनन्त द्रव्य २ क्षेत्र से समय क्षेत्र प्रमाण ३ काल से आदि अन्त रहित ४ भाव से अमूर्तिमान ५ गुण से नूतन(नया) जीर्ण(पुराणा) वर्तना लक्षण काल को नया पुराणा वस्त्र का दृष्टान्त।

५ पुद्गलास्ति काय के पांच भेद-१ द्रव्य से अनंत द्रव्य २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अंत रहित ४ भाव से वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श सहित ५ गुण से मिलना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गलना, विनाश होना, जीर्ण होना, व विखरना पुद्गलास्ति काय को बादलों का दृष्टान्त ।

६ जीवास्ति काय द्रव्य के पांच भेद्–१ द्रव्य से अनंत २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अंत रहित ४ भाव से अमूर्तिमान (अरुपी) ५ गुण से चैतन्य उपयोग लक्षण जीवास्ति काय द्रव्य को चन्द्रमा का दृष्टान्त ।

२१ इक्कीसवें बोले "राशि दो–१ जीव राशि २ अजीव राशि ।

२२ बावीसवें बोले श्रावक के बारह ×व्रत–१ स्थूल (मोटी, बड़ी) जीवों की हत्या का त्याग करे २ स्थूल झूठ का त्याग करे ३ स्थूल चोरी करने का त्याग करे ४ पुरुष पर स्त्री–सेवन का व स्त्री पर पुरुष–सेवन का त्याग करे ५ परिग्रह की मर्यादा करे ६ दिशाओं (में गमन करने) की मर्यादा करे ७ चौदह नियम व २६ बोल की मर्यादा करे ८ अनर्थ दंड का त्याग करे ९ प्रति दिन सामायिक आदि करे * १० दिशावकाशिक

---

२१ समूह को राशि कहते हैं। जगत् में जीव तथा पुद्गल द्रव्य अनन्त हैं। इनके समूहों को राशि कहते हैं।

× पर वस्तु में आत्मा लुभा रही है। अतः आत्मा को पर वस्तु से अलग कर स्वस्व में कायम रहना व्रत है।

* पूर्वोक्त छट्ठे व्रत में दिशा की व सातवें में उपभोग परिभोग का जो परिणाम किया है वह यावज्जीव पर्यन्त है परन्तु यह दिशावकाशिक प्रति दिन का किया जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(दिशाओं व भोगोपभोगों का परिमाण) करे ११ पौषध व्रत करे १२ निर्ग्रंथ साधु व मुनि को प्रासुक एषणीक आहारादिक चौदह बोल प्रतिलाभे (अतिथि संविभाग व्रत करे)।

२३ तेवीसवें बोले मुनि के[1] पंचमहाव्रत–१ सर्व हिंसा का त्याग करे २ सर्व मृषावाद का त्याग करे ३ सर्व अदत्तादान (चोरी) का त्याग करे ४ सर्व मैथुन का त्याग करे ५ सर्व परिग्रह का त्याग करे (मुनि के ये त्याग तीन करण व तीन योग से होते हैं)

२४ चोवीसवें बोले श्रावक के बारह व्रत के ४९ भांगे

आंक एक ग्यारह का–एक करण एक योग से प्रत्याख्यान (त्याग) करे। इसके भांगे ९–

अमुक युक्त दोष कर्म कि जिसका मैंने त्याग लिया है उसे १ करूं नहीं मन से २ करूं नहीं वचन से ३ करूं नहीं काय से ४ कराऊं नहीं मन से ५ कराऊं नहीं वचन से ६ कराऊं नहीं काय से ७ करते हुवे को अनुमोदूं (सराहूं) नहीं मन से ८ करते

१ बड़े व्रतों को–पूर्ण व्रतों को महाव्रत कहते हैं। त्यागी मुनि ही इनका पालन कर सके हैं, गृहस्थ नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुवे को अनुमोदूं नहीं वचन से ६ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं काय से एवं नव भांगे।

आंक एक बारह (१२) का—एक करण और दो योग से त्याग करे । इसके नव भांगे—

१ करूं नहीं मन से वचन से २ करूं नहीं मन से काया से ३ करूं नहीं वचन से काया से ४ कराऊं नहीं मन से वचन से ५ कराऊं नहीं मन से काया से ६ कराऊं नहीं वचन से काया से । ७ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं मन से वचन से ८ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं मन से काया से ९ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं वचन से काया से ।

आंक एक तेरह का—एक करण और तीन योग से त्याग करे । भांगा तीन—

१ करूं नहीं मनसे, वचन से, काया से, २ कराऊं नहीं मन से, वचन से, काया से, ३ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं मन से, वचन से, काया से, एवं कुल (९+९+३) २१ भांगा ।

आंक एक इक्कवीस का—दो करण और एक योग से त्याग करे । भांगा नव—

१ करूं नहीं कराऊं नहीं मन से २ करूं नहीं कराऊं नहीं वचन से ३ करूं नहीं कराऊं नहीं काया से ४ करूं नहीं अनुमोदूं नहीं मन से ५ करूं नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुमोदूं नहीं वचन से ६ करूं नहीं अनुमोदूं नहीं काया से ७ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं मनसे ८ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से ९ कराऊं नहीं अनुमोदूं नहीं काया से।

आंक एक बावीस का—दो करण और दो योग त्याग करे। भांगा नव—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, मन से, वचन से । २ करुं नहीं, कराऊं नहीं, मन से, काया से । ३ करुं नहीं, कराऊं नहीं, वचन से, काया से । ४ करुं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से वचन से । ५ करुं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से काया से । ६ करुं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से काया से । ७ कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से वचन से ८ कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से काया से ९ कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से, काया से ।

आंक एक तेवीश का—दो करण और तीन योग से त्याग लेवे । भांगा तीन—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, मन से, वचन से, काया से । २ करुं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से, वचन से, काया से । ३ कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से, वचन से, काया से । एवं ४२ भांगा ।

आंक एक एकतीस का—तीन करण व एक योग से त्याग गृहण करे । भांगा तीन—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से । २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से। ३ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, काया से।

आंक एक बत्तीस का–तीन करण व दो योग से, त्याग करे। भांगा तीन—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से, वचन से। २ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से काया से। ३ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से, काया से।

आंक एक तेंतीस का–तीन करण व तीन योग से त्याग लेवे। भांगा एक—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से वचन से, काया से। एवं ४९ भांगा सम्पूर्ण।

२५ पच्चीशवें बोले [1]चारित्र पांच–१ सामायिक चारित्र २ छेदोपस्थानिक चारित्र ३ परिहार विशुद्ध चारित्र ४ सूक्ष्म संपराय चारित्र ५ यथाख्यात चारित्र।

॥ इति पच्चीस बोल सम्पूर्ण ॥

१ आत्मा का पर भाव से दूर होना और स्वभाव में रमण करना ही चारित्र है।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सिद्ध द्वार

१ पहिली नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध होवे, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

२ दूसरी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

३ तीसरी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

४ चौथी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

५ भवन पति के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

६ भवन पति की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट पांच सिद्ध होते हैं ।

७ पृथ्वी काय के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

८ अपकाय के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

९ वनस्पति काय के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट छः सिद्ध होते हैं ।

१० तिर्यंच गर्भज के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११ तिर्यंचणी में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

१२ मनुष्य गर्भज में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

१३ मनुष्यनी में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीश सिद्ध होते हैं।

१४ वाण व्यन्तर में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

१५ वाण व्यंतर की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट पांच सिद्ध होते हैं।

१६ ज्योतिषी के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

१७ ज्योतिषी की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीश सिद्ध होते हैं।

१८ वैमानिक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

१९ वैमानिक की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते हैं।

२० स्वलिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

२१ अन्य लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२२ गृहस्थ लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

२३ स्त्री लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते हैं।

२४ पुरुष लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

२५ नपुसंक लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

२६ ऊर्ध्व लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

२७ अधो लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते हैं।

२८ तिर्यक् (तीर्छा) लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

२९ जघन्य अवगाहन वाले एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

३० मध्यम अवगाहन वाले एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

३१ उत्कृष्ट अवगाहन वाले एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते हैं।

३२ समुद्र के अन्दर एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३ नदी प्रमुख जल के अन्दर एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट तीन सिद्ध होते हैं।

३४ तीर्थ सिद्ध होवे तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

३५ अतीर्थ सिद्ध होवे तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट द१ सिद्ध होते हैं।

३६ तीर्थंकर सिद्ध होवे तो,एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते हैं!

३७ अतीर्थंकर सिद्ध होवे तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

३८ स्वयं बोध (बुद्ध) सिद्ध होवे तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

३९ प्रति बोध सिद्ध होवे तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

४० बुध बोही सिद्ध होवे तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

४१ एक सिद्ध होवे तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट एक सिद्ध होते हैं।

४२ अनेक सिद्ध होवे तो,एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

४३ विजय विजय प्रति एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४ भद्र शाल वन में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

४५ नंदन बन में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

४६ सोम नस वन में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

४७ पंडग वन में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते हैं ।

४८ अकर्म भूमि में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

४९ कर्म भूमि में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

५० पहले आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं ।

५१ दूसरे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं ।

५२ तीसरे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

५३ चौथे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

५४ पांचवें आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५ छट्ठे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं।

५६ अवसर्पिणी में एक समय में जघन्य एक,उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५७ उत्सर्पिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५८ नोउत्सर्पिणी नो अवसर्पिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

ये ५८ बोल अन्तर सहित एक समय में जघन्य, उत्कृष्ट जो सिद्ध होते हैं सो कहे हैं। अब अन्तर रहित आठ समय तक यदि सिद्ध होवे तो कितने होते हैं ? सो कहते हैं।

१ पहले	समय	में	जघन्य	एक	उत्कृष्ट	१०८	सिद्ध	होते हैं।
२ दूसरे	,,	,,	,,	,,	,,	१०२	,,	,,
३ तीसरे	,,	,,	,,	,,	,,	९६	,,	,,
४ चौथे	,,	,,	,,	,,	,,	८४	,,	,,
५ पांचवे	,,	,,	,,	,,	,,	७२	,,	,,
६ छट्ठे	,,	,,	,,	,,	,,	६०	,,	,,
७ सातवें	,,	,,	,,	,,	,,	४८	,,	,,
८ आठवें	,,	,,	,,	,,	,,	३२	,,	,,

आठ समय के बाद अन्तर पड़े बिना सिद्ध नहीं होते।

॥ इति सिद्ध द्वार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

चोवीस दण्डक।

चोवीस दण्डक का वर्णन सूत्र श्री जीवाभिगम जी में किया हुवा है।

गाथाः—

सरीरो गाहणा संघयण, संठाण कसाय तहहुंति सन्नाय।
लेसिंदिअ समुघाए, सन्नी वेदेअ पज्जत्ति ॥ १ ॥
दिठि दंसण नाणा नाण, जोगो वउग तह आहारे।
उववाय ठिइ समुहाये चवण गइ आगई चेव॥ २ ॥

चोवीस द्वारों के नाम

(१) शरीर द्वार (२)×अवगाहणा द्वार (३) *संघयन द्वार (४) संस्थान = द्वार (५) कषाय द्वार (६) संज्ञा द्वार (७) लेश्या द्वार (८) इन्द्रिय द्वार (९) समुद्घात द्वार (१०) संज्ञी असंज्ञी द्वार (११) वेद द्वार (१२) पर्याप्ति द्वार (१३) दृष्टि द्वार (१४) दर्शन द्वार (१५) ज्ञान द्वार (१६) योग द्वार (१७) उपयोग द्वार (१८) आहार द्वार (१९) उत्पत्ति द्वार (२०) स्थिति द्वार (२१) (समोहिया) मरण द्वार (२२) चवण द्वार २३ गति द्वार २४ आगति द्वार।

(१)शरीर द्वारः-शरीर पांच-१ औदारिक शरीर

× लम्बाई * शरीर की बनावट = शरीर की आकृति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तेजस् शरीर ५ कार्माण शरीर ।

इनके लक्षण:-औदारिक शरीर—जो सड़ जाय, पड़ जाय, गल जाय, नष्ट होजाय, बिगड़ जाय व मरने बाद कलेवर पड़ा रहे। उसे औदारिक शरीर कहते हैं।

२ (औदारिक वा उलटा) जो सड़े नहीं, पड़े नहीं गले नहीं, नष्ट होवे नहीं व मरने बाद बिखर जावे उसे वैक्रिय शरीर कहते हैं ।

३ चौदह पूर्व धारी मुनियों को जब शङ्का उत्पन्न होती है, तब एक हाथ की काया का पुतला बना कर महाविदेह क्षेत्र में श्री श्रीमंद्धर स्वामी से प्रश्न पूछने को भेजें । प्रश्न पूछ कर पीछे आने बाद यदि आलोचना करे तो आराधक व आलोचना नहीं करे तो विराधक कहलाते हैं। इसे आहारिक शरीर कहते हैं ।

४ तेजस् शरीर:—जो आहार करके उसे पचावे वो तेजस् शरीर ।

५ कार्माण शरीर:-जीव के प्रदेश व कर्म के पुद्गल जो मिले हुवे हैं, उन्हें कार्माण शरीर कहते है ।

(२) अवगाहन द्वार-जीवों में अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी (अधिक) औदारिक शरीर की अवगाहना जघन्य अङ्गुल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी—(वनस्पति-आश्री)।

वैक्रिय शरीर की—भव धारणिक वैक्रिय की जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की।

उत्तर वैक्रिय की जघन्य ङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट लक्ष योजन की।

आहारिक शरीर की जघन्य मूढा हाथ की उत्कृष्ट एक हाथ का।

तेजस् शरीर व कार्माण शरीर की अवगाहन जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चौदह राज लोक प्रमाणे तथा अपने अपने शरीर अनुसार।

(३)संघयन द्वारः—संघयन छः-१वज्र ऋषभ नाराच संघयन २ ऋषभ नाराच संघयन ३ नाराच संघयन ४ अर्ध नाराच संघयन ५ कीलिका संघयन ६ सेवार्त्त संघयन।

१ वज्र ऋषभ नाराच संघयन—वज्र अर्थात् किल्ली, ऋषभ याने लपेटने का पाटा अर्थात् ऊपर का वेष्टन, नाराच याने दोनों ओर का मर्कट बंध अर्थात् सन्धि-और संघयन याने हाड़कों का संचय-अर्थात् जिस शरीर में हाड़के दो पुड़ से, मर्कट बंध से बंधे हुवे हों, पाटे के समान हाड़के वींटे हुवे हो व तीन हाड़कों के अन्दर वज्र की किल्ली लगी हुई हो वो वज्र ऋषभ नाराच संघयन (अर्थात् जिस शरीर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की हड्डियां, हड्डी की संधियां व ऊपर का वेष्टन वज्र का होवे व किल्ली भी वज्र की होवे)।

२ ऋषभ नाराच संघयन–ऊपर लिखे अनुसार। अंतर केवल इतना कि इसमें वज्र अर्थात् किल्ली नहीं होती है।

३ नाराच संघयन–जिसमें केवल दोनों तरफ मर्कट बंध होते हैं।

४ अर्ध नाराच संघयन–जिसके एक तरफ मर्कट बंध व दूसरी (पड़दे) तरफ किल्ली होती है।

५ कीलिका संघयन–जिसके दो हड्डियों की संधि पर किल्ली लगी हुई होवे।

६ सेवार्त्त संघयन–जिसकी एक हड्डी दूसरी हड्डी पर चढ़ी हुई हो (अथवा जिसके हाड़ अलग अलग हो, परंतु चमड़े से बंधे हुवे हो)।

(४) संस्थान द्वार–संस्थान छः-१समचतुरस्त्र संस्थान २ निग्रोध परिमण्डल संस्थान ३ सादिक संस्थान ४ वामन संस्थान ५ कुब्ज संस्थान ६ हूण्डक संस्थान।

१ पांव से लगा कर मस्तक तक सारा शरीर सुन्दराकार अथवा शोभायमान होवे सो समचतुरस्त्र संस्थान।

२ जिस शरीर का नाभि से ऊपर तक का हिस्सा सुन्दराकार हो परंतु नीचे का भाग खराब हो (वट वृक्ष सदृश) सो न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ जो केवल पांव से लगा कर नाभि (या कटि) तक सुन्दर होवे सो सादिक संस्थान ।

४ जो ठेंगना (५२ अङ्गुल का) हो सो वामन संस्थान ।

५ जिस शरीर के पांव, हाथ, मस्तक, ग्रीवा न्यूनाधिक हो व कुबड़ निकली होवे और शेष अवयव सुंदर होवे सो कुब्ज संस्थान ।

६ हुण्डक संस्थान–रुंढ, मूंढ, मृगा पुत्र, रोहवा के शरीर के समान अर्थात् सारा शरीर बेडौल होवे सो हुण्डक संस्थान ।

(५) कषाय द्वार–कषाय चार–१ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ।

(६) संज्ञा द्वारः–संज्ञा चार–१आहार संज्ञा २ भय संज्ञा ३ मैथुन संज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा ।

(७) लेश्या द्वारः–लेश्या छः–१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या ।

(८)इन्द्रिय द्वारः–इन्द्रिय पांच-१ श्रुतेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

(९) समुद्घात द्वारः–समुद्घात सात–१ वेदनीय समुद्घात २ कषाय समुद्घात ३ मारणांतिक समुद्घात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ वैक्रिय समुद्घात ५ तेजस् समुद्घात ६ आहारिक समुद्घात ७ केवल समुद्घात ।

(१०)संज्ञी असंज्ञी द्वारः-जिनमें विचार करने की (मन) शक्ति होवे सो संज्ञी और जिनमें (मन) विचार करने की शक्ति नहीं होवे सो असंज्ञी ।

(११) वेद द्वार-वेद तीन-१ स्त्री वेद २ पुरुष वेद ३ नपुसंक वेद ।

(१२) पार्याप्ति द्वार-पर्याप्ति छः-१ आहार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति ३ इन्द्रिय पर्याप्ति ४ श्वासोश्वास पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ भाषा पर्याप्ति ।

(१३) दृष्टि द्वार-दृष्टि तीन--१ समयग् दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि ३ सम मिथ्यात्व (मिश्र) दृष्टि ।

(१४)दर्शन द्वार-दर्शन चार-१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन ।

(१५)ज्ञान अज्ञान द्वार-ज्ञान पांच-१मति ज्ञान२श्रुत ज्ञान ३ अवधि ज्ञान ४ मनः पर्यव ज्ञान ५ केवल ज्ञान । अज्ञान तीन-१ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विभंग ज्ञान ।

(१६) योग द्वार-योग पन्द्रह--१ सत्य मन योग २ असत्य मन योग ३ मिश्र मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ सत्य वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग ११ वैक्रिय

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

शरीर काय योग १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग १३ आहारिक शरीर काय योग १४ आहारिक मिश्र शरीर काय योग १५ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार—उपयोग बारह-१ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ अवधि ज्ञान उपयोग ३ मनःपर्यव ज्ञान उपयोग ५ केवल ज्ञान उपयोग ६ मति अज्ञान उपयोग ७ श्रुत अज्ञान उपयोग ८ विभंग अज्ञान उपयोग ६ चक्षु दर्शन उपयोग १० अचक्षु दर्शन उपयोग ११ अवधि दर्शन उपयोग १२ केवल दर्शन उपयोग।

१८ आहार द्वार-आहार तीन—१ ओजस आहार २ रोम आहार ३ कवल आहार यह सचित आहार, अचित आहार, मिश्र आहार (तीन प्रकार का होता है।)

१६ उत्पाति द्वार—चोवीस दण्डक का आवे। सात नरक का एक दण्डक १, दश भवन पति के दश दण्डक, ११, पृथ्वीकाय का एक दण्डक, १२, अपकाय का एक दण्डक, १३, तेजस काय का एक, १४, वायु काय का एक, १५, वनस्पति काय का एक, १६, बेइन्द्रिय का एक, १७, त्रैन्द्रिय का एक, १८ चौरिन्द्रिय का एक, १६, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय का एक, २०, मनुष्य का एक, २१, वाण व्यन्तर का एक, २२, ज्योतिषी का एक, २३, वैमानिक का एक, २४,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२० स्थिति द्वारः--स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तेंतीस सागरोपम की।

२१ मरण द्वारः--समोहिया मरण, असमोहिया मरण। समोहिया मरण जो चींटी की चाल के समान चाले व असमोहिया मरण जो दड़ी के समान चाले (अथवा बन्दूक की गोला समान)

२२ चवण द्वारः--चोवीस ही दण्डक में जावे—पहले कहे अनुसार।

आगति द्वारः—चार गति में से आवे १ नरक गति में से २ तिर्यंच गति में से ३ मनुष्य गति में से ४ देव की गति में से।

गति द्वारः—पांच गति में जावे १ नरक गति में २ तिर्यञ्च गति में ३ मनुष्य गति में ४ देव गति में ५ सिद्ध गति में।

॥ इति समुच्चय चोवीस द्वार ॥

नारकी का एक तथा देवता के तेरह दण्डक एवं १४ दण्डक लिख्यते

शरीर द्वारः—

नारकी में शरीर पावे तीन १ वैक्रिय २ तेजस् ३ कार्माण। देवता में शरीर तीन १ वैक्रिय २ तेजस् ३ कार्माण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवगाहन द्वारः-

१ पहेली नारकी की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्य तवें भाग, उत्कृष्ट पोना आठ धनुष्य और छः अङ्गुल।

२ दूसरी नारकी की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट साड़ा पन्द्रह धनुष्य व चार अङ्गुल।

३ तीसरी नारकी की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट सवाएकतीस धनुष्य की।

४ चौथी नरक की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट साड़ा बासठ धनुष्य की।

५ पांचवें नरक की जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें उत्कृष्ट १२५ धनुष्य की।

६ छट्ठे नरक की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट २५० धनुष्य की।

७ सातवें नरक की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की। उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट-जिस नरक की जितनी उत्कृष्ट अवगाहना है उससे दुगनी वैक्रिय करे (यावत् सातवें नरक की एक हजार अवगाहना जानना।)

१ भवन पति के देव व देवियों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ बाण व्यन्तर के देव व देवियों की अवगाहन जघन्य अंगुल के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ की।

ज्योतिषी देव व देवियों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ की।

वैमानिक की अवगाहना नीचे लिखे अनुसार:—

पहले तथा दूसरे देवलोक के देव व देवियों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट सात हाथ की। तीसरे, चौथे देवलोक के देव की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट छः हाथ की। पांचवें, छट्ठे देवलोक के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट पांच हाथ की।

सातवें, आठवें देवलोक के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट चार हाथ की।

नववें, दशवें, इग्यारहवें व बारहवें देवलोक के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट तीन हाथ की। नव ग्रैवेक (ग्रीयवेक) के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट दो हाथ की।

चार अनुत्तर विमान के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक हाथ की।

पांचवें अनुत्तर विमान के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट मूढा (एक मूंठ कम) हाथ की। भवनपति से लगाकर बारह देवलोक पर्यन्त उत्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग, उत्कृष्ट लक्ष योजन की।

नव ग्रैवेक तथा पांच अनुत्तर विमान के देव उत्तर वैक्रिय नहीं करते।

३ संघयन द्वार।

नरक के नेरिये असंघयनी। देव असंघयनी।

४ संस्थान द्वार।

नरक में हूण्डक संस्थान वं देवलोक के देवों का समचतुरस्र संस्थान।

५ कषाय द्वार।

नरक में चार कषाय व देवलोक में भी चार।

६ संज्ञा द्वारः—

नारकी में संज्ञा चार, देवलोक में संज्ञा चार।

७ लेश्या द्वारः—

नारकी में लेश्या तीनः—

पहली दूसरी नरक में कापोत लेश्या।
तीसरी नरक में कापोत व नील लेश्या।
चौथी नरक में नील लेश्या।
पांचवीं नरक में कृष्ण व नील लेश्या।
छट्ठी नरक में कृष्ण लेश्या।
सातवीं नरक में महाकृष्ण लेश्या।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भवन पति व वाणव्यन्तर में चार लेश्या १ कृष्ण २ नील ३ कापोत ४ तेजो।

ज्योतिषी, पहेला व दूसरा देवलोक में–१ तेजो लेश्या।

तीसरे, चौथे व पांचवें देवलोक में–१ पद्म लेश्या।

छठे देवलोक से नव ग्रैवेक(ग्रीयवेक)तक १ शुक्ल लेश्या।

पांच अनुत्तर विमान में–१ परम शुक्ल लेश्या।

८ इन्द्रिय द्वार:—

नरक में पांच व देवलोक में पांच इन्द्रिय।

९ समुद् घात द्वार:—

नरक में चार समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय।

देवताओं में पांच–१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक ४ वैक्रिय ५ तेजस्।

भवन पति से बारहवें देवलोक तक पांच समुद्घात नव ग्रीयवेक से पांच अनुत्तर विमान तक तीन समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक।

१० संज्ञी द्वार:—

पहली नरक में संज्ञी व * असंज्ञी और शेष नरकों में संज्ञी।

* असंज्ञी तिर्यञ्च मर कर इस गति में उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्ता दशा में असंज्ञी है। पर्याप्ता होने बाद अवधि तथा विभंग ज्ञान उत्पन्न होता है। इस अपेक्षा से समझना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भवन पति, वाण व्यन्तर में—संज्ञा, असंज्ञी।

ज्योतिषी से अनुत्तर विमान तक संज्ञी।

११ वेद द्वारः—

नरक में नपुंसक वेद, भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी, तथा पहले दूसरे देवलोक में १ स्त्री वेद २ पुरुष वेद शेष देवलोक में १ पुरुष वेद।

१२ पर्याप्ति द्वारः—

(भाषा, व मन दोनों एक साथ बांधते हैं) नरक में पर्याप्ति पांच और अपर्याप्ति पांच, देवलोक में पर्याप्ति पांच और अपर्याप्ति पांच।

१३ दृष्टि द्वारः-

नरक में दृष्टि तीन, भवन पति से बारहवें देवलोक तक दृष्टि तीन, नव ग्रीयवेक में दृष्टि दो (मिश्र दृष्टि छोड़ कर) पांच अनुत्तर विमान में दृष्टि १ सम्यग् दृष्टि।

१४ दर्शन द्वारः—

नरक में दर्शन तीन–१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन।

देवलोक में दर्शन तीन–१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन।

१५ ज्ञान द्वारः—

नरक में तीन ज्ञान व तीन अज्ञान। भवन पति से नव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रीयवेक तक तीन ज्ञान व तीन अज्ञान । पांच अनुत्तर विमान में केवल तीन ज्ञान, अज्ञान नहीं ।

१६ योग द्वारः-

नरक में तथा देवलोक में इग्यारह इग्यारह योग-१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मन योग ४व्यवहार मनयोग ५सत्य वचन योग ६असत्य वचन योग ७मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ वैक्रिय शरीर काय योग१०वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग११कार्मण शरीर काय योग ।

१७ उपयोग द्वारः-

नरक, व भवन पति से नव ग्रीयवेक तक उपयोग नव-१ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५ श्रुत अज्ञान उपयोग ६ विभंग ज्ञान उपयोग ७ चक्षु दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग ।

पांच अनुत्तर विमान में ६ उपयोग तीन ज्ञान और तीन दर्शन ।

१८ आहार द्वारः-

नरक व देवलोक में दो प्रकार का आहार १ ओजस २ रोम छः ही दिशाओं का आहार लेते हैं । परन्तु लेते हैं एक प्रकार का-नेरिये अचित्त आहार करते हैं किन्तु अशुभ और देवता भी अचित्त आहार करते है किन्तु शुभ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९ उत्पत्ति द्वार और २२ चवन द्वारः—

पहली नरक से छठ्ठी नरक तक मनुष्य व तिर्यंच पंचेन्द्रिय-इन दो दण्डक के आते हैं—व दो ही (मनुष्य, तिर्यंच) दण्डक में जाते हैं ।

सातवीं नरक में दो दण्डक के आते हैं-मनुष्य व तिर्यंच, व एक दण्डक में—तिर्यंच पंचेन्द्रिय-में जाते हैं ।

भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी तथा पहले दूसरे देवलोक में दो दण्डक—मनुष्य व तिर्यंच के आते हैं व पांच दण्डक में जाते हैं १ पृथ्वी २ अप ३ वनस्पति, ४ मनुष्य ५ तिर्यंच पंचेंद्रिय ।

तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक दो दण्डक मनुष्य और तिर्यंच-का आवे और दो ही दण्डक में जावे ।

नवमें देवलोक से अनुत्तर विमान तक एक दण्डक मनुष्य का आवे और एक मनुष्य-ही में जावे ।

२० स्थिति द्वारः—

पहले नरक के नेरियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर की ।

दूसरे नरक की ज० १ सागर की,उ० ३ सागर की ।

तीसरे नरक की ज० ३ सागर की,उ० ७ सागर की ।

चौथे नरक की ज० ७ सागर की,उ० १० सागर की ।

पांचवें नरक की ज० १०सागर की, उ०१७सागर की ।

छठ्ठे नरक की ज० १७सागर की,उ० २२सागर की ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सातवें नरक की ज० २२ सागर की, उ० ३३ सागर की।

दक्षिण दिशा के असुर कुमारके देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट एक सागरोपम की। इनकी देवियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३॥ पल्योपम की। इनके नवनिकाय के देवों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट १॥ पल्योपम की। इनकी देवियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट पौन पल्यकी।

उत्तर दिशा के असुर कुमार के देवों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर जाजेरी। इनकी देवियों की स्थिति ज, दश हजार वर्ष की, उ. ४॥ पल्य की। नवनिकाय के देव की ज. दश हजार वर्ष उ. देश उणा (कम) दो पल्योपम की, इनकी देवियों की ज. दश हजार वर्ष की उ. देश उणा (कम) एक पल्योपम की।

वाण व्यन्तर के देव की स्थिति ज. दश हजार वर्ष की, उ. एक पल्य की। इनकी देवियों की ज. दश हजार वर्ष की, उ. अर्ध पल्य की।

चन्द्र देव की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. एक पल्य और एक लक्ष वर्ष की। देवियों की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. अर्ध पल्य और पचास हजार वर्ष की।

सूर्य देव की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. एक पल्य और एक हजार वर्ष की। देवियों की ज. पाव पल्य की उ. अर्ध पल्य और पांचसो वर्ष की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रह (देव) की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. एक पल्य की । देवी की ज. पाव पल्य की उत्कृष्ट अर्ध पल्य की ।

नक्षत्र की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. अर्ध पल्य की । देवी की ज. पाव पल्य की उ. पाव पल्य जाजेरी ।

तारा की स्थिति ज. पल्य के आठवें भाग उ. पाव पल्य की। देवी की ज. पल्य के आठवें भाग उ. पल्य के आठवें भाग जाजेरी ।

पहले देवलोक के देव की ज. एक पल्य की उ. दो सागर की । देवी की ज. एक पल्य की उ. सात पल्य की । अपरिगृहिता देवी की ज. एक पल्य की उ. ५० पल्य की ।

दूसरे देवलोक के देव की ज. एक पल्य जाजेरी उ. दो सागर जाजेरी, देवी की ज. एक पल्य जाजेरी उ. नव पल्य की । अपरिगृहिता देवी की ज. एक पल्य जाजेरी उ. पंचावन पल्य की ।

तीसरे देवलोक के देव की ज. २ सागर की उ. ७ सागर
चौथे " " " " " २ " जाजेरी " ७ " जा.
पांचवें " " " " " ७ " की " १० " की
छठे " " " " १० " " " १४ " "
सातवें " " " " १४ " " " १७ " "
आठवें " " " " १७ " " " १८ " "
नवें " " " " १८ " " " १९ " "
दशवें " " " " १९ " " " २० " "

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इग्यारवें	"	"	"	"	२०	"	"	"	२१	"	"
बारवें	"	"	"	"	२१	"	"	"	२२	"	"
पहेली ग्रीयवेक	"	"		"	२२	"	"	"	२३	"	"
दूसरी	"	"	"	"	२३	"	"	"	२४	"	"
तीसरी	"	"	"	"	२४	"	"	"	२५	"	"
चौथी	"	"	"	"	२५	"	"	"	२६	"	"
पांचवी	"	"	"	"	२६	"	"	"	२७	"	"
छट्ठी	,,	,,	,,	,,	२७	,,	,,	,,	२८	,,	,,
सातवीं	,,	,,	,,	,,	२८	,,	,,	,,	२९	,,	,,
आठवीं	,,	,,	,,	,,	२९	,,	,,	,,	३०	,,	,,
नवीं	,,	,,	,,	,,	३०	,,	,,	,,	३१	,,	,,
चार अनुत्तर विमान	,,	,,		,,	३१	,,	,,	,,	३२	,,	,,

पांचवें अनुत्तर विमान की ज. उ. ३३ सागरोपम की।

२१ मरण द्वार:-

१ समोहिया और २ असमोहिया।

२३ आगति और २४ गति द्वार:-

पहली नरक से छट्ठी नरक तक दो गति—मनुष्य और तिर्यंच--का आवे और दो गति--मनुष्य, तिर्यंच में जावे। सातवीं नरक में दो गति -मनुष्य, तिर्यंच का आवे और एक गति--तिर्यंच में जावे।

भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी यावत् आठवें देवलोक तक दो गति—मनुष्य और तिर्यंच का आवे और दो गति—मनुष्य और तिर्यंच में जावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवें देवलोक से स्वार्थ सिद्ध तक एक गति-मनुष्य का आवे और एक गति-मनुष्य-में जावे।

॥ इति नारकी तथा देव लोक का २४ दण्डक ॥

॥ पांच एकेन्द्रिय का पांच दण्डक ॥

वायु काय को छोड़ शेष चार एकेन्द्रिय में शरीर तीन १ औदारिक २ तेजस् ३ कार्मण।

वायुकाय में चार शरीर १ औदारिक २ वैक्रिय ३ तेजस् ४ कार्मण।

अवगाहन द्वारः—

पृथ्व्यादि चार एकेन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग।

वनस्पति की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी कमल नाल आश्री।

३ संघयन द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में सेवार्त संघयन।

४ संस्थान द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में हूण्डक संस्थान।

५ कषाय द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में कषाय चार।

६ संज्ञा द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में संज्ञा चार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७ लेश्या द्वारः—

पृथ्वी, अप व वनस्पति काय के-अपर्याप्ता में लेश्या चार १ कृष्ण २ नील ३ कापोत ४ तेजो। पर्याप्ता में तीन-१ कृष्ण २ नील ३ कापोत। तेजस् (अग्नि) और वायुकाय में तीन-१ कृष्ण २ नील ३ कापोत।

८ इन्द्रिय द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में एक इन्द्रिय—स्पर्शेन्द्रिय।

९ समुद्घात द्वारः—

वायु काय को छोड़ कर शेष चार एकेन्द्रिय में तीन समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक। वायु काय में चार १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय।

१० सज्ञी द्वारः—

पाचों एकेन्द्रिय असंज्ञी।

११ वेद द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में नपुंसक वेद।

१२ पर्याप्ति द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में पर्याप्ति चार (पहेली) अपर्याप्ति चार।

१३ दृष्टि द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में एक मिथ्यात्व दृष्टि।

१४ दर्शन द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में एक अचक्षु दर्शन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५ ज्ञान द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में दो अज्ञान १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान।

१६ योग द्वारः—

वायु काय को छोड़ कर शेष चार एकेन्द्रिय में योग तीन १ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग। वायु काय में योग पांच १ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ वैक्रिय शरीर काय योग ४ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग ५ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में उपयोग तीन १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ अचक्षु दर्शन।

१८ आहार द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय तीन दिशाओं का, चार दिशाओं का, पांच दिशाओं का आहार लेवें व्याघात न पड़े तो छः दिशाओं का आहार लेवें आहार दो प्रकार का १ ओजस २ रोम ये १ सचित २ अचित ३ मिश्र तीनों तरह का लेते हैं।

१९ उत्पत्ति द्वार २२ चवन द्वारः—

पृथ्वी, अप्, वनस्पति काय में नरक छोड़ कर शेष २३ दण्डक का आवे और दश दण्डक में जावे-पांच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य व तिर्यंच एव दश दण्डक ।

तेजस् काय, वायु काय में दश दण्डक का आवे–पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य, तिर्यंच–एवं दश और नव दण्डक में जावे, मनुष्य छोड़ कर शेष ऊपर समान।

२० स्थिति द्वारः–

पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट बावीस हजार वर्ष की ।

अप् काय की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट सात हजार वर्ष की । तेजस् काय की ज. अन्तर मुहूर्त की उ. तीन अहोरात्रि की । वायु काय की ज. अन्तर मुहूर्त की उ. तीन हजार वर्ष की । वनस्पति काय की ज. अन्तर मुहूर्त की उ. दश हजार वर्ष की ।

२१ मरण द्वारः-

इनमें समोहिया मरण और असमोहिया मरण दोनों होते हैं ।

२३ आगति द्वार २४ गति द्वारः–

पृथ्वी काय, अप काय, वनस्पति काय, इन तीन एकेन्द्रिय में तीन–१ मनुष्य २ तिर्यंच ३ देव–गति का आवे और १ मनुष्य २ तीर्यंच–दो गति में जावे । तेजस् और वायु काय में १ मनुष्य २ तिर्यंच दो गति का आवे और तिर्यंच–एक गति में जावे ।

॥ इति पांच एकेन्द्रिय का पांच दण्डक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बे इन्द्रिय, त्रेन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रि के दण्डक–

शरीर द्वारः–

बेइन्द्रिय, त्रेन्द्रिय, चौरिन्द्रिय व तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में शरीर तीन १ औदारिक २ तैजस् ३ कामर्ण।

२ अवगाहन द्वारः–

बेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट बारह योजन की। त्रैइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन गाउ (६ मील) की। चौरिन्द्रिय की जघन्य अगुंल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चार गाउ की। तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय की ज. अंगुल के असंख्यातवें भाग उ. नीचे अनुसारः--

गाथा–जोयण सहस्स, गाउअ पुहुत्तं तत्तो जोयण पुहुत्तं;
दोरहं तु धणुह पुहुत्तं समूर्छीमें होइ उच्चत्तं.

१ जलचर की एक हजार योजन की।

२ स्थलचर की प्रत्येक गाउ की (दो से नव गाउ तक की)

३ उरपर (सर्प) की प्रत्येक योजन की (दो से नव योजन तक)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ भुजपर (सर्प) की प्रत्येक धनुष्य की (दो से नव धनुष्य तक की)

५ खचर की प्रत्येक धनुष्य की (दो से नव धनुष्य की)

३ संघयन द्वारः-

तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय त्रेन्द्रिय चौरिन्द्रिय) और तीर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में संघयन एक-सेवार्त्त ।

४ संस्थान द्वारः-

तीन विकलेन्द्रिय और संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में संस्थान एक-हूण्डक ।

५ कषाय द्वारः-

कषाय चार ही पावे ।

६ संज्ञा द्वारः—

संज्ञा चार ही पावे ।

७ लेश्या द्वारः-

लेश्या तीन पावे १ कृष्ण २ नील ३ कापोत ।

८ इन्द्रिय द्वारः—

बेइन्द्रिय में दो इन्द्रिय-१ स्पर्शेन्द्रिय २ रसेन्द्रिय (मुख) त्रेन्द्रिय में तीन इन्द्रिय १ स्पर्शेन्द्रिय २ रसेन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय। चौरिन्द्रिय में चार इन्द्रिय-१ स्पर्शेन्द्रिय २ रसेन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ चक्षु इन्द्रिय ।

तिर्यंच संमूर्छिम में पांच इन्द्रिय-१ स्पर्शेन्द्रिय २ रसेन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ चक्षुइन्द्रिय ५ श्रुतेन्द्रिय ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

९ समुद्घात द्वारः—

इन में समुद् घात तीन पावे—१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक।

१० संज्ञी असंज्ञी द्वारः—

तीन विकलेन्द्रिय तथा संमूर्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय, असंज्ञी।

११ वेद द्वारः—

इन में वेद एक— नपुसंक।

१२ पर्याप्ति द्वारः—

पर्याप्ति पावे पांच १ आहार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति इन्द्रिय पर्याप्ति ४ श्वासोश्वास पर्याप्ति ५ भाषा पर्याप्ति।

१३ दृष्टि द्वारः—

बे इन्द्रिय, त्रेन्द्रिय, चौरिन्द्रिय तथा तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय के अपर्याप्ति में दृष्टि दो १ समकित दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि। पर्याप्ति में एक मिथ्यात्व दृष्टि।

१४ दर्शन द्वार

बेइन्द्रिय, त्रीइन्द्रिय में दर्शन एक १ अचक्षु दर्शन चारिन्द्रय और तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में दो-१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन।

१५ ज्ञान द्वार

अपर्याप्ति में ज्ञान दो:—१ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान, अज्ञान दो १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान, पर्याप्ति में अज्ञान दो।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

१६ योग द्वार

इनमें योग पावे चारः-१औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग ४ व्यवहार वचन योग ।

१७ उपयोग द्वार

बे इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय के अपर्याप्ति में पांच उपयोग १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ मति अज्ञान ४ श्रुत अज्ञान ५ अचक्षु दर्शन पर्याप्ति में तीन उपयोग-दो अज्ञान और एक-अचक्षु-दर्शन । चौरिन्द्रिय और तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय के अपर्याप्ति में छः उपयोग १ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ मति अज्ञान उपयोग ४ श्रुत अज्ञान उपयोग ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु । पर्याप्ति में चार उपयोग-दो अज्ञान और दो दर्शन ।

१८ आहार द्वार

आहार छः दिशाओं का लेवे, आहार तीन प्रकार का ओजस् २ रोम ३ कवल और १ सचित २ अचित्त ३ मिश्र ।

१६ उत्पत्ति द्वार २२ चवन द्वार

बे इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय, चौरिन्द्रिय में, दश दण्डक-पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य और तिर्यंच-का आवे और दश ही दण्डक में जावे । तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में दश दण्डक का आवे-(ऊपर कहे हुवे) और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्योतिषी वैमानिक इन दो दण्डक को छोड़ कर शेष २२ दण्डक में जावे ।

२० स्थिति द्वार

बे इन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट बारह वर्ष की । त्रीइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ४६ दिन की । चौरिन्द्रिय की ज० अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट छः मास की । तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय की नीचे अनुसार—

गाथा—पुव्व क्कोड़ चउराशी, तेरन, बायालीस, बहुत्तेर ।
सहसाइं वासाइं समुछिमे आउयं होइ ॥

जलचर की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट क्रोड़ पूर्व वर्ष की । स्थलचर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उ० चोराशी हजार वर्ष की । उरपर (सर्प) की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ५३ हजार वर्ष की, भुज पर (सर्प) की जघन्य अन्तर मुहुर्त की उत्कृष्ट ४२ हजार वर्ष की, खेचर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ७२ हजार वर्ष की ।

२१ मरण द्वार

समोहिया मरणः-चींटी की चाल के समान जिस की गति हो ।

असमोहिया मरणः—बन्दूक की गोली के समान जिसकी गति हो ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३ आगति द्वार २४ गति द्वार

बे इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय, चौरिन्द्रिय में दो गति—मनुष्य और तिर्यंच का आवे और दो गति मनुष्य तिर्यंच में जावे । तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में दो-मनुष्य और तिर्यंच-गति का आवे और चार गति में जावे १ नरक २ तिर्यंच ३ मनुष्य ४ देव ।

॥ इति तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच संमूर्छिम ॥

तिर्यंच गर्भज पंचेद्रिय का एक डंडक

(१) शरीरः—तिर्यंच गर्भज पंचेंद्रियमें शरीर ४:—

१ आदोरिक २ वैक्रियक ३ तेजस ४ कार्मण

(२) अवगाहना ।

गाथाः-जोयण सहस्सं छ गाउ आई ततो जोयण सहस्सं
गाउ पुहुत्तं भुजये घणुह पुहुत्तं च पक्खीसु ।

जलचरकी—जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की ।

स्थलचरकीः—जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट छ गाउकी ।

उरपरीसर्पकीः—जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन की ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

भुजपरीसर्पकी: जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक गाउकी।

खेचरकी:-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक धनुष्यकी।

उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट ९०० योजनकी।

(३) संघयन द्वार:- तिर्यंच गर्भज पंचेंद्रियमें संघयन छ।

(४) संस्थान द्वार:-संस्थान छ।

(५) कषाय द्वार:-कषाय चार।

(६) संज्ञा द्वार:-संज्ञा चार।

(७) लेश्या द्वार:-लेश्या छ।

(८) इंद्रिय द्वार:--इंद्रिय पांच।

(९) समुद्घात द्वार:--समुद्घात पांच:-१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक ४ वैक्रिय ५ तेजस्।

(१०) संज्ञी द्वार:-संज्ञी।

(११) वेद द्वार:-वेद तीन।

(१२) पर्याप्ति द्वार:-पर्याप्ति छ और अपर्याप्ति छ।

(१३) दृष्टि द्वार:-दृष्टि तीन।

(१४) दर्शन द्वार:-दर्शन तीन:-१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

(१५) ज्ञान द्वारः-ज्ञान तीनः- १ मति ज्ञान २ श्रुतज्ञान ३ अवधि ज्ञान । अज्ञान भी तीन १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विभंग ज्ञान ।

(१६) योग द्वारः-योग तेराः--१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मनयोग ४ व्यवहार मनयोग ५ सत्य बचनयोग ६ असत्य वचनयोग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काययोग ११ वैक्रिय शरीर काययोग १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काययोग १३ कार्मण शरीर काययोग ।

(१७) उपयोग द्वारः-तिर्यंच गर्भज में उपयोग ९ (नो) १ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुतज्ञान ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५ श्रुत अज्ञान उपयोग ६ विभंग ज्ञान उपयोग ७ चक्षु दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग।

(१८) आहारः-आहार तीन प्रकार का ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

(१९) उत्पत्तिद्वारः-(२२) चवन द्वारः-चोवीस
दंडक में उपजे, चोवीस दंडक में
जावे।

(२०) स्थिति द्वारः-जलचर कीः-जघन्य अन्तर मुहूर्त
उत्कृष्ट करोड़ पूर्व
वर्ष की।
स्थलचर कीः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट तीन पल्य की।
उरपरि सर्प कीः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट करोड़ पूर्व
वर्ष की।
भुजपरि सर्प कीः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट करोड़ पूर्व
वर्ष की।
खेचर कीः-जघन्य अन्त र्मुहूर्त उत्कृष्ट
पल्य के असंख्यातवें
भाग की।

(२१) मरण द्वारः-समोहिया मरण असमोहिया मरण।

(२३) आगति द्वार (२४) गति द्वारः-तिर्यंच गर्भज
पंचेंद्रिय में चार गति के जीव आवे
और चार गति में जावे।

॥ तिर्यंच पंचेन्द्रिय का दंडक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य गर्भज पंचेन्द्रिय का एक दंडक

१ शरीरः—मनुष्य गर्भज में शरीर पांच ।

२ अवगाहना द्वारः—अवसर्पिणी काल में मनुष्य गर्भज की अवगाहना पहिला आरा लगते तीन गाउ की, उतरते और दो गाउ की, दूसरा आरा लगते दो गाउ की, उतरते एक गाउ की ।

तीसरे	आरे	लगते	१ गाउकी	उतरते	आरे	५००	धनुष्य की
चौथे	आरे	,,	५०० धनुष्यकी	,,	,,	सात	हाथ की
पांचवें	,,	,,	७ हाथ की	,,	,,	एक	हाथ की
छटे	,,	,,	१ ,, ,,	,,	,,	मूढा	हाथ की

उत्सर्पिणी काल में

पहिले	आरे	लगते	मुढा हाथ की	उतरते	आरे	१	हाथ की
दूसरे	,,	,,	१ ,, ,,	,,	,,	७	हाथ की
तीसरे	,,	,,	७ ,, ,,	,,	,,	५००	हाथ की
चोथे	,,	,,	५०० धनुष्य की	,,	,,	१	गाउ की
पांचवे	,,	,,	१ गाउ की	,,	,,	२	,, ,,
छठे	,,	,,	२ ,, ,,	,,	,,	३	,, ,,

मनुष्य वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग उत्कृष्ट लक्ष जोजन जाजेरी (अधिक)

३ संघयन द्वार—संघयन छः ही पावे

४ संस्थान द्वार—संस्थान ,, ,, ,,

५ कषाय द्वारः—कषाय चार ,, ,,

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

६ संज्ञा द्वार—संज्ञा चार " "
७ लेश्या द्वार—लेश्या छः " "
८ इन्द्रिय द्वार—इन्द्रिय पांच " "
९ समुद् घात द्वार—समुद् घात सात " "
१० सज्ञी द्वार—ये संज्ञी है
११ वद द्वार—वेद तीन ही पावे
१२ पर्याप्ति द्वार-इनमें पर्याप्ति छः अपर्याप्ति छः
१३ दृष्टि द्वार— " दृष्टि तीन
१४ दर्शन "— " दर्शन चार
१५ ज्ञान "— " ज्ञान पांच, अज्ञान तीन
१६ योग "— " योग पन्द्रह
१७ उपयोग "– " उपयोग बारह
१८ आहार "— " आहार तीन प्रकार का

१९ उत्पत्ति द्वार—मनुष्य गर्भज में—तैजस्, वायु काय को छोड़ कर शेष बावीश दंडक का आवे।

२२ चवन द्वार:-चोवीश ही दण्डक में जावे—ऊपर कहे अनुसार।

२० स्थिति द्वार अवसर्पिणी काल में

पहिले आरे लगते तीन पल्यकी स्थिति उतरते आरे दो पल्यकी
दूसरे " " दो " " " " " एक " "
तीसरे " " एक " " " " " करोड़ पूर्व "
चौथे " " करोड़ पूर्व " " " "२००वर्षउणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पांचवें " " २०० वर्ष उणी " " " " वीश वर्ष "
छट्ठे " " २० वर्ष की " " " सोलह " "

उत्सर्पिणी काल में

पहिले आरे लगते १६ वर्ष की स्थिति उतरते आरे २० वर्षकी
दूसरे " " २० वर्ष " " " " २०० वर्ष "
तीसरे " " २०० " " " " " करोड़ पूर्व "
चौथे " " करोड पूर्व की " " " एक पल्य "
पांचवें " " एक पल्य " " " " दो " "
छट्ठे " " दो " " " " " तीन " "

२१ मरण द्वारः–मरण दो–१ समोहिया और २ असमोहिया ।

२३ आगति द्वारः–मनुष्य गर्भज में चार गति का आवे १ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति ।

२४ गति द्वारः–मनुष्य गर्भज पांच ही गति में जावे ।

॥ इति मनुष्य गर्भज का दण्डक सम्पूर्ण ॥

मनुष्य संमूर्छिम का दण्डक

१ शरीरः—इनमें शरीर पावे तीन–औदारिक, तैजस, कार्मण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ अवगाहना द्वार

इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग व उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग।

३ संघयन द्वार—इनमें संघयन एक—सेवार्त्त

४ संस्थान "—" संस्थान एक-हुण्डक

५ कषाय "—" कषाय चार

६ संज्ञा "—" संज्ञा चार

७ लेश्या "—" लेश्या तीन कृष्ण, नील, कापोत

८ इन्द्रिय "—" इन्द्रिय पांच

९ समुद्घात द्वारः-इन में समु० तीन-वेदनीय, कषाय, मारणांतिक।

१० संज्ञी ,,—,,ये असंज्ञी हैं।

११ वेद द्वारः—इन में वेद एक—नपुंसक

१२ पर्याप्ति द्वारः-,,पर्याप्ति चार, अपर्याप्ति पांच

१३ दृष्टि,,-,, दृष्टि एक १ मिथ्यात्व दृष्टि

१४ दर्शन,,-,,दर्शन दो-चक्षु और अचक्षु दर्शन

१५ज्ञान,-,ज्ञान नहीं, अज्ञान दो मति और श्रुत अज्ञान।

१६ योग,,-,,योग तीन १ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७ उपयोग द्वार

उपयोग चार १ मति अज्ञान उपयोग २ श्रुत अज्ञान उपयोग ३ चक्षु दर्शन उपयोग ४ अचक्षु दर्शन उपयोग।

१८ आहार द्वार

आहार दो प्रकार का—ओजस्, रोम० वे-सचित, अचित, मिश्र तीनों ही तरह का लेते हैं।

१६ उत्पत्ति द्वार

मनुष्य संमूर्छिम में आठ दण्डक का आवे १ पृथ्वी काय २ अप काय ३ वनस्पति काय ४ बे इन्द्रिय ५ त्री इन्द्रिय ६ चौरिन्द्रिय ७ मनुष्य ८ तिर्यंच पंचेन्द्रिय।

२२ चवन द्वार

ये दश दण्डक में जावे—पांच एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय मनुष्य और तिर्यंच।

२० स्थिति द्वार

इनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त की।

२१ मरण द्वार-मरण दो प्रकार का-समोहिया, असमोहिया।

२३ आगति द्वार-इन में दो गति का आवे-मनुष्य तिर्यंच।

२४ गति द्वार-दो गति में जावे—मनुष्य और तिर्यंच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युगलिया का दण्डक

१ शरीर द्वार–युगलियों में शरीर तीन १ औदारिक २ तैजस् ३ कार्मण।

२ अवगाहना द्वार

हेम वय हिरण्य वय में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट एक गाउ की, हरिवास रम्यक वास में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट दो गाउ की, देव कुरू, उत्तर कूरू में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन गाउ की, छप्पन्न अन्तर द्वीप में आठ सो धनुष्य की।

३ संघयन द्वार

युगलियों में संघयन एक १ वज्र ऋषभ नाराच संघयन

४ संस्थान द्वार

युग लियों में संस्थान एक–१ समचतुरंस्त्र संस्थान।

५ कषाय द्वारः-युगलियों में कषाय चार।

६ संज्ञा द्वार– ,, ,, संज्ञा चार

७ लेश्या द्वार– ,, ,, लेश्या चार कृष्ण, नील, कपोत, तेजो

८ इन्द्रिय द्वार– ,, ,, इन्द्रिय पांच

६ समुद्घात ,, -- ,, ,, समुद्घात तीन १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक

१० संज्ञी द्वार–युगलिया संज्ञी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११ वेद ,, --इनमें वेद दो १ स्त्री वेद, २ पुरुष वेद।

१२ पर्याप्ति द्वारः--इनमें पर्याप्ति ६, अपर्याप्ति ६।

१३ दृष्टि द्वारः-- ❀ पांच देव कुरू, पांच उत्तर कुरू में दृष्टि दो--१ सम्यग् दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि।

पांच हरिवास पांच रम्यक वास, पांच हेमवय, पांच हिरण्य वय--इन वीश अकर्मभूमि में व छप्पन्न अन्तरद्वीप में दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि।

१४ दर्शन द्वारः--इनमें दर्शन दो १ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन।

१५ ज्ञान द्वारः-- ❀ पांच देव कुरू, पांच उत्तर कुरू में दो ज्ञान--मति और श्रुत ज्ञान और २ अज्ञान--मति अज्ञान और श्रुत अज्ञान, शेष वीश अकर्म भूमि व छप्पन्न अन्तर द्वीप में दो अज्ञान १ मति अज्ञान और २ श्रुत अज्ञान।

१६ योग द्वार

इन में योग ११:--१ सत्य मन योग २ असत्य मन योग ३ मिश्र मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ सत्य

* ३० अकर्म भूमि में २ दृष्टि २ ज्ञान तथा २ अज्ञान होते हैं और ५६ अन्तर द्वीप में ही १ मिथ्यात्व दृष्टि व २ अज्ञान होते हैं ऐसा कई ग्रंथोमें वर्णन आता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग ११ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार

❀ पांच देव कुरु, पांच उत्तर कुरु में उपयोग ६-१ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ मति अज्ञान ४ श्रुत अज्ञान ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु दर्शन। शेष वीश अकर्म भूमि व छप्पन्न अन्तर द्वीप में उपयोग ४:-१ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ चक्षु दर्शन ४ अचक्षु दर्शन।

१८ आहार द्वार

युगलियों में आहार तीन प्रकार का।

१९ उत्पत्ति द्वार व २२ चवन द्वार

तीश अकर्म भूमि में दो दण्डक का आवे १ मनुष्य २ तिर्यंच और १३ दण्डक में जावे-दश भवन पति के दश दण्डक, एक वाण व्यन्तर का, एक ज्योतिषी का, एक वैमानिक का—एवं तेरह दण्डक।

छप्पन्न अन्तर द्वीप में दो दण्डक का आवे मनुष्य और तिर्यंच और इग्यारह दण्डक में जावे-१० भवन पति और एक वाण व्यन्तर-एवं इग्यारह में जावे।

* ३० अकर्म भूमि में ६ उपयोग (२ ज्ञान, २ अज्ञान, २ दर्शन) और ५६ अन्तर द्वीप में ४ उपयोग (२ अज्ञान, २ दर्शन) ही होते है ऐसा अन्य ग्रंथो में वर्णन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२० स्थिति द्वार

हेमवय, हिरण्य वय में जघन्य एक पल्य में देश उणी, उत्कृष्ट एक पल्य की।

हरिवास रम्यक वास में जघन्य दो पल्य में देश उणी उत्कृष्ट दो पल्य की, देव कुरू उत्तर कुरू में जघन्य तीन पल्य में देश उणी उत्कृष्ट तीन पल्य की।

छप्पन्न अन्तर द्वीप में जघन्य पल्य के असंख्यातवें भाग में देश उणी उत्कृष्ट पल्य के असंख्यातवें भाग।

२१ मरण द्वार

मरण २:- १ समोहिया और २ असमोहिया।

२३ आगति द्वार

इनमें दो गति का आवे-- १ मनुष्य और २ तिर्यंच।

२४ गति द्वार

ये एक गति--मनुष्य में जावे।

॥ इति युगलियों का दंडक संपूर्ण ॥

❀ सिद्धों का विस्तार ❀

१ शरीर द्वार:—सिद्धोंके शरीर नहीं।

२ अवगाहना द्वार:—५०० धनुष्य देहमान वाले जो सिद्ध हुवे हैं उनकी अवगाहना ३३३ धनुष्य और ३२ अंगुल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सात हाथ के जो सिद्ध हुवे हैं उनकी अवगाहना चार हाथ और सोलह अंगुल की।

दो हाथ के जो सिद्ध हुवे है उनकी एक हाथ और आठ अंगुल की।

३ संघयन द्वार:-सिद्ध असंघयनी (संघयन नहीं)।
४ संस्थान द्वार- ,, असंस्थानी (संस्थान नहीं)।
५ कषाय द्वार- ,, अकसायी (कषाय नहीं)।
६ संज्ञा ,, - ,, में संज्ञा नहीं।
७ लेश्या ,, - ,, ,, लेश्या ,, ।
८ इन्द्रिय ,, - ,, ,, इन्द्रिय नहीं।
९ समुद्घात ,,- ,, ,, समुद्घात ,, ।
१० संज्ञी ,, - सिद्ध नहीं तो संज्ञी और न असंज्ञी।
११ वेद ,, - सिद्ध में वेद नहीं।
१२ पर्याप्ति द्वार--सिद्ध न पर्याप्ति है और न अपर्याप्ति है।
१३ दृष्टि द्वार--सिद्ध--सम्यग् दृष्टि।
१४ दर्शन द्वार--सिद्ध में केवल एक दर्शन--केवल दर्शन।

१५ ज्ञान द्वार:-सिद्ध में केवल ज्ञान।

१६ योग द्वार:-सिद्ध में योग नहीं।

१७ उपयोग द्वार:-सिद्ध में उपयोग दो १ केवल ज्ञान २ केवल दर्शन।

१८ आहार द्वार:-सिद्ध में आहार नहीं।

१९ उत्पत्ति द्वार:-- " " उत्पत्ति नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२० स्थिति द्वारः--सिद्ध की आदि है परन्तु अन्त नहीं।

२१ मरण द्वारः--सिद्ध में मरण नहीं।

२२ चवन " :--सिद्ध चवते नहीं।

२३ आगति " :–सिद्ध में एक गति-मनुष्य-का आवे।

२४ गति " :-- " " गति नहीं।

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त को मेरा तीनों काल पर्यन्त नमस्कार होवे।

॥ इति श्री सिद्ध भगवन्त का विस्तार सम्पूर्ण ॥

—: ॥ इति चोवीश दण्डक सम्पूर्णः—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* आठ कर्म की प्रकृति *

आठ कर्मों के नाम—१ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गौत्र ८ अन्तराय।

इनके लक्षण

१ ज्ञानावरणीय कर्म—सूर्य को ढांकने वाले बादल के समान

२ दर्शनावरणीय कर्म-- राजा के समीप पहुँचाने में जैसे द्वारपाल है उस (द्वारपाल) समान।

३ वेदनीय कर्म--साता वेदनीय मधु लगी हुई तलवार की धार समान--जिसे चाटने से तो मीठी मालूम होवे परन्तु जीभ कटजावे।

असाता वेदनीय अफीम लगी हुई खड्ग समान।

४ मोहनी कर्म-- दारू (शराब) समान।

५ आयुष्य कर्म--राजा की बेड़ी समान जो समय हुवे बिना छूट नहीं सके।

६ नाम कर्म--चीतारा (पेन्टर) समान--जो विविध प्रकार के रुप बनाता है।

७ गोत्र कर्म--कुम्भकार के चक्र समान जो मिट्टी के पिंड को घूमाता है।

८ अन्तराय कर्म--सर्व शक्ति रूप लक्ष्मी को रखता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है जैसे राजा का भंडारी भंडार (खजाना) को रखता है।

आठ कर्म की प्रकृति तथा आठ कर्मों का बन्ध कितने प्रकार से होता है व कितने प्रकार से वे भोगे जाते हैं, तथा आठ कर्मों की स्थिति आदिः—

१ ज्ञानावरणीय कर्म

ज्ञानावरणीय कर्म की पांच प्रकृति १ मति ज्ञाना-- वरणीय २ श्रुत ज्ञानावरणीय ३ अवधि ज्ञानावरणीय ४ मनःपर्यव ज्ञानावरणीय ५ केवल ज्ञानावरणीय।

ज्ञाना वरणीय कर्म छ प्रकारे बांधे—१ नाण-- प्पडिणियाए—ज्ञान तथा ज्ञानी का अवर्णवाद बोले तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे २ नाण निन्हवणियाए-ज्ञान देने वाले के नाम को छिपावे तो ज्ञाना वरणीय कर्म बांधे ३ नाण अन्तरायेणं—ज्ञान में (प्राप्त करने में) अन्तराय (बाधा) डाले तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ४ नाण पउसेणं--ज्ञान तथा ज्ञानी पर द्वेष करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ५ नाण आसायणाए--ज्ञान तथा ज्ञानी की असातना (तिरस्कार, निरादर) करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ६ विसंपायणा जोगणं--ज्ञानी के साथ खोटा (झूठा) विवाद करे ज्ञानावरणीय कर्म बांधे।

॥ ज्ञानावरणीय कर्म १० प्रकारे भोगवे ॥

१ श्रोत आवरण २ श्रोत विज्ञान आवरण ३ नेत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवरण ४ नेत्र विज्ञान आवरण ५ घ्राण आवरण ६ घ्राण विज्ञान आवरण ७ रस आवरण ८ रस विज्ञान आवरण ९ स्पर्श आवरण १० स्पर्श विज्ञान आवरण ।

ज्ञानावरणीय कर्म की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तीश करोड़ा करोड़ी सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का ।

❀ दर्शनावरणीय कर्म का विस्तार ❀

॥ दर्शनावरणीय कर्म की प्रकृति नव ॥

१ निद्रा--सुख से उंघे और सुख से जागे ।

२ निद्रा निद्रा -दुःख से उंघे और दुःख से जागे ।

३ प्रचला--बैठे २ उंघे ।

४ प्रचला प्रचला--बोलता बोलता व खातां खातां उंघे ।

५ थीणाद्धि (स्त्यानर्द्धि) निद्रा--उंघ के अन्दर अर्ध वासुदेव का बल आवे । जब उंघ के अन्दर ही उठ बैठ, उठ कर द्वार (किवाड़) खोले, खोल कर अन्दर से आभूषणों का डिब्बा और वस्त्रों की गठड़ी लेकर नदी पर जावे । वो डिब्बा हजार मन की शिला उठा कर उसके नीचे रखे व कपड़ों को धो कर घर पर आवे, सुबह सोकर उठे परन्तु मालुम होवे नहीं कि रात को मैंने क्या २ किया । डिब्बे को ढूंढे परन्तु घर में मिले नहीं । ऐसी निद्रा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छ महिने बाद फिर आवे उस समय डिब्बा जहां रक्खा होवे वहां से लाकर घर में रखे पश्चात् काल करे। ऐसी निद्रा लेने वाला जीव मर कर नरक में जावे। इसे स्त्यानर्द्धि निद्रा कहते है।

६ चक्षु दर्शनावरणीय ७ अचक्षु दर्शना वरणीय ८ अवधि दर्शनावरणीय ९ केवल दर्शनावरणीय।

❀ दर्शणा वरणीय कर्म छ प्रकारे बांधे ❀

१ दंसण पडिणियाए—सम्यक्त्व तथा सम्यक्त्वी का अवर्णवाद बोले तो दर्शनावरणीय कर्म बांधे।

२ दंसण निण्हवणियाए—बोध बीज सम्यक्त्व दाता के नाम को छिपावे तो दर्शनावरणीय कर्म बांधे।

३ दंसण अंतरायेणं—यदि कोई समकित ग्रहण करता हो उसे अन्तराय देवे तो दर्शनावरणीय कर्म बांधे।

४ दंसण पाउसियाए—समकित तथा सम्यक्त्वी पर द्वेष करे तो दर्शना वरणीय कर्म बांधे।

५ दंसण आसायणाए—समकित तथा सम्यक्त्वी की असातना करे तो दर्शना वरणीय कर्म बांधे।

६ दंसण विसंवायणा जोगेणं—सम्यक्त्वी के साथ खोटा व झूंठा विवाद करे तो दर्शना वरणीय कर्म बांधे।

दर्शना वरणीय कर्म नव प्रकारे भोगवे

१ निद्रा २ निद्रा निद्रा ३ प्रचला ४ प्रचला प्रचला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ थीणद्धि (स्त्यानर्द्धि) ६ चक्षु दर्शना वरणीय ७ अचक्षु दर्शना वरणीय ८ अवधि दर्शना वरणीय ९ केवल दर्शना वरणीय ।

दर्शना वरणीय कर्म की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तीश करोडा करोडी सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का ।

❀ ३ वेदनीय कर्म का विस्तार ❀

वेदनीय कर्म के दो भेद—१ शाता वेदनीय २ अशाता वेदनीय । वेदनीय कर्म की सोलह प्रकृतिः—आठ शाता वेदनीय की और आठ अशाता वेदनीय की ।

। शाता वेदनीय कर्म की आठ प्रकृति ।

१ मनोज्ञ शब्द २ मनोज्ञ रूप ३ मनोज्ञ गंध ४ मनोज्ञ रस ५ मनोज्ञ स्पर्श ६ मन सौख्य (सुहिया) ७ वचन सौख्य ८ काया सौख्य ।

। अशाता वेदनीय कर्म की आठ प्रकृति ।

१ अमनोज्ञ शब्द २ अमनोज्ञ रूप ३ अमनोज्ञ गंध ४ अमनोज्ञ रस ५ अमनोज्ञ स्पर्श ६ मन दुख ७ वचन दुख ८ काया दुख ।

वेदनीय कर्म २२ प्रकारे बांधे इसमें शाता वेदनीय १० प्रकारे बांधे

* १ पाणाणु कंपियाए २ भूयाणु कंपियाए

* १ प्राणी अनुकम्पा २ भूत अनुकम्पा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ जीवाणु कंपियाए ४ सत्ताणु कंपियाए ५ बहुणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं अदुखणीयाए ६ असोयणियाए ७ अझुरणियाए ८ अटीप्पणियाए ९ अपीट्टणियाए १० अपरितावणियाए ।

। अशाता वेदनीय बारह प्रकारे बांधे ।

११ पर दुखणियाए १२ पर सोयणियाए १३ पर झुरणियाए १४ परटीप्पणियाए १५ परपीट्टणियाए १६ परपरितावणियाए १७ बहुणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं दुखणियाए १८ सोयणियाए १९ झुरणियाए २० टीप्पणियाए २१ पीट्टणियाए २२ परितावणियाए ।

वेदनीय कर्म सोलह प्रकारे भोगवे उक्त सोलह प्रकृति अनुसार ।

वेदनीय कर्म की स्थिति--शाता वेदनीय की स्थिति जघन्य दो समय की उत्कृष्ट पन्द्रह करोडा करोड़ी सागरोपम की, अबाधा काल करे तो जघन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट १॥ हजार वर्ष का ।

---

३ जीव अनुकम्पा ४ सत्त्व अनुकम्पा ५ बहु प्राणी भूत जीव सत्त्व को दुख देना नहीं ६ शोक करना नहीं ७ झुरणा नहीं ८ टपक २ आंसु (अश्रुपात) गिराना नहीं ९ पीटना नहीं और परितापना (पश्चाताप) करना नहीं ।

११ पर (दूसरा) को दुख देना १२ पर को शोक कराना १३ पर को झुराना १४ पर से आंसु गिरवाना १५ पर को पीटना १६ पर को परिताप देना १७ बहु प्राणी भूत जीव सत्त्वों को दुख देना १८ शोक करना १९ झुरना २० टपक २ आंसु गिराना २१ पीटना २२ परितापना करना ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अशाता वेदनीय की स्थिति जघन्य एक सागरके सातहिस्सोमें से तीन हिस्से और एक पल्य के असंख्यातवें भाग उणी (कम) उत्कृष्ट तीश करोडा करोडी सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का ।

❀ ४ मोहनीय कर्म का विस्तार ❀

मोहनीय कर्म के दो भेदः-१ दर्शन मोहनीय २चारित्र मोहनीय ।

१ **दर्शन मोहनीय** की तीन प्रकृतिः-१ सम्यक्त्व मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय ३ मिश्र (समामिथ्यात्व) मोहनीय ।

२ **चारित्र मोहनीय** के दो भेदः-१ कषाय चारित्र मोहनीय २ नोकषाय चारित्र मोहनीय । कषाय चारित्र मोहनीय की सोलह प्रकृति, नौकषाय चारित्र मोहनीय की नव प्रकृति एवं २८ प्रकृति ।

कषाय चारित्र मोहनीय की १६ प्रकृति ।

१ अनन्तानु बंधी क्रोध--पर्वत की चीर समान
२ " " मान-- पत्थर के स्तम्भ समान
३ " " माया--वांस की जड (मूल) "
४ " " लोभ--कीरमजी रंग समान

इन चार प्रकृति की गति नरक की, स्थिति जाव जीव की और घात करे समकित की ।

५ अप्रत्याख्यानी क्रोध--तालाब की तीराड़ के समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६　,,　,, मान–हड्डिका स्थम्भ समान

७　,,　,, माया–मेंढे के सींग समान

८　,,　लोभ–नगर की गटर के कर्दम (कादा) समान ।

इन चार की गति तिर्यंच की, स्थिति एक वर्ष की, घात करे देश व्रत की ।

९ प्रत्याख्याना वरणीय क्रोध-वेलु (रेत) की भींत (दीवार) समान

१०　,,　,, मान–लकड़ के स्थम्भ समान

११　,,　,, माया-गौमुत्रिका(बैल मुतणी)समान

१२　,,　,, लोभ–गाडा का आंजन (कज्जल) ,,

इन चार की गति--मनुष्य की, स्थिति चार माह की, घात करे साधुत्व की ।

१३ संज्वलन को क्रोध–जल के अन्दर लकीर समान

१४　,,　,, मान–तृण के स्थम्भ समान

१५　,,　,, माया--वांस की छोई (छिलका) समान

१६　,,　,, लोभ--पतंग तथा हलदी के रंग समान

इन चार की गति--देव की, स्थिति पन्द्रह दिनों की, घात करे केवल ज्ञान की ।

। नोकषाय चारित्र मोहनीय की नव प्रकृति ।

१ हास्य २ रति ३ अरति ४ भय ५ शोक ६ दुःगंछा ७ स्त्री वेद ८ पुरुष वेद ९ नपुंसक वेद ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

❀ मोहनीय कर्म छ प्रकारे बांधे ❀

१ तीव्र क्रोध २ तीव्र मान ३ तीव्र माया ४ तीव्र लोभ ५ तीव्र दर्शन मोहनीय ६ तीव्र चारित्र मोहनीय ।

❀ मोहनीय कर्म पांच प्रकारे भोगवे ❀

१ सम्यक्त्व मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय ३ सम्यक्त्व मिथ्यात्व (मिश्र) मोहनीय ४ कषाय चारित्र मोहनीय ५ नोकषाय चारित्र मोहनीय ।

॥ मोहनीय कर्म की स्थिति ॥

जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ७० करोडा करोड सागरोपम की, अबाधा काल जघन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का ।

❀ आयुष्य कर्म का विस्तार ❀

आयुष्य कर्म की चार प्रकृतिः—१ नरक का आयुष्य २ तिर्यंच का आयुष्य ३ मनुष्य का आयुष्य ४ देव का आयुष्य ।

आयुष्य कर्म सोलह प्रकारे बांधे

१ नरक आयुष्य चार प्रकारे बांधे २ तिर्यंच का आयुष्य चार प्रकारे बांधे ३ मनुष्य का आयुष्य चार प्रकारे बांधे ४ देव आयुष्य चार प्रकारे बांधे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरक आयुष्य चार प्रकारे बांधे—१ महा आरम्भ २ महा परिग्रह ३ मद मांस का आहार ४ पंचेन्द्रिय वध।

तिर्यंच आयुष्य चार प्रकारे बांधे-१ कपट २ महा कपट ३ मृषावाद ४ खोटा तोल खोटा माप।

मनुष्य आयुष्य चार प्रकारे बांधे-१ भद्र प्रकृति २ विनय प्रकृति ३ सानुक्रोष (दया) ४ अमत्सर (इर्षा रहित)।

देव आयुष्य चार प्रकारे बांधे-१ सराग संयम २ संयमा संयम ३ बालतपोप कर्म ४ अकाम निर्जरा।

। आयुष्य कर्म चार प्रकारे भोगवे ।

१ नेरिये नरक का भोगवे २ तिर्यंच, तिर्यंच का भोगवे ३ मनुष्य, मनुष्य का भोगवे ४ देव, देव का भोगवे।

आयुष्य कर्म की स्थिति

नरक व देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष और अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तेतीश सागर और करोड पूर्व का तीसरा भाग अधिक।

मनुष्य व तिर्यंच की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्य और करोड पूर्व का तीसरा भाग अधिक।

नाम कर्म का विस्तार

नाम कर्म के दो भेदः-१ शुभ नाम २ अशुभ नाम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाम कर्म के ६३ प्रकृति जिसके ४२ थोक

१ गति नाम २ जाति नाम ३ शरीर नाम ४ शरीर अंगोपांग नाम ५ शरीर बंधन नाम ६ शरीर संघात करणं नाम ७ संघयन नाम ८ संस्थान नाम ९ वर्ण नाम १० गंध नाम ११ रस नाम १२ स्पर्श नाम १३ अगुरू लघु नाम १४ उपघात नाम १५ पराघात नाम १६ अणुपूर्वी नाम १७ उच्छ्वास नाम १८ उद्योत नाम १९ आताप नाम २० विहाय-गति नाम २१ त्रस नाम २२ स्थावर नाम २३ सूक्ष्म नाम २४ बादर नाम २५ पर्याप्त नाम २६ अपर्याप्त नाम २७ प्रत्येक नाम २८ साधारण नाम २९ स्थिर नाम ३० अस्थिर नाम ३१ शुभ नाम ३२ अशुभ नाम ३३ सौभाग्य नाम ३४ दुःभाग्य नाम ३५ सुस्वर नाम ३६ दुःस्वर नाम ३७ आदय नाम ३८ अनादय नाम ३९ यशोकीर्ति नाम ४० अयशोकीर्ति नाम ४१ तीर्थंकर नाम ४२ निर्माण नाम।

४२ थोक की ९३ प्रकृति

(१) गति नाम के चार भेदः-१ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति।

(२) जाति नाम के पांच भेदः-१ एकेन्द्रिय जाति २ बेन्द्रिय जाति ३ त्रीइन्द्रिय जाति ४ चौरिन्द्रिय जाति ५ पंचेन्द्रिय जाति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३ शरीर नाम के पांच भेदः—१ औदारिक शरीर २ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तैजस् शरीर ५ कार्मण शरीर।

(४) शरीर अंगोपांग के तीन भेदः—१ औदारिक शरीर अंगोपांग २ वैक्रिय शरीर अंगोपांग ३ आहारिक शरीर अंगोपांग।

(५) शरीर बंधन नाम के पांच भेदः—१ औदारिक शरीर बंधन २ वैक्रिय शरीर बंधन ३ आहारिक शरीर बंधन ४ तैजस् शरीर बंधन ५ कार्मण शरीर बंधन।

(६)शरीर संघात करणं नाम के पांच भेदः—१ औदारिक शरीर संघात करणं २ वैक्रिय शरीर संघात करणं ३ आहारिक शरीर संघात करणं ४ तैजस् शरीर संघात करणं ५ कार्मण शरीर संघात करणं।

(७) संघयन नाम के छः भेदः—१ वज्र ऋषभ नाराच संघयन २ ऋषभ नाराच संघयन ३ नाराच संघयन ४ अर्ध नाराच संघयन ५ कीलिका संघयन ६ सेवार्त संघयन।

(८) संस्थान नाम के ६ भेदः—१ समचतुरस्त्र संस्थान न्यग्रोध परिमंडल संस्थान ४ कुब्ज संस्थान ५ वामन संस्थान ६ हुंडक संस्थान; ३९

(९) वर्ण नाम के पांच भेदः—१ कृष्ण २नील३ रक्त ४ पीत ५ श्वेत; ४४

(१०)गंध के दो भेदः—१सुरभि गंध २दुरभि गंध;४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(११)रस के पांच भेदः-१तीक्षण २कटुक ३कषायित ४ खार (खट्टा) ५ मिष्ट; ५१

(१२) स्पर्श के आठ भेदः--१ लघु २गुरु ३ कर्कश ४ कोमल ५ शीत ६ उष्ण ७ रुक्ष ८ स्निग्ध, ५९

(१३) अगुरु लघु नाम का एक भेद; ६०

(१४) उपघात नाम का एक भेद; ६१

(१५) पराघात नाम का एक भेद; ६२

(१६) अणुपूर्वी के चार भेदः-१नरक की अणुपूर्वी २ तिर्यंच की अणुपूर्वी ३ मनुष्य की अणुपूर्वी ४ देव की अणुपूर्वी; ६६

(१७) उच्छ्वास नाम का एक भेद; ६७

(१८) उद्योत नाम का एक भेद; ६८

(१९) आताप नाम का एक भेद; ६९

(२०) विहाय गति नाम के दो भेदः--१ प्रशस्त विहाय गति-गन्ध हस्ती के समान शुभ चलने की गति २ अप्रशस्त विहाय गति,ऊँट के समान अशुभ चलने की गति७१

शेष २२ बोल जो रहे उन में से प्रत्येक का एक एक भेद एवं (७१+२२) ९३ प्रकृति।

नाम कर्म आठ प्रकार से बांधे जिस में शुभ नाम कर्म चार प्रकारे बांधे

१ काया की सरलता-काया के योग अच्छे प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से प्रवर्तावे २ भाषा की सरलता-वचन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे ३ भाव की सरलता-मन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे ४ अक्लेश कारी प्रवर्तन खोटा व झूंठा विवाद नहीं करे ।

अशुभ नाम कर्म चार प्रकारे बांधे-१ काया की वक्रता २ भाषा की वक्रता ३ भाव की वक्रता ४ क्लेशकारी प्रवर्तन ।

॥ नाम कर्म २८ प्रकारे भोगवे ॥

शुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे-१ इष्ट शब्द २ इष्ट रूप ३ इष्ट गंध ४ इष्ट रस ५ इष्ट स्पर्श ६ इष्ट गति ७ इष्ट स्थिति ८ इष्ट लावण्य ९ इष्ट यशो कीर्ति १० इष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ इष्ट स्वर १२ कांत स्वर १३ प्रिय स्वर १४ मनोज्ञ स्वर ।

अशुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे-१ अनिष्ट शब्द २ अनिष्ट रूप ३ अनिष्ट गंध ४ अनिष्ट रस ५ अ-निष्ट स्पर्श ६ अनिष्ट गति ७ अनिष्ट स्थिति ८ अनिष्ट लावण्य ९ अनिष्ट यशो कीर्ति १० अनिष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ हीन स्वर १२ दीन स्वर १३ अनिष्ट स्वर १४ अकान्त स्वर ।

नाम कर्म की स्थिति जघन्य आठ मुहूर्त की उत्कृष्ट वीश करोडा करोड़ी सागरोपम की,अबाधा काल दो हजार वर्ष का ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ ७ गोत्र कर्म का विस्तार ❀

गौत्र कर्म के दो भेद–१ ऊंच गौत्र २ नीच गौत्र।

गौत्र कर्म की सोलह प्रकृति जिसमें से ऊंच गौत्र की आठ प्रकृति–

१ जाति विशिष्ट २ कुल विशिष्ट ३ बल विशिष्ट ४ रूप विशिष्ट ५ तप विशिष्ट ६ सूत्र विशिष्ट ७ लाभ विशिष्ट ८ ऐश्वर्य विशिष्ट।

नीच गौत्र की आठ प्रकृति-१ जाति विहीन २ कुल विहीन ३ बल विहीन ४ रूप विहीन ५ तप विहीन ६ सूत्र विहीन ७ लाभ विहीन ८ ऐश्वर्य विहीन।

गौत्र कर्म सोलह प्रकार बांधे:—

ऊंच गौत्र आठ प्रकारे बांधे १ जाति अमद (अभिमान नहीं करे) २ कुल अमद ३ बल अमद ४ रूप अमद ५ तप अमद ६ सूत्र अमद ७ लाभ अमद ८ ऐश्वर्य अमद।

नीच गौत्र आठ प्रकारे बांधे–१ जाति मद २ कुल मद ३ बल मद ४ रूप मद ५ तप मद ६ सूत्र मद ७ लाभ मद ८ ऐश्वर्य मद।

गौत्र कर्म सौलह प्रकारे भोगवे–ऊंच गौत्र आठ प्रकारे भोगवे और नीच गौत्र आठ प्रकारे भोगवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्त नाम कर्म की सोलह प्रकृति के समान ही सोलह प्रकारे भोगवे।

गौत्र कर्म की स्थितिः-जघन्य आठ मुहूर्त की उत्कृष्ट वीश करोडा करोड़ सागरोपम की, अबाधा काल दो हजार वर्ष का।

८ अन्तराय कर्म का विस्तार

अन्तराय कर्म की पांच प्रकृतिः-१ दानांतराय २ लाभांतराय ३ भोगांतराय ४ उपभोगांतराय ५ वीर्यांतराय।

अंतराय कर्म पांच प्रकारे बांधे-ऊपर समान।

अंतराय कर्म पांच प्रकारे भोगवे-ऊपर समान।

अंतराय कर्म की स्थिति-जघन्य अन्तर मुहूर्त की, उत्कृष्ट तीश करोड़ा करोड़ सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का।

॥ इति आठ कर्म का विस्तार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* गता गति द्वार *

गाथा

[1]बारस [2]चउवीसाइ [3]संतर [4]एगसमय [5]कत्तीय ।
[6]उवट्टण परभव [7]आऊयं; च अठेव आगरिसा ॥

❀ पहिला बारस द्वार ❀

नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव इन चार गतियों में उत्पन्न होने का। चवने का अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त का अंतर पड़े। सिद्ध गति में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छः मास का। चवने का अन्तर नहीं पड़े।

❀ दूसरा चउविश द्वार ❀

(१) पहेली नरक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट चोवीश मुहूर्त का।

(२) दूसरी नरक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट सात दिन का।

(३) तीसरी नरक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट पन्द्रह दिन का

(४) चोथी नरक में ,, ,, ,, ,, एक माह का
(३) पांचवी ,, ,, ,, ,, ,, ,, दो ,, ,,
(६) छट्ठी ,, ,, ,, ,, ,, ,, चार ,, ,,
(७) सातवी ,, ,, ,, ,, ,, ,, छ ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी, पहिला दूसरा देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट चोवीश मुहूर्त का, तीसरे देव लोक में अंतर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट नव दिन और वीश मुहूर्त का।

चोथे देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह दिन और दश मुहूर्त का।

पांचवे देव लोक में अंतर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट साड़ा बावीश दिन का।

छठे देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट पेंतालीश दिन का।

सातवें देवलोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट अस्सी दिन का।

आठवें देवलोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट सो दिन का।

नववें, दशवें देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता माह का, इग्यारहवें बारहवें देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता वर्ष का, ग्रीयेवक की पहेली त्रीक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय वा उत्कृष्ट संख्याता सो वर्ष का, ग्रीयवेक की दूसरी त्रीक में ज० एक समय उ० संख्याता हजार वर्ष का ग्रीयवेक की तीसरी त्रीक में ज० एक समय उ० संख्याता लक्ष वर्ष का चार अनुत्तर " " " " " पल्य के असंख्यातवें भाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पांचवे स्वार्थ सिद्ध विमान में ज० एक समय उ० संख्यातवें भाग।

पांच एकेन्द्रिय में अन्तर नहीं पड़े।

तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच समूर्छिम में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त का।

तिर्यंच गर्भज व मनुष्य गर्भज में जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त का। मनुष्य संमूर्छिम में जघन्य एक समय उत्कृष्ट चोवीश मुहूर्त का।

सिद्ध में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट छ माह का। इसी प्रकार सिद्ध को छोड़कर शेष में चवने का अंतर उक्त उत्पन्न होने के अंतर समान जानना।

❀ तीसरा सअंतर निरंतर द्वार ❀

स अंतर अर्थात् अंतर सहित, निरंतर अर्थात अंतर रहित उत्पन्न होवे।

पांच एकेन्द्रिय के पांच दण्डक छोड़कर शेष उन्नीस दण्डक में तथा सिद्ध में सअंतर तथा निरंतर उत्पन्न होवे।

पांच एकेन्द्रिय के पांच दण्डक में निरंतर उत्पन्न होवे ऐसे ही उद्वर्तन (चवने का) जानना (सिद्ध को छोड़कर)

४ एक समय में किस बोल में कितने उत्पन्न होवे व चवे उसका द्वार।

सात नरक, ७. दश भवनपति, १७. वाण व्यतन्र, १८. ज्योतिषी, १९. पहेले देवलोक से आठवें देवलोक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तक, २७. तीन विकलेन्द्रिय, ३०. तिर्यंच संमूर्छिम, ३१. तिर्यंच गर्भज, ३२. मनुष्य संमूर्छिम, ३३ इन तेंतीश बोल में एक समय में जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट उपजे तो असंख्याता उपजे। नववां, दशवां, इग्यारवां, व बारहवां देवलोक ये चार देवलोक ४, नव ग्रीयवेक, १३, पांच अनुत्तर विमान १८ मनुष्य गर्भज १९ इन उन्नीश बोल में जघन्य एक समय में एक, दो, तीन उत्कृष्ट संख्याता उपजे, पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु, इन चार एकेन्द्रिय में समय समय असंख्याता उपजे वनस्पति में समय समय असंख्याता (यथास्थाने) अनंता उपजे।

सिद्ध में एक समय में जघन्य एक, दो तीन उत्कृष्ट एक सो आठ उपजे ऐसे ही उदूवर्तन (चवन) सिद्ध को छोड़ कर शेष सर्व का जानना (उत्पन्न होने के समान)।

पांचवा कत्तो (कहां से आवे), छट्टा उदूवर्तन (चव कर जावे) ये दोनों द्वार।

५६३ में से जिस जिस बोल के आकर उत्पन्न होवे वो आगति और चव कर ५६३ में से जिस जिस बोल में जावे वो गति (उदूवर्तन)

(१) पहेली नरक में २५ बोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच, ५ असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय ये २५

का पर्याप्ता। ❀ गति ४० बोल की–१५ कर्म भूमि ५ संज्ञी तिर्यंच इन वीश का पर्याप्ता तथा अपर्याप्ता एवं ४०।

(२) दूसरी नरक में वीश बोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एवं २० का पर्याप्ता। गति ४० बोल की पहेली नरक समान।

(३) तीसरी नरक में उन्नीश बोल की आगति उक्त दूसरी नरक के २० बोल में से भुजपर (सर्प) को छोड़ शेष उन्नीश। गति ४० की ऊपर समान।

(४)चौथी नरक में अट्ठारह बोल की आगति उक्त २० बोल में से १ भुजपर (सर्प) तथा २ खेचर छोड शेष १८ बोल गति ४० की ऊपर समान।

(५) पांचवी नरक में १७ बोल की आगति उक्त २० बोल में से १ भुज पर (सर्प) २ खेचर ३ स्थल चर ये तीन छोड़ शेष १७ बोल। गति ४० की पहेली नरक समान।

(६) छट्ठी नरक में १६ बोल की आगति उक्त २० बोल में से १ भुजपर (सर्प) २ खेचर ३ स्थल चर ४ उर पर सर्प चार छोड़ शेष १६ बोल। गति ४० बोल की पहेली नरक समान।

(७) सातवीं नरक में १६ बोल की आगति पन्द्रह कर्म

* नेरिये और देवता काल कर के मनुष्य तथा तिर्यंच में उत्पन्न होते हैं। ये अपर्याप्त अवस्था में नहीं मरते अतः इस अपेक्षा से कोई केवल पर्याप्ता ही मानते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूमि और १ जलचर एवं १६ बोल इसमें स्त्री मर कर नहीं आती है केवल पुरुष तथा नपुसंक मरकर आते हैं। गति दश बोल की--पांच संज्ञी तिर्यंच का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

२५ भवन पति और २६ वाण व्यन्तर इन ५१ जाति के देवताओं में आगति १११, बोल की-१०१, संज्ञी मनुष्य का पर्याप्ता, पांच संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और पांच असंज्ञी तिर्यंच एवं १११ का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की-१५ कर्म भूमि, पांच संज्ञी तिर्यंच, बादर पृथ्वी काय, बादर अपकाय, बादर वनस्पति काय एवं तेवीश का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

ज्योतिषी और पहेला देवलोक में ५० बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, ३० अकर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एवं ५० का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवनपति समान।

दूसरा देवलोक में ४० बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, पांच संज्ञी तिर्यंच ये २० और ३० अकर्म भूमि में से पांच हेम वय और पांच हिरण वय छोड़ शेष २० अकर्म भूमि एवं ४० बोल का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवन पति समान।

पहेला किल्विषी में ३० बोल की आगति-१५कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच, ५ देव कुरू, ५ उत्तर कुरू एवं ३० का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवन पति समान।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक, नव लोकांतिक और दूसरा तीसरा किल्विषी–इन १७ प्रकार के देवताओं में २० बोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एवं २० बोल का पर्याप्ता । गति ४० बोल की–१५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एवं २० का पर्याप्ता और अपर्याप्ता ।

नवें, दशवें इग्यारहवें और बारहवें देवलोक में, नव ग्रीवेक व पांच अनुत्तर विमान में आगति १५ बोल की–१५ कर्म भूमि का पर्याप्ता । गति ३० बोल की–१५ कर्म भूमि का पर्याप्ता और अपर्याप्ता एवं ३० बोल ।

पृथ्वी, अप, वनस्पति–इन तीन में २४३ की आगति १०१ संमूर्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्म भूमि का अपर्याप्ता और पर्याप्ता, ३०, ४८ जाति का तिर्यंच, और ६४ जाति का देव (२५ भवनपति, २६ वाण व्यन्तर १० ज्योतिषी, पहेला किल्विषी, पहेला और दूसरा देवलोक एवं ६४ जाति का देव) का पर्याप्ता एवं (१०१×३०×४८×६४) २४३ बोल । गति १७९ बोल की–१०१ संमूर्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्म भूमि का अपर्याप्ता और पर्याप्ता, और ४८ जाति का तिर्यंच एवं १७९ बोल ।

तेजस् वायु की आगति १७९ बोल की–ऊपर समान । गति ४८ बोल की–४८ जाति का तिर्यंच ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन विकलेन्द्रिय (बेन्द्रिय, त्रीइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय,) की आगति १७९ बोल की ऊपर समान । गति १७९ बोल की ऊपर समान ।

असंज्ञी तिर्यंच की आगति १७९ बोल की--१०१ संमूर्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्म भूमि का अपर्याप्ता और पर्याप्ता और ४८ जाति का तिर्यंच एवं १७९ बोल। गति ३९५ बोल की—५६ अन्तर द्वीप, ५१ जाति का देव, पहेली नरक इन १०८ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये २१६ और ऊपर कहे हुवे १७९ एवं ३९५ बोल।

संज्ञी तिर्यंच की आगति २६७ बोल की—८१ जाति का देव (९९ जाति के देवताओं में से ऊपर के चार देव लोक नव ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान एवं १८ छोड़ शेष ८१ जाति का देव) सात नरक का पर्याप्ता ये ८८ और ऊपर कहे हुवे १७९ एवं २६७ बोल।

गति पांचों की अलग अलग

(१) जलचर की ५२७ बोल की—५६३ में से नववें देव लोक से सर्वार्थ सिद्ध तक १८ जाति का देव का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ३६ बोल छोड़ शेष ५२७ बोल ।

२ उरपर (सर्प) की ५२३ बोल की—उक्त ५२७ में से छट्ठी और सातवीं नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये चार बोल छोड़ शेष ५२३ बोल ।

(३) स्थलचर की ५२१ बोल की—५२३ में से पांचवीं नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता—ये दो बोल घटाना ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

(४) खेचर की ५१६ बोल की--५२१ में से चौथी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये२ बोल घटाना।

(५) भुजपुर (सर्प) की ५१७ बोल की–५१६ में से तीसरी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये२ बोल घटाना।

असंज्ञी मनुष्य की आगति १७१ बोल की–ऊपर कहे हुवे १७६ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल घटाना। गति १७६ बोल की, ऊपर समान।

१५ कर्म भूमि संज्ञी मनुष्य की आगति २७६ बोल की:–उक्त १७६ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल घटाने से शेष १७१ बोल, ६६ जाति के देव, और पहेली नरक से छट्ठी नरक तक एवं (१७१+६६+६) २७६ बोल। गति ५६३ बोल की।

३० अकर्म भूमि संज्ञी मनुष्य की आगति २० बोल की १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एवं २० बोल गति नीचे अनुसार।

५ देव कुरु, ५ उत्तर कुरु इन दश क्षेत्र के युगलियों की १२८ बोल की ६४ जाति के देव का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १२८ बोल की।

५ हरि वास, ५ रम्यक वास इन दश क्षेत्र के युगलियों की १२६ बोल की–उक्त १२८ बोल में से पहेला किल्विषी का अपर्याप्ता और पर्याप्ता घटाना।

५ हेमवय, ५ हिरण्यवय–इन दश क्षेत्र के युगलियों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की १२४ बोल की-उक्त १२६ बोल में से दूसरे देव लोक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता घटाना ।

५६ अंतर द्वीप के युगलियों की २५ बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच, ५ असंज्ञी तिर्यंच एवं २५ गति १०२ बोलकी-२५ भवन पति, २६ वाण व्यन्तर,-इन ५१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १०२ ये २२ बोल सम्पूर्ण इन २२ बोल में चोवीश दण्डक की गता गति कही गई है ।

नव उत्तम पद्वी में से मांडलिक राजा छोड़ शेष आठ पद्वीधर मिथ्यात्वी तथा तीन वेद्-एवं १२ बोल की गतागति—

(१) तीर्थंकर की आगति ३८ बोल की-वैमानिक का ३५ भेद व पहेली दूसरी, तीसरी नरक एवं ३८, गति मोक्ष की ।

(२) चक्रवर्ति की आगति ८२ बोल की-९९ जाति के देव में से-१५ परमाधर्मी, तीन किल्विषी-ये १८ छोड़ शेष ८१ व पहेली नरक एवं ८२, गति १४ बोल की-सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १४ (यदि ये दीक्षा लेवे तो गति देव की या मोक्ष की)

(३) वासुदेव की आगति ३२ बोल की-१२ देवलोक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९ लोकांतिक, नव ग्रीयवेक, व पहेली दूसरी नरक एवं ३२। गति १४ बोल की—सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ।

(४) बलदेव की आगति ८३ बोल की--चक्रवर्ति के ८२ बोल कहे वो और एक दूसरी नरक एवं ८३। गति ७० बोल की—वैमानिक के ३५ भेद का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ७० ।

(५) केवली की आगति १०८ बोल की--९९जाति के देव में से--१५ परमाधर्मी और तीन किल्विषी एवं १८ घटाना--शेष ८१ बोल, और १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच, पृथ्वी, अप, वनस्पति, पहेली, दूसरी, तीसरी व चोथी नरक एवं (८१+१५+५+१+१+१×४) १०८ बोल का पर्याप्ता, गति मोक्ष की ।

(६) साधु की आगति २७५ बोल की--ऊपर के १७९ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड शेष १७१ बोल, ९९ जाति के देव, व पहेली नरक से पांचवी करक तक (१७१+९९+५) एवं २७५ बोल । गति ७० बोल की बलदेव समान ।

(७) श्रावक की आगति २७६ बोल की--साधु के २७५ बोल व छट्टी नरक का पर्याप्ता एवं २७६ बोल।

गति ४२ बोल की--१२ देवलोक, ९ लोकांतिक इन २१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ४२।

(८) सम्यक्त्व दृष्टि की आगति ३६३ बोल की ९९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाति के देव का पर्याप्ता, १०१ संज्ञी मनुष्य का पर्याप्ता, १०१ संमूर्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता १५ कर्म भूमि का अपर्याप्ता, सात नरक का पर्याप्ता, और तिर्यंच के ४८ भेद में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड़ शेष४०एवं(९९+१०१+१०१+१५+७+४०)३६३बोल। + गति २५८ की-९९जाति का देव, १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच,६ नरक–इन १२५ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं २५० तीन विकलेन्द्रिय का अपर्याप्ता और ५ असंज्ञी तिर्यंच का अपर्याप्ता एवं २५८।

(९)मिथ्यात्व द्दष्टि की आगति ३७१ बोल की:–९९ जाति का देव, और ऊपर कहे हुवे १७९ बोल एवं २७८, सात नरक का पर्याप्ता और ८६ जाति का युगलियां का पर्याप्ता एवं ३७१ बोल । गति ५५३ की:–५६३ बोल में से पांच अनुत्तर विमान का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये १० छोड़ शेष ५५३ ।

(१०) स्त्री वेद की आगति ३७१ बोल की मिथ्या द्दष्टि समान। गति ५६१ बोल की-सातवी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये दो बोल छोड़ (५६३-२)शेष ५६१

(११) पुरुष वेद की आगति ३७१ बोल की मिथ्या द्रष्टि की आगति समान । गति ५६३ की ।

(१२) नपुंसक वेद की आगति २८५ बोल की:–

× कोई २ २२२ की भी मानते हैं-१५ परमा धामी और ३ किल्यिषी के पर्याप्ता और अपर्याप्ता एवं ३६ छोड़ कर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९९ जाति का देव का पर्याप्ता, व उपरोक्त १७९ बोल और सात नरक का पर्याप्ता एवं (९९+१७९×७) २८५ बोल। गति ५६३ बोल की ।

❀ सातवां आयुष्य द्वार: ❀

इस भव के आयुष्य के कौनसे भाग में परभव के आयुष्य का बंध पड़ता है उसका खुलासा:-

दश औदारिक का दण्डक सोपकर्मी व नोपकर्मी जानना-नारकी का एक दण्डक और देव का १३ दण्डक ये १४ दण्डक नोपकर्मी जानना।

दश औदारिक के दण्डक में से जिसका असंख्यात वर्ष का आयुष्य है वो नोपकर्मी तथा जिसका संख्यात वर्ष का आयुष्य है वो सोपकर्मी और नोपकर्मी दोनों हैं।

नोपकर्मी निश्चय में आयुष्य के तीसरे भाग में पर भव का आयुष्य बांधते हैं।

सोपकर्मी है वो आयुष्य के तीसरे भाग में, उसके भी तीसरे भाग में तथा अन्त में अन्तर मुहूर्त शेष रहे तब भी परभव का आयुष्य बांधते हैं।

असंख्यात वर्ष के मनुष्य, तिर्यंच तथा नेरिये व देव नोपकर्मी है ये निश्चय में आयुष्य के ६ माह शेष रहे उस समय परभव का आयुष्य बांधते हैं।

परभव जाते समय जीव ६ बोल के साथ आयुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छोड़ते हैं—१जाति २ गति ३ स्थिति ४ अवगाहना ५ प्रदेश और ६ अनुभाव।

❀ आठवां आकर्ष द्वार ❀

तथाविध प्रयत्न करके कर्म पुद्गल का ग्रहण करने व खेंचने को आकर्ष कहते हैं जैसे गाय पानी पीते समय भय से पीछे देखे व फिर पीवे वैसे ही जीव जाति निद्धतादि आयुष्य को जघन्य एव, दो, तीन उत्कृष्ट आठ आकर्ष करके बांधता है।

आकर्ष का अल्प तथा बहुत्व

सब से थोड़ा जीव आठ आकर्ष से जाति निद्धत्तायुष्य को बांधने वाले, उससे सात से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे छ से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे पांच से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे चार से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे तीन से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे दो से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे एक से बांधने वाले संख्यात गुणा।

॥ इति गतागति सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छः आरों का वर्णन

दश करोड़ा करोड़ी सागरोपम के छः आरे जानना ॥
(१) चार करोड़ा करोड़ी सागरोपम का 'सुखमा सुखमी' (एकान्त सुख वाला) नाम का पहिला आरा होता है इस आरे में मनुष्य का देहमान (शरीर) तीन गाउ (कोस) का व आयुष्य तीन पल्योपम का होता है उतरते आरे में देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पल्योपम का जानना । इस आरे में मनुष्य के शरीर में २५६ पृष्ट करंड (पांसली, हड्डी) व उतरते आरे में १२८ पांसलियां होती है । संघयन वज्र ऋषभ नाराच व संस्थान समचतुरंस्र होता है । महास्वरुपवान सरल स्वभावी स्त्री पुरुष का जोड़ा होता है जिनको आहार की इच्छा तीन दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाणे × आहार करते है । इस समय मिट्टी का स्वाद भी मिश्री के समान मिष्ट होता है व उतरते आरे मिट्टी का स्वाद शर्करा जैसा होता है । इस समय मनुष्यों को दश प्रकार के कल्प वृक्षों द्वारा * मन वांछित सुख की प्राप्ति होती है यथाः—

× पहिले आरे में तूर जितना, दूसरे आरे में बोर जितना और तीसरे आरे में आंवले जितना आहार युगल मनुष्य करते हैं ऐसा ग्रन्थकार कहते हैं ।

* जिस कल्प वृक्ष के पास जो फल है वो वही फल देता है इस तरह दश ही कल्प वृक्ष मिल कर दश वस्तु देते हैं परन्तु जिस वस्तु की मन में चिन्ता करते है उसे देने में समर्थ नहीं होते है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[१]मतंगाय [२]भिंगा, [३]तुड़ीयंगा [४]दीव [५]जोई [६]चितगा,
[७]चितरसा [८]मणवेगा, [९]गिहगारा [१०]अनियगणाउ ।

अर्थ—१ ' मतङ्ग वृक्ष ' जिससे मधुर फल प्राप्त होते हैं २ ' भिङ्गा वृक्ष ' से रत्न जड़ित सुवर्ण भाजन (पात्र) मिलते हैं ३ ' तुड़ियङ्गा वृक्ष ' से ४९ जाति के वादित्र (वाजित्र) के मनोहर नाद सुनाई देते हैं ४ 'दीव वृक्ष' से रत्न जडित दीपक समान प्रकाश होता है ५ जोति (जोई) वृक्ष रात्रि में सूर्य समान प्रकाश करते हैं ६, चितङ्गा, वृक्ष से सुगंधी फूलों के भूषण प्राप्त होते हैं ७ 'चितरसा' वृक्ष से (१८ प्रकार के) मनोज्ञ भोजन मिलते हैं ८ ' मनोवेगा ' से सुवर्ण रत्न के आभूषण मिलते हैं ९ ' गिहंगारा ' वृक्ष से ४२ मंजल के महल मिल जाते हैं १० ' अनिय गणाउ ' वृक्ष से नाक के श्वास से उड़ जावे ऐसे महीन (पतले व उत्तम वस्त्र प्राप्त होते हैं । प्रथम आरे के स्त्री पुरुष का आयुष्य जब छे महिनें का शेष रहता है उस समय युगलिये परभव का आयुष्य बांधते हैं और तब युगलनी एक पुत्र पुत्री के जोड़े को प्रसूतती (जन्म-देती) है । उन बच्चे बच्ची का ४९ दिन तक पालन करने बाद वे होशियार हो दम्पती बन सुखोपभोगानुभव करते हुवे विचरते हैं और युगल युगलनी का क्षण मात्र भी वियोग नहीं होता है उनके माता पिता एक को छींक और दूसरे को उबासी आते ही मर कर देव गति में जाते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं। (क्षेत्राधिष्टित) देव उन युगल के मृतक शरीर को क्षीर सागर में प्रक्षेप कर मृत्युसंस्कार (मरण क्रिया) करते हैं। गति एक देव की।

इस आरे में वैर नहीं, ईर्ष्या नहीं, जरा (बुढापा) नहीं, रोग नहीं, कुरूप नहीं, परिपूर्ण अंग उपांग पाकर सुख भोगते हैं ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना। ॥ इति प्रथम आरा संपूर्ण ॥

* दूसरा आरा *

(२)उक्त प्रकार प्रथम आरे की समाप्ति होते ही तीन करोड़ करोडी सागरोपम का 'सुखमा' (केवल सुख) नामक दूसरा आरा आरम्भ होता है उस वक्त पहिले से वर्ण, गंध, रस, स्पर्श के पुद्गलों की उत्तमता में अनन्त गुणी हीनता हो जाती है इस आरे में मनुष्य का देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पल्योपम का होता है। उतरते आरे एक कोस का शरीर व एक पल्योपम का आयुष्य रह जाता है घट कर पांसलिये केवल १२८ रह जाती है व उतरते आरे ६४। मनुष्यों में वज्र ऋषभ नाराच संघयन व समचतुरंस्र संस्थान होता है इस आरे के मनुष्यों को आहार की इच्छा दो दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद शक्करा जैसा रह जाता है व उतरते आरे गुड़ जैसा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस आरे में दश प्रकार के कल्पवृक्ष दश प्रकार का मनो-वांछित सुख देते हैं (पहेला आरा समान) मृत्यु के छै महिने जब शेष रहते हैं तब युगलनी एक पुत्र पुत्री का प्रसव करती है बच्चे बच्चों का ६४ दिन पालन किये बाद वे (पुत्र पुत्री) दम्पती बन सुखोपभोग करते हुवे विचरते हैं और उनके माता पिता एक को छींक और दूसरे को उबासी आते ही मर कर देव गति में जाते हैं क्षेत्राधिष्टित देव इन के मृतक शरीर को क्षीर सागर में डाल कर मृतक क्रिया करते हैं। गति एक देव की। इस आरे में ईर्ष्या नहीं, वैर नहीं, जरा नहीं, रोग नहीं, कुरुप नहीं, परिपूर्ण अङ्ग उपाङ्ग पाकर सुख भोगते हैं। ये सब पूर्ण भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना। ॥ इति दूसरा आरा सम्पूर्ण ॥

❀ तीसरा आरा ❀

(३) यों दूसरा आरा समाप्त होते ही दो करोड़ा करोड़ सागरोपम का 'सुखमा दुखमा' (सुख बहुत दुःख थोड़ा) नामक तीसरा आरा शुरु होता है तब पाहिले से वर्ण गंध रस स्पर्श की उत्तमता में हीनता हो जाती है। क्रम से घटते घटते मनुष्यों का देहमान एक गाउ (कोश) का व आयुष्य एक पल्योपम का रह जाता है उतरते आरे ५०० धनुष्य का देहमान व करोड़ पूर्व का आयुष्य रह जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस आरे में वज्रऋषभ नाराच संघयन व समचतुरंस्र संस्थान होता है। शरीर में ६४ पांसलिये होती हैं व उतरते आरे केवल ३२ पांसलिये रह जाती हैं। इस आरे में मनुष्यों को आहार की इच्छा एक दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाने आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद गुड़ जैसा रहजाता है तथा उतरते आरे कुछ ठीक। इस आरे में दश प्रकार के कल्पवृक्ष दश प्रकार का मनो वांछित सुख देते हैं मृत्यु के जब छै महिने शेष रहजाते है तब युगलिये परभव का आयुष्य बांधते हैं व उस समय युगलनी एक पुत्र व पुत्री का प्रसव करती है। बच्चे बच्चों का ७६ दिन पालन किये बाद वे (पुत्र पुत्री) दम्पती बन सुखोपभोग करते हुवे विचरते हैं और उनके माता पिता एक को छींक और दूसरे को उबासी आते ही मरकर देव गति में जाते हैं क्षेत्राधिष्टित देव इनके मृतक शरीर को क्षीर सागर में डाल कर मृतक क्रिया करते हैं। गति एक देव की।

इन तीन आरों में युगलियों का केवल युगल धर्म रहता है। जिसमें वैर नहीं, ईर्ष्या नहीं, जरा नहीं, रोग नहीं, कुरुप नहीं, परिपूर्ण अङ्ग उपाङ्ग पाकर सुख भोगते हैं ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना।

॥ इति युगलिया धर्म सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीसरे आरे की समाप्ति में चोरासी लाख पूर्व तीन वर्ष व साढ़े आठ माह जब शेष रह जाते हैं उस समय सर्वार्थसिद्ध विमान में ३३ सागरोपम का आयुष्य भोग कर तथा वहां से चव कर वनिता नगरी के अन्दर नाभि-राजा के यहां मरुदेवी रानी की कुक्षि (कोख) में श्री ऋषभ देव स्वामी उत्पन्न हुवे । (माताने) प्रथम ऋषभ का स्वप्न देखा इससे ऋषभ देव नाम रखा गया जिन्होंने युगलिया धर्म मिटा कर १ असि २ मसि ३ कृषि इत्यादिक ७२ कला पुरुष को सिखाई व ६४ कला स्त्री को। वीश लाख पूर्व तक आप कौमार्य अवस्था में रहे, ६३ लाख पूर्व तक राज्य शासन किया । पश्चात् अपने पुत्र भरत को राज्य भार सोंप कर आपने ४ हजार पुरुषों के साथ दीक्षा ग्रहण की । संयम लेने के एक हजार वर्ष बाद आपको केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा इस प्रकार छद्मस्थ व केवल अवस्था में आप कुल मिला कर एक लाख पूर्व तक संयम पाल कर अष्टापद पर्वत पर पद्म आसन से स्थित हो दश हजार साधु के परिवार से निर्वाण पद को प्राप्त हुवे । भगवंत के पांच कल्याणीक उत्तराषाढा नक्षत्र में हुवे । १ पहला कल्याणीक, उत्तराषाढा नक्षत्र में सर्वार्थसिद्ध विमान से चव कर मरू देवी रानी की कुक्षि में उत्पन्न हुवे । २ दूसरा कल्याणीक, उत्तराषाढा नक्षत्र में आपका जन्म हुवा । ३ कल्याणीक, उत्तराषाढा नक्षत्र ज्यासन पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विराजमान हुवे। ४ चोथा कल्याणीक, उत्तराषाढा नक्षत्र में दीक्षा ग्रहण की। ५ पांचवा कल्याणीक उत्तराषाढा नक्षत्र में केवल ज्ञान प्राप्त हुवा व अभिजित नक्षत्र में आप मोक्ष में पधारे। युगलिया धर्म लोप होने बाद गति पांच जानना। ॥ इति तीसरा आरा सम्पूर्ण ॥

❀ चौथा आरा ❀

इस प्रकार तीसरा आरा समाप्त होते ही एक करोड़ा करोड़ सागरोपम में ४२००० वर्ष कम का दुःखमा सुखम नामक (दुख बहुत सुख थोड़ा) चौथा आरा लगता है। तब पहिले से वर्ण गंध रस स्पर्श पुद्गलों की उत्तमता में हीनता हो जाती है क्रम से घटते घटते मनुष्यों का देह मान ५०० धनुष्य का व आयुष्य करोड़ा करोड़ पूर्व का रह जाता है उतरते आरे सात हाथ का देह मान व २०० वर्ष में कुछ कम का आयुष्य रह जाता है। इस आरे में संघयन छे, संस्थान छे व मनुष्यों के शरीर में ३२ पांसलिये, उतरते आरे केवल १६ पांसलिये रह जाती है। इस आरे की समाप्ति में ७५ वर्ष ८॥ माह जब शेष रह जाते हैं तब दशवें प्राणत देवलोक से वीश सागरोपम का आयुष्य भोग कर तथा चव कर माहणकुंड नगरी में ऋषभ दत्त ब्राह्मण के यहां देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्री महावीर स्वामी उत्पन्न हुवे जहां आप ८२ रात्रि पर्यन्त रहे। ८३ वीं रात्रि को शक्रेन्द्र का आसन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चलायमान हुवा तब शक्रेन्द्र ने उपयोग द्वारा मालूम किया कि श्री महावीर स्वामी भिक्षुक कुल के अंदर उत्पन्न हुवे हैं। ऐसा जान कर शक्रेन्द्र ने हरिण गमेषी देव को बुला कर कहा कि तुम जाकर क्षत्रीय कुंड के अन्दर, सिद्धार्थ राजा के यहां, त्रिशला देवी रानी की कुक्षि (कोंख) में श्री महावीर स्वामी का गर्भ प्रवेश करो और जो गर्भ त्रिशला देवी रानी की कोंख में है उसे लेजाकर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोंख में रक्खो। इस पर हरिण गमेषी आज्ञानुसार उसी समय माहण कुंड नगरी में आया व आकर भगवंत को नमस्कार कर के बोला "हे स्वामी आपको भली भांति विदित है कि मैं आपका गर्भ हरण करने आया हूं" इस समय देवानन्दा को अवस्वापिनि निद्रा में डाल कर गर्भ हरण किया व गर्भ को लेजाकर क्षत्रीय कुंड नगर के अन्दर सिद्धार्थ राजा के यहां, त्रिशला देवी रानी की कोंख में रक्खा व त्रिशला देवी रानी की कोंख में जो पुत्री थी उसे लेजाकर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोंख में रक्खी। पश्चात् सवा नव मास पूर्ण होने पर भगवंत का जन्म हुवा। दिन प्रति दिन बढ़ने लगे व अनुक्रम से यौवनावस्था को प्राप्त हुवे तब यशोदा नामक राजकुमारी के साथ आपका पाणी ग्रहण हुवा। सांसारिक सुख भोगते हुवे आप के एक पुत्री उत्पन्न हुई जिसका नाम प्रियदर्शना रक्खा गया। आप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीश वर्ष तक संसार में रहे। माता पिता के स्वर्गवासी होने पर आपने अकेले ही दीक्षा ग्रहण की, संयम लेकर १२ वर्ष ६ माह १५ दिन तक कठिन तप, जप, ध्यान धर कर भगवंत को वैशाख माह में सुदी दशमी को सुवर्त नामक दिन को विजय मुहूर्त में, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में, शुभ चन्द्रमा के मुहूर्त में, वियंता नामक पिछली पहर में जृंभिया नगर के बाहर, ऋजुबालिका नदी के उत्तर दिशा के तट पर सामाथिक गाथापति कृष्णी के क्षेत्र में, वैयावृत्यी यक्षालय के ईशान दिशा की ओर, शाल वृक्ष के समीप, उंकड़ा तथा गोधुम आसन पर बैठे हुवे, सूर्य की आतापना लेते हुवे, चउविहार छट्ठ भक्त करके इस प्रकार धर्म ध्यान में प्रवर्तते हुवे तथा चार प्रकार का शुक्ल ध्यान ध्याते हुवे, आठ कर्मों में से १ ज्ञानावरणीय २ दर्शना वरणीय ३ मोहनीय ४ अन्तराय इन चार घन घाती कर्म—जो अरि अर्थात् शत्रु समान, वैरी समान, पिशाच (झोटिंग) समान है—का नाश करके ज्ञान रुपी प्रकाश का करने वाला ऐसा केवल ज्ञान केवल दर्शन आपको उत्पन्न हुवा २६ वर्ष ५॥ माह तक आप केवल ज्ञान पने विचरे। एवं सर्व ७२ वर्ष का आयुष्य भोग कर चोथे आरे के जब तीन वर्ष ८॥ माह शेष रहे तब कार्तिक विदि अमावस को पावापुरी के अन्दर अकेले (बिना साधुओं के परिवार से) मोक्ष पधारे। भगवंत के पांच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कल्याणीक उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में हुवे १ पहेला कल्याणीक--दशवें प्राणत देवलोक से चव कर देवानन्दी की कोख में जब उत्पन्न हुवे तब २ दूसरे कल्याणीक में गर्भ का हरण हुवा ३ तीसरे कल्याणीक में जन्म हुवा ४ चौथे कल्याणीक में दीक्षा ग्रहण की और पांचवें कल्याणीक में केवल ज्ञान प्राप्त हुवा । स्वाति नक्षत्र में भगवन्त मोक्ष पधारे । इस आरे में गति पांच जानना। श्री महावीर स्वामी मोक्ष पधारे उसी समय गौतम स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा व बारह वर्ष पर्यन्त केवल प्रवर्ज्या पाल कर गौतम स्वामी मोक्ष पधारे । उसी समय श्री सुधर्मा स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा जो आठ वर्ष तक केवल प्रवर्ज्या पालकर मोक्ष पधारे । उसी समय श्री जम्बू स्वामी को केवल ज्ञान प्राप्त हुवा । इन्होंने ४४ वर्ष तक केवल प्रवर्ज्या पाली व पश्चात् मोक्ष पधारे एवं सर्व मिलाकर श्री महावीर स्वामी के मोक्ष पधारने बाद ६४ वर्ष तक केवल ज्ञान रहा पश्चात् विच्छेद (नष्ट) गया । इस आरे में जन्मे हुवे को पांचवे आरे में मोक्ष मिल सकता है परन्तु पांचवें आरे में जन्मे हुवे को पांचवें आरे में मोक्ष नहीं मिल सकता। श्री जम्बू स्वामी के मोक्ष पधारने के बाद दश बोल विच्छेद हुवे--१परम अवधि ज्ञान २ मनः पर्यव ज्ञान ३ केवल ज्ञान ४ परिहार विशुद्ध चारित्र ५ सूक्ष्म संपराय चारित्र ६ यथाख्यात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारित्र ७ पुलाक लब्धि ८ क्षपक-उपशम श्रेणी ६ आहारिक शरीर १० जिन कल्पी साधु ये दश बोल विच्छेद हुवे। ॥ इति चौथा आरा सम्पूर्ण ॥

❀ पांचवां आरा ❀

चौथे आरे के समाप्त होते ही २१००० वर्ष का 'दुखम' नामक पांचवां आरा प्रविष्ट होता है तब पूर्वापेक्षा वर्ण, गंध, रस, स्पर्श की उत्तम पर्यायों में अनन्त गुण हीनता हो जाती है। क्रमसे घटते घटते सात हाथ का (उत्कृष्ट) शरीर व २०० वर्ष का आयुष्य रह जाता है। उतरते आरे एक हाथ का शरीर व वीश वर्ष का आयुष्य रह जाता है-इस आरे के संघयन छः, संस्थान छः, उतरते आरे सेवार्त्त संघयन, हूंडक संस्थान व शरीर में केवल १६ पांसलिये व उतरते आरे केवल आठ पांसलियें जानना। मनुष्यों को इस आरे में दिन में दो समय आहार की इच्छा होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद कुछ ठीक जानना व उतरते आरे कुम्भकार (कुम्हार) की भट्टी की राख समान। इस आरे में गति चार (मोक्ष गति छोड़ कर) पांचवें आरे के लक्षण के ३२ बोल।

१ नगर (शहर) गांव जैसे होवे।
२ ग्राम स्मशान जैसे होवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ सुकुलोत्पन्न दास दासी होवे।
४ प्रधान (मंत्री) लालची होवें।
५ यम जैसे क्रूर दंड, दाता राजा होवे।
६ कुलीन स्त्री लज्जा रहित (दुराचारिणी) होवे।
७ कुलीन स्त्री वेश्या समान कर्म करने वाली होवे।
८ पिता की आज्ञा भंग करने वाला पुत्र होवे।
९ गुरु की निन्दा करने वाला शिष्य होवे।
१० दुर्जन लोग सुखी होवे।
११ सज्जन लोग दुखी होवे।
१२ दुर्भिक्ष अकाल बहुत होवे।
१३ सर्प बिच्छु, दंश मत्कुणादि क्षुद्र जीवों की उत्पत्ति बहुत होवे।
१४ ब्राह्मण लोभी होवे।
१५ हिंसा धर्म प्रवर्तक बहुत होवे।
१६ एक मत के अनेक मतान्तर होवे।
१७ मिथ्यात्वी देव बहुत होवे।
१८ मिथ्यात्वी लोग की वृद्धि होवे।
१९ लोगों को देव दर्शन दुर्लभ होवे।
२० वैताढ्य गिरि के विद्या धरों की विद्या का प्रभाव मन्द होवे।
२१ गो रस (दूध, दही, घी) में स्निग्धता (चिकनाई) कम होवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२ बलद (ऋषभ) प्रमुख पशु अल्पायुषी होवे।

२३ साधु साध्वियों के मास, कल्प, चतुर्मास आदि में रहने योग्य क्षेत्र कम होवे।

२४ साधु की १२ प्रतिमा व श्रावक की ११ प्रतिमा के पालक नहीं होवे (श्रावक की ११ प्रतिमा का विच्छेद कोई कोई नहीं मानते)।

२५ गुरु शिष्य को पढ़ावे नहीं।

२६ शिष्य अविनीत (क्लेसी) होवे।

२७ अधर्मी, क्लेशी, कदाग्रही, धूर्त, दगाबाज व दुष्ट मनुष्य अधिक होवे।

२८ आचार्य अपने गच्छ व सम्प्रदाय की परंपरा समाचारी अलग अलग प्रवर्तावेगें तथा मूर्ख मनुष्यों को मोह मिथ्यात्व के जाल में डालेंगे, उत्सूत्र प्ररुपक लोगों को भ्रम में फसाने वाले, निन्दनीक कुबुद्धिक व नाम मात्र के धर्मी जन होवेंगे व प्रत्येक आचार्य लोगों को अपनी २ परंपरा में रखने वाले होवेंगे।

२९ सरल, भद्रिक, न्यायी, प्रमाणिक पुरुष कम होवे।

३० म्लेछ राजा अधिक होवे।

३१ हिन्दू राजा अल्प ऋद्धि वाले व कम होवे।

३२ सुकुलोत्पन्न राजा नीच कर्म करने वाले होवे।

इस आरे में धन सर्व विच्छेद हो जावेगा, लोहे की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धातु रहेगी, व चर्म की मोहरे चलेगी जिसके पास ये रहेंगे वे श्रीमन्त (धनवान) कहलावेंगे । इस आरे में मनुष्यों को उपवास मास खमण समान लगेगा ।

[इस आरे में ज्ञान सर्व विच्छेद हो जावेगा केवल दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन रहेंगे । कोई कोई मानते हैं कि १ दशवैकालिक २ उत्तराध्ययन ३ आचारांग ४ आवश्यक ये चार सूत्र रहेंगे । इस में चार जीव एकावतारी होंगे -१ दुपसह नामक आचार्य २ फाल्गुनी नामक साध्वी ३ जीनदास श्रावक ४ नाग श्री श्राविका ये सर्व २००४ पांचवे आरे के अन्त तक श्री महावीर स्वामी के युगंधर जानना ।]

आषाढ सुदि १५ को शक्रेन्द्र का आसन चलायमान होवेगा तब शक्रेन्द्र उपयोग द्वारा मालूम करेंगे कि आज पांचवा आरा समाप्त होकर छट्ठा आरा लगेगा ऐसा जान कर शक्रेन्द्र आवेंगे व आकर चार जीवों को कहेंगे कि कल छट्ठा आरा लगेगा अतः आलोचना व प्रतिक्रमण द्वारा शुद्ध बनो अनन्तर ऐसा सुन कर वो चारों जीव सबों को क्षमा कर, निशल्य हो कर संथारा करेंगे । उस समय संवर्तक महासंवर्तक नामक हवा चलेगी जिससे पर्वत, गढ, कोट, कुवें, बावडीयें आदि सर्व स्थानक नष्ट होजावेंगे केवल १ वैताढ्य पर्वत २ गंगा नदी ३ सिंधु नदी ४ ऋषभ कुट ५ लवण की खाडी ये पांच स्थानक बच रहेंगे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेष सब नष्ट होजावेंगे । वे चार जीव समाधि परिणाम से काल करके प्रथम देवलोक में जावेंगे पश्चात् चार बोल और विच्छेद होवेंगे १ प्रथम प्रहर में जैन धर्म २ दूसरे प्रहर में मिथ्यात्वियों के धर्म ३ तीसरे प्रहर में राजनीति और चौथे प्रहर में बादर अग्नि विच्छेद हो जावेगा।

पांचवे आरे के अन्त तक जीव चार गति में जाते हैं केवल एक पांचवी मोक्ष गति में नहीं जाते हैं। ॥ इति पांचवा आरा ॥

❀ छट्ठा आरा ❀

उक्त प्रकार से पञ्चम आरे की समाप्ति होते ही २१००० वर्ष के 'दुःखमा दुखमी' नामक छट्ठे आरे का आरंभ होगा। तब भरतक्षेत्राधिष्टित देव पञ्चम आरे के विनाश पाते हुवे पशु मनुष्यों में से बीज रूप कुछ मनुष्यों को उठाकर वैताढ्य गिरि के दक्षिण और उत्तर में जो गङ्गा और सिन्धु नदी है उनके आठों किनारों में से एक एक तट में नव२ बिल हैं एवं सर्व ७२ बिल हैं और एक एक बिल में तीन तीन मंजिल हैं उनमें से उन पशु व मनुष्यों को रक्खेंगे। छट्ठे आरे में पूर्वापेक्षा वर्ण गंध, रस, स्पर्श आदि पुद्गलों की पर्यायों की उत्तमता में अनन्त गुणी हानि हो जावेगी। क्रम से घटते घटते इस आरे में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देह मान एक हाथ का, आयुष्य २० वर्ष का उतरते आरे मूठ कम एक हाथ का व आयुष्य १६ वर्ष का रह जावेगा। इस आरे में संघयन एक सेवार्त्त,संस्थान एक हूंडक उतरते आरे भी ऐसा ही जानना । मनुष्य के शरीर में आठ पंसलिये व उतरते आरे केवल चार पंसलिये रह जावेगी । इस आरे में छः वर्ष की स्त्री गर्भ धारण करने लग जावेगी व कुत्ती के समान परिवार के साथ विचरेगी । गङ्गा सिन्धु नदी का ६२।। योजन का पट है जिनमें से रथ के चक्र समान थोड़ा पाट व गाड़े की धूरी डूबे इतना गहरा जल रह जायगा जिनमें मत्स कच्छ आदि जीव जन्तु विशेष रहेंगे । ७२ बिल के अन्दर रहने वाले मनुष्य संध्या तथा प्रभात के समय उन मत्स कच्छ आदि जीवों को जल से बाहार निकाल कर नदी के किनारे रेत में गाढ कर रख देंगे वे जीव सूर्य की तेजी व उग्र शरदी से भुना जावेंगे जिनका मनुष्य आहार करलेवेंगे इनके चमड़े व हड्डियों को चाट कर तिर्यंच अपना निर्वाह करेंगे । मनुष्यों के मस्तक की खोपड़ी में जल लाकर मनुष्य पीवेंगे। इस प्रकार २१००० वर्ष पूर्ण होवेंगे जो मनुष्य दान पुन्य रहित, नमोकार रहित व्रत प्रत्याख्यान रहित होवेंगे केवल वे ही इस आरे में आकर उत्पन्न होवेंगे ।

ऐसा जान कर जो जीव जैन धर्म पालेगा तथा जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्म पर आस्ता (श्रद्धा) रखेगा वह जीव इस भवसागर से पार उतर कर परम सुख को प्राप्त करेगा ।

॥ इति छः आरा का भाव सम्पूर्ण ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

दश द्वार के जीव स्थानक

गाथाः—

¹जीवठाण, ²लक्खणं, ³ठिई, ⁴किरिया, ⁵कम्मसत्ताश्र,
⁶बंध ⁷उदीरण ⁸उदश्र ⁹निज्जरा ¹⁰छभाव दश दाराश्र ॥

अर्थः—दश द्वार के नामः—१ चौदह जीव स्थानक के नाम २ लक्षण द्वार ३ स्थिति द्वार ४ क्रिया द्वार ५ कर्म सत्ता द्वार ६ कर्म बंध द्वार ७ कर्म उदीर्ण द्वार ८ कर्म उदय द्वार ९ कर्म निर्जरा द्वार १० छे भाव द्वार।

दश द्वार का विस्तार।

(१) नाम द्वारः—चौदह जीव स्थानक के नाम—१ मिथ्यात्व जीव स्थानक २ सास्वादान जीव स्थानक ३ सम मिथ्यात्व (मिश्र) दृष्टि जीव स्थनाक ४ अव्रति सम दृष्टि जीव स्थानक ५ देश व्रति जीव स्थानक ६ प्रमत्त संयति जीव स्थानक ७ अप्रमत्त संयति जीव स्थानक ८ निवर्ती बादर जीव स्थानक ९ अनिवर्ती बादर जीव स्थानक १० सूक्ष्म संपराय जीव स्थानक ११ उपसम मोहनीय जीव स्थानक १२ क्षीण मोहनीय जीव स्थानक १३ सयोगी केवली जीव स्थानक १४ अयोगी केवली जीव स्थानक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ २ लक्षण द्वार । ❀

१ मिथ्यात्व दृष्टि जीव स्थानक का लक्षण—

इसके दो भेद १ उणाइरित २ तवाइरित ।

१ उणाइरितः-जो कम ज्यादा श्रद्धान करे व परुपे।

२ तवा इरितः-जो विपरीत श्रद्धान करे व परुपे ।

मिथ्यात्व के चार भेद ।

(१) एक मूल से ही वीतराग के वचनों पर श्रद्धान नहीं करे ३६३ पांखण्डी समान शाख (साक्षी) सूयगडां। (सूत्रकृतांग) ।

(२) एक कुछ श्रद्धान करे कुछ नहीं करे—जमाली—सूत्र की प्रमुख सात नीन्हवों के समान साक्षी सूत्र उववाई तथा ठाणांग के सातवें ठाणे की ।

(३) एक आगा पीछा कम ज्यादा श्रद्धान करे उदक-पेढाल वत् (समान) शाख सूत्र सूयगडांग स्कन्ध२अध्ययन ७

(४) एक ज्ञान अन्तरादिक तेरह बोल के अन्दर शङ्का कंखा वेदे १ ज्ञानान्तर २ दर्शनान्तर ३ चारित्रान्तर ४ लिङ्गान्तर ५ प्रवचनान्तर ६ प्रावचनान्तर ७ कल्पान्तर ८ मार्गान्तर ९ मतान्तर १० भङ्गान्तर ११ नयान्तर १२ नियमान्तर १३ प्रमाणान्तर एवं तेरह अन्तर । शाख सूत्र भगवती शतक पहेला उदेशा तीसरा ।

२ सास्वादान समदृष्टि जीवस्थानक का लक्षणः-

जो समकित छोड़ता २ अन्तमें परास मात्र रह जावे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बेइन्द्रियादिक ने अपर्याप्त होते समय होवे व पर्याप्त होने बाद मिट जावे संज्ञी पंचेन्द्रिय को पर्याप्त होने बाद भी होवे उसे सास्वादान समदृष्टि कहते हैं शास्त्र सूत्र जीवाभिगम दण्डक के अधिकार से।

३ मिश्रदृष्टि जीव स्थानक का लक्षणः--जो मिथ्यात्व में से निकला परन्तु जिसने समकित प्राप्त की नहीं इस बीचमें अध्यवसाय के रस से प्रवर्तता हुआ आयुष्य कर्म बांधे नहीं, काल भी करे नहीं, वहां से थोड़े समय के अन्दर, अनिश्चयता से तीसरे जीव स्थानक से गिर कर पहेले जीव स्थानक आवे अथवा वहां से चौथे आदि जीव स्थानक पर जावे तब आयुष्य बांधे, काल भी करे। शास्त्र सूत्र भगवती शतक तीशवें अथवा २६ वें।

४ अव्रती सम दृष्टि जीव स्थानक का लक्षणः-जो शंका कांक्षा रहित हो कर वीतराग के बचनों पर शुद्ध भाव से श्रद्धान करे तथा प्रतीति लाकर रोचे, चोरी प्रमुख विरुद्ध आचरण आचरे नहीं,-इसलिये कि उसकी लोक में हिलना होवे नहीं-व व्यवहार में समकित रहे। शास्त्र सूत्र उत्तराध्ययन के २८ वें मोक्ष मार्ग के अध्ययन से।

५ देशव्रती जीव स्थानक का लक्षणः-जो यथातथ्य समकित सहित, विज्ञान विवेक सहित देश पूर्वक व्रत अङ्गिकार करे, जो जघन्य एक नमोकारशी प्रत्याख्यान तथा एक जीव की घात करने का प्रत्याख्यान

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट श्रावक की ११ प्रतिमा आदरे उसे देशव्रती जीव स्थानक कहते हैं। शास्त्र सूत्र भगवती शतक सतरवां उद्देशा दूसरा।

६ प्रमत्त संयति जीव स्थानक का लक्षण:–जो समकित सहित सर्व व्रत आदरे, जो (अप्रमत्त जीवस्थानक के संज्वलन के चार कषाय हैं उन से) प्र, अर्थात् विशेष मत्त कहेता माता (मस्त) होवे संज्वलन का क्रोध मान माया लोभ उसे प्रमत्त संयति जीवस्थानक कहते हैं परंतु प्रमादी नहीं कहते हैं।

७ अप्रमत्त संयति जीव स्थानक का लक्षण:–जो अ, कहेता नहीं, प्र, कहेता विशेष, मत्त, कहेता माता-संज्वलन का क्रोध मान माया लोभ एवं छट्ठे जीवस्थानक से जो कुछ पतला होवे उसे अप्रमत संयति जीवस्थानक कहते हैं।

८ निवर्ती बादर जीव स्थानक का लक्षण:–जो निवर्ती--कहेता निवर्ता (दूर, अलग) है संज्वलन का क्रोध तथा मान से उसे निवर्ती बादर जीवस्थानक कहते हैं।

९ अनिवर्ती बादर जीवस्थानक का लक्षण:–अनिवर्ती कहेता नहीं निवर्ता संज्वलन के लोभ से उसे अनिवर्ती बादर जीवस्थानक कहते हैं।

१० सूक्ष्म संपराय जीवस्थानक का लक्षण:–जहां थोड़ा सा संज्वलन का लोभ का उदय है वो सूक्ष्म संपराय जीवस्थानक कहलाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११ उपशान्त मोहनीय जीवस्थानक का लक्षणः जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियें उपशमाई है उसे-उपशान्त मोहनीय जीव स्थानक कहते हैं।

१२ क्षीण मोहनीय जीवस्थानक का लक्षणः- जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति का क्षय किया है उसे क्षीण मोहनीय स्थानक कहते हैं।

१३ सयोगी केवली जीवस्थानक का लक्षणः-- जो मन वचन व काया के शुभ योग सहित केवल ज्ञान केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है उसे सयोगी केवली जीव स्थानक कहते हैं।

१४ अयोगी केवली जीवस्थानक का लक्षणः- जो शरीर सहित मन वचन काया के योग रोक कर केवल ज्ञान केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है उन्हें अयोगी केवली जीव स्थानक कहते हैं।

❀ ३ स्थिति द्वार ❀

१ मिथ्यात्व जीवस्थानक की स्थिति तीन तरह की

(१)अनादि अपर्यवसितः-जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं और अन्त भी नहीं ऐसा अभव्य जीवों का मिथ्यात्व जानना।

(२) अनादि सपर्यवसितः-जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं परन्तु अन्त है ऐसा भव्य जीवों का मिथ्यात्व जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) सादि सपर्यवसित:-जिस मिथ्यात्व की आदि है और अन्त भी है। अनादि काल से जीव को यह मिथ्यात्व लगा है। परन्तु किसी समय भव्य जीव समकित की प्राप्ति करता है व संसार परिभ्रमण योग कर्म के प्राबल्य से फिर समकित से गिर कर मिथ्यात्व को अंगीकार करता है। ऐसे भव्य जीवों को समदृष्टि पडिवाइ कहते हैं इस मिथ्यात्व जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन में देश न्यून। ऐसे जीव निश्चय से समकित पाकर मोक्ष जाते हैं। शास्त्र सूत्र जीवाभिगम दण्डक के अधिकार से।

२-३ दूसरे व तीसरे जीव स्थानक की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।

चोथे जीव स्थानक की स्थिति:-जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट ६६ सागरोपम जाजेरी।

पांचवे जीव स्थानक की स्थिति:-जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून।

छठे जीव स्थानक की स्थिति-परिणाम आश्री जघन्य एक समय उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून।

प्रवर्तन आश्री जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून। धर्म देव आश्री, शास्त्र सूत्र भगवती शतक १२ उद्देश ६।

सातवें, आठवें, नववें, दशवें, इग्यारवें, जीव स्थानक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की। शाख सूत्र भगवती शतक पच्चीशवां।

बारहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त की।

तेरहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून।

चौदहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की। वह अन्तरमुहूर्त कैसाः—

लघु स्वर (ह्रस्व स्वर—अ, इ, उ, ऋ, लृ,) का उच्चारण करने में जितना समय लगे उसे अन्तर्मुहूर्त कहते हैं।

❀ ४ क्रिया द्वार ❀

काइया क्रिया इत्यादिक २५ क्रिया में से जो २ क्रिया जिस२ जीव स्थानक पर जिन२ कारणों से लगती है उसका विस्तार पूर्वक वर्णन. कर्म आठ हैं जिनमें चोथा मोहनीय कर्म सरदार है। इसकी २८ प्रकृतिः—कर्म प्रकृति के थोकड़े म लिखे हुवे मोहनीय कर्म की प्रकृति की सत्ता, उदय क्षयोपशम, क्षय आदि से जो२ क्रिया लगे और जो२ नहीं लगे उसका वर्णनः—

(१) पहेला मिथ्यात्व जीव स्थानक पर—मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से अभव्य को २६ प्रकृति की सत्ता है—१ समकित मोहनीय २ मिश्र मोहनीय ये दो छोड़कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेष २६. कुछ भव्य जीव को २८ प्रकृति का उदय होता है। जिसमें मिथ्यात्व का बल विशेष। दो की नीमा व तीन की (वाद) भजना १ समकित मोहनीय २ मिश्र मोहनीय इन दो की नीमा. १ अक्रिया वादी २ अज्ञान वादी ३ विनय वादी इन तीन की भजना इस तरह चोवीश संपराय क्रिया लगे।

(२) दूसरे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियों में से बीस का उदय होता है,उसमें सास्वादन का बल विशेष होता है उसमें दो की नीमा १ मिथ्यात्व मोहनीय २ मिश्र मोहनीय। दो का वाद होता है १ अक्रियावादी, २ अज्ञान वादी जिससे चोवीश संपराय क्रिया लगती है।

(३) मिश्र दृष्टि जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से २८ का उदय इनमें मिश्र का बल विशेष है उसमें दो की नीमा और दो का वाद १ समकित मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय इन दो की नीमा, १ अज्ञान वादी २ विनय वादी इन दो का वाद इस तरह २४ संपराय क्रिया लगती है।

(४) अवर्ती समदृष्टि जीव स्थानक में–मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सात का क्षयोपशम २१ का उदय। अनन्तानु बंधी क्रोध मान माया लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय इन सात का क्षयोपशम २१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का उदय-ऊपर कहे हुवे सात क्षयोपशम में एक मिथ्या दर्शन वत्तिया क्रिया नहीं लगे २१ के उदय में २३ संपराय क्रिया लगे।

(५) देश व्रती जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से ११ का क्षयोपशम व १७ का उदय १ अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय ८ अप्रत्याख्यानी क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ इन ११ का क्षयोपशम व उक्त ११ बोल छोड़ कर शेष (२८-११) १७ का उदय, ११ क्षयोपशम में मिथ्यात्व दर्शन वत्तिया क्रिया व अप्रत्याख्यान क्रिया ये दो क्रिया नहीं लगे १७ के उदय में २२ संपराय क्रिया लगे।

(६) प्रमत्त संयति जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १५ का क्षयोपशम १३ का उदय १ अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय ८ अप्रत्याख्यानी क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ १२ प्रत्याख्यानी क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ इन १५ का क्षयोपशम उक्त १५ बोल छोड़ कर शेष १३ बोल का उदय १५ के क्षयोपशम में २२ संपराय क्रिया नहीं लगे १३ के उदय में १ आरंभिया २ माया वत्तिया ये दो क्रिया लगे छठे जीव स्थानक आरंभ नहीं करे परन्तु घृत के कुंभवत्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(७) जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सोलह का क्षयोपशम, १२ का उदय १५ बोल तो ऊपर कहे वो और १ संज्वलन का क्रोध एवं १६ का क्षयोपशम २८ प्रकृति में से ये १६ छोड़ शेष १२ का उदय। १६ के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नहीं लगे। १२ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

आठवें जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सात का उपशम तथा क्षायिक (क्षय) १० का क्षयोपशम और ११ का उदय। सात उपशम तथा क्षायिक— १ अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय अप्रत्याख्यानी चार, प्रत्याख्यानी चार एवं ८, ९ संज्वलन का क्रोध १० संज्वलन की माया ११ लोभ एवं ११ का उदय। १० के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नहीं लगे। ११ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

नववें जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १० का उपशम तथा क्षायिक, ११ का क्षयोपशम ७ का उदय। अनन्तानुबंधी के चार ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय और तीन वेद एवं १० का उपशम तथा क्षायिक, अप्रत्याख्यानी चार प्रत्यख्यानी चार, ८, ९ संज्वलन का क्रोध १० मान ११ माया एवं ११ का क्षयोपशम, नो कषाय के नव में से तीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेद के छोड़ शेष छः और संज्वलन का लोभ एवं सात का उदय, ११ के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नहीं लगे। सात के उदय में एक मायावत्तिया क्रिया लगे।

दशवें जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २७ प्रकृति में से २७ का उपशम अथवा क्षायिक, १ कुछ संज्वलन का लोभ का उदय २७ के उपशम तथा क्षायिक में २३ संपराय क्रिया नहीं लगे और एक संज्वलन का लोभ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

११ वें जीवस्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सर्व प्रकृति उपशमाई है इस से २४ संपराय क्रिया नहीं लगे परन्तु सात कर्म का उदय है इस से एक इर्यापथिका (इरिया वहिया) क्रिया लगे।

१२ वें जीवस्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति उपशमाई है इस से २४ संपराय क्रिया नहीं लगे परन्तु सात कर्म का उदय है इससे एक इर्यापथिका क्रिया लगे।

१३ वें जीवस्थानक में चार घातिया कर्म का क्षय होता है इससे २४ संपराय क्रियां नहीं लगे चार अघातिया कर्म का उदय है इससे एक इर्यापथिका क्रिया लगे।

१४ वें जीवस्थानक में चार घातिया कर्म का क्षय होता है व चार अघातिया कर्म का उदय है जिसमें भी वेदनीय कर्म का बल था वह नहीं रहा इससे एक भी क्रिया नहीं लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ ५ कर्म की सत्ता द्वार ❀

पहिले जीवस्थानक से ग्यारवें जीवस्थानक तक आठ ही कर्मों की सत्ता, बारहवें जीवस्थानक में सात कर्म की सत्ता-मोहनीय कर्म की नहीं, तेरहवें और चौदहवें में चार कर्म की सत्ता-१ वेदनीय कर्म २ आयुष्य कर्म ३ नाम कर्म ४ गौत्र कर्म।

❀ ६ कर्म का बंध द्वार ❀

पहिला तथा दूसरा जीवस्थानक पर सात तथा आठ कर्म बांधे (सात बांधे तो आयुष्य कर्म छोड़ कर सात बांधे) चौथे से सातवें जीवस्थानक तक सात तथा आठ कर्म बांधे ऊपर समान तीसरे, आठवें, नवत्रें जीवस्थानक पर सात कर्म बांधे (आयुष्य कर्म छोड़ कर) दशवें जीव-स्थानक पर ६ कर्म बांधे (आयुष्य और मोहनीय कर्म छोड़कर) ११ वें, १२ वें, १३ वें जीवस्थानक पर एक शाता वेदनीय कर्म बांधे और चौदहवें जीवस्थानक पर एक भी कर्म नहीं बांधे।

❀ ७ कर्म की उदीरणा द्वार ❀

पहिला जीव स्थानक पर सात, आठ अथवा छः कर्म की उदीरणा करे (सात की करे तो वेदनीय कर्म छोड़ कर व छः कर्म की करे तो वेदनीय व आयुष्य कर्म छोड़ कर)।

दूसरे, तीसरे, चौथे व पांचवें जीव स्थानक पर सात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा आठ कर्म की उदीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य कर्म छोड़ कर)।

छठे, सातवें, आठवें, नववें जीव स्थानक पर सात, आठ, छः की उदीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य छोड़ कर और छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय कर्म छोड़ कर) ।

दशवें जीव स्थानक पर छः व पांच की उदीरणा करे (छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय छोड़ कर और पांच की करे तो आयुष्य, वेदनीय व मोहनीय ये तीन छोड़ कर) ।

इग्यारहवें जीव स्थानक पर पांच कर्म की उदीरणा करे (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय कर्म छोड़ कर) ।

बारहवें, तेरहवें जीव स्थानक पर दो कर्म की उदीरणा करे नाम और गोत्र कर्म की ।

चौदहवें जीव स्थानक पर एक भी कर्म की उदीरणा नहीं करे ।

८ कर्म का उदय व ६ कर्म की निर्जरा द्वार ।

पहले से दशवें जीव स्थानक तक आठ कर्म का उदय और आठ कर्म की निर्जरा इग्यारहवें व बारहवें जीव स्थानक पर मोहनीय कर्म छोड़ कर शेष सात कर्म का उदय और सात कर्म की निर्जरा तेरहवें चौदहवें जीव स्थानक पर चार कर्म का उदय और चार कर्म की निर्जरा १ वेदनीय २ आयुष्य ३ नाम ४ गौत्र ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ १० छः भाव का द्वार ❀

छः भाव का नाम १ औदयिक २ औपशमिक ३ क्षायिक ४ क्षायोपशमिक ५ पारिणामिक ६ सान्निपातिक

छः भाव के भेदः—

१ औदयिक भाव के दो भेदः-१ जीव औदयिक २ अजीव औदयिक।

१ जीव औदयिक के दो भेदः-१ औदयिक २ औदयिक निष्पन्न १ जिसमें आठ कर्म का उदय हो वो औदयिक और आठ कर्म के उदय से जो २ पदार्थ उत्पन्न होवे (निपजे) वो औदयिक निष्पन्न।

आठ कर्म के उदय से जो २ पदार्थ उत्पन्न होवे उस-पर ३२ बोल।

गाथाः—

गई, काय, कसाय, वेद, लेस्स मिच्छ दिठि, अविरिए
असन्नी अनाणी आहारे, छउमथ्थ सजोगी संसारथ्थ असिद्धेय।

अर्थः—गति चार ४ काय छः, १०, कषाय ४, १४, वेद तीन, १७, लेश्या ६, २३, २४ मिथ्यात्व दृष्टि २५ अव्रतीत्व (अव्रतीपना) २६, असंज्ञीत्व २७, अज्ञान २८ आहारिक पना २९ छद्मस्थपना ३० सजोगी (सयो-गीपना) ३१ सांसारिकपना (संसार में रहना) ३२ अ-सिद्धपना एवं ३२ बोल जीव औदयिक से पावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ अजीव औदयिक के १४ भेद १ औदारिक शरीर २ औदारिक शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ३ वैक्रिय शरीर ४ वैक्रिय शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ५ आहारिक शरीर ६ आहारिक शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ७ तैजस् शरीर ८ तैजस् शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ६ कार्मण शरीर १० कार्मण शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ११ वर्ण १२ गन्ध १३ रस १४ स्पर्श ।

२ औप शामिक भाव के दो भेदः—औपशमिक और २ औपशमिक निष्पन्न । मोहनीय कर्म की जो २८ प्रकृति उपशमाई वो औपशमिक और मोहनीय कर्म उपशम करने से जोर पदार्थ निपजे वो औपशमिक निष्पन्न।

उपशमाने (उपशान्त करने) से जो २ पदार्थ निपजे उसपर गाथा (अर्थ सहित):—

कसाय पेज्जदोसे, दंसण मोह णीजे चरित्त मोहणीजे, ।
सम्मत्त चरीत्त लद्धीं, छउ मथ्थे वीयरागे य ॥

अर्थः-कषाय चार, ४, ५ राग ६ दोष ७ दर्शन मोहनीय ८ चारित्र मोहनीय इन आठ की उपशमता ६समकित तथा उपशम चारित्र की लब्धी की प्राप्ति होवे १० छद्मस्थपना ११ यथाख्यात चारित्र पना ये ११ बोल उपशम से पावे इसी प्रकार ये ११ बोल उपशम निष्पन्न से भी पावे ।

३ क्षायिक भावना के दो भेदः-१ क्षायिक २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षायिक निष्पन्न। जिनमें से क्षायिक से आठ कर्म का क्षय होवे। आठ कर्म खपाने (क्षय करने) के बाद जो२ पदार्थ निपजे उसे क्षायिक निष्पन्न कहते हैं।

क्षायिक निष्पन्न के आठ भेद

१ ज्ञाना वरणीय कर्म का क्षय होवे तब केवलज्ञान उत्पन्न होवे २ दर्शना वरणीय कर्म का क्षय होवे तब केवल दर्शन उत्पन्न होवे ३ वेदनीय कर्म का क्षय होवे तब निराबाधत्वपन उत्पन्न होवे ४ मोहनीय कर्म का क्षय होवे तब क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न होवे ५ आयुष्य कर्म का क्षय होवे तब अक्षयत्वपन उत्पन्न होवे ६ नाम कर्म का क्षय होवे तब अरूपीपन उत्पन्न होवे ७ गोत्र कर्म का क्षय होवे तो अगुरूलघु पन उत्पन्न होवे ८ अंतराय कर्म का क्षय होवे तो वीर्यपना उत्पन्न होवे ।

४ क्षायोपशमिक भाव के दो भेदः—१ क्षायोपशमिक २ क्षायोपशमिक निष्पन्न। उदय में आये हुवे कर्मों को खपावे और जो कर्म उदय में नहीं आये उन्हें उपशमावे उसे क्षायोपशमिक भाव कहते हैं। क्षायोपशम करने से जो २ पदार्थ निपजे उन्हें क्षायोपशमिक निष्पन्न कहते हैं।

क्षायोपशम से जो २ पदार्थ निपजे उस पर गाथाः—

दस उव उग तिदिठि चउ चरित्त, चरित्ता चरित्तें य ।
दाणाइ पंच लाद्धि, वीरियत्ति पंच इंदिए ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुवालस अंग धरे, नव पुव्वी जाव चउदस पुविए ।
उवसम, गणी पडि माश्र, इइ चउसम नीककन्ने ॥ २ ॥

अर्थः–छद्मस्थ के १० उपयोग, १०; ३ दृष्टि, १३ ४ चारित्र पहेला, १७, १८ श्रावकत्व, दानादि पंचलब्धि २३, ३ वीर्य, २६; ५ इन्द्रिय, ३१; १२, अंग की धारना ४३, नव पूर्व यावत् १४ पूर्व का ज्ञान होना, ४४ उपशम ४५ आचार्य की प्रतिमा ४६ एवं ४६ बोल क्षायोपशमिक भाव से निपजे । क्षायोपशमिक निष्पन्न भाव से भी ये ४६ बोल ।

५ पारिणामिक भाव से दो भेद १ सादि पारिणामिक २ अनादि पारिणामिक इन में मे प्रथम पारिणामिक भाव के दश भेद १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ जीवास्तिकाय ५ पुद्गलास्तिकाय ६ अद्धाकाल ७ भव्य ८ अभव्य ९ लोक १० अलोक ये दश सर्वदा विद्यमान हैं सादि पारिणामिक के भेद नीचे अनुसार ।

गाथा

जुना सुरा, जुना गुला, जुना घियं, जुना तंदुल चेव ।
अभयं, अभयरुखा, संद्ध गंधव्व नगरा ॥ १ ॥
उक्कावाए दिसिदाहे, गज्जीए मिज्जुए, णिग्घाए ।
जुवए जख्खालित्ताए, धुमिया महीता रजोघाए ॥ २ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंदो वरागा, सुरोवरागा, चंदो पाडिवेसा सुरोपाडिवेसा ।
पडिचंदा पडिसुरा,इन्द धणु उदग,मछा,कविहंसा अमोहे॥३॥

वासा, वासहरा चेव, गाम, घर णगरा ।
पयल पायाल भवणा अ, निरअ पासाए ॥ ४ ॥

पुढ विसत्त कप्पो बार, गेविज्य अणुत्तर सिद्धि ।
पम्माणु पोग्गल दोपएसी, जाव अणंत प्पएसी खंधे ॥५॥

अर्थः पुरानी शराब, पुराना गुड़, पुराना घी पुराने चांवल, बादल, बादल की रेखा, संध्या का वर्ण गंधर्व के चिह्न, नगर के चिह्न (१) १ उल्का पात २ दिशि दाल ३ गर्जना ४ विद्युत ५ निर्घात (काटक) ६ शुक्ल पक्ष का बालचन्द्र ७ आकाश में यक्ष का चिह्न ८ कृष्ण धूयर ६ उज्वल धूयर १० रजोघात (२) चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, चन्द्र का जलकुण्ड, सूर्य जल कुण्ड एक ही समय दो चान्द दो सूर्य दीखाई देवे, इन्द्र धनुष्य जल पूर्ण बादल, मच्छ के चिह्न, बन्दर के चिह्न, हंस का चिह्न, और बाण का चिह्न (३) क्षेत्र, वर्ष धर, पर्वत, ग्राम, घर नगर प्रासाद (महेल), पाताल, कलश, भवन पति के भवन नरक वासे, (४) सात पृथ्वी, कल्प (देव-लोक) बारह, नव ग्रीयवेक, पांच अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला,परमाणु पुद्गल दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध। (५) इन बोलों में पुद्गल जावे तथा आवे, गले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा (आकर) मिले अतः इन्हे सादि पारिणामिक कहते हैं।

६ सान्निपातिक भाव—इस पर २६ भांङ्ग, दो संयोगी के दश, तीन संयोगी के दश, चार संयोगी के पांच, पांच संयोगी का एक एवं २६ भांगे नीचे लिखे यन्त्र समान जानना।

दो संयोगी के दश भांगे

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि.
१	१	१	०	०	०
२	१	०	१	०	०
३	१	०	०	१	०
४	१	०	०	०	१
५	०	१	१	०	०
६	०	१	०	१	०
७	०	१	०	०	१
८	०	०	१	१	०
९	०	०	१	०	१
१०	०	०	०	१	१

नववां भांगा सिद्ध को पावे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन संयोगी के दश भांगे।

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि.
११	१	१	१	०	०
१२	१	१	०	१	०
१३	१	१	०	०	१
१४	१	०	१	१	०
१५	१	०	१	०	१
१६	१	०	०	१	१
१७	०	१	१	१	०
१८	०	१	१	०	१
१९	०	१	०	१	१
२०	०	०	१	१	१

पन्द्रहवां भांगा तेरहवें, चौदहवें जीव स्थानक पर पावे सोलहवां भांगा पहेले से सातवें जीव स्थनाक तक पावे।

चार संयोगी के पांच भांगे।

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि.
२१	१	१	१	१	०
२२	१	१	१	०	१
२३	१	१	०	१	१
२४	१	०	१	१	१
२५	०	१	१	१	१

तेवीशवां भांगा उपसम श्रेणी के आठवें से इग्यारहवें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव स्थानक तक पावे २४ वां भांगा क्षपक श्रेणी के आठवें से बारहवें जीव स्थानक (११ वां छोड़ कर) तक पावे

पांच संयोगी का एक भांगा।

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि.
२६	१	१	१	१	१

इस यंत्र के २६ भांगों में पांच भांगा पारिणामिक है शेष २१ भांगा अपारिणामिक है।

❀ इति श्री जीव स्थानक सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीगुणस्थान द्वार

गाथा

नाम, लखण, गुण ठिइ, किरिया, सत्ता, बंध, वेदेय, ।
उदय, उदिरणा, चेव, निज्जरा, भाव, कारणा ॥१॥
परिसह, मग्ग, आयाय, जीवाय भेदे, जोग, उविउग, ।
लेस्सा, चरण, सम्मतं, आया बहुच्च, गुणठाणेहिं, ॥२॥

(१) नाम द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान २ सास्वादान गु० ३ मिश्र गु० ४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि गु० ५ देशव्रती गु० ६ प्रमत्त संजति (संयति) गु० ७ अप्रमत्त संजति गु० ८ नियट्टि (निवर्ती) बादर गु० ९ अनियट्टि (अनिवर्ती) बादर गु० १० सूक्ष्म संपराय गु० ११ उपशान्त मोहनीय गु० १२ क्षीण मोहनीय गु० १३ सजोगी केवली गु० १४ अजोगी केवली गु० ।

(२) लक्षण द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान का लक्षण—श्री वीतराग के वचनों को कम, ज्यादा, विपरीत श्रद्धे (सर्दहे) परुपे फरसे उसे मिथ्यात्व गु० कहते हैं। जैसे कोई कहे कि जीव अंगुठे समान है, तंडुल समान है, शामा (तिल) समान है दीपक समान है, आदि ऐसी परुपना कम (ओ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छी) परुपना है । अधिक परुपना—एक जीव सर्व लोक ब्रह्माण्ड मात्र में व्याप रहा है ऐसी परुपना अधिक परुपना है । यह आत्मा पांच भूतों से उत्पन्न हुई है व इसके नष्ट होने पर जीव भी नष्ट होता है पांच भूत जड़ है इनसे चैतन्य उपजे व नष्ट होवे ऐसी परुपना विपरीत सर्दहे, परुपे फरसे उसे मिथ्यात्व कहते हैं। जैन मार्ग से आत्मा अकृत्रिम [स्वभाविक] अखण्ड अविनाशी व नित्य है सारे शरीर में व्यापक है तिवारे [तब] गौतम स्वामी वंदना करके श्री भगवंत को पूछने लगे " स्वामीनाथ ? मिथ्यात्वी जीव को किन गुणों की प्राप्ति होवे ? तब श्री महावीर स्वामी ने जबाब दिया कि यह जीव रूपी दड़ी (गेंद) कर्म रूपी डंडे (गुटाटी) से ४ गति २४ दंण्डक ८४ लाख जीवयोनि में वारं वार परिभ्रमण करता रहता है परन्तु संसार का पार अभी तक पाया नहीं ।

दूसरे गुण स्थानक का लक्षणः-जिस प्रकार (जैसे) कोई पुरुष खिर खाण्ड का भोजन करके फिर वमन करे उस समय कोई पुरुष उससे पूछे " कि भाई खीर खाण्ड का कैसा स्वाद है ?" उस समय उसने उत्तर दिया " थोड़ा सा स्वाद है " इस प्रकार भोजन के (स्वाद) समान समकित व वमन के (स्वाद के) समान मिथ्यात्व ।

दूसरा दृष्टान्तः-जैसे घंटे का नाद प्रथम गेहर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंभीर होता है और फिर थोडी सी झनकार शेष रह जाती है उसी प्रकार गहेर गंभीर शब्द के समान समकित और झनकार समान मिथ्यात्व।

तीसरा दृष्टान्तः—जीव रूपी आम्र वृक्ष, प्रमाण रूप शाखा, समकित रूप फल, मोहरूप हवा चलने से प्रमाण रूप डाल से समकित रूप फल टूट कर पृथ्वी पर गिरा परन्तु मिथ्यात्व रूप पृथ्वी पर फल गिरा नहीं अभी बीचमें ही है इस समय तक (जब तक वो बीच में है) सास्वादान गुणस्थान रहता है और जब पृथ्वी पर गिर पड़ा तब मिथ्यात्व गुणस्थान। गौतम स्वामी हाथ जोडी मान मोडी श्री भगवंत को पूछने लगे " स्वामी नाथ ! इस जीव को कौन से गुणों की प्राप्ति होवे" तब श्री भगवंत ने फरमाया कि यह जीव कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हुवा व इसे अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल ही केवल संसार में परिभ्रमण करना शेष रहा। जैसे किसी जीव को एक लाख करोड रूपे देना हो और उसने उसमें से सब ऋण चुका दिया हो केवल अधेली (आधा रूपया) देनी शेष रही हो इसी प्रकार इस जीव को आधे रूपे कर्ज के समान संसार में परिभ्रमण करना शेष रहा। सास्वादान समकित पांच वार आवें।

तीसरे गुणस्थान का लक्षणः-सम्यक्त्व और मिथ्यात्व इन दो के मिश्र से मिश्र गुणस्थान बनता है इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर श्रीखंड का दृष्टान्त जैसे श्रीखंड कुछ खट्टा और कुछ मिठा होता है वैसे ही मिट्ठे समान समकित और खट्टे समान मिथ्यात्व जो जिन मार्ग को अच्छा समझे तथा अन्य मार्ग को भी अच्छे समझे जैसे किसी नगर के बाहर साधु महा पुरुष पधारे हुवे हैं। व श्रावक लोग जिन्हे वंदना नमस्कार करने के लिये जा रहे हो उस समय मिश्र दृष्टि मित्र मार्ग में मिला उसने पूछा " मित्र ! तुम कहां जा रहे हो। इस पर श्रावक ने जबाब दिया कि मैं साधु महा-पुरुष को वंदना करने को जा रहा हूँ मिश्र दृष्टि वाले ने पूछा कि वंदना करने से क्या लाभ होता है। श्रावक ने कहा कि महा लाभ होता है इस पर मित्र ने कहा कि मैं भी वंदना करने को आता हूँ ऐसा कह कर उस ने चलने के लिये पैर उठाये इतनें में दूसरा मिथ्यात्वी मित्र मिला। इस ने इन्हें देख कर पूछा कि तुम कहां जा रहे हो। तब मिश्र गुण स्थान वाला बोला कि हम साधु महा पुरुष को वंदना करने के लिये जा रहे हैं यह सुन कर मिथ्यात्वी बोला कि इन की वंदना करने से क्या होता है येतो बड़े मेले कुचेले रहते हैं इत्यादि कह कर उसे (मिश्र दृष्टि वाले को) पुनः जाते हुवे को लोटाया। श्रावक साधु मुनिराज को वंदना कर के पूछने लगा कि महाराज मेरे मित्र ने वंदना करने के लिये पैर उठाया इससे उसे किस गुण की प्राप्ति हुई। तब मुनि ने उत्तर दिया, कि जो काले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उड़द के समान था वो दाल के समान हुवा, कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हुवा अनादि काल से उलटा था। जिसका सुलटा हुवा,समकित के सन्मुख हुवा परन्तु पैर भरने समर्थ नहीं। इस पर गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड़ वंदना नमस्कार कर श्री भगवंत को पूछने लगे 'हे स्वामीनाथ' इस जीव को किस गुण की प्राप्ति हुई! तब भगवान ने फरमाया कि जीव ४ गति २४ दंडक में भटक कर उत्कृष्ट देश न्यून अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल में संसार का पार पायेगा।

४ **अवर्ती सम्यक्त्व दृष्टिः**-अनन्तानु बंधी क्रोध मान, माया, लोभ, सम्यक्त्व मोहनीय, मिथ्यात्व मोहनीय मिश्र मोहनीय इन सात प्रकृति का क्षयोपशम करे अर्थात् ये सात प्रकृति जब उदय में आवे तब क्षय करे और सत्ता में जो दल है उनको उपशम करे उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं यह सम्यक्त्व असंख्यात बार आता है, ७ प्रकृति के दलों को सर्वथा उपशमावे तथा ढांके उसे उपशम सम्यक्त्व कहते हैं यह सम्यक्त्व पांच वार आवे। सात प्रकृति के दलों को क्षयोपशम करे उसे क्षायक समकित कहते हैं यह समकित केवल एक वार आवे। इस गुणस्थान पर आया हुवा जीव जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने, सर्दहे, परुपे परन्तु फरस सके नहीं। तिवारे गौतम स्वामी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाथ जोड़ मान मोड़ श्री भगवंत को पूछने लगे कि स्वामी नाथ इस गुणस्थान के जीव को किस गुण की प्राप्ति होती है। उत्तर में श्रीभगवंत ने फरमाया कि हे गौतम! समकित व्यवहार से शुद्ध प्रवर्तता हुवा यह जीव जघन्य तीसरे भव में व उत्कृष्ट पन्द्रहवें भव में मोक्ष जावे। वेदक समकित एक वार आवे इस समकित की स्थिति एक समय की, पूर्व में अगर आयुष्य का बंध न पड़ा हो तो फिर सात बोल का बंध नहीं पड़े—नरक का आयुष्य, भवनपति का आयुष्य तिर्यंच का आयुष्य, वाण व्यन्तर का आयुष्य, ज्योतिषी का आयुष्य, स्त्री वेद, नपुंसक वेद—एवं सात का आयुष्य बन्ध नहीं पड़े। यह जीव समकित के आठ आचार आराधता हुवा, व चतुर्विध संघ की वात्सल्यता पूर्वक, परम हर्ष सहित भक्ति (सेवा) करता हुवा जघन्य पहेले देवलोक में उत्पन्न होवे, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक में। शास्त्र पन्नवणाजी सूत्र की। पूर्व कर्म के उदय से व्रत पच्चखाण (प्रत्याख्यान) कर नहीं सके परन्तु अनेक वर्ष की श्रमणोपासक की प्रवर्ज्या का पालक होवे दशाश्रुतस्कंध में जो श्रावक कहे हैं। उनमें का दर्शन श्रावक को अविरय (अव्रती) समदृष्टि कहना चाहिये।

५ देश वर्ती गुण स्थान-उक्त (उपर कही हुई) सात प्रकृति व अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ एवं ११ प्रकृति का क्षयोपशम करे। ११ प्रकृति का क्षय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे वो क्षायक समकित और ११ प्रकृति को ढांके व उपशमावे वो उपशम समकित, और ११ प्रकृति को कुछ उपशमावे व कुछ क्षय करे वो क्षयोपशम समकित। पांचवें गुणस्थान पर आया हुवा जीवादिक पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने, सर्दहे परूपे व शक्ति प्रमाणे फरसे। एक पच्चखाण से लगा कर ११ व्रत, श्रावक की ११ पडिमा आदरे यावत् संलेखणा (संलेषणा) तक अनशन कर अराधे। तिवार (उस समय) गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड़ श्री भगवन्त को पूछने लगे हे स्वामी नाथ! इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे तब भगवन्त ने उत्तर दिया कि जघन्य तीसरे भव में व उ० १५ भव में मोक्ष जावे। ज० पहेले देव लोक में उ० १२ वें देव लोक में उपजे। साधु के व्रत की अपेक्षा से इसे देशवर्ती कहते हैं परन्तु परिणाम से अव्रत की क्रिया उतर गई है अल्प इच्छा, अल्प आरम्भ, अल्प परिग्रह, सुशील, सुव्रती, धर्मिष्ट, धर्म वृत्ति, कल्प उग्र विहारी, महा संवेग विहारी, उदासीन, वैराग्यवन्त, एकान्त आर्य, सम्यग मार्गी, सुसाधु सुपात्र, उत्तम क्रिया वादी, आस्तिक, आराधक, जैन मार्ग प्रभावक, अरिहन्त का शिष्य आदि से इसे वर्णन किया है। यह गीतार्थ का जानकर होता है। शास्त्र सिद्धांन्त की। आकर्ष एक भव में प्रत्येक हजार वार आवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ प्रमत्त संयति गुण स्थानः-उक्त ११ प्रकृति व प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ एवं पन्द्रह प्रकृति का क्षयोपशम करे। इन १५ प्रकृतियों का क्षय करे वो क्षायिक समकित और १५ प्रकृति का उपशम करे वो उपशम समकित, और कुछ उपशमावे कुछ क्षय करे वो क्षयोपशम समकित। उस समय गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड़ श्री भगवान को पूछने लगे कि इस गुणस्थान वाले को किस गुण की प्राप्ति होवे भगवंत ने उत्तर दिया यह जीव द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भावसे जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप जाने श्रद्धे परुपे, फरसे। साधुत्व एक भवमें नवसो वार आवे यह जीव जघन्य तीसरे भवमें उत्कृष्ट १५ भवमें मोक्ष जावे। आराधिक जीव ज. पहेले देवलोक में उ. अनुत्तर विमान में उपजे। १७ भेद से संयम निर्मल पाले, १२ भेदे तपस्या करे, परन्तु योग चपलता, कषाय चपलता, वचन चपलता, व दृष्टि चपलता कुछ शेष रह जाने से यद्यपि उत्तम अप्रमाद से रहे तो भी प्रमाद रह जाता है इस लिये प्रमाद करके, कृष्णादिक द्रव्य लेश्या व अशुभ योग से किसी समय प्रणति बदल जाती है जिससे कषाय प्रकृष्टमत्त बन जाता है इसे प्रमत्त संयति गुणस्थान कहते हैं।

७ अप्रमत्त संयति गुणस्थानः-पांच प्रमाद का त्याग करे तब सातवें गुणस्थान आवे पांच प्रमाद का नाम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथाः—

मद, विषय, कषाया, निंदा, विगहा पंचमा, भणिया।
ए ए पंच पमाया, जीवा पाडंति संसारे॥

इन पांच प्रमाद का त्याग व उक्त १५ प्रकृति और १ संज्वलन का क्रोध एवं १६ प्रकृति का क्षयोपशम करे इससे किस गुण की प्राप्ति होवे। जीवादि नव पदार्थ द्रव्य से, काल से, भाव से तथा नोकारसी आदि छ मासी तप ध्यान युक्ति पूर्वक जाने, श्रद्धे, परूपे, फरसे वह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भवमें मोक्ष जावे। गति प्रायः कल्पातीत की पावे, ध्यान में, अनुष्ठान में अप्रमत्त पूर्वक प्रवर्ते, व शुभ लेश्या के योग सहित अध्यवसाय प्रवर्तता हुवा जिसके प्रमत्त कषाय नहीं वो अप्रमत्त संयति गुणस्थान कहलाता है।

८ निवर्ती (नियट्टि) बादर गुणस्थानः—उक्त १६ प्रकृति व संज्वलन का मान एवं १७ प्रकृति का क्षयोपशम करे तब आठवें गुणस्थान आवे (तब गौतम स्वामी हाथ जोड़ पूछने लगे आदि उपरोक्त समान) इस गुणस्थान वाले को किस गुण की प्राप्ति होवे। जो परिणाम धारा व अपूर्व करण जीव को किसी समय व किसी दिन उत्पन्न नहीं हुवा हो ऐसी परिणाम धारा व करण की श्रेणी जीव को उपजे। जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने सर्दहे परूपे फरसे। यह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष जावे। यहां से दो श्रेणी होती है। १उपशम श्रेणी २ क्षपक श्रेणी। उपशम श्रेणी वाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृति के दलों को उपशम करता हुवा इग्यारहवें गुणस्थान तक चला आता है। पडिवाइ भी हो जाता है व हायमान परिणाम भी परिणमता है। क्षपक श्रेणी वाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृति के दलों को क्षय करता हुवा शुद्ध परिणाम से निर्जरा करता हुवा नवर्वे दशवें गुणस्थान पर होता हुवा ग्यारहवें को छोड़ बारहवें गुणस्थान पर चला जाता हैं यह अपडिवाइ होता है व वर्द्धमान परिणाम में परिणमता है। जो निवर्ता है बादर कषाय से, बादर संपराय क्रिया से, श्रेणी करे अभ्यन्तर परिणाम पूर्वक अध्यवसाय स्थिर करे व बादर चपलता से निवर्ता है उसे नियट्टि बादर गुणस्थान कहते हैं (दूसरा नाम अपूर्व करण गुणस्थान भी है) किसी समय पूर्व में पहिले जीव ने यह श्रेणी कभी की नहीं और इस गुणस्थान पर पहेला ही करण पंडित वीर्य का आवरण। क्षय करण रूप करण परिणाम धारा, वर्द्धन रूप श्रेणी करे उसे अपूर्व करण गुणस्थान कहते हैं।

९ अनियट्टि बादर गुणस्थान

उपरोक्त १७ प्रकृति और संज्वलन की माया, स्त्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेद नपुंसक वेद एवं २१ प्रकृति का क्षयोपशम करे। तब जीव नववें गुणस्थान आवे। इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे? उत्तर- यह जीव जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से निर्विकार अमायी विषय निरवंछा पूर्वक जाने सर्दहे परूपे, फरसे। यह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष जावे। सर्वथा प्रकार से निवर्ता नहीं केवल अंश मात्र अभी संपराय क्रिया शेष रही उसे अनियट्टि बादर गुणठाणा कहते हैं। आठवां नवमां गुण ठाणा [गुणस्थान] के शब्दार्थ बहुत ही गम्भीर है अतः इन्हे पंचसग्रहादिक ग्रंथ तथा सिद्धान्त में से जानना।

१० **सूक्ष्म संपराय गुणस्थानः**—उपरोक्त २१ प्रकृति और १ हास्य २ रति ३ अरति ४ भय ५ शोक ६ दुगंछा एवं २७ प्रकृति का क्षयोपशम करे इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे। उत्तर—यह जीव द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप, निरभिलाष, निर्वंछक, निर्वेदकतापूर्वक, निराशी, अव्यामोह अविभ्रमतापूर्वक जाने सर्दहे परूपे फरसे। यह जीव ज.उसी भव में उ.तीसरे भव में मोक्ष जावे। सूक्ष्म अर्थात थोड़ीसी—पतलीसी—संपराय क्रिया शेष रही अतः इसे सूक्ष्म संपराय गुणस्थान कहते हैं।

११ **उपशान्त मोहनीय गुणस्थानः**—उपरोक्त २७ प्रकृति और संज्वलन का लोभ एवं २८ प्रकृति उपशमावे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वथा ढांके [छिपावे], भस्म [राख] से दबी हुई अग्निवत इस जीव को किस गुण की उत्पति होवे [उत्तर] यह जीव जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से क्षेत्र से, काल से, भाव से, नोकारसी आदि छमासी तप वीतराग भाव से, यथाख्यात चारित्र पूर्वक जाने, सर्दहे, परुपे, फरसे, इतने में यदि काल करे तो अनुत्तर विमान में जावे फिर मनुष्य होकर मोक्ष जावे और यदि [काल नहीं करे और] सूक्ष्म लोभ का उदय होवे तो कषाय रुप अग्नि प्रकट हो कर दशवें गुणस्थान परसे गिरता हुवा यावत् पहेले गुणस्थान तक चला आवे [इग्यारहवें गुणस्थान से आगे चढ़े नहीं] सर्वथा प्रकारे मोह का उपशम करना [जल से बुझाई हुई अग्नि वत् नहीं परन्तु] भस्म से दबी हुई अग्नि वत् । उसे उपशान्त मोहनीय गुणस्थान कहते हैं ।

१२ क्षीण मोहनीन गुणस्थानः-उपरोक्त २८ प्रकृतियों को सर्वथा प्रकारे खपावे क्षपक श्रेणी, क्षायक भाव, क्षायक समकित, क्षायक यथाख्यात चारित्र, करण सत्य, योग सत्य, भाव सत्य, अमायी, अकषायी, वीतरागी, भाव निर्ग्रंथ, संपूर्ण संवुड (नीवते) संपूर्ण भावितात्मा, महा तपस्वी महासुशील, अमोही अविकारी, महाज्ञानी महा ध्यानी, वर्द्धमान परिणामी, अपडिवाइ होकर अन्तर्मुहूर्त रहे । इस गुणस्थान पर काल करते नहीं व पुनर्भव होता नहीं । अन्त समय में पांच ज्ञानावरणीय, नव दर्शनावर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिय, पांच प्रकारे अन्तराय कर्म क्षय करणोद्यम करके तेरहवें गुणस्थान पर पहेले समय में क्षय करे तब केवल ज्योति प्रकट होवे। क्षीण अर्थात् क्षय किया है सर्वथा प्रकारे मोहनीय कर्म जिस गुणस्थान पर सउ क्षीण मोहनीय गुणस्थान कहते है।

१३ सयोगी केवली गुणस्थानः-दश बोल सहित तेरहवें गुणस्थान पर विचरे। संयोगी, सशरीरी सलेशी, शुक्ल लेशी, यथाख्यात चारित्र, क्षायक समकित पंडित वीर्य, शुक्ल ध्यान, केवल ज्ञान, केवल दर्शन एवं दश बोल जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट देश न्यून करोड़ पूर्व तक विचरे। अनेक जीवों को तार कर, प्रतिबोध देकर, निहाल करके, दूसरे तीसरे शुक्ल ध्यान के पाये को ध्याय कर चौदहवें गुणस्थान पर जावे। सयोगी याने शुभ मन, वचन, काया के योग सहित बाहाज्य चलोपकरण है गमनागमनादिक चेष्टा शुभ योग सहित है केवल ज्ञान केवल दर्शन उपयोग समयांतर अविछिन्न रूप से शुद्ध प्रणमें इसलिये इसे सयोगी केवली गुणस्थान कहते हैं।

१४ अयोगी केवली गुण स्थानः- शुक्ल ध्यान का चौथा पाया समुछिन्नक्रिय, अनन्तर अप्रतिपाती, अनिवृति ध्याता मन योग रूंध कर, वचन योग रूंध कर, काय योग रूंध कर, आनप्राण निरोध कर रूपातित परम शुक्ल ध्यान ध्याता हुवा ७ बोल सहित विचरे। उक्त १०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोल में से सयोगी, सलेशी, शुक्ल लेशी, एवं तीन बोल छोड़ शेष ७ बोल सहित सर्व पर्वतों का राजा मेरु के समान अडोल, अचल, स्थिर अवस्था को प्राप्त होवे। शैलेशी पूर्वक रह कर पंच लघु अक्षर के उच्चार प्रमाण काल तक रह कर शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम गोत्र एवं ४ कर्म क्षीण करके मोक्ष पावे। शरीर औदारिक तेजस्, कर्मण सर्वथा प्रकार छोड़ कर समश्रेणी रजु गति अन्य आकाश प्रदेश को नहीं अवगाहता हुवा अणफरसता हुवा एक समय मात्र में उर्द्धगति अविग्रह गति से वहां जाकर एरंड बीज बंधन मुक्त वत् निर्लेप तुम्बीवत्, कोदंड मुक्त बाण वत्, इन्धन वह्नि मुक्त धूम्र वत्। उस सिद्ध क्षेत्र में जाकर साकारोपयोग से सिद्ध होवे, बुद्ध होवे, परांगत होवे परंपरांगत होवे सकल कार्य अर्थ साध कर कृत कृतार्थ निष्ठितार्थ अतुल सुख सागर निमग्न सादि अनन्त भागे सिद्ध होवे। इस सिद्ध पद का भाव स्मरण चिंतन मनन सदा सर्वदा काले मुझको होवे ? वो घडी पल धन्य सफल होवे। अयोगी अर्थात् योग रहित केवल सहित विचरे उसे अयोगी केवली गुणस्थान कहते है।

३ स्थिति द्वार

पहेले गुण स्थान की स्थिति ३ प्रकार की—अणादिया अपज्जव सिया याने जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं और अन्त भी नहीं। अभव्य जीव के मिथ्यात्व आश्री।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ अणादिया सपज्जवसिया अर्थात् जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं परन्तु अन्त है। भव्य जीव के मिथ्यात्व आश्री। ३ सादिया सपज्जवसिया अर्थात् जिस मिथ्यात्व की आदि भी है और अन्त भी है। पडिवाई समदृष्टि के मिथ्यात्व आश्री। इसकी स्थिति जघन्य अन्तमुँहूर्त उत्कृष्ट अर्द्ध पुद्गल परावर्तन में देश न्यून। बाद में अवश्य समकित पाकर मोक्ष जावे। दूसरे गुण० की स्थिति जघन्य एक समय की उ० ६ आवलिका व ७ समय की। तीसरे गुण० की स्थिति ज. उ. अन्तर्मुहूर्त की चौथे गुण० की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त की उ० ६६ सागरोपम जाजेरी। २२ सागरोपम की स्थिति से तीन वार बारहवें देवलोक में उपजे तथा दोवार अनुत्तर विमान में ३३ सागरोपम की स्थिति से उपजे (एवं ६६ सागरोपम) और तीन करोड़ पूर्व अधिक मनुष्य के भव आश्री जानना। पांचवें, छट्ठे, तेरहवें गुण० की स्थिति ज. अन्तर्मुहूर्त उ० देश न्यून (उणी) ८॥ वर्ष न्यून एक करोड़ पूर्व की, सातवें से इग्यारहवें तक ज० १ समय उ० अन्तर्मुहूर्त बारहवें गुण० की स्थिति ज० उ० अन्तर्मुहूर्त चौदहवें गुण० की स्थिति पांच लघु (हृस्व) स्वर (अ, इ, उ, ऋ, लृ,) के उच्चारण के काल प्रमाणे जानना।

४ क्रिया द्वार

पहेले तीसरे गुणस्थाने २४ क्रिया पावे इरियावहिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रिया छोड़ कर। दूसरे चौथे गुण० २३ क्रिया पावे इरिया वहिया, और मिथ्यात्व की ये दो छोड़ कर। पांचवें गुण० २२ क्रिया पावे मिथ्यात्व, अविरति इरिया वहिया क्रिया छोड़ कर। छट्टे गुण० २क्रिया पावे १ आरंभिया २ माया-वत्तिया। सातवें गुण० से दशवें गुण० तक १ माया वतिया क्रिया पावे। इग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें गुण० १ इरिया वहिया क्रिया पावे। चौदहवें गुण० क्रिया नहीं पावे।

५ सत्ता द्वार

पहले गुणस्थान से इग्यारहवें गुण० तक आठ कर्म की सत्ता। बारहवें गुण० ७ कर्म की सत्ता मोहनीय कर्म छोड़ कर। तेरहवें चौदहवें गुण० ४ कर्म की सत्ता वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र एवं चार कर्म।

६ बंध द्वार

पहिले गुणस्थान से सातवें गुण० तक (तीसरा गुण० छोड़ कर) ८ कर्म बंधे या सात कर्म बंधे (आयुष्य कर्म छोड़ कर) तीसरे, आठवें, नववें गुण० ७ कर्म बंधे (आयुष्य छोड़ कर) दशवें गुण० ६ कर्म बंधे (अयुष्य मोहनीय कर्म छोड़ कर) इग्यारहवें, बारहवें तेरहवें गुण० १ शाता वेदनीय कर्म बंधे। चौदहवें गुण० कर्म नहीं बंधे।

७ वेद द्वार और ८ उदय द्वार

पहिले गुण० से दशवें गुण० तक ८ कर्म वेदे और ८ कर्म का उदय। इग्यारहवें बारहवें ७ कर्म (मोहनीय छोड

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

कर) वेदे और ७ कर्म का उदय । तेरहवें चौदहवें गुण० ४ कर्म वेदे और ४ कर्म का उदय—वेदनीय,आयुष्य, नाम और गोत्र ।

६ उदीरणा द्वार

पहेले गुण०से सातवें गुण०तक ८ कर्म की उदीरणा तथा सात की (आयुष्य कर्म छोड़ कर) आठवें, नववें गुण० ७ कर्म की उदीरणा (आयुष्य छोड कर) तथा ६ कर्म की (आयुष्य मोहनीय छोड कर) दशवें गुण०६ की करे ऊपर समान तथा ५ की करे (आयुष्य मोहनीय वेदनीय छोड कर) इग्यारहवें बारहवें गुण० ५ कर्म की (ऊपर समान) तथा २ कर्म की करे— नाम और गोत्र कर्म की । तेरहवें गुण० २ कर्म की उदीरणा—नाम, गोत्र । चौदहवे गुण० उदीरणा नहीं करे ।

१० निर्जरा द्वार

पहेले से इग्यारहवें गुण० तक ८ कर्म की निर्जरा बारहवें ७ कर्म की निर्जरा (मोहनीय कर्म छोड़ कर) तेरहवें चौदहवें गुण० ४ कर्म की निर्जरा—वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र ।

११ भाव द्वार

१ उदय भाव २ उपशम भाव ३ क्षायक भाव ४ क्षयोपशम भाव ५ परिणामिक भाव ६ संनिवाइ भाव ।

पहेले तीसरे गुण०३ भाव—उदय, क्षयोपशम, परिणा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिक दूसरे,चोथे, पांचवे,छट्ठे,सातवें व आठवें गुण०से इग्यारहवें गुण० तक उपशम श्रेणि वाले को ४ भाव–उदय, उपशम चयोपशम, परिणामिक (कोई २ उपशम की जगह चायक भी कहते हैं) और आठवें से लगा कर बारहवें गुण०तक चपक श्रेणि वाले को ४ भाव–उदय, चयोपशम, चायक, परिणामिक, तेरहवें चौदहवें गुण० ३ भाव उदय, चायक, परिणामिक, सिद्ध में २ भाव–चायक, परिणामिक ।

१२ कारण द्वार

कर्म बन्ध के कारण पांच–१ मिथ्यात्व २ अविरति (अवर्ती) ३प्रमाद ४कषाय ५ योग। पहेले तीसरे गुण०५ कारण पावे। दूसरे,चोथे गुण०चार कारण (मिथ्यात्व छोड़ कर) पांचवे छट्ठे गुण० ३ कारण पावे (मिथ्यात्व, अविरति छोड़ कर) सातवें से दशवें गुण०तक २ कारण पावे कषाय, योग। इग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें गुण० १ कारण पावे १ योग चौदहवें गुण० कारण नहीं पावे ।

१३ परिषह द्वार

पहेले से चोथे गुण० तक यद्यपि परिषह २२ पावे परन्तु दुःख रूप है निर्जरा रूप प्रणमें नहीं। पांचवें से नववें गुण० तक २२ परिषह पावे एक समय में २० वेदे, शीत का होवे वहां ताप का नहीं और ताप का होवे वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का होवे वहां चलने का नहीं । दशवें, इग्यारहवें बारहवें गुण० १४ परिषह पावे (मोहनीय कर्म के उदय से होने वाले ८ छोड़ कर)—अचल, अरति, स्त्री का, बैठने का, आक्रोश का, मेल का, सत्कार पुरस्कार का एवं सात चारित्र मोहनीय कर्म के उदय होने से और १ दंसण परिषह (दर्शन मोहनीय के उदय होने से) एवं आठ परिषह छोड़ कर शेष १४ इन में से एक समय में १२ वेदे शीत का वेदे वहां ताप का नहीं, और ताप का वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने का होवे वहां चलने का नहीं। तेरहवें चौदहवें गुण० ११परिषह पावे। उक्त परिषह में से तीन छोड़ कर शेष ११ (१) प्रज्ञा का (२) अज्ञान का ये दो परिषह ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से और (३)अलाभ का परिषह अन्तराय कर्म के उदय से एवं ३ परिषह छोड़ कर। इन परिषह में से एक समय में ९वेदे शीत का होवे वहां ताप का नहीं और ताप का वेदे वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने का होवे वहां चलने का नहीं ।

१४ मार्गणा द्वार।

पहेले गुण० मार्गणा ४, तीसरे, चोथे, पांचवें, सातवें जावे। दूसरे गुण० मार्गणा १, गिरे तो पहेले गु०आवे (चढे नहीं) तीसरे गु० ४ गिरे तो पहेले आवे और चढे तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चोथे पांचवें सातवें जावे। चौथे गुण० मार्गणा ५ गिरे तो पहेले गुण० दूसरे, तीसरे गुण० आवे और चढे तो पांचवें सातवें जावे। पांचवें गुण० मार्गणा ५ गिरे तो पहेले, दूसरे, तीसरे, चोथे गुण० आवे और चढे तो सातवें जावे। छट्ठे गुण० ६ मार्गणा गिरे तो पहेले, दूसरे, तीसरे, चोथे, पांचवें गुण० आवे और चढे तो सातवें जावे। सातवें गुण० मार्गणा ३ गिरे तो छट्ठे चोथे आवे और चढे तो आठवें गुण० जावे। आठवें गुण० मार्गणा ३ गिरे तो सातवें चोथे आवे और चढे तो नववें गुण० जावे। नववें गुण० मार्गणा ३ गिरे तो आठवें चोथे आवे और चढे तो दशवें जावे। दशवें गुण० मार्गणा ४ गिरे तो नववें चोथे आवे चढे तो इग्यारहवें बारहवें जावे। इग्यारहवें गुण० मार्गणा २ काल करे तो अनुत्तर विमान में जावे और गिरे तो दशवें से पहेले तक आवे, चढे नहीं। बारहवें गुण० मार्गणा १ तेरहवें जावे, गिरे, नहीं। तेरहवें गुण० मार्गणा १ चौदहवें जावे, गिरे नहीं। चौदहवें मार्गणा नहीं, मोक्ष जावे।

१५ आत्मा द्वार

आत्मा आठ १ द्रव्यात्मा २ कषायात्मा ३ योगात्मा ४ उपयोगात्मा ५ ज्ञानात्मा ६ दर्शनात्मा ७ चारित्रात्मा ८ वीर्यात्मा एवं ८। पहेले तीसरे गुण० ६ आत्मा, ज्ञान और चारित्र ये २ छोड़ कर, दूसरे चोथे गुण० ७ आत्मा चारित्र छोड़ कर, पांचवें गुण० भी ७ आत्मा

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

(देश चारित्र है) छट्ठे से दशवें गुण० तक ८ आत्मा, इग्यारहवें बारहवें तेरहवें गुण० ७ आत्मा-कषाय छोड़ कर, चौदहवें गुण० ६ आत्मा कषाय और योग छोड़ कर,सिद्ध में ४ आत्मा-ज्ञानात्मा,दर्शनात्मा,द्रव्यात्मा,उपयोगात्मा ।

१६ जीव भेद द्वार

पहेले गुण० १४ भेद पावे,दूसरे गुण० ६ भेद पावे बेइन्द्रिय, त्रीइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय इन चार का अपर्याप्ता और संज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ६, तीसरे गुण० संज्ञी पंचेन्द्रिय का पर्याप्ता पावे, चोथे गुण० २ भेद पावे संज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्ता और पर्याप्ता पांचवें से चौदहवें गुण० तक १ संज्ञी पंचेन्द्रिय का पर्याप्ता पावे ।

१७ योग द्वार

पहेले दूसरे चौथे गुण० योग १३ पावे, आहारिक के दो छोड़ कर । तीसरे गुण० १० योग पावे-४ मनका ४ वचन का ८, ९ औदारिक का और १० वैक्रिय का एवं १०, पांचवें गुण० १२ योग पावे आहारिक के दो और एक कार्मण का एवं तीन छोड शेष १२ योग । छट्ठे गुण० १४ योग पावे (कार्मण का छोड कर) सातवें गुण० ११ योग-४ मन के, ४ वचन के, १ औदारिक का १ वैक्रिय का,एक आहारिक का एवं ११,आठवें गुण० से १२ गुण० तक ९ योग पावे-४ मन के ४ वचन के और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ औदारिक का, एवं ६, तेरहवें गुण० योग ७-दो मन के, दो वचन के, औदारिक, औदारिक का मिश्र, कार्मण काय योग एवं ७ योग, चौदहवें गुण० योग नहीं ।

१८ उपयोग द्वार

पहले तीसरे गुण० ६ उपयोग--३ अज्ञान और ३ दर्शन एवं ६, दूसरे, चौथे, पांचवें गुण० ६ उपयोग--३ ज्ञान ३ दर्शन एवं ६, छठे से बारहवें तक उपयोग ७--४ ज्ञान ३ दर्शन (एवं ७) तेरहवें चौदहवें गुण० तथा सिद्ध में २ उपयोग १ केवल ज्ञान और २ केवल दर्शन ।

१९ लेश्या द्वार

पहले से छठे गुण० तक ६ लेश्या पावे, सातवें गुण० तीन लेश्या पावे-तेजो, पद्म और शुक्ल । आठवें से बारहवें गुण० तक १ शुक्ल लेश्या तेरहवें गुण० १ परम शुक्ल लेश्या, चौदहवें गुण० लेश्या नहीं ।

२० चारित्र द्वार

पहले से चोथे गुण० तक कोई चारित्र नहीं, पांचवे गुण० देश थकी सामायिक चारित्र, छट्ठे सातवें गुण० ३ तीन चारित्र—सामायिक चारित्र, छेदोपस्थानीय चारित्र, परिहार विशुद्ध चारित्र, एवं तीन । आठवें नववें गुण० २ दो चारित्र पावे, सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र, दशवें गुण० १ सूक्ष्म संपराय चारित्र, इग्यारहवें से चौदहवें गुण० तक १ यथाख्यात चारित्र ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१ समकित द्वार

पहेले तीसरे गुण०समकित नहीं,दूसरे गुण० १सास्वादान समकित,चोथे,पांचवें,छट्ठ गुण० उपशम तथा क्षयोपशम और सातवें गुण०-३उपशम, क्षयोपशपम, क्षायक। दशवें इग्यारहवें गुण०-२दो समकित,उपशम और क्षायक,बारहवें, तेरहवें,चौदहवें गुण० तथा सिद्ध में १क्षायक समकित पावे।

२२ अल्प बहुत्व द्वार

सर्व से थोड़ा इग्यारहवें गुणस्थान वाले। एक समय में उपशम श्रेणि वाला ५४जीव मिले। इससे बारहवें गुणस्थानवाला संख्यात गुणा। एक समय में क्षपक श्रेणि वाला १०८ जीव पावे। इससे आठवें नवें दशवें गुण० संख्यात गुणा, जघन्य २०० उत्कृष्ट ९०० पावे। इससे तेरहवें गुण० संख्यात गुणा,जघ०दो क्रोडी (करोड़)उ० नव करोड पावे। इससे सातवें गुण० संख्यात गुणा, जघन्य २०० करोड़ उ० नवसे करोड पाव। इससे छट्ठ गुण० संख्यात गुणा ज० दो हजार करोड उ० नव हजार करोड़ पावे। इससे पांचवे गुण० असंख्यात गुणे,तिर्यंच,श्रावक,आश्री। इससे दूसरे गुण०असंख्यात गुणा ४ गति आश्री। इससे तीसरे गुण० असंख्यात गुणा(४गति में विशेष है)इससे चोथे गुण०असंख्यात गुणा (अत्यन्त स्थिति होने से) इससे चौदहवें गुण० और सिद्ध भगवन्त अनन्तगुणा। इससे पहेला गुण०अनन्त गुणा(एकेन्द्रिय प्रमुख सर्व मिथ्या दृष्टि है इस आश्री)

॥ इति गुणस्थान २२ द्वार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव ६—

१ उदय भाव २ उप शम भाव ३ क्षायक भाव ४ क्षयोपशम भाव ५ परिणामिक भाव ६ सन्निवाइ भाव।

१ उदय भाव के दो भेदः—१ जीव उदय निष्पन्न २ अजीव उदय निष्पन्न जीव उदय निष्पन्न में ३३ बोल पावेः—४ गति, ६ काय, ६ लेश्या, ४ कषाय, ३ वेद एवं २३ और १ मिथ्यात्व २ अज्ञान ३ अविरति ४ असंज्ञीत्व ५ आहारिक पना ६ छद्मस्थ पना ७ सयोगी पना ८ संसार परियट्टणा ६ असिद्ध १० अ० केवली एवं सर्व ३३ बोल। अजीव उदय निष्पन्न में ३० बोल पावेः-५वर्ण २ गन्ध ५ रस ८ स्पर्श ५ शरीर और ५ शरीरके व्यापार एवं ३० दोनों मिलाकर (३३+३०) ६३ बोल उदय भाव के हुवे।

उपशम भाव में ११ बोल पावे। चार कषाय का उपशम ४, ५ रागका उपशम ६ द्वेष का उपशम ७ दर्शन मोहनीय का उपशम ८ चारित्र मोहनीय का उपशम एवं ८ मोहनीय की प्रकृति, और ६ उवसमिया दंशण लद्धि (समकित) १० उवसमिया चरित्त लद्धि ११ उवसमिया अकषाय छउमथ वीतराग लद्धि एवं ११।

क्षयक भाव में ३७ बोल—५ज्ञानावरणिय ६ दर्शना वरणिय, २ वेदनीय, १ राग, १ द्वेष, ४ कषाय,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ दर्शन मोहनीय, १ चारित्र मोहनीय, ४ आयुष्य, २ नाम, २ गोत्र, ५ अन्तराय एवं ३७ प्रकृति का क्षय करे उसे क्षायक भाव कहते हैं ये ६ बोल पावे।

१ क्षायक समकित २ क्षायक यथाख्यात चारित्र ३ केवल ज्ञान ४ केवल दर्शन और क्षायक दानादि पांच लब्धि एवं ६ बोल।

क्षयोपशम भाव में ३० बोलः-(प्रथम) ४ ज्ञान, ३अज्ञान, ३ दर्शन, ३दृष्टि, ४ चारित्र १ (प्रथम) चरित्ता चरित्त (श्रावक पना पावे) १ आचार्यगणि की पदवी, १ चौदह पूर्व ज्ञान की प्राप्ति, ५ इन्द्रिय लब्धि, ५ दानादि लब्धि एवं सर्व ३० बोल।

परिणामिक भाव के दो भेदः—१ सादि परिणामिक २ अनादि परिणामिक। सादि नष्ट होवे अनादि नहीं। सादि परिणामिक के अनेक भेद हैं-पुरानी सुरा, (मदिरा) पुराना गुड़, तंदुल आदि ७३ बोल होते हैं शास्त्र भगवती सूत्र की। अनादि परिणामिक के १० भेदः-१धर्मास्ति काय २ अधर्मास्ति काय ३ आकाशास्ति काय ४ पुद्गलास्ति काय ५ जीवास्ति काय ६ काल ७ लोक ८ अलोक ९ भव्य १० अभव्य एवं १०।

सन्निवाइ भाव के २६ भांगे। १० द्विक संयोगी के १० त्रिक संयोगी के, ५ चोक संयोगी के, १ पंच संयो-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गी का एवं २६ भांगे विस्तार श्री अनुयोग द्वार सिद्धान्त से जानना। देखो पृष्ठ १६०, १६१, १६२।

१४ गुणस्थान पर १० क्षेपक द्वार

१ हेतु द्वारः–२५ कषाय, १५ योग एवं ४० और ६ काय, ५ इन्द्रिय, १ मन एवं १२ अव्रत (४०+१२= ५२), ५मिथ्यात्व एवं सर्व ५७ हेतु। पहेले गुणस्थाने ५५ हेतु (आहारिक के २ छोड़कर) दूसरे गुणस्थाने ५० हेतु (५५ में से ५ मिथ्यात्व के छोड़ना) तीसरे गुण० ४३ हेतु (५७ में से–अनन्तानुबंधी के चार, औदारिक का मिश्र १ वैक्रिय का मिश्र १, आहारिक के २, कार्मण का १, मिथ्यात्व ५, एवं १४ छोड़ना) चोथे गुण० ४६ हेतु (४३ तो ऊपर के और औदारिक का मिश्र १, वैक्रिय का मिश्र १, कार्मण काययोग एवं (४३+३=४६) पांचवें गुण० ४० हेतु (४६ के ऊपर के उसमें से अप्रत्याख्यानी की चोकड़ी. त्रस काय का अव्रत और कार्मण काय योग ये ६ घटाना शेष (४६–६=४० हेतु) छठ्ठे गुण० २७ हेतु (४० में से प्रत्याख्यानी की चोकड़ी पांच स्थावर का अव्रत, पांच इन्द्रिय का अव्रत और १ मन का अव्रत एवं १५ घटाना शेष २५ रहे और २ आहारिक के एवं २७ हेतु) सातवें गुण० २४ हेतु (२७ में से–औदारिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र, आहारिक मिश्र ये तीन घटाना शेष २४ हेतु) आठवें गुण० २२ हतु (२४ में से वैक्रिय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और आहारिक के २ घटाना) नववें गुण० १६ हेतु (२२ में से-हास्य, रति, अरति, भय शोक, दुर्गंछा ये ६ घटाना) दशवें गुण० १० हेतु ६ योग और १ संज्वलन का लोभ एवं १० हेतु। इग्यारहवें, बारहवें गुण० ६ हेतु (६ योग के) तेरहवें गुण० ७ हेतु (सात योग के) चौदहवें गुण० हेतु नहीं।

२ दण्डक द्वारः-पहेले गुण० २४ दण्डक, दूसरे गुण० १६ दण्डक, (५ स्थावर के छोड़कर) तीसरे, चोथे, गुण० १६ दण्डक (१६ में से ३ विकलेन्द्रिय के घटाना) पांचवे गुण० २ दण्डक-संज्ञी मनुष्य और संज्ञी तिर्यंच, छठे से चौदहवें गुण० तक १ मनुष्य का दण्डक।

३ जीवा योनि द्वारः-पहेले गुण० ८४ लाख जीवा योनि, दूसरे गुण० ३२ लाख, (एकेन्द्रिय की ५२ लाख छोड़कर) तीसरे चौथे गुण० २६ लाख जीवा योनि द्वार पांचवें गुण० १८ लाख जीवा योनि, छठे से चौदहवें गुण० १४ लाख जीवा योनि।

४ अन्तर द्वारः-पहेले गुण० जघन्य अन्तर्मुहूर्त उ० ६६ सागरोपम जाजेरी अथवा १३२ सागर जाजेरी, ये ६६ सागर चौथे गुण० रहे, अन्तर्मुहूर्त तीसरे गुण० रह कर पुनः चौथे गुण० ६६ सागर रह कर मिथ्यात्व गुण० आवे दूसरे गुण० से इग्यारहवें गुण० तक जघन्य अन्तर्मुहूर्त अथवा पल्य के असंख्यातवें भाग (इतने काल के बिना उपशम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रेणी करके गिरे नहीं) उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल में देश न्यून, बारहवें, तेरहवें और चौदहवें गुण० अन्तर नहीं पड़े ।

५ ध्यान द्वारः—पहेले, दूसरे, तीसरे, गुण० २ ध्यान (पहेला) चोथे, पांचवे गुण० ३ ध्यान, छट्ठे गुण० २ ध्यान १ आर्त्त ध्यान २ धर्म ध्यान। सातवें गुण० १ धर्म ध्यान आठवें से चौदहवें गुण० तक १ शुक्ल ध्यान ।

६ फरसना द्वारः—पहेले गुण० १४ राज लोक फरसे, (स्पर्शे) दूसरे गुण० नीचले पंडग वन से छट्ठी नरक तक फरशे तथा ऊँचा अधोगाम की विजय से नवग्रीयवेक तक फरसो, तीसरे गुण० लोक के असंख्यातवें भाग फरसे। चौथा गुण० अधोगाम की विजय से बारहवें देव लोक तक फरसे अथवा पंडग वन से छट्ठे नरक तक फरसे, पांचवाँ गुण० इसी प्रकार अधोगाम की विजय से बारहवें देवलोक तक फरसे। छट्ठे से इग्यारहवें गुण० तक अधोगाम की विजय से ५ अनुत्तर विमान तक फरसे। बारहवां गुण० लोक का असंख्यातवा भाग फरसे। तेरहवां गुण० सर्व लोक फरसे। चौदहवां गुण० लोक का असंख्यातवां भाग फरसे।

७ तिर्थंकर गोत्र ४ गुण० बान्धेः—चोथे, पांचवें, छट्ठे और सातवें एवं ४ गुण० बांधे शेष गुण० नहीं बांधे, तिर्थंकर देव ६ गुण० फरसे–४, ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३, १४, एवं नव फरसे ।

८ वां शाश्वता शावत द्वारः—१४ गुण० में १,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४, ५, ६, १३, एवं ५ शाश्वता शेष ६ गुण० अशाश्वता।

नववां संघयण द्वारः–१४ गुण० में १, २, ३, ४, ५, ६, ७, एवं सात गुण० ६ संघयण (संहनन) आठवें से चौदहवें गुण० तक एक वज्र, ऋषभ, नाराच संघयण (संहनन)।

दशवां साहारण द्वारः–आर्याजी, अवेदी, परिहार–विशुद्ध चारित्र वंत, पुलाक लब्धिवन्त, अप्रमादी साधु, चौदह पूर्व धारी साधु और आहारिक शरीर एवं सात का देवता साहारण नहीं कर सके ।

॥ क्षेपक द्वार समाप्त ॥

इति गुणस्थानक द्वार सम्पूर्ण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेतीश बोल

एक प्रकार का संयमः-सर्व आश्रव से निवर्तन होना। दो प्रकार का बंधः- १ राग बंध २ द्वेष बंध। तीन प्रकार का दण्डः-१ मन दण्ड २ वचन दण्ड ३ काय दण्ड। तीन प्रकार की गुप्तिः-१ मन गुप्ति २ वचन गुप्ति ३ काय गुप्ति। तीन प्रकार का शल्यः-१ माया शल्य २ निदान शल्य ३ मिथ्या दर्शन शल्य। तीन प्रकार का गर्वः-१ ऋद्धि गर्व २ रस गर्व ३ शाता गर्व। तीन प्रकार की विराधनाः-१ ज्ञान विराधना २ दर्शन विराधना ३ चारित्र विराधना।

४ चार प्रकार की कषायः-१ क्रोध कषाय २ मान कषाय ३ माया कषाय ४ लोभ कषाय। चार प्रकार की संज्ञाः-१ आहार संज्ञा २ भय संज्ञा ३ मैथुन संज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा। चार प्रकार की कथाः-१ स्त्री कथा २ भत्त कथा ३ देश कथा ४ राज कथा। चार प्रकार का ध्यानः-१ आर्त ध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान।

पांच प्रकार की क्रियाः-१ कायिका क्रिया २ आधिकरणिका क्रिया ३ प्रद्वेषिका क्रिया ४ पारितापनिका क्रिया ५ प्राणातिपातिका क्रिया। पांच प्रकार का काम-गुण १ शब्द २ रूप ३ गन्ध ४ रस ५ स्पर्श। पांच प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का महाव्रतः-१ सर्व प्राणातिपात वेरमण २ सर्व मृषावाद वेरमण ३ सर्व अदत्तादान वेरमण ४ सर्व मैथुन वेरमण ५ सर्व परिग्रह वेरमण। पांच प्रकार का समिति १ इरिया समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदान भंड मात्र निक्षेपन समिति ५ उच्चार प्रश्रवण (पासवण) खेल, जल, श्लेष्म आदि परिठावणिया समिति। पांच प्रकार का प्रमादः-१ मद २ विषय ३ कषाय ४ नि ५ विकथा।

छः प्रकार का जीवनिकायः-१ पृथ्वी काय २ अपकाय ३ तेजस् काय ४ वायुकाय ५ वनस्पति काय ६ त्रस काय। छः प्रकार की लेश्या १ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजोलेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

सात प्रकार का भयः-१ आलोक भय (मनुष्य से मनुष्य को भय होवे) २ देव, तिर्यंच से जो भय होवे वो परलोक भय ३ धन से उत्पन्न होने वाला आदान भय ४ छायादि देख कर जो भय उत्पन्न होवे वो अकस्मात भय, ५ आजीविका भय ६ मृत्यु (मरने का) भय ७ अपयश—अपकीर्ति भय।

आठ प्रकार का मदः-१ जाति मद २ कुल मद ३ बल मद ४ रूप मद ५ तप मद ६ श्रुत मद ७ लाभ मद ८ ऐश्वर्य मद।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नव प्रकार की ब्रह्मचर्य गुप्तिः-(१) स्त्री पशु पंडक रहित आलय (स्थानक) में रहना (इस पर) चूहे बिल्ली का दृष्टान्त (२) मन को आनन्द देने वाली तथा काम-राग की वृद्धि करने वाली स्त्री के साथ कथा-वार्ता नहीं करना, नींबू के रस का दृष्टान्त (३) स्त्री के आसन पर बैठना नहीं तथा स्त्री के साथ सहवास करना नहीं । घृत के घट को अग्नि का दृष्टांत (४) स्त्री का अङ्ग अवयव, उस की आकृति, उसकी बोल चाल व उसका निरक्षण आदि को राग दृष्टि से देखना नहीं-(सूर्य को दुखती आंखों से देखने का दृष्टान्त (५) स्त्री सम्बन्धी कूजित, रुदन, गीत, हास्य, आक्रन्द आदि सुनाई देवे ऐसी दीवार के समीप निवास नहीं करना, मयूर को गर्जारव का दृष्टांत (६) पूर्वगत स्त्री सम्बन्धी क्रीड़ा, हास्य, रति, दर्प, स्नान, साथ में भोजन करना आदि स्मरण नहीं करना । सर्प के जहर (विष) का दृष्टान्त (७) स्वादिष्ट तथा पौष्टिक आहार नित्यप्रति करना नहीं । त्रिदोषी को घृत का दृष्टान्त (८) मर्यादित काल में धर्म यात्रा के निमित्त चाहिये उससे अधिक आहार करना नहीं । कागज की कोथली में रुपों का दृष्टान्त (९) शरीर सुन्दर व विभूषित करने के लिये श्रृङ्गार व शोभा करना नहीं । रंक के हाथ रत्न का दृष्टान्त ।

दश प्रकार का श्रमण-(यति) धर्म-१ क्षमा (सहन करना) २ मुक्ति (निर्लोभिता रखना) ३ आर्जव (निर्मल स्वच्छ हृदय रखना) ४ मार्दव (कोमल-विनय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुद्धि रखना व अहङ्कार-मद नहीं करना) ५ लाघव-(अल्प उपकरण-साधन रखना) ६ सत्य (सत्यता-प्रमाणिकता से वर्तना) ७ संयम (शरीर-इन्द्रिय आदि को नियमित रखना) ८ तप (शरीर दुर्बल होवे इससे उपवासादि तप करना) ९ चैत्य-(दूसरों को उपकार बुद्धि से ज्ञानादि देना) १० ब्रह्मचर्य (शुद्ध आचार-निर्मल पवित्र वृत्ति में रहना) दश प्रकारकी सामाचारी-१ आवश्यं-स्थानक से बाहर जाना हो तो गुरु आदि को कहना कि अवश्य करके मुझे जाना है २ निषेधिक-स्थानक में आना हो तो कहना कि निश्चय कार्य कर के मैं आया हूँ ३ आपृच्छना-अपने को कार्य होवे तब गुरु को पूछना, ४ प्रति पूछना दूसरे साधुओं का कार्य होवे तब वारंवार गुरु को जतलाने के लिये पूछना ५ छंदना-गुरु अथवा बड़ों को अपने पास की वस्तु आमंत्रण करना ६ इच्छाकार-गुरु तथा बड़ों को कहना "हे पूज्य! सूत्रार्थ ज्ञान देने के लिये आपकी इच्छा है?" ७ मिथ्याकार-पाप लगा हो तो गुरु के समीप मिथ्या कहकर क्षमा याचना करना (अर्थात् प्रायश्चित लेना) ८ तथ्यकार-गुरु कथन प्रति कहे कि आप कहो वैसा ही करूंगा। ९अभ्युत्थान-गुरु तथा बड़ों के आने पर सात आठ पांव सामने जाना वैसे ही जाने पर सात आठ पांव पहुँचाने को जाना १०उपसंपद्-

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

गुरु आदि के समीप सूत्रार्थ रूप लक्ष्मी प्राप्त करने को हमेशा रहना ।

ग्यारह प्रकार की श्रावक प्रतिमा—१ एक मासकी--इस में शुद्ध सत्य धर्म की रुचि होवे परन्तु नाना व्रत उपवासादि अवश्य करने के लिये श्रावक को नियम न होवे । उसे दर्शन श्रावक प्रतिमा कहते हैं २ दूसरी प्रतिमा दो माह की--इसमें सत्य धर्म की रुचि के साथ २ नाना शील व्रत—गुणव्रत प्रत्याख्यान पौषधोपवासादि करे परन्तु सामायिक दिशा वकाशिक व्रत करने का नियम न होवे वो उपासक प्रतिमा ३ तीसरी प्रतिमा तीन माह की--इसमें ऊपर कहा उसके उपरान्त सामायिकादि करे, परन्तु अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णमासी आदि पर्व में प्रौषधोपवास करने का नियम न होवे ४ चोथी प्रतिमा चार माह की--इसमें ऊपर कहा उसके उपरान्त प्रति पूर्ण पौषधोपवास अष्टम्यादि सर्व पर्व में करे । ५ पांचवीं प्रतिमा पांच माह की--इसमें पूर्वोक्त सर्व आचरे, विशेष एक रात्रि में कायोत्सर्ग करे और पांच बोल आचरे; १ स्नान न करे २ रात्रि भोजन न करे ३ लांग न लगावे ४ दिन में ब्रह्मचर्य पाले ५ रात्रि में परिमाण करे । ६ छट्ठी प्रतिमा छः माह की—इसमें पूर्वोक्त उपरान्त सर्व समय ब्रह्मचर्य पाले ७ सातवी प्रतिमा जघन्य एक दिन उत्कृष्ट सात माह की इसमें सचित्त आहार नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे परन्तु खुद के लिये आरम्भ त्याग करने का नियम न होवे। ८ आठवीं प्रतिमा जघन्य एक दिन की उत्कृष्ट आठ माह की इसमें आरम्भ नहीं करे ९ नववीं प्रतिमा– उसी प्रकार उत्कृष्ट नव माह की इसमें आरम्भ करने का भी नियम करे १० दशवीं प्रतिमा–उत्कृष्ट दश माह की। इसमें पूर्वोक्त सर्व नियम करे व उपरान्त क्षुर मुंडन करावे अथवा शिखा राखे कोई यह एक वार पूछने पर तथा वार-वार पूछने पर दो भाषा बोलना कल्पे। जाने तो हां कहना कल्पे और न जाने तो नहीं कहना कल्पे ११ इग्यारहवीं प्रतिमा--उत्कृष्ट ११ माहकी--इसमें क्षुर मुंडन करावे अथवा केश लोच करावे, साधु श्रमण समान उपकरण पात्र रजोहरण आदि धारण करे, स्वज्ञाति में गौचरी अर्थ भ्रमण करे और कहे कि मैं प्रतिमा धारी हूं, श्रावक हूं, भिक्षा देवो ? साधु समान उपदेश देवे। एवं सर्व मिला कर ११ प्रतिमा में ५ वर्ष ६ माह काल लागे।

बारह भिक्षु की प्रतिमाः–(अभिग्रह रूप)–१ पहेली प्रतिमा एक माह की, इसमें शरीर ऊपर ममता–स्नेह भाव नहीं रखे, शरीर की शुश्रुषा नहीं करे कोई मनुष्य देव तिर्यंच आदि का परिषह उत्पन्न होवे उसे सम परिणाम से सहन करे।

२ एक दाति आहार की, एक दाति जल की लेना कल्पे। यह आहार शुद्ध निर्दोष; कोई श्रमण, ब्राह्मण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतिथि, कृपण, रंक प्रमुख द्विपद तथा चतुष्पद को अन्त-राय नहीं लगे, इस तरह से लेवे। तथा एक मनुष्य जिमता (भोजन करता) होवे व एक के निमित्त भोजन तैयार किया होवे वो आहार लेवे। दो के भोजन करने में से देवे तो नहीं लेवे; तीन, चार, पांच आदि भोजन करने को बैठे हुवे उसमें से देवे तो न लेवे; गर्भवन्ती निमित्त उत्पन्न किया होवे वो न लेवे तथा नव प्रसूती का आहार नहीं लेवे, बालक को दूध पिलाते होवे उसके हाथ से नहीं लेवे, तथा एक पांव डेवडी के बाहर और एक पांव डेवडी के अन्दर रख कर वहेरावे तो लेवे, नहीं तो नहीं लेवे।

३ प्रतिमा धारी साधु को तीन काल गौचरी के कहे हैं-आदिम, मध्यम, चरम (अन्त का) चरम अर्थात् एक दिन के तीन भाग करे पहले भाग में गौचरी जावे तो दूसरे दो भाग में नहीं जावे इसी प्रकार तीनों में जानना।

४ प्रतिमा धारी साधु को छः प्रकार की गौचरी करना कही है १ सन्दूक के आकार समान (चौखुनी) २ अर्ध सन्दूक के आकार (दो पंक्ति) ३ बलद के मूत्र आकार ४ पतङ्ग टीड़ उड़े उस समान अन्तर २ से करे ५ शंख के आवर्त्तन के समान गौचरी करे ६ जावता तथा आवता गौचरी करे।

५ प्रतिमा धारी साधु जिस गांव में जावे वहां यदि यह जानते होवे कि यह प्रतिमा धारी साधु है तो एक रात्रि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहे और न जानते होवे तो दो रात्रि रहे इस के उपरान्त रहे तो छेद तथा परिहार तप जितनी रात्रि तक रहे उतने दिन का प्रायश्चित करे।

६ प्रतिमा धारी चार प्रकार से बोले १ याचना करने के समय २ पंथ प्रमुख पूछने के समय ३ आज्ञा मांगने के समय ४ प्रश्नादिक का उत्तर देते समय।

७ प्रतिमा धारी साधु को तीन प्रकार के स्थानक पर ठहरना अथवा प्रति लेखन करना कल्पे-१ बगीचे का बंगला २ श्मशान की छतरी ३ वृक्ष के नीचे।

८ प्रतिमा धारी साधु तीन स्थान पर याचना करे।

९ इन तीन प्रकार के स्थानक के अन्दर वास करे।

१० प्रतिमा धारी साधु को तीन प्रकार की शय्या कल्पे १ पृथ्वी (शिला) रूप २ काष्ट रूप ३ तृण रूप।

११ इन तीन प्रकार की शय्या की याचना करना कल्पे।

१२ इन तीन प्रकार की शय्या का भोग करना कल्पे।

१३ प्रतिमा धारी साधु जिस स्थानक में रहते होवे उस में यदि कोई स्त्री प्रमुख आवे तो स्त्री के भय से बाहर निकले नहीं, यदि कोई दूसरा बाहर निकाले तो स्वयं इर्या समिति शोध कर निकले।

१४ प्रतिमा धारी साधु जिस घर में रहते होवे वहां यदि कोई अग्नि लगावे तो भय से बाहर निकले नहीं, यदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोई दूसरा निकालने का प्रयास करे तो स्वयं इर्या समिति शोध कर निकले ।

१५ प्रतिमा धारी साधु के पांव में यदि कंटक प्रमुख लगा होवे तो उन्हें निकालना नहीं कल्पे ।

१६ प्रतिमा धारी साधु के आंख में छोटे जीव तथा नाना बीज व रज प्रमुख गिरे तो उन्हें निकालना नहीं कल्पे, इर्या समिति से चलना कल्पे ।

१७ प्रतिमा धारी साधु को सूर्यास्त होने के बाद एक पांव भी आगे चलना नहीं कल्पे अर्थात् प्रति लेखन करने के समय तक विहार करे ।

१८ प्रतिमा धारी साधु को सचित्त पृथ्वी पर सोना बैठना व थोड़ी निद्रा भी निकालना नहीं कल्पे, और पहिले देखे हुवे स्थानक पर उचार प्रमुख परिठवना कल्पे ।

१९ साचित्त रज से यदि पांव प्रमुख भरे हुवे हों तो ऐसे शरीर से गृहस्थ के घर पर गौचरी जाना नहीं कल्पे ।

२० प्रतिमा धारी साधु को प्राशुक शीतल तथा उष्ण जल से हाथ, पांव, कान, नाक, आंख प्रमुख एक वार धोना वारंवार धोना नहीं कल्पे, केवल अशुचि से भरे हुवे तथा भोजन से भरे हुवे शरीर के अङ्ग धोना कल्पे अधिक नहीं ।

२१ प्रतिमा धारी साधु घोड़ा, वृषभ, हाथी, पाड़ा, वराह (सूअर), श्वान, वाघ इत्यादिक दुष्ट जीव सामने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आते हो तो डर कर एक पांव भी पीछे धरे नहीं परन्तु सुवांला (सीधा) भद्र जीव सामने आता हो तो दया के कारण यत्नां के निमित्त पांव पीछे फिरे।

२२ प्रतिमा धारी साधु धूप से छांया में नहीं जावे और छांया से धूप में नहीं जावे, शीत और ताप सम परिणाम पूर्वक सहन करे।

दूसरी प्रतिमा एक मास की। इस में दो दाति आहार की और दो दाति जलकी लेवे।

तीसरी प्रतिमा एक माह की। इस में तीन दाति आहार की और तीन दाति जलकी लेना कल्पे।

चौथी प्रतिमा एक माह की। इस में चार दाति आहार की और चार दाति जल की लेना कल्पे।

पांचवी प्रतिमा एक माह की। इस में पांच दाति आहार की और पांच दाति जल की लेना कल्पे।

छट्ठी प्रतिमा एक माह की। इस में ६ दाति आहार की और ६ दाति जल की लेना कल्पे।

सातवीं प्रतिमा एक माह की। इस में सात दाति आहार की और सात दाति जल की लेना कल्पे।

आठवीं प्रतिमा सात अहोरात्रि की। इस में जल विना एकान्तर उपवास करे। ग्राम, नगर, राजधानी आदि के बाहर स्थानक करे, तीन आसन से बैठे, चित्ता सोवे, करवट से सोवे, पलांठी मार कर सोवे। परन्तु किसी भी परिषह से डरे नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नववी प्रतिमा-सात अहो रात्रि की। ऊपर समान, विशेष तीन में से एक आसन करे, दण्ड आसन, लगड़ आसन और उत्कट आसन।

दसवीं प्रतिमा सात अहोरात्रि की। ऊपर समान, विशेष तीन में से एक आसन करे; गोदूह आसन, वीरासन और अम्बुज आसन।

इग्यारहवीं प्रतिमा एक अहोरात्रि की। जल विना छठ भक्त करे, ग्राम बाहर दो पांव संकोच कर हाथ लम्बे कर कायोत्सर्ग करे।

बारहवीं प्रतिमा एक रात्रि की। जल विना अठम भक्त करे। ग्राम नगर बाहर शरीर तज कर व आंखों की पलक नहीं मारते हुवे एक पुद्गल ऊपर स्थिर दृष्टि करके, तमाम इन्द्रियें गोप करके, दोनो पांव एकत्र करके और दोनों हाथ लम्बे करके दृढासन में रहे। इस समय देव, मनुष्य व तिर्यंच द्वारा कोई उपसर्ग होवे तो सहन करे। सम्यक् प्रकार से आराधन होवे तो अवधि ज्ञान मनः पर्यव ज्ञान तथा केवल ज्ञान प्राप्त होवे यदि चलित होवे तो उन्माद पावे, दीर्घ कालिक रोग होवे और केवली प्रणित धर्म से भ्रष्ट होवे। एवं इन सब प्रतिमा में आठ माह लगते हैं।

तेरह प्रकार का क्रिया स्थानक

(१) अर्थ दण्ड—अपने लिये हिंसा करे।

(२) अनर्थ दण्ड—दूसरों के लिये हिंसा करे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) हिंसा दण्ड-यह मुझे मारता है, मारा था व मारेगा ऐसा संकल्प करके मारे।

(४) अकस्मात् दण्ड एक को मारने जाते समय अचानक दूसरे की घात होवे।

(५) दृष्टि विपर्यास दण्ड-शत्रु समझ कर मित्र को मारे।

(६) मृषावाद दण्ड-असत्य बोल कर दण्ड पावे।

(७) अदत्ता दान दण्ड-चोरी करके दण्ड पावे।

(८) अभ्यस्थ दण्ड-मन में दुष्ट, अनिष्ट कल्पना करे।

(९) मान दण्ड--अभिमान करे।

(१०) मित्र दोष दण्ड--माता, पिता तथा मित्र वर्ग को अल्प अपराध के लिये भारी दण्ड करे।

(११) माया दण्ड--कपट करे।

(१२) लोभ दण्ड--लालच तृष्णा करे

(१३) इर्यापथिक दण्ड--मार्ग में चलने से होने वाली हिंसा।

चोदह प्रकार के जीवः-(१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त (२)सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त (३) बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त (४) बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त (५) बे इन्द्रिय अपर्याप्त (६) बे इन्द्रिय पर्याप्त (७) त्रि इन्द्रिय अपर्याप्त (८) त्रि इन्द्रिय पर्याप्त (९) चौरिन्द्रिय अप-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

र्याप्त (१०) चौरिन्द्रिय पर्याप्त (११) असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त (१२) असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त (१३) संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त (१४) संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त।

पन्द्रह प्रकार के परमाधामी देव-(१) आम्र २ आम्र रस ३ शाम ४ सबल ५ रुद्र ६ वैरुद्र ७ काल ८ महा काल। ६ असिपत्र १० धनुष्य ११ कुंभ १२ वालु (क) १३ वैतरणी १४ खरस्वर १५ महा घोष।

सोलवें सूत्र कृत का प्रथम श्रुतस्कन्ध के सोलह अध्ययनः-१ स्वसमय परसमय २ वैदारिक ३ उपसर्ग प्रज्ञा ४ स्त्री प्रज्ञा ५ नरक विभक्ति ६ वीर स्तुति ७ कुशील परिभाषा ८ वीर्याध्ययन ६ धर्म ध्यान १० समाधि ११ मोक्ष मार्ग १२ समव सरण १३ अथातथ्य १४ ग्रंथी १५ यमातिथि १६ गाथा।

सत्तरह प्रकार का संयमः-१ पृथ्वी काय संयम २ अप्काय संयम ३ तेजस् काय संयम ४ वायु काय संयम ५ वनस्पति काय संयम ६ बे इन्द्रिय काय संयम ७ त्रि इन्द्रिय काय संयम ८ चौरिन्द्रिय काय संयम ६ पंचेन्द्रिय काय संयम १० अजीव काय संयम ११ प्रेक्षा संयम १२ उत्प्रेक्षा संयम १३ अपहृत्य संयम १४ प्रमार्जना संयम १५ मन संयम १६ वचन संयम १७ काय संयम।

अट्ठारह प्रकार का ब्रह्मचर्य—औदारिक शरीर संबन्धी भोग १ मन से, २ वचन से, ३ काया से सेवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं, ३, सेवावे नहीं, ६. सेवता प्रति अनुमोदन करे नहीं, ६ इसी प्रकार वैक्रिय शरीर संबन्धी ६ प्रकार का छोड़ना।

उन्नीश प्रकार का ज्ञाता सूत्र के अध्ययनः—१ उत्त्क्षिप्त--मेघ कुमार का २ धन्य सार्थवाह और विजय चोर का ३ मयूर ईंडा का ४ कर्म (काचवा) का ५ शैलक राजर्षि का ६ तुम्बे का ७ धन्य सार्थ वाह और चार बहुओं का ८ मल्ली भगवती का ६ जिनपाल जिन रक्षित का १० चंद्र की कला का ११ दावानल का १२ जित शत्रू राजा और सुबुद्धि प्रधान का १३ नंद मणि-कारका १४ तेतलिं पुत्र प्रधान और पोटीला–सोनार पुत्री का १५ नंदिफल का १६ अवरकंका का १७ समुद्र अश्व का १८ सुसीमा दारिका का १६ पुंडरीक कंडरीक का।

बीश प्रकार के असमाधिक स्थानः—१ उतावला उतावला चाले २ पूंज्या विना चाले ३ दुष्ट रीति से पूंजे ४ पाट, पाटला, शय्या आदि अधिक रक्खे ५ रत्नाधिक के (बड़ों के) सामने बोले ६ स्थविर, वृद्ध गुरु आचार्यजी का उपघात [नाश] करे ७ एकेन्द्रियादि जीव को शाता, रस, विभूषा निमित्त मारे ८ क्षण क्षण प्रति क्रोध करे ६ क्रोध में हमेशां प्रदीप्त रहे १० पृष्ट मांस खावे अर्थात् दूसरों की पीछे से निन्दा बोले ११ निश्चय वाली भाषा बोले १२ नया क्लेश [झगड़ा] उत्पन्न करे १३ जो झगड़ा बन्द हो गया हो उसे पुनः जागृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे १४ अकाले स्वाध्याय करे १५ सचित्त पृथ्वी से हाथ पाँव भरे हुवे होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति के समय तथा प्रहर रात्रि बीत जाने पर जोर २ से आवाज करे १७ गच्छ में भेद उत्पन्न करे १८ गच्छ में क्लेश उत्पन्न करके परस्पर दुख उत्पन्न करे १९ सूर्योदय से लगाकर सूर्यास्त तक अशनादि भोजन लेता ही रहे २० अनेषणिक अप्राशुक आहार लेवे ।

इक्कवीश प्रकार के शबल कर्मः-१ हस्त कर्म २ मैथुन सेवे ३ रात्रि भोजन करे ४ आधा कर्मी भोगवे ५ राज पिंड जिमे ६ पांच बोल सेवे-१ खरीद कर देवे तथा लेवे २ उधार देवे तथा लेवे ३ बलात्कार से देवे तथा लेवे ४ स्वामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक में सामा जाकर देवे तथा लेवे ७ वारंवार प्रत्याख्यान करके भोगवे ८ महिने के अन्दर तीन उदक लेप करे (नदी उतरे ९ छः माह से पहले एक गण से दूसरे गण में जावे १० एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगवे ११ शय्यातर का आहार करे १२ इरादा पूर्वक हिंसा करे १३ इरादा पूर्वक असत्य बोले १४ इरादा पूर्वक चोरी करे १५ इरादा पूर्वक सचित्त पृथ्वी पर स्थानक, शय्या व बैठक करे १६ इरादा पूर्वक सचित्त मिश्र पृथ्वी पर शय्यादिक करे १७ सचित्त शिला, पत्थर, सूक्ष्म जीव जन्तु रहे ऐसा काष्ट तथा अंड प्राणी बीज, हरित आदि जीव वाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानक पर आश्रय, बैठक, शय्या करे १८ इरादा पूर्वक मूल, कन्द, स्कंध, त्वचा, शाखा, प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, बीज इन १० सचित्त का आहार करे १६ एक वर्ष के अन्दर दश उदक लेप करे (नदी उतरे) २० एक वर्ष के अन्दर दश माया का स्थानक सेवे २१ जल से गीले हाथ पात्र, भाजन आदि करके अशनादि देवे तथा लेकर इरादा पूर्वक भोगवे।

बावीश प्रकार का परिषहः-१ क्षुधा २ तृषा ३ शीत ४ ताप ५ डांस-मत्सर ६ अचेल (वस्त्र रहित) ७ अरति ८ स्त्री ६ चलन १० एक आसन पर बैठना ११ उपाश्रय १२ आक्रोश १३ वध १४ याचना १५ अलाभ १६ रोग १७ तृण स्पर्श १८ जल (मेल) १६ सत्कार, पुरस्कार २० प्रज्ञा २१ अज्ञान २२ दर्शन।

तेवीश प्रकार के सूत्र कृत सूत्र के अध्ययनः- सोलहवें बोल में कहे हुवे सोलह अध्ययन और सात नीचे लिखे हुवे-१ पुंडरीक कमल २ क्रिया स्थानक ३ आहार प्रतिज्ञा ४ प्रत्याख्यान क्रिया ५ अणगार सुत ६ आर्द्र कुमार ७ उदक (पेढाल सुत)।

चोवीश प्रकार के देवः-१ दश भवन पति २ आठ वाण व्यन्तर ३ पांच ज्योतिषी ४ एक वैमानिक।

पचीश प्रकारे पांच महाव्रत की भावनाः-

पहेले महाव्रत की पांच भावना-१ इर्या समिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावना २ मन समिति भावना ३ वचन समिति भावना ४ एषणा समिति भावना ५ आदान-भंड-मात्र निक्षेपन समिति भावना।

दूसरे महाव्रत की पांच भावना:-१ विचारे विना बोलना नहीं २ क्रोध से बोलना नहीं ३ लोभ से बोलना नहीं ४ भय से बोलना नहीं ५ हास्य से बोलना नहीं।

तीसरे महाव्रत की पांच भावना:-१ निर्दोष स्थानक याच कर लेना तृण प्रमुख याच कर लेना २ स्थानक आदि सुधारना नहीं ४ स्वधर्मी का अदत्त लेना नहीं ५ स्वधर्मी की वैयावच्च करना।

चोथे महाव्रत की पांच भावना:-१ स्त्री, पशु पंडक वाला स्थानक सेवना नहीं २ स्त्री के साथ विषय संबन्धी कथा वार्ता करनी नहीं ३ राग दृष्टि से विषय उत्पन्न करने वाले स्त्री के अंग अवयव देखना नहीं ४ पूर्व गत सुख क्रीड़ा का स्मरण करना नहीं ५ स्वादिष्ट व पौष्टिक आहार नित्य करना नहीं।

पांचवें महाव्रत की पांच भावना:- १ मधुर शब्दों पर राग और कठोर शब्दों पर द्वेष करना नहीं २ सुन्दर रूप पर राग और खराब रूप पर द्वेष करना नहीं ३ सुगन्ध पर राग और दुर्गन्ध पर द्वेष करना नहीं ४ स्वादिष्ट रस पर राग और खराब (कड़वा आदि) रस पर

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

द्वेष करना नहीं ५ कोमल (सुंवाला) स्पर्श पर राग और कठोर स्पर्श पर द्वेष करना नहीं।

छवीश प्रकार के दशाश्रुत स्कंध, बृहत् कल्प और व्यवहार के अध्ययनः-(१) दश दशाश्रुत स्कंध के (२) ६ बृहत् कल्प के और (३) दश व्यवहार के स्कंध।

सत्तावीश प्रकार के अणगार (साधु) के गुणः-

१ सर्व प्राणाति पात वेरमणं २ सर्व मृषावाद वेरमणं ३ सर्व अदत्तादान वेरमणं ४ सर्व मैथुन वेरमणं ५ सर्व परिग्रह वेरमणं ६ श्रोत्रेन्द्रिय निग्रह ७ चक्षु इन्द्रिय निग्रह ८ घ्राणेन्द्रिय निग्रह ९ रसेन्द्रिय निग्रह १० स्पर्शेन्द्रिय निग्रह ११ क्रोध विजय १२ मान विजय १३ माया विजय १४ लोभ विजय १५ भाव सत्य १६ करण सत्य १७ योग सत्य १८ क्षमा १९ वैराग्य २० मन समा धारणा २१ वचन समा धारणता २२ काय समा धारणता २३ ज्ञान २४ दर्शन २५ चारित्र २६ वेदना सहिष्णुता २७ मरण सहिष्णुता।

अठावीस प्रकार का आचार कल्पः-१ माह (मासीक) प्रायश्चित २ माह और पांच दिन ३ माह और दश दिन ४ माह और पन्द्रह दिन ५ माह और वीश दिन ६ माह और पचिश दिन ७ दो माह ८ दो माह और पांच दिन ९ दो माह और दश दिन १० दो माह और पन्द्रह दिन ११ दो माह और वीस दिन १२ दो माह और पच्चि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श दिन १३ तीन माह १४ तीन माह और पांच दिन १५ तीन माह दश और दिन १६ तीन माह और पन्द्रह दिन १७ तीन माह और वीश दिन १८ तीन माह और पच्चिश दिन १६ चार माह २० चार माह और पांच दिन २१ चार माह और दश दिन २२ चार माह और पन्द्रह दिन २३ चार माह और वीश दिन २४ चार माह और पच्चिश दिन २५ पांच माह ये पच्चिश उपघातिक है २६ अनुघाति का रत्न २७ कृत्स्न (सम्पूर्ण) २८ अकृत्स्न (असम्पूर्ण)।

उन्न्तीश प्रकार का पाप सूत्रः-१ भूमि कंप शास्त्र २ उत्पात शास्त्र ३ स्वप्न शास्त्र ४ अंतरीक्ष शास्त्र ५ अंग स्फुरन शास्त्र ६ स्वर शास्त्र ७ व्यंजन शास्त्र (मसा तिल सम्बन्धी) ८ लक्षण शास्त्र ये आठ सूत्र से, आठ वृत्ति से और आठ वार्तिक से एवं २४, २५ विकथा अनु-योग २६ विद्या अनुयोग २७ मंत्र अनुयोग २८ योग अनुयोग २६ अन्य तीर्थिक प्रवृत अनुयोग।

तीश प्रकार के मोहनीय का स्थानकः-१ स्त्री पुरुष नपुंसक को अथवा किसी त्रस प्राणी को जल में बैठा कर जल रूप शस्त्र से मारे तो महा मोहनीय कर्म बांधे।

२ हाथ से प्राणी का मुख प्रमुख बांध कर व श्वास रुंधकर जीव को मारे तो महा मोहनीय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ अग्नि प्रज्वलित कर, वाड़ादिक में प्राणी रोक कर धुंवे से आकुल व्याकुल कर मारे तो महा मोहनीय।

४ उत्तमांग–मस्तक को खड्ग आदि से भेदे–छेदे फाड़े--काटे तो महा मोहनीय।

५ चमड़े प्रमुख में मस्तकादि शरीर को तान कर बांधे और वारंवार अशुभ परिणाम से कदर्थना करे तो महा मोहनीय।

६ विश्वासकारी वेष बनाकर मार्ग प्रमुख के अन्दर जीव को मारे, व लोक में आनन्द माने तो महा मोहनीय।

७ कपट पूर्वक अपने आचार को गोपवे तथा अपनी माया द्वारा अन्य को पाश (जाल) में फंसावे तथा शुद्ध सूत्रार्थ गोपवे तो महा मोहनीय।

८ खुद ने अनेक चौर कर्म बाल घात (अन्याय) प्रमुख कर्म किये हुवे हों तो उनके दोष अन्य निर्दोषी पुरुष पर डाले तथा यशस्वी का यश घटावे व अछता (झूठा) आल (कलङ्क) लगावे तो महा मोहनीय।

९ दूसरों को खुश करने के लिये, द्रव्य भाव से झगड़ा (क्लेश) बढ़ाने के लिये, जानता हुवा भी सभा में सत्य मृषा (मिश्र) भाषा बोले तो महा मोहनीय।

१० राजा का भन्डारी प्रमुख, राजा, प्रधान, तथा समर्थ किसी पुरुष की लक्ष्मी प्रमुख लेना चाहे तथा उस पुरुष की स्त्री का सतीत्व नष्ट करना चाहे तथा उसके रागी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरुषों का [हितैषी--मित्र आदि] दिल फेरे तथा राजा को राज्य कर्तव्य से च्युत करे तो महा मोहनीय।

११ स्त्री आदि गृद्ध होकर, विवाहित होने पर भी [मैं कुंवारा हूं] कुमारपने का विरुद धरावे तो महा मोहनीय।

१२ गायों [गौवें] के अन्दर गर्दभ समान स्त्री के विषय में गृद्ध हो कर आत्मा का अहित करने वाला माया मृषा बोले अब्रह्मचारी होने पर भी ब्रह्मचारी का विरुद [रूप] धरावे तो महा मोहनीय [कारण लोक में धर्म पर अविश्वास होवे, धर्मी पर प्रतीत न रहे]

१३ जिसके आश्रय से आजीविका करे उसी आश्रय दाता की लक्ष्मी में लुब्ध होकर उसकी लक्ष्मी लूटे तथा अन्य से लुटावे तो महा मोहनीय।

१४ जिसकी दरिद्रता दूर करके ऊंच पद पर जिस को किया वो पुरुष ऊंच पद पाकर पश्चात् ईर्ष्या द्वेष से व कलुषित चित्त से उपकारी पुरुष पर विपति डाले तथा धन प्रमुख की आमद में अन्तराय डाले तो महा मोहनीय।

१५ अपना पालन पोषण करने वाले राजा, प्रधान प्रमुख तथा ज्ञानादि देने वाले गुरु आदि को मारे तो महा मोहनीय।

१६ देश का राजा, व्यापारी वृन्द का प्रवर्त्तक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[व्यवहारिया] तथा नगर शेठ ये तीनों अत्यन्त यशस्वी हैं अतः इनकी घात करे तो महा मोहनीय।

१७ अनेक पुरुषों के आश्रय दाता--आधार भूत [समुद्र में द्वीप समान] को मारे तो महा मोहनीय।

१८ संयम लेने वाले को तथा जिसने संयम ले लिया हो उसे धर्म से भ्रष्ट करे तो महा मोहनीय।

१९ अनन्त ज्ञानी व अनन्त दर्शी ऐसे तीर्थंकर देव का अवर्णवाद [निन्दा] बोले तो महा मोहनीय।

२० तीर्थंकर देव के प्ररूपित न्याय मार्ग का द्वेषी बन कर अवर्णवाद बोले, निन्दा करे और शुद्ध मार्ग से लोगों का मन फेरे तो महा मोहनीय।

२१ आचार्य उपाध्याय जो सूत्र प्रमुख विनय सीखते हैं--व सिखाते हैं उनकी हिलना निन्दा करे तो महामोहनीय।

२२ आचार्य उपाध्याय को सच्चे मन से नहीं आराधे तथा अहंकार से भक्ति सेवा नहीं करे तो महा मोहनीय।

२३ अल्प सूत्री हो कर भी शास्त्रार्थ करके अपनी श्लाघा करे स्वाध्याय का वाद करे तो महा मोहनीय।

२४ अतपस्वी होकर भी तपस्वी होने का ढोंग रचे (लोगों को ठगने के लिये) तो महा मोहनीय।

२५ उपकारार्थ गुरु आदि का तथा स्थविर, ग्लान प्रमुख का शक्ति होने पर भी विनय वैयावच्च नहीं करे (कहे के इन्होंने मेरी सेवा पहेली नहीं की इस प्रकार वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धूर्त मायावी मलिन चित्त वाला अपना बोध बीज का नाश करने वाला अनुकम्पा रहित होता है) तो महा मोहनीय ।

२६ चार तीर्थ के अन्दर फूट पड़े ऐसी कथा वार्ता प्रमुख (क्लेश रूप शस्त्रादिक) का प्रयोग करे तो महा मोहनीय ।

२७ अपनी श्लाघा करवाने तथा मित्रता करने के लिये अधर्म योग वशीकरण निमित्त मंत्र प्रमुख का प्रयोग करे तो महा मोहनीय ।

२८ मनुष्य सम्बन्धी भोग तथा देव सम्बन्धी भोग का अतृप्त पने गाढ परिणाम से आसक्त होकर आस्वादन करे तो महा मोहनीय ।

२९ महर्द्धिक महाज्योतिवान् महायशस्वी देवों के बल वीर्य प्रमुख का अवर्ण वाद बोले तो महा मोहनीय ।

३० अज्ञानी होकर लोक में पूजा-श्लाघा निमित्त व्यन्तर प्रमुख देव को नहीं देखता हुवा भी कहे कि 'मैं देखता हूं' ऐसा कहे तो महा मोहनीय ।

इकत्तीश प्रकार के सिद्ध के आदि गुणः-आठ कर्म की ३१ प्रकृति का विजय से ३१ गुण ।

३१ प्रकृति नीचे लिखे अनुसार—

१ ज्ञानावरणीय कर्म की पांच प्रकृति—१ मति ज्ञाना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरणीय २ श्रुत ज्ञाना वरणीय ३ अवधि ज्ञाना वरणीय ४ मन पर्यव ज्ञाना वरणीय ५ केवल ज्ञाना वरणीय।

२ दर्शना वरणीय कर्म की नव प्रकृति-१ निद्रा २ निद्रा निद्रा ३ प्रचला ४ प्रचला प्रचला ५ थीणाद्धि (स्त्यनार्द्धि) (६) चक्षु दर्शना वरणीय (७) अचक्षु दर्शना वरणीय (८) अवधि दर्शना वरणीय (९) केवल दर्शना वरणीय।

(३) वेदनीय कर्म की दो प्रकृति-१ शाता वेदनीय २ अशाता वेदनीय।

(४) मोहनीय कर्म की दो प्रकृति-१ दर्शन मोहनीय २ चरित्र मोहनीय।

(५) आयुष्य कर्म की चार प्रकृति-१ नरक आयुष्य २ तिर्यंच आयुष्य ३ मनुष्य आयुष्य ४ देव आयुष्य।

(६) नाम कर्म की दो प्रकृति-१ शुभ नाम २ अशुभ नाम।

(७) गोत्र कर्म की दो प्रकृति-१ ऊंच गोत्र २ नीच गोत्र।

(८) अन्तराय कर्म की पांच प्रकृति-१ दानान्तराय २ लाभान्तराय ३ भोगान्तराय ४ उप भोगान्तराय ५ वीर्यान्तराय

बत्तीश प्रकार का योग संग्रहः--१ जो कोई पाप लगा होवे उसका प्रायश्चित लेने का संग्रह करना २ जो कोई प्रायश्चित ले उसको दूसरे प्रति नहीं कहने का संग्रह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करना ३ विपत्ति आने पर धर्म के अन्दर दृढ रहने का संग्रह करना ४ निश्रा रहित तप करने का संग्रह करना ५ सूत्रार्थ ग्रहण करने का संग्रह करना ६ शुश्रूषा टालने का संग्रह करना ७ अज्ञात कुल की गौचरी करने का संग्रह करना ८ निर्लोभी होने का संग्रह करना ९ बावीस परिषह सहन करने का संग्रह करना १० सरल निर्मल (पवित्र) स्वभाव रखने का संग्रह करना ११ सत्य संयम रखने का संग्रह करना १२ समकित निर्मल रखने का संग्रह करना १३ समाधि से रहने का संग्रह करना १४ पांच आचार पालने का संग्रह करना १५ विनय करने का संग्रह करना १८ शरीर को स्थिर रखने का संग्रह करना १९ सुविधि—अच्छे अनुष्ठान का संग्रह करना २० आश्रव रोकने का संग्रह करना २१ आत्मा के दोष टालने का संग्रह करना २२ सर्व विषयों से विमुख रहने का संग्रह करना २३ प्रत्याख्यान करने का संग्रह करना २४ द्रव्य से उपाधि त्याग, भाव से गर्वादिक का त्याग करने का संग्रह करना २५ अप्रमादी होने का संग्रह करना २६ समय समय पर क्रिया करने का संग्रह करना २७ धर्म ध्यान का संग्रह करना २८ संवर योग का संग्रह करना २९ मरण आतङ्क (रोग) उत्पन्न होने पर मन में क्षोभ न करने का संग्रह करना ३० स्वजनादि का त्याग करने का संग्रह करना ३१ प्रायश्चित जो लिया हो उसे करने का संग्रह करना ३२ आराधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंडित की मृत्यु होवे इसकी आराधना करने का संग्रह करना।

तेंतीश प्रकार की अशातना::-१ शिष्य गुरु आदि के आगे अविनय से चले तो अशातना २ शिष्य गुरु आदि के बराबर चले तो अशातना ३ शिष्य गुरु आदि के पीछे अविनय से चले तो अशातना (४)(५)(६) इस प्रकार गुरु आदि के आगे, बराबर पीछे अविनय से खडा रहे तो अशातना (७)(८)(९) इस तरह गुरु आदि के आगे, बराबर, पीछे अविनय से बैठे तो अशातना (१०) शिष्य गुरु आदि के साथ बाहिर भूमि जावे और उनके पहले ही शुचि निवृत होकर आगे आवे तो अशा०। (११) गुरु आदि के साथ विहार भूमि जाकर व वहां से आकर इरिया पथिका पहले ही प्रतिक्रमे तो अशा०। १२ किसी पुरुष के साथ कि जिसके साथ गुरु आदि को बोलना योग्य, स्वयं बोले व गुरु आदि बादमें बोले तो-अशा०। १३ रात्रि को गुरु आदि पूछे कि 'अहो आर्य! कोन निद्रा में है और कोन जागृत है' एसा सुनकर भी इसका उत्तर नहीं देवे तो अशा०। १४ अशनादि वहेर कर लावे तब प्रथम अन्य शिष्यादि के आगे कहे और गुरु आदि को बादमें कहे तो अशा०। १५ अशनादि लाकर प्रथम अन्य शिष्यादि को बतावे और बादमें गुरु को बतावे तो अशा०। १६ अशनादि लाकर प्रथम अन्य शिष्यादि को निमन्त्रण करे और बाद में गुरु के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे तो अशातना (१७) गुरु आदि के साथ अथवा अन्य साधु के साथ अन्नादि वेहर कर लावे और गुरु व वृद्ध आदि को पूछे बिना जिस पर अपना प्रेम है उसे थोड़ा २ देवे तो अशातना (१८) गुरु आदि के साथ आहार करते समय अच्छे २ पत्र, शाक, रस रहित मनोज्ञ भोजन जल्दी से करे तो अशातना (१९) बड़ों के बोलाने पर सुनते हुवे भी चुप रहे तो अशातना (२०) बड़ों के बोलाने पर अपने आसन पर बैठा हुवा 'हां' कहे परन्तु काम का कहेगें इस भय से बड़ों के पास जावे नहीं तो अशातना (२१) बड़ों के बुलाने पर आवे और आकर कहे कि 'क्या कहते हो' इस प्रकार बड़ों के साथ अविनय से बोले तो अशातना (२२) बड़े कहें कि यह काम करो तुम्हें लाभ होगा तब शिष्य कहे कि आप ही करो, आपको लाभ होगा तो अशातना (२३) शिष्य बड़ों के कठोर, कर्कश भाषा बोले तो अशातना (२४) शिष्य गुरु आदि बड़ों से, जिस प्रकार बड़े बोले वैसे ही शब्दों से, वार्तालाप करे तो अशातना (२५) गुरु आदि धार्मिक व्याख्यान वांचते होवे उस समय सभा में जाकर कहे कि 'आप जो कहते हो वो कहां लिखा है' इस प्रकार कहे तो अशातना (२६) गुरु आदि व्याख्यान देते हों उस समय उन्हें कहे कि आप बिलकुल भूल गये हो तो अशातना (२७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरु आदि व्याख्यान देते हों उस समय शिष्य ठीक २ नहीं समझने पर खुश न रहे तो अशातना (२८) बडे व्याख्यान देते हों उस समय सभा में गड़बड़ पड़े ऐसी उच्च आवाज से कहे कि समय हो गया है, आहारादि लेने को जाना है आदि तो अशातना (२९) गुरु आदि के व्याख्यान देते समय श्रोताओं के मन को अप्रसन्नता उत्पन्न करे तो अशातना (३०) गुरु आदि का व्याख्यान बन्ध न हुवा तो भी स्वयं व्याख्यान शुरू करे तो अशातना (३१) गुरु आदि की शय्या पांव से सरकावे तथा हाथ से ऊंची नीची करे तो अशातना (३२) गुरु आदि की शय्या, पथारी पर खडा रहे, बैठे, सोवे तो अशातना (३३) बडों से ऊंच आसन पर तथा बराबर बैठे, खडा रहे, सोवे आदि तो अशातना ।

❀ इति तेंतीश बोल सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नंदी सूत्र में पांच ज्ञान का विवेचन

१ ज्ञेय २ ज्ञान ३ ज्ञानी का अर्थ।

१ ज्ञेय–जानने योग्य पदार्थ २ ज्ञान–जीव का उपयोग, जीव का लक्षण, जीव के गुण का जान पना वो ज्ञान ३ ज्ञानी—जो जाने–जानने वाला जीव--असंख्यात प्रदेशी आत्मा वो ज्ञानी।

१ ज्ञान का विशेष अर्थ

१ जिससे वस्तु का जानपना होवे।
२ जिसके द्वारा वस्तु की जान कारी होवे।
३ जिसकी सहायता से वस्तु की जानकारी होवे।
४ जानना सो ज्ञान।

ज्ञान के भेद

ज्ञान के पांच भेद १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ अवधि ज्ञान ४ मनः पर्यव ज्ञान ५ केवल ज्ञान।

मति ज्ञान के दो भेद

१ सामान्य २ विशेष--१ सामान्य प्रकार का ज्ञान सो मति २ विशेष प्रकार का ज्ञान सो मति ज्ञान और विशेष प्रकार का अज्ञान सो मति अज्ञान। सम्यक् दृष्टि की मति वो मति ज्ञान और मिथ्या दृष्टि की मति सो मति अज्ञान।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

२ श्रुत ज्ञान के दो भेद

१ सामान्य २ विशेषः--१ सामान्य प्रकार का श्रुत सो श्रुत कहलाता है और २ विशेष प्रकार का श्रुत सो श्रुत ज्ञान या श्रुत अज्ञानः--सम्यक् दृष्टि का श्रुत-सो श्रुत ज्ञान और मिथ्या दृष्टि का श्रुत सो श्रुत अज्ञान १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ये दोनों ज्ञान अन्योअन्य परस्पर एक दूसरे में क्षीर नीर समान मिले रहते हैं। जीव और अभ्यन्तर शरीर के समान दोनों ज्ञान जब साथ होते हैं तबभी पहेले मति ज्ञान और फिर श्रुत ज्ञान होता है। जीव मति के द्वारा जाने सो मति ज्ञान और श्रुत के द्वारे जाने सो श्रुत ज्ञानः--

मति ज्ञान का वर्णनः--

मति ज्ञान के दो भेदः--

श्रुत निश्रीत–सुने हुवे वचनों के अनुसारे मति फैलावे।

२ अश्रुत निश्रीत-जो नहीं सुना व नहीं देखा हो तो भी उसमें अपनी मति (बुद्धि) फैलावे।

अश्रुत निश्रीत के चार भेद

१ औत्पातिका २ वैनायिका ३ कार्मिका ४ पारिणामिका।

औत्पातिका बुद्धिः-जो पहिले नहीं देखा हो व न सुना हो उसमें एक दम विशुद्ध अर्थग्राही बुद्धि उत्पन्न हो-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे व जो बुद्धि फल को उत्पन्न करे उसे औत्पातिका बुद्धि कहते हैं।

२ वैनयिका बुद्धिः-गुरु आदि की विनय भक्ति से जो बुद्धि उत्पन्न होवे व शास्त्र का अर्थ रहस्य समझे वो वैनयिका बुद्धि।

३ कार्मिका (कामीया) बुद्धिः-देखते, लिखते, चितरते, पढते सुनते, सीखते आदि अनेक शिल्प कला आदि का अभ्यास करते २ इन में कुशलता प्राप्त करे वो कार्मिका बुद्धि।

पारिणामिका बुद्धिः-जैसे जैसे वय (उम्र) की वृद्धि होती जाती है वैसे वैसे बुद्धि बढती जाती है, तथा बहु सूत्री स्थविर प्रत्येक वृद्धादि प्रमुख का आलोचन करता बुद्धि की वृद्धि होवे, जाति स्मरणादि ज्ञान उत्पन्न होवे वो पारिणामिका बुद्धि।

श्रुत निश्रीत मति ज्ञान के चार भेद

१ अवग्रह २ इहा ३ अवाय ४ धारणा।

१ अवग्रह के दो भेद

१ अर्थावग्रह २ व्यंजनावग्रह। व्यंजनावग्रह के चार भेदः-१ श्रोत्रेन्द्रिय व्यंजनावग्रह २ घ्राणेन्द्रिय व्यंजनावग्रह ३ रसेन्द्रिय व्यंजनावग्रह ४ स्पर्शेन्द्रिय व्यंजनावग्रह

व्यंजनावग्रह-जो पुद्गल इन्द्रियों के सामने होवें उन्हें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे इन्द्रियें ग्रहण करें-सरावले के दृष्टान्त समान-वो व्यंजना-वग्रह कहलाता है।

चक्षु इन्द्रिय और मन ये दो रूपादि पुद्गल के सामने जाकर उन्हें ग्रहण करें इसलिये चक्षुइन्द्रिय और मन इन दो के व्यंजनावग्रह नहीं होते हैं, शेष चार इन्द्रियों का व्यंजनावग्रह होता है।

श्रोत्रेन्द्रिय व्यंजनावग्रह-जो कान के द्वारा शब्द के पुद्गल ग्रहण करे।

घ्राणेन्द्रिय व्यंजनावग्रह-जो नासिका से गन्ध के पुद्गल ग्रहण करे।

रसेन्द्रिय व्यंजनावग्रह--जो जिह्वा के द्वारा रस के पुद्गल ग्रहण करे।

स्पर्शेन्द्रिय व्यंजनाग्रह-जो शरीर के द्वारा स्पर्श के पुद्गल ग्रहण करे।

व्यंजनावग्रह को समझाने के लिये दो दृष्टान्त—

१ पडिबोहग दिठंतेणं २ मल्लग दिठंतेणं

१ पडिबोहग दिठंतेणं:-प्रति बोधक (जगाने का) दृष्टान्त जैसे किसी सोते हुवे पुरुष को कोई अन्य पुरुष बुलाकर आवाज देवे 'हे देवदत्त' यह सुनकर वो जाग उठता है और जाग कर 'हूं' जबाब देता है। तब शिष्य शंका उत्पन्न होने पर पूछता है 'हे स्वामिन्! उस पुरुष ने हुंकारा दिया तो क्या उसने एक समय के,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो समय के, तीन समय के, चार समय के यावत् संख्यात समय के या असंख्यात समय के प्रवेश किये हुवे शब्द पुद्गल ग्रहण किये हैं ? गुरु ने जबाब दिया-एक समय के नहीं, दो समय के नहीं तीन-चार यावत् संख्यात समय के नहीं परन्तु असंख्यात समय के प्रवेश किये हुवे शब्द पुद्गल ग्रहण किये हैं इस प्रकार गुरु के कहने पर भी शिष्य की समझ में नहीं आया इस पर मल्लक (सरावला) का दूसरा दृष्टान्त कहते हैं—कुम्हार के नींभाड़े में से अभी का निकला हुवा कोरा सरावला हो और उसमें एक जल बिन्दु डाले परन्तु वो जल बिन्दु दिखाई नहीं देवे इस प्रकार दो तीन चार यावत् अनेक जल बिन्दु डालने पर जब तक वो भीजें नहीं वहां तक वो जल बिन्दु दिखाई नहीं देवे परन्तु भीजने के बाद वो जल बिन्दु सरावले में ठहर जाता है ऐसा करते २ वो सरावला प्रथम पाव, आधा करते २ पूर्ण भरजाता है व पश्चात् जल बिन्दु के गिरने से सरावले में से पानी निकलने लग जाता है वैसे ही कान में एक समय का प्रवेश किया हुवा पुद्गल ग्रहण नहीं हो सके, जैसे एक जल बिन्दु सरावले में दिखाई नहीं देवे वैसे ही दो, तीन, चार संख्यात समय के पुद्गल ग्रहण नहीं हो सके, अर्थ को पकड़ सके, समझ सके इसमें असंख्यात समय चाहिये और वो असंख्यात समय के प्रवेश किये हुवे पुद्गल जब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कान में जावे और (सरावले में जल के समान) उभराने (बाहर निकलने) लगे तब "हूँ" इस प्रकार बोल सके परन्तु समझ नहीं सके, इसे व्यंजनावग्रह कहते हैं ।

अर्थावग्रह के ६ भेद

१ श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह २ चक्षुइन्द्रिय अर्थावग्रह ३ घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह ४ रसेन्द्रिय अर्थावग्रह ५ स्पर्शेन्द्रिय अर्थावग्रह ६ नोइन्द्रिय (मन) अर्थावग्रह ।

श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो कान के द्वारा शब्द का अर्थ ग्रहण करे।

चक्षुन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो चक्षु के द्वारा रूप का अर्थ ग्रहण करे ।

घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो नासिका के द्वारा गंध का अर्थ ग्रहण करे ।

रसेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो जिह्वा के द्वारा रस का अर्थ ग्रहण करे ।

स्पर्शेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो शरीर के द्वारा स्पर्श का अर्थ ग्रहण करे।

नोइन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो मन द्वारा हरेक पदार्थ का अर्थ ग्रहण करे ।

व्यंजनावग्रह के चार भेद और अर्थावग्रह के ६ भेद एवं दोनों मिल कर अवग्रह के दश भेद हुवे । अवग्रह के द्वारा सामान्य रीति से अर्थ का ग्रहण होवे परन्तु जाने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं कि यह किस का शब्द व गन्ध प्रमुख है बादमें वहाँ से इहा मतिज्ञान में प्रवेश करे। इहा जो विचारे कि यह अमुक का शब्द व गन्ध प्रमुख है परन्तु निश्चय नहीं होवे पश्चात् अवाय मति ज्ञान में प्रवेश करे। अवाय जिससे यह निश्चय हो कि यह अमुक का ही शब्द व गन्ध है पश्चात् धारणा मति ज्ञान में प्रवेश करे। धारणा जो धार राखे कि अमुक शब्द व गन्ध इस प्रकार का था।

एवं इहा के ६ भेदः—श्रोत्रेन्द्रिय इहा, यावत् नो इन्द्रिय इहा। एवं अवाय के ६ भेद श्रोत्रेन्द्रिय, यावत् नोइन्द्रिय अवाय। एवं धारणा के ६ भेद श्रोतेन्द्रिय धारणा यावत् नो इन्द्रिय धारणा।

इनका काल कहते हैंः—अवग्रह का काल एक समय से असंख्यात समय तक प्रवेश किये हुवे पुद्गलों को अन्त समय जाने कि मुझे कोई बुला रहा है।

इहा का काल, अन्तर्मुहूर्त, विचार हुवा करे कि जो मुझ बुला रहा है वो यह है अथवा वह।

अवाय का कालः—अन्तर्मुहूर्त-निश्चय करने का कि मुझे अमुक पुरुष ही बुला रहा है। शब्द के ऊपर से निश्चय करे।

धारणे का काल संख्यात वर्ष अथवा असंख्यात वर्ष तक धार राखे कि अमुक समय मैंने जो शब्द सुना वो इस प्रकार है। अवग्रह के दश भेद, इहा के ६ भेद, अवाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के ६ भेद, धारणा के ६ भेद एवं सर्व मिलकर श्रुत निश्रीत मति ज्ञान के २८ भेद हुवे।

मति ज्ञान समुचय चार प्रकार का—१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से १ द्रव्य से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश द्वारा सर्व द्रव्य जाने परन्तु देखे नहीं। २ क्षेत्र से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व क्षेत्र की बात जाने परन्तु देखे नहीं। ३ काल से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व काल की बात जाने परन्तु देखे नहीं। ४ भाव से—सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व भाव की बात जाने परन्तु देखे नहीं—नहीं देखने का कारण यह है कि मति ज्ञान को दर्शन नहीं है। भगवती सूत्र में **पासइ** पाठ है वो भी श्रद्धा के विषय में है परन्तु देखे ऐसा नहीं।

श्रुत (सूत्र) ज्ञान का वर्णन।

श्रुत ज्ञान के १४ भेदः—१अक्षर श्रुत २ अनक्षर श्रुत ३ संज्ञी श्रुत ४ असंज्ञी श्रुत ५ सम्यक् श्रुत ६ मिथ्या श्रुत ७ सादिक श्रुत ८ अनादिक श्रुत ६ सपर्यवसित श्रुत १० अपर्यवसित श्रुत ११ गमिक श्रुत १२ अगमिक श्रुत १३ अंगप्रविष्ट श्रुत १४ अनंग प्रविष्ट श्रुत।

१ अक्षर श्रुतः—इसके तीन भेद—१ संज्ञा अक्षर २ व्यंजन अक्षर ३ लब्धि अक्षर।

१ संज्ञा अक्षर श्रुतः—अक्षर के आकार के ज्ञान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को कहते हैं। जैसे क, ख, ग प्रमुख सर्व अक्षर की संज्ञा का ज्ञान, क अक्षर के आकार को देख कर कहे कि यह ख नहीं, ग नहीं इस तरह से सर्व अक्षरों का ना कह कर कहे कि यह तो क ही है । एवं संस्कृत, प्राकृत, गोड़ी, फारसी, द्राविड़ी, हिन्दी आदि अनेक प्रकार की लिपियों में अनेक प्रकार के अक्षरों का आकार है इनका जो ज्ञान होवे उसे संज्ञा अक्षर श्रुत ज्ञान कहते हैं ।

२ व्यंजन अक्षर श्रुतः-हृस्व, दीर्घ, काना, मात्रा, अनुस्वार प्रमुख की संयोजना करके बोलना व्यंजनाक्षर श्रुत ।

३ लब्धि अक्षर श्रुतः-इन्द्रियार्थ के जानपने की लब्धि से अक्षर का जो ज्ञान होता है वो लब्धि अक्षर श्रुत इसके ६ भेद-

१ श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-कान से भेरी प्रमुख का शब्द सुनकर कहे कि यह भेरी प्रमुख का शब्द है अतः भेरी प्रमुख अक्षर का ज्ञान श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते हैं ।

२ चक्षुइन्द्रिय अक्षर श्रुतः-आँख से आम प्रमुख का रूप देख कर कहे कि यह आंबा प्रमुख का रूप है अतः आम प्रमुख अक्षर का ज्ञान चक्षु इन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे चक्षु इन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते हैं ।

३ घ्राणेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-नासिका से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केतकी प्रमुख की सुगन्ध सूंघ कर कहे कि यह केतकी प्रमुख की सुगन्ध है अतः केतकी प्रमुख अक्षर का ज्ञान घ्राणेन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे घ्राणेन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते हैं।

४ रसेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-जिह्वा से शक्कर प्रमुख का स्वाद जान कर कहे कि यह शक्कर प्रमुख का स्वाद है अतः इस अक्षर का ज्ञान रसेन्द्रिय से हुवा इसलिये इसे रसेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते हैं।

५ स्पर्शेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-शीत, उष्ण आदि का स्पर्श होने से जाने कि यह शीत व उष्ण है अतः इस अक्षर का ज्ञान स्पर्शेन्द्रिय से हुवा इस लिये इसे स्पर्शेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते हैं।

६ नोइन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-मन में चिन्ता व विचार करते हुवे स्मरण हुवा कि मैंने अमुक सोचा व विचारा अतः इस स्मरण के अक्षर का ज्ञान मन से-नो इन्द्रिय से हुवा इस लिये इसे नोइन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते हैं।

२ अनक्षर श्रुतः-इसके अनेक भेद हैं, अक्षर का उच्चारण किये बिना शब्द, छींक, उधरस, उच्छ्वास, निःश्वास, बगासी, नाक निषीक तथा नगारे प्रमुख का शब्द अनक्षरीवाणी द्वारा जान लेना इसे अनक्षर श्रुत कहते हैं।

३ संज्ञी श्रुतः-इसके तीन भेद-१ संज्ञी कालिकोपदेश २ संज्ञी हेतूपदेश ३ संज्ञी दृष्टिवादोपदेश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ संज्ञी कालिकोपदेशः—श्रुत सुनकर १ विचारना २ निश्चय करना ३ समुच्चय अर्थ की गवेषणा करना ४ विशेष अर्थ की गवेषणा करना ५ सोचना (चिन्ता करना) ६ निश्चय करके पुनः विचार करना ये ६ बोल संज्ञी जीव के होते हैं। इस लिये इसे संज्ञी कालिकोपदेश श्रुत कहते हैं।

२ संज्ञी हेतूपदेशः—जो संज्ञी धारकर रक्खे।

३ संज्ञी दृष्टि वादोपदेश—जो क्षयोपशम भाव से सुने। अर्थात् शास्त्र को हेतु सहित, द्रव्य अर्थ सहित, कारण युक्ति सहित, उपयोग सहित पूर्वापर विचार सहित जो पढे, पढावे, सुने उसे संज्ञी श्रुत कहते है।

असंज्ञी श्रुत के तीन भेदः—१ असंज्ञी कालिकोपदेश २ असंज्ञी हेतूपदेश ३ असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश।

(१) असंज्ञी कालिकोपदेश श्रुत—जो सुने परन्तु विचारे नहीं। संज्ञी के जो ६ बोल होते है वो असंज्ञी के नहीं।

असंज्ञी हेतूपदेश श्रुत—जो सुन कर धारण नहीं करे।

(३) असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश—क्षयोपशम भाव से जो नहीं सुने। एवं ये तीन बोल असंज्ञी आश्री कहे, अर्थात् असंज्ञी श्रुत—जो भावार्थ रहित, विचार तथा उपयोग शून्य, पूर्वक आलोच रहित, निर्णय रहित ओघ संज्ञा से पढे तथा पढावे वा सुने उसे असंज्ञी श्रुत कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) सम्यक् श्रुत-अरिहन्त, तीर्थंकर, केवल ज्ञानी केवल दर्शनी, द्वादश गुण सहित, अट्ठारह दोष रहित, चौंतीश अतिशय प्रमुख अनन्त गुण के धारक, इन से प्ररूपित बाहर अंग अर्थ रूप आगम तथा गणधर पुरुषों से गुंथित श्रुत रूप (मूल रूप) बारह आगम तथा चौदह पूर्व धारी, तेरह पूर्व धारी बारह पूर्व धारी व दश पूर्व धारी जो श्रुत तथा अर्थ रूप वाणी का प्रकाश किया है वो सम्यक् श्रुत, दश पूर्व से न्यून ज्ञान धारी द्वारा प्रकाशित किये हुवे आगम सम्श्रुत व मिथ्या श्रुत होते हैं।

(६) मिथ्या श्रुतः-पूर्वोक्त गुण रहित, रागद्वेष सहित पुरुषों के द्वारा स्वमति अनुसार कल्पना करके मिथ्यात्व दृष्टि से रचे हुवे ग्रंथ-जैसे भारत, रामायण, वैद्यक, ज्योतिष तथा २६ जाति के पाप शास्त्र प्रमुख-मिथ्या श्रुत कहलाते हैं। ये मिथ्या श्रुत मिथ्या दृष्टि को मिथ्या श्रुत पने परिणमे (सत्य मान कर पढे इस लिये) परन्तु जो सम्यक् श्रुत का संपर्क होने से झूठे जान कर छोड़ देवे तो सम्यक् श्रुत पने परिणमे इस मिथ्याश्रुत सम्यक्त्ववान पुरुष को सम्यक् बुद्धि से वांचते हुवे सम्यक्त्व रस से परिणमें तो बुद्धि का प्रभाव जान कर आचारांगादिक सम्यक् शास्त्र भी सम्यक् वान पुरुष को सम्यक हो कर परिणमते हैं और मिथ्या दृष्टि पुरुष को वे ही शास्त्र मिथ्यात्व पने परिणमते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७ सादिक श्रुत ८ अनादिक श्रुत ६ सपर्यवसित श्रुत १० अपर्यवसित श्रुतः—इन चार प्रकार के श्रुत का भावार्थ साथ २ दिया जाता है। बारह अंग व्यवच्छेद होने आश्री अन्त सहित और व्यवच्छेद न होने आश्री आदिक अन्त रहित। समुच्चय से चार प्रकार के होते हैं। द्रव्य से एक पुरुष ने पढना शुरू किया उसे सादिक सपर्यवसित कहते हैं और अनेक पुरुष परंपरा आश्री अनादिक अपर्यवसित कहते हैं क्षेत्र से ५ भरत ५ एरावत, दश क्षेत्र आश्री सादिक सपर्यवसित ५ महा विदेह आश्री अनादिक अपर्यवसित, काल से उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आश्री सादिक सपर्यवसित नोउत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी आश्री अनादिक अपर्यवसित, भाव से तीर्थंकरों ने भाव प्रकाशित किया इस आश्री सादिक सपर्यवसित। क्षयोपशम भाव आश्री अनादिक अपर्यवसित अथवा भव्य का श्रुत आदिक अन्त सहित अभव्य का श्रुत आदि अन्त रहित, इस पर दृष्टान्त-सर्व आकाश के अनन्त प्रदेश हैं व एक एक आकाश प्रदेश में अनन्त पर्याय हैं। उन सर्व पर्याय से अनन्त गुणे अधिक एक अगुरुलघु पर्याय अक्षर होता है जो क्षरे नहीं, व अप्रतिहत, प्रधान, ज्ञान, दर्शन जानना सो अक्षर, अक्षर केवल सम्पूर्ण ज्ञान जानना-इस में से सर्व जीव को सर्व प्रदेश के अनन्तवें भाग जान पना सदाकाल रहता है शिष्य पूछने लगा हे स्वामिन्! यदि इतना जानपना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव को न रहे तो क्या होवे ? तब गुरु ने उत्तर दिया कि यदि इतना ज्ञान पना न रहे तो जीवपना मिट कर अजीव हो जाता है व चैतन्य मिट कर जड़पना (जडत्व) हो जाता है । अतः हे शिष्य ! जीव को सर्व प्रदेशे अक्षर का अनन्तवें भाग ज्ञान सदा रहता है। जैसे वर्षा ऋतु में चन्द्र तथा सूर्य ढंके हुवे रहने पर भी सर्वथा चन्द्र तथा सूर्य की प्रभा छिप नहीं सकती है वैसे ही ज्ञानावरणीय कर्म के आवरण के उदय से भी चैतन्यत्व सर्वथा छिप नहीं सकता । निगोद के जीवों को भी अक्षर के अनन्तवें भाग सदा ज्ञान रहता है।

११ गमिक श्रुत–बारहवां अंग दृष्टिवाद अनेक बार समान पाठ आने से ।

१२ अगमिक श्रुत–कालिक श्रुत ११ अंग आचारांग प्रमुख ।

१३ * अंग प्रविष्ट–बारह अंग (आचारांगादि से दृष्टिवाद पर्यन्त) सूत्र में इसका विस्तार बहुत है अतः वहां से जानो ।

१४ अनंगप्रविष्ट–समुच्चय दो प्रकार का १ आवश्यक २ आवश्यक व्यतिरिक्त । १ आवश्यक के ६ अध्ययन

---

* अथवा समुच्चय दो प्रकार के श्रुत कहे हैं । अंग पविठंच (अंग प्रविष्ट) तथा अंग बाहिरं (अनंग प्रविष्ट) गमिक तथा अगमिक के भेद में समावेश सूत्र कार ने किये हैं। मूल में अलग२ भी नाम आये हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामायिक प्रमुख २ आवश्यक व्यतिरिक्त के दो भेद १ कालिक श्रुत २ उत्कालिक श्रुत ।

१ कालिक श्रुत×इसके अनेक भेद हैं—उत्तराध्ययन, दशाश्रुत स्कन्ध, बृहत् कल्प, व्यवहार प्रमुख एकत्रीश सूत्र कालिक के नाम नंदि सूत्र में आये हैं । तथा जिन२ तीर्थंकर के जितने शिष्य (जिनके चार बुद्धि होवे) होवे उतने पइन्ना सिद्धान्त जानना जैसे ऋषभ देव के ८४००० लाख पइन्ना तथा २२ तीर्थंकर के संख्याता हजार पइन्ना तथा महावीर स्वामी के १४ हजार पइन्ना तथा सर्व गणधर के पइन्ना व प्रत्येक बुद्ध के बनाए हुए पइन्ना ये सर्व कालिक जानना एवं कालिक श्रुत ।

२ उत्कालिक श्रुत—यह अनेक प्रकार का है । दशवैकालिक प्रमुख २९ प्रकार के शास्त्रों के नाम नंदि सूत्र में आये हैं । ये और इनके सिवाय और भी अनेक प्रकार के शास्त्र हैं परन्तु वर्तमान में अनेक शास्त्र विच्छेद हो गये हैं ।

द्वादशांग सिद्धान्त आचार्य की सन्दूक समान, गत काल में अनन्त जीव आज्ञा का आराधन करके संसार दुख से मुक्त हुवे हैं वर्तमान काल में संख्यात जीव दुख से मुक्त हो रहे हैं व भविष्य में आज्ञा का आराधन करके

× पहेले प्रहर तथा चोथे प्रहर जिसकी स्वाध्याय होती है वो कालिक श्रुत कहलाता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनन्त जीव दुख से मुक्त होवेंगे। इसी प्रकार सूत्र की विराधना करने से तीनों काल में संसार के अन्दर भ्रमण करने का (ऊपर समान) जानना। श्रुत ज्ञान (द्वादशांगरूप) सदा काल लोक आश्री है।

श्रुत ज्ञान–समुच्चय चार प्रकार का है–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से।

द्रव्य से–श्रुत ज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व द्रव्य जाने व देखे। (श्रद्धा द्वारा व स्वरूप चिंतवन करने से)

क्षेत्र से–श्रुत ज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व क्षेत्र की बात जाने व देखे (पूर्व वत्)

काल से–श्रुत ज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व काल की बात जाने व देखे (पूर्ववत्)

भाव से–श्रुत ज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व भाव जाने व देखे।

अवधि ज्ञान का वर्णन।

१ अवधि ज्ञान के मुख्य दो भेद–१ भव प्रत्ययिक २ क्षायोपशमिक १ भव प्रत्ययिक के दो भेदः–१ नेरिये व २ देव (चार प्रकार के) को जो होता है वो भव सम्बन्धी। यह ज्ञान उत्पन्न होने के समय से लगा कर भवके अन्त समय तक रहता है २ क्षायोपशमिक के दो भेद–१ संज्ञी मनुष्य को व २ संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय को होता है। क्षयोपशम भाव से जो उत्पन्न होता है व क्षमा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिक गुणों के साथ अणगार को जो उत्पन्न होता है वो क्षायोपशमिक।

अवधिज्ञान के (संक्षेप में) छः भेद--१ अनुगामिक २ अनानुगामिक ३ वर्ध मानक ४ हाय मानक ५ प्रति पाति ६ अप्रतिपाति १

१ अनुगामिक-जहां जावे वहां साथ आवे (रहे) यह दो प्रकार का--१ अन्तःगत २ मध्यगत।

(१) अन्तः गत अवधिज्ञान के ३ भेदः--(१)

पुरतः अन्तः गत--(पुरओ अन्तगत) शरीर के आगे के भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

(२) मार्गतः अन्तः गत (मग्गओ अन्तगत) शरीर के पृष्ठ भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

(३) पार्श्वज्ञः अन्तःगत--शरीर के दो पार्श्व भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

अन्तःगत अवधिज्ञान पर दृष्टान्तः -जैसे कोई पुरुष दीप प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख हाथमें लेकर आगे करता हुवा चले तो आगे देखे, पीछे रख कर चले तो पीछे देखे व दोनों तरफ रख कर चले तो दोनों तरफ देखे व जिस तरफ रक्खे उधर देखे दूसरी तरफ नहीं। ऐसा अवधिज्ञान का जानना। जिस तरफ देखे जाने उस तरफ संख्याता, असंख्याता योजन तक जाने देखे।

(२) मध्य गत-यह सर्व दिशा व विदिशाओं में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(चारों तरफ) संख्याता योजन तक जाने देखे । पूर्वोक्त दीप प्रमुख भाजन मस्तक पर रख कर चलने से जैसे चारों ओर दिखाई दे उसी प्रकार इस ज्ञान से भी चारों ओर देखे जाने ।

२ अनानुगामिक अवधि ज्ञानः—जिस स्थान पर अवधि ज्ञान उत्पन्न हुवा हो उसी स्थान पर रह कर जाने देखे अन्यत्र यदि वो पुरुष चला जावे तो नहीं देखे जाने । यह चारों दिशाओं में संख्यात असंख्यात योजन संलग्न तथा असंलग्न रह कर जाने देखे, जैसे किसी पुरुष ने दीप प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख किसी स्थान पर रक्खा होवे तो केवल उसी स्थान प्रति चारों तरफ देखे परन्तु अन्यत्र न देखे उसी प्रकार अनानुगामिक अवधि ज्ञान जानना ।

३ वर्द्धमानक अवधि ज्ञानः—प्रशस्त लेश्या के अध्वसाय के कारण व विशुद्ध चारित्र के परिणाम द्वारा सर्व प्रकारे अवधि ज्ञान की वृद्धि होवे उसे वर्द्धमानक अवधि ज्ञान कहते हैं, जघन्य से सूक्ष्म निगोदिया जीव तीन समय उत्पन्न होने में शरीर की जो अवगाहना बांधी होवे उतना ही क्षेत्र जाने उत्कृष्ट सर्व अग्नि का जीव, सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त एवं चार जाति के जीव, इनमें वे भी जिस समय में उत्कृष्ट होवे उन अग्नि के जीवों को एकेक आकाश प्रदेश में अन्तर रहित रखने से जितने अलोक में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक के बराबर असंख्यात खण्ड (भाग विकल्प) भराय उतना क्षेत्र सर्व दिशा व विदिशाओं (चारों ओर) से देखे । अवधि ज्ञान रूपी पदार्थ देखे । मध्यम अनेक भेद हैं-वृद्धि चार प्रकार से होवे—

१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से ।

१ काल से ज्ञान की वृद्धि होवे तब तीन बोल का ज्ञान बढ़े ।

२ क्षेत्र से ज्ञान बढ़े तब काल की भजना व द्रव्य भाव का ज्ञान बढ़े ।

३ द्रव्य से ज्ञान बढ़े तब काल की तथा क्षेत्र की भजना व भाव की वृद्धि ।

४ भाव से ज्ञान बढ़ें तो शेष तीन बोल की भजना इसका विस्तार पूर्वक वर्णनः-सर्व वस्तुओं में काल का ज्ञान सूक्ष्म है जैसे चोथे आरे में जन्मा हुवा निरोगी बलिष्ट शरीर व वज्रऋृषभ नाराच संहनन वाला पुरुष तीक्ष्ण सुई लेकर ४६ पान की बीडी बींधे, बिंधते समय एक पान से दूसरे पान में सुई को जाने में असंख्याता समय लग जाता है । काल ऐसा सूक्ष्म होता है । इससे क्षेत्र असंख्यात गुण सूक्ष्म है । जैसे एक आङ्गुल जितने क्षेत्र में असंख्यात श्रेणियें हैं । एक एक श्रेणी में असंख्यात आकाश प्रदेश हैं, एक एक समय में एक एक आकाश प्रदेश का यदि अपहरण होवे तो इतने में असंख्यात कालचक्र बीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाते हैं तो भी एक श्रेणी पूरी (पूर्ण) न होवे। इस प्रकार क्षेत्र सूक्ष्म है। इससे द्रव्य अनन्त गुणा सूक्ष्म है। एक अंगुल प्रमाण क्षेत्र में असंख्यात श्रेणियें हैं अंगुल प्रमाण लम्बी व एक प्रदेश प्रमाण जाडी में असंख्यात आकाश प्रदेश हैं। एक एक आकाश प्रदेश ऊपर अनन्त परमाणु तथा द्विप्रदेशी, त्रिप्रदेशी, अनन्त प्रदेशी यावत् स्कन्ध प्रमुख द्रव्य हैं। इन द्रव्यों में से समय समय एक एक द्रव्य का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र लग जाते हैं तो भी द्रव्य खतम नहीं होते द्रव्य से भाव अनन्त गुणा सूक्ष्म है। पूर्वोक्त श्रेणी में जो द्रव्य कहे हैं उनमें से एक एक द्रव्य में अनन्त पर्यव (भाव) है एक परमाणु में एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस, दो स्पर्श हैं। जिनमें एक वर्ण में अनन्त पर्यव हैं। यह एक गुण काला, द्विगुण काला, त्रिगुण काला यावत् अनन्त गुण काला है इस प्रकार पांचों बोल में अनन्त पर्यव हैं एवं पांच वर्ण में, दो गन्ध, पांच रस, व आठ स्पर्श में अनन्त पर्याय हैं। द्वि-प्रदेशी स्कन्ध में २ वर्ण, २ गन्ध, २ रस, ४ स्पर्श हैं इन दश भेदों में भी पूर्वोक्त रीति से अनन्त पर्यव हैं, इस प्रकार सर्व द्रव्य में पर्यव की भावना करना, एवं सर्व द्रव्य के पर्यव इकट्ठे करके समय समय एकेक पर्यव का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र (उत्सर्पिणी अवसर्पिणी) बीत जाने पर परमाणु द्रव्य के पर्यव पूरे होते हैं एवं द्वि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेशी स्कन्धों के पर्यव त्रिप्रदेशी स्कन्धों के पर्यव, यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्धों के पर्यव का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र लग जाते हैं तो भी खूटे नहीं इस प्रकार द्रव्य से भाव सूक्ष्म होते हैं, काल को चने की ओपमा क्षेत्र को ज्वार की ओपमा द्रव्य को तिल की ओपमा और भाव को खसखस की ओपमा दी गई है।

पूर्व चार प्रकार की वृद्धि की जो रीति कही गई है उस में से क्षेत्र से व काल से किस प्रकार वर्धमान ज्ञान होता है उसका वर्णनः-

१ क्षेत्र से आंगुल का असंख्यातवें भाग जाने देखे व काल से आवलिका के असंख्यातवें भाग की बात गत व भविष्य काल की जाने देखे।

२ क्षेत्र से आंगुल के संख्यातवें भाग जाने देखे व काल से आवलिका के संख्यातवें भाग की बात गत व भविष्य काल की जाने देखे।

३ क्षेत्र से एक आंगुल मात्र क्षेत्र जाने देखे व काल से आवलिका से कुछ न्यून जाने देखे।

४ क्षेत्र से पृथक् (दो से नव तक) आंगुल की बात जाने देखे व काल से आवलिका संपूर्ण काल की बात गत व भविष्य काल की जाने देखे।

५ क्षेत्र से एक हाथ प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से अन्तर्मुहूर्त (मुहूर्त में न्यून) काल की बात गत व भवि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ष्य काल की जाने देखे।

६ क्षेत्र से धनुष्य प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से प्रत्येक मुहूर्त की बात जाने देखे।

७ क्षेत्र से गाउ (कोस) प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से एक दिवस में कुछ न्यून की बात जाने देखे।

८ क्षेत्र से एक योजन प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से प्रत्येक दिवस की बात जाने देखे।

९ क्षेत्र से पच्चीश योजन क्षेत्र के भाव जाने देखे व काल से पक्ष में न्यून की बात जाने देखे।

१० क्षेत्र से भरत क्षेत्र प्रमाण क्षेत्र के भाव जाने देखे व काल से पक्ष पूर्ण की बात जाने देखे।

११ क्षेत्र से जम्बू द्वीप प्रमाण क्षेत्र की बात जाने देखे व काल से एक माह जाजेरी की बात जाने देखे।

१२ क्षेत्र से अढ़ाई द्वीप की बात जाने देखे व काल से एक वर्ष की बात जाने देखे।

१३ क्षेत्र से पन्द्रहवाँ रुचक द्वीप तक जाने देखे व काल से पृथक् वर्ष की बात जाने देखे।

१४ क्षेत्र से संख्याता द्वीप समुद्र की बात जाने देखे व काल से संख्याता काल की बात जाने देखे।

१५ क्षेत्र से संख्याता तथा असंख्याता द्वीप समुद्र की बात जाने देखे व काल से असंख्याता काल की बात जाने देखे। इस प्रकार उर्ध्व लोक, अधो लोक, तिर्यक्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक इन तीन लोकों में बढ़ते वर्धमान परिणाम से अलोक में असंख्याता लोक प्रमाण खण्ड जानने की शक्ति प्रकट होवे ।

४ हाय मानक अवधि ज्ञान-अप्रशस्त लेश्या के परिणाम के कारण, अशुभ ध्यान से व अविशुद्ध चारित्र परिणाम से (चारित्र की मलिनता से) वर्ध मानक अवधि ज्ञान की हानि होती है । व कुछ२ घटता जाता है । इसे हाय मानक अवधि ज्ञान कहते हैं ।

५ प्रति पाति अवधि ज्ञान-जो अवधि ज्ञान प्राप्त हो गया है वो एक समय ही नष्ट हो जाता है । वो जघन्य १ आङ्गुल के असंख्यातवें भाग २ अङ्गुल के संख्यातवें भाग ३ वालाग्रं ४ पृथक् वालाग्र ५ लिम्ब ६ पृथक् लिम्ब ७ यूका (जू) ८ पृथक् जू ९ जव १० पृथक् जव ११ आङ्गुल १२ पृथक् आङ्गुल १३ पाँव १४ पृथक् पाँव १५ वेहेंत १६ पृथक् वेहेंत १७ हाथ १८ पृथक् हाथ १९ कुक्षि (दो हाथ) २० पृथक् कुक्षि २१ धनुष्य २२ पृथक् धनुष्य २३ गाउ २४ पृथक् गाउ २५ योजन २६ पृथक् योजन २७ सो योजन २८ पृथक् सो योजन २९ सहस्त्र योजन ३० पृथक् सहस्त्र योजन ३१ लक्ष योजन ३२ पृथक् लक्ष योजन ३३ करोड़ योजन ३४ पृथक् करोड़ योजन ३५ करोड़ा करोड़ योजन ३६ पृथक् करोड़ा करोड़ योजन इस प्रकार क्षेत्र अवधि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान से देखे पश्चात् नष्ट हो जावे उत्कृष्ट लोक प्रमाण क्षेत्र देखने बाद नष्ट होवे जैसे दीप पवन के योग से बुझ जाता है वैसे ही यह प्रति पाति अवधि ज्ञान नष्ट हो जाता है।

६ अप्रति पाति (अपडिवाई) अवधि ज्ञानः—
जो आकर पुनः जावे नहीं यह सम्पूर्ण चौदह राजलोक जाने देखे व अलोक में एक आकाश प्रदेश मात्र क्षेत्र की बात जाने देखे तो भी पड़े नहीं एवं दो प्रदेश तथा तीन प्रदेश यावत् लोक प्रमाण असंख्यात खण्ड जानने की शक्ति होवे उसे अप्रति पाति अवधि ज्ञान कहते हैं अलोक में रूपी पदार्थ नहीं यदि यहां रूपी पदार्थ होवे तो देखे इतनी जानने की शक्ति होती है यह ज्ञान तीर्थंकर प्रमुख को बचपन से ही होता है केवल ज्ञान होने बाद यह उपयोगी नहीं होता है एवं ६ भेद अवधि ज्ञान के हुवे।

समुच्चय अवधि ज्ञान के चार भेद होते हैं:-१ द्रव्य से अवधि ज्ञानी जघन्य अनन्त रूपी पदार्थ जाने देखे उत्कृष्ट सर्व रूपी द्रव्य जाने देखे २ क्षेत्र से अवधि ज्ञानी जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग क्षेत्र जाने देखे उत्कृष्ट लोक प्रमाण असंख्यात खण्ड अलोक में देखे ३ काल से अवधि ज्ञानी जघन्य आवलिका के असंख्यातवें भाग की बात जाने देखे उत्कृष्ट असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी, अतीत (गत) अनागत (भविष्य) काल की बात जाने देखे ४ भाव से जघन्य अनन्त भाव को जाने उत्कृष्ट सर्व भाव के अनन्तवें भाग को जाने देखे (वर्णादिक पर्याय को)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवधि ज्ञान का विषय (देखने की शक्ति)

नक्शा नं० १

	१	२	३	४	५	६	७
विषय	रत्न प्रभा	शर्कर प्रभा	वालु प्रभा	पंक प्रभा	धूम प्रभा	तमः प्रभा	तमतमः प्रभा
ज. क्षेत्र	३॥ गाउ	३ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ	०॥ गाउ
उ. क्षेत्र	४ गाउ	३॥ गाउ	३ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ

नक्शा नं० २

विषय	असुर कुमार	९ निकाय व्यन्तर	तिर्यंच पंचेन्द्रिय संज्ञी	संज्ञी मनुष्य	ज्योतिषी	देव लोक १–२	देव लोक ३–४
ज. देखे	२५ योजन	२५ योजन	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	संख्याता द्वीप समुद्र	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग
उ. देखे	असंख्यात द्वीप समुद्र	संख्यात द्वीप समुद्र	असंख्यात द्वीप समुद्र	अलोक में अ. खण्ड	,,	रत्न प्रभा के नीचे का तला	शर्कर प्र. के नीचे (चरमान्त) का च.

नक्षा नं० ३

विषय	देव लोक ५-६	देव लोक ७-८	देव लोक ९,१०,११,१२	पहेली से छट्ठी ग्रीयवेक	ग्रीयवेक ७,८,९	५ अनुत्तर विमान
जघन्य देखे	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	चौदह राज से कुछ न्यून
उत्कृष्ट देखे	ती. न. के नी. का च.	चोथी न. के नी. का चर.	पां. न. के नीचे का चरमान्त	छट्ठी न. के नीचे का चरमान्त	सातवी न. के नीचे का चर.	"

वैमानिक ऊंचा अपने २ विमान की ध्वजा तक देखे। तिर्छे लोक में असंख्यात द्वीप समुद्र देखे। यन्त्र में अधो लोक आश्री कहा है।

॥ इति विषय द्वार सम्पूर्ण ॥

१ अवधिज्ञान	आभ्यन्तर	बाह्य	२ अवधि ज्ञान	देश से	सर्व से
नारकी देवता को होता है	०		नारकी देवता,	होता है	०
तिर्यंच में	०	होता है	तिर्यंच	होता है	०
मनुष्य में	होता है	होता है	मनुष्य	होता है	होता है

१ अवधि ज्ञान आभ्यन्तर बाह्य यन्त्र से जानना। २ अवधि ज्ञान देश थकी सर्व थकी यन्त्र से जानना॥

अवधि ज्ञान देखने का संस्थान आकार:१ नेरियों का अवधि ज्ञान त्रापा (त्रिपाई) के आकार २ भवन पति का पाला के आकार ३ तिर्यंच का तथा मनुष्य का अनेक प्रकार का है ४ व्यन्तर का पटह वाजिन्त्र के आकार ५ ज्योतिषी का झालर के आकार ६ बारह देवलोक का ऊर्ध्व मृदंग आकार ७ नव ग्रीयवेक का फूलों की चंगेरी के आकार ८ पांच अनुत्तर विमान का अवधि ज्ञान कंचुकी के आकार होता है।

नारकी देव का अवधि ज्ञान–१ अनुगामिक २ अप्रतिपाति ३ अवस्थित एवं तीन प्रकार का।

मनुष्य और तिर्यंच का–१ अनुगामिक २ अनानुगामिक ३ वर्धमानक ४ हाय मानक ५ प्रतिपाति ६ अप्रति पाति ७ अवस्थित ८ अनवास्थित होता है। यह विषय द्वार प्रमुख प्रज्ञापना सूत्र के ३३ वें पद से लिखा है। नंदि सूत्र में संक्षेप में लिखा हुवा है।

मनः पर्यव ज्ञान का विस्तार

मन पर्यव ज्ञान के चार भेदः—

१ लब्धि मनः–यह अनुत्तर वासी देवों को होता है।

२ संज्ञा मनः–यह संज्ञी मनुष्य व संज्ञी तिर्यंच को होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ वर्गणा मनः—यह नारकी व अनुत्तर विमान वासी देवों के सिवाय दूसरे देवों को होता है।

४ पर्याय मनः—यह मनः पर्यव ज्ञानी को होता है

मनः पर्यव ज्ञान किस को उत्पन्न होता है ?

१ मनुष्य को उत्पन्न होवे, अमनुष्य को नहीं।

२ संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे असंज्ञी मनुष्य को नहीं।

३ कर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे अकर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को नहीं।

४ कर्म भूमि में संख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न होवे परन्तु असंख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न नहीं होवे।

५ संख्याता वर्ष का आयुष्य में पर्याप्त को उत्पन्न होवे अपर्याप्त को नहीं।

६ पर्याप्त में भी समदृष्टि को उत्पन्न होवे मिथ्या-दृष्टि व मिश्र दृष्टि को नहीं होवे।

७ सम दृष्टि में भी संयति को उत्पन्न होवे परन्तु अव्रती समदृष्टि व देश व्रती वाले को नहीं उत्पन्न होवे।

८ संयति में भी अप्रमत संयति को उत्पन्न होवे प्रमत्त संयति को नहीं होवे।

९ अप्रमत संयति में भी लब्धिवान को उत्पन्न होवे अलब्धिवान को नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनः पर्यव ज्ञान के दो भेदः- १ ऋजु मति मनः पर्यव ज्ञान २ विपुल मति मनः पर्यव ज्ञान। सामान्य प्रकार से जाने सो ऋजु मति और विशेष प्रकार से जाने सो विपुल मति मनः पर्यव ज्ञान।

मनः पर्यव ज्ञान के समुच्चये चार भेद हैं:- १ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से। द्रव्य से ऋजुमति अनन्त अनन्त प्रदेशी स्कन्ध जाने देखे (सामान्य से विपुल मति इससे अधिक स्पष्टता से व निर्णय सहित जाने देखे

२ क्षेत्र से ऋजुमति जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट नीचे रत्न प्रभा का प्रथम काण्ड के ऊपर का छोटे प्रतर का नीचला तला तक अर्थात् सम भूतल पृथ्वी से १००० योजन नीचे देखे, ऊर्ध्व ज्योतिषी के ऊपर का तल तक देखे अर्थात् समभूतल से ९०० योजन का ऊँचा देखे, तिर्यक् देखे तो मनुष्य क्षेत्र में अढाई द्वीप तथा दो समुद्र के अन्दर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त के मनोगत भाव जाने देखे, विपुल मति ऋजु मति से अढाई अंगुल अधिक विशेष स्पष्ट निर्णय सहित जाने देखे।

३ काल से ऋजु मति जघन्य पल्योपम के असंख्यातवें भाग की बात जाने देखे, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की अतीत अनागत काल की बात जाने देखे, विपुल मति ऋजु मति से विशेष, स्पष्ट निर्णय सहित जाने देखे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ भाव से ऋजु मति जघन्य अनन्त द्रव्य के भाव (वर्णादि पर्याय) जाने देखे उत्कृष्ट सर्व भावों के अनंतवें भाग जाने देखे, विपुल मति इस से स्पष्ट निर्णय सहित विशेष अधिक जाने देखे।

मनः पर्यव ज्ञानी अढाई द्वीप में रहे हुवे संज्ञी पंचेन्द्रिय के मनोगत भाव जाने देखे अनुमान से जैसे धूँवा देख कर अग्नि का निश्चय होता है वैसे ही मनोगत भाव से देखते हैं।

केवल ज्ञान का वर्णन।

केवल ज्ञान के दो भेद—१ भवस्थ केवल ज्ञान २ सिद्ध केवल ज्ञान। भवस्थ केवल ज्ञान के दो भेद १ संयोगी भवस्थ केवल ज्ञान २ अयोगी भवस्थ केवल ज्ञान, इनका विस्तार सूत्र से जानना। सिद्ध केवल ज्ञान के दो भेद—१ अनन्तर सिद्ध केवल ज्ञान २ परंपर सिद्ध केवल ज्ञान विस्तार सूत्र से जानना ज्ञान समुच्चय चार प्रकार का—१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से।

१ द्रव्य से केवल ज्ञानी सर्व रूपी अरूपी द्रव्य जाने देखे।

२ क्षेत्र से केवल ज्ञानी सर्व क्षेत्र (लोकालोक) की बात जाने देखे।

३ काल से केवल ज्ञानी सर्व काल की—भूत, भविष्य, वर्तमान—बात जाने देखे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ भाव से केवल ज्ञानी सर्व रूपी अरूपी द्रव्य के भाव के अनन्त भाव सर्व प्रकार से जाने देखे ।

केवल ज्ञान आवरण रहित विशुद्ध लोकालोक प्रकाशक एक ही प्रकार का सर्व केवलियों को होता है ।

❀ इति पांच ज्ञान का विवेचन सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेंतीश पदवी

नव उत्तम पदवी, सात एकेन्द्रिय रत्न की पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न की पदवी ।

प्रथम नव उत्तम पदवी के नाम

१ तीर्थंकर की पदवी २ चक्रवर्ती की पदवी ३ वासुदेव की पदवी ४ बलदेव की पदवी ५ मांडलिक की पदवी ६ केवली की पदवी ७ साधु की पदवी ८ श्रावक की पदवी ९ समकित की पदवी ।

सात एकेन्द्रिय रत्न के नाम

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ चर्म रत्न ४ दंड रत्न ५ खड्ग रत्न ६ मणि रत्न ७ काकण्य रत्न ।

सात पंचेन्द्रिय रत्न के नाम

१ सेना पति रत्न २ गाथा पति रत्न ३ वार्धिक (बढई) रत्न ४ पुरोहित रत्न ५ स्त्री रत्न ६ गज रत्न ७ अश्व रत्न यह चौदह रत्न चक्रवर्ती के होते हैं ।

ये चौदह रत्न चक्रवर्ती के जो जो कार्य करते हैं उनका विवेचन ।

प्रथम सात एकेन्द्रिय रत्न

१ चक्र रत्न-छः खण्ड साधने का रास्ता बताता है २ छत्र रत्न–सेना के ऊपर १२ योजन (४८ कोस) तक छत्र रूप बन जाता है । ३ चर्म रत्न–नदी आदि जलाशयों

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

के अन्दर नाव रूप हो जाता है ४ दण्ड रत्न-वैताढ्य पर्वत के दोनों गुफाओं के द्वार खोलता है ५ खड्ग रत्न-शत्रु को मारता है ६ मणि रत्न-हस्ति रत्न के मस्तक पर रखने से प्रकाश करता है ७ कांकण्य (कांगनी) रत्न-गुफाओं में एक२ योजन के अन्तर पर धनुष्य के गोलाकार घिसने से सूर्य समान प्रकाश करता है।

सात पंचेन्द्रिय रत्न

१ सेनापति रत्न-देशों को विजय करते हैं २ गाथापति रत्न-चौवीश प्रकार का धान्य उत्पन्न करते हैं ३ वार्धिक (बढई) रत्न-४२ भूमि महल सड़क पुल आदि निर्माण करते हैं ४ पुरोहित रत्न-लगे हुवे घावों को ठीक करते विघ्न को दूर करते, शांति पाठ पढ़ते व कथा सुनाते हैं ५ स्त्री रत्न-विषय के उपभोग में काम आती ६-७ गज रत्न व अश्व रत्न-ये दोनों सवारी में काम आते।

चौदह रत्नों का उत्पति स्थान

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ४ खड्ग रत्न ये चार रत्न चक्रवर्ती की आयुध शाला में उत्पन्न होते हैं।

१ चर्म रत्न २ मणि रत्न ३ काकण्य (कांगनी) ये तीन रत्न लक्ष्मी के भण्डार में उत्पन्न होते हैं।

१ सेनापति रत्न २ गाथापति रत्न ३ वार्धिक रत्न ४ पुरोहित रत्न ये चार रत्न चक्रवर्ती के नगर में उत्पन्न होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ स्त्री रत्न विद्याधरों की श्रेणी में उत्पन्न होती है।

१ गज रत्न २ अश्व रत्न ये दोनों रत्न वैताढ्य पर्वत के मूल में उत्पन्न होते हैं।

चौदह रत्नों की अवगाहना

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ये तीन रत्न की अवगाहना एक धनुष्य प्रमाण, चर्म रत्न की दो हाथ की, खड्ग रत्न पचास अङ्गुल लम्बा १६ अंगुल चौड़ा और आधा अंगुल जाड़ा होता है और चार अंगुल की मुष्टि होती है। मणि रत्न चार अंगुल लम्बा और दो अंगुल चौड़ा व तीन कोने वाला होता है। काकण्य रत्न चार अंगुल लम्बा चार अंगुल चौड़ा चार अंगुल ऊंचा होता है इसके छः तले, आठ कोण, बारह हांसे वाला आठ सोनैया जितना वजन में व सोनार के एरण समान आकार में होता है।

सात पंचेन्द्रिय रत्न की अवगाहना

१ सेना पति २ गाथा पति ३ वाधिक ४ पुरोहित इन चार रत्नों की अवगाहना चक्रवर्ती समान। स्त्री रत्न चक्रवर्ती से चार आङ्गुल छोटी होती है।

गज रत्न चक्रवर्ती से दुगना होता है। अश्व रत्न पूंछ से मुख तक १०८ आङ्गुल लम्बा। खुर से कान तक ८० आङ्गुल ऊंचा, सोलह आङ्गुल की जंघा, वीश आङ्गुल की भुजा, चार आङ्गुल का घुटना चार आङ्गुल के खुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और ३२ आङ्गुल का मुख होता है। और ६६ आङ्गुल की परिधि (घेराव) है।

एवं २३ पदवी का नाम तथा चक्रवर्ती के चौदह रत्नों का विवेचन कहा।

नरकादिक चार गति में से निकले हुवे जीव २३ पदवियों में की कोन २ सी पदवी पावे-इस पर पन्द्रह बोल।

१ पहेली नरक से निकले हुवे जीव १६ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़ कर।

२ दूसरी नरक से निकले हुवे जीव २३ पदवी में से १५ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न और एक चक्रवर्ती एवं आठ नहीं पावे।

३ तीसरी नरक से निकले हुवे जीव १३ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न, चक्रवर्ती, वासुदेव एवं दश पदवी नहीं पावे।

४ चोथी नरक से निकले हुवे जीव १२ पदवी पावे-दश तो ऊपर की और एक तीर्थंकर एवं ११ नहीं पावे।

५ पांचवी नरक से निकले हुवे जीव ११ पदवी पावे-११ तो ऊपर की और बारहवी केवली की नहीं पावे।

६ छट्ठी नरक से निकले हुवे जीव दश पदवी पावें, ऊपर की बारह और एक साधु की एवं तेरह नहीं।

७ सातवीं नरक से निकले हुवे जीव तीन पदवी

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

पावे—१ गज २ अश्व ३ समकितीं (सम कित पावे तो तिर्यंच में, मनुष्य नहीं हो सकते)

८ भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी से निकले हुवे जीव २१ पदवी पावे-तीर्थंकर, वासुदेव ये दो नहीं पावे—

६ पहेला दूसरा देव लोक से निकले हुवे जीव २३ पदवी पावे।

१० तीसरे से आठवें देवलोक तक से निकले हुवे जीव १६ पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न नहीं।

११ नववें देवलोक से नववीं ग्रीयवेक तक से निकले हुवे जीव चौदह पदवी पावें। सात एकेन्द्रिय रत्न,गज और अश्व ये नव नहीं।

१२ पांच अनुत्तर विमान से निकले हुवे जीव आठ पदवी पावें। सात एकेन्द्रिय रत्न, सात पंचेन्द्रिय रत्न और एक वासुदेव ये पन्द्रह नहीं पावे।

१३ पृथ्वी, अप, वनस्पति, मनुष्य, तिर्यंच-पंचेन्द्रिय से निकले हुवे जीव १६ पदवी पावे। तीर्थंकर, चक्रवर्ती वासुदेव, बलदेव ये चार नहीं पावे।

१४ तेजस् वायु से निकले हुवे जीव नव पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न, गज और अश्व ये नव पावे।

१५ तीन विकलेन्द्रिय से निकले हुवे जीव १८ पदवी पावे। तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, केवली ये पांच नहीं पावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोन २ सी पद्वी वाले किस किस गति में जावे ।

१ पहेली दूसरी, तीसरी, चोथी इन चार नरक में ११ पद्वी वाला जावे ७ पंचेन्द्रिय रत्न, ८ चक्रवर्ती ९ वासुदेव १० समकित दृष्टि ११ मांडालिक राजा एवं ११

२ पांचवी छठी नरक में नव पद्वी का जावे गज और अश्व ये छोड़ कर शेष पांच पंचेन्द्रिय रत्न ६ चक्रवर्ती ७ वासु देव ८ सम्यक्त्वी ९ मांडलिक राजा एवं नव पदवी ।

३ सातवीं नरक में सात पद्वी का जावे गज, अश्व और स्त्री छोड़ शेष चार ५ चक्रवर्ती ६ वासु देव ७ मांडलिक राजा एवं सात ।

४ भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी और पहेले से आठवें देवलोक तक दृश पद्वी का जावे–सात पंचेन्द्रिय रत्न में से स्त्री रत्न छोड़ शेष ६ रत्न ७ साधु ८ श्रावक ९ सम्यक्त्वी १० मांडालिक राजा एवं दृश ।

५ नववें से बारहवें देव लोक तक आठ पदवी का जावे स्त्री, गज, अश्व छोड़ शेष चार पंचेन्द्रिय रत्न ५ साधु ६ श्रावक ७ सम्यक्त्वी ८ मांडालिक राजा एवं आठ

६ नव ग्रीयवेक में सात पद्वी का जावे ऊपर की आठ पद्वी में से श्रावक को छोड़ शेष सात पद्वी ।

७ पांच अनुत्तर विमान में दो पद्वी का जावे साधु और सम्यक्त्वी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८ पांच स्थावर में चौदह पदवी का जावे। सात एकेन्द्रिय रत्न, स्त्री छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न और मांडलिक राजा।

९ तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेंद्रिय और मनुष्य में पंन्द्रह पदवी का जावे। ऊपर की चौदह पदवी और १ समद्रष्टि एवं १५

संज्ञी, असंज्ञी, तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदि में २३ पदवियों में की जो २ पदवी मिले उस पर ५५ बोल।

१ संज्ञी में १५ पदवी मिले, सात एकेन्द्रिय रत्न और १ केवली नहीं मिले।

२ असंज्ञी में आठ पदवी मिले, सात एकेन्द्रिय रत्न और १ समकित एवं आठ।

३ तीर्थंकर में ६ पदवी पावे—१ तीर्थंकर २ चक्रवर्ती ३ केवली ४ साधु ५ समकित ६ मांडलिक राजा।

४ चक्रवर्ती में ६ पदवी पावे—तीर्थंकर के समान।

५ वासुदेव में ३ पदवी पावे—१ वासुदेव २ मांडलिक ३ समकित।

६ बलदेव में ५ पदवी पावे—१ बलदेव २ केवली ३ साधु ४ समकित ५ मांडलिक।

७ मांडलिक में ९ पदवी पावे—नव उत्तम पदवी।

८ मनुष्य में १३ पदवी पावे—नव उत्तम पदवी १० सेनापति ११ गाथापति १२ वार्धिक १३ पुरोहित एवं १३ पदवी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९ मनुष्यणी में ५ पदवी पावे-१ स्त्री रत्न २ श्राविका ३ समकित ४ साध्वी ५ केवली।

१० तिर्यंच में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न ८ गज ९ अश्व १० श्रावक ११ समकित।

११ तिर्यंचणी में २ पदवी पावे-१ समकित २ श्रावक।

१२ संवेदी में २२ पदवी पावे-केवली नहीं।

१३ स्त्री वेद में चार पदवी पावे-१ स्त्री रत्न २ श्राविका ३ समकित ४ साध्वी।

१४ पुरुष वेद में १४ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न केवली और स्त्री रत्न ये नव छोड़ शेष (२३-९) १४ पदवी।

१५ अवेदी में ४ पदवी पावे-१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित।

१६ नरक गति में एक पदवी पावे-समकित की।

१७ तिर्यंच गति में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न ८ गज ९ अश्व १० श्रावक ११ समकित।

१८ मनुष्य गति में १४ पदवी पावे-नव उत्तम पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अश्व छोड़ शेष ५ एवं (९+५) १४ पदवी।

१९ देवगति में एक पदवी पावे-समकित की।

२० आठ कर्म वेदक में २१ पदवी पावे-तीर्थंकर और केवली ये दो नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१ सात कर्म वेदक में २ पदवी पावे-साधु और श्रावक।

२२ चार कर्म वेदक में चार पदवी पावे-१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित।

२३ जघन्य अवगाहना में १ पदवी पावे-समकित की।

२४ मध्यम अवगाहना में १४ पदवी पावे-नव उत्तम पुरुष, पांच पंचेन्द्रिय रत्न-गज अश्व छोड़ कर-एवं ९+५ १४ पदवी पावे।

२५ उत्कृष्ट अवगाहना में एक पदवी पावे-समकित।

२६ अढाई द्वीप में २३ पदवी पावे।

२७ अढाई द्वीप के बाहर ४ पदवी पावे-१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित।

२८ भरत क्षेत्र में मध्यम पदवी ८ पावे-नव उत्तम पदवी में से चक्रवर्ती छोड़ शेष ८ पदवी।

२९ भरत क्षेत्र में उत्कृष्ट २१ पदवी पावे-वासुदेव, बलदेव नहीं।

३० उर्ध्व लोक में ५ पदवी पावे-१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित ५ मांडलिक राजा।

३१ अधः लोक तथा तिर्यक् (तिर्छे) लोक में २३ पदवी पावे।

३२ स्वयं लिङ्ग में ४ पदवी पावे-१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ श्रावक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३ अन्य लिङ्ग में ४ पदवी पावे–१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित ।

३४ गृहस्थ लिङ्ग मनुष्य में १४ पदवी पावे–नव उत्तम पदवी, और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अश्व को छोड़ शेष पांच एवं (९+५) १४ पदवी ।

३५ संमूर्छिम में ८ पदवी पावे–सात एकेन्द्रिय रत्न और एक समकित ।

३६ गर्भज में १६ पदवी पावे–२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़ शेष १६ पदवी ।

३७ अगर्भज में ८ पदवी पावे–संमूर्छिम समान ।

३८ एकेन्द्रिय में ७ पदवी पावे–सात एकेन्द्रिय रत्न।

३९ तीन विकलेन्द्रिय में १ पदवी पावे–समकित

४० पंचेन्द्रिय में १५ पदवी पावे–२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न और केवली–ये आठ नहीं ।

४१ अनिन्द्रिय में ४ पदवी पावे १ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित ।

४२ संयति में ४ पदवी पावे–अनिन्द्रिय समान ।

४३ असंयति में २० पदवी पावे–२३ में से १ केवली २ साधु ३ श्रावक ये तीन छोड़ शेष २० पदवी ।

४४ संयता संयति में १० पदवी पावे–स्त्री को छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न ७ बलदेव ८ श्रावक ९ समकित १० मांडलिक ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५ समकित दृष्टि में १५ पदवी पावे-२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न और स्त्री छोड़ शेष १५ पदवी ।

४६ मिथ्या दृष्टि में १७ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न, सात पंचेन्द्रिय रत्न, १४; १५ चक्रवर्ती १६ वासु-देव १७ मांडलिक।

४७ मति, श्रुत और अवधि ज्ञान में १४ पदवी पावे-केवली छोड़ शेष ८ उत्तम पदवी, स्त्री को छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न एवं (८×६) १४ पदवी ।

४८ मनः पर्यव ज्ञान में ३ पदवी पावे १ तीर्थंकर २ साधु ३ समकित ।

४९ केवल ज्ञान केवल दर्शन में ४ पदवी पावे १ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित ।

५० मति श्रुत अज्ञान में १७ पदवी पावे-सात एके-न्द्रिय रत्न, सात पंचेंद्रिय रत्न, १४; १५ चक्रवर्ती १६ वासुदेव १७ मांडलिक ।

५१ विभङ्ग ज्ञान में ९ पदवी पावे-स्त्री को छोड़ शेष ६ पचेन्द्रिय रत्न, ७ चक्रवर्ती ८ वासुदेव ९ मांडलिक ।

५२ चक्षु दर्शन में १५ पदवी पावे-केवली को छोड़ शेष ८ उत्तम पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न एवं १५ पदवी ।

५३ अचक्षु दर्शन में २२ पदवी पावे-केवली नहीं ।

५४ अवधि दर्शन में १४ पदवी पावे-केवली को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छोड़ शेष ८ उत्तम पदवी, और स्त्री को छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न एवं सर्व १४ पदवी।

५५ नपुंसक लिङ्ग में ५ पदवी पावे १ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित ५ मांडलिक।

॥ इति तेंवीश पदवी सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पांच शरीर

श्री प्रज्ञप्तिजी (पन्नवणा) सूत्र के २१ वें पदमें वर्णित पांच शरीर का विवेचन ।

सोलह द्वार

१ नाम द्वार २ अर्थ द्वार ३ संस्थान द्वार ४ स्वामी द्वार ५ अवगाहना द्वार ६ पुद्गल चयन द्वार ७ संयोजन द्वार ८ द्रव्यार्थक द्वार ९ प्रदेशार्थक द्वार १० द्रव्यार्थक प्रदेशार्थक द्वार ११ सूक्ष्म द्वार १२ अवगाहना अल्प बहुत्व द्वार १३ प्रयोजन द्वार १४ विषय द्वार १५ स्थिति द्वार १६ अन्तर द्वार ।

१ नाम द्वार

१ औदारिक शरीर २ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तेजस् शरीर ५ कार्मण शरीर ।

२ अर्थ द्वार

१ उदार अर्थात् सब शरीरों से प्रधान, तीर्थंकर, गणधर आदि पुरुषों को मुक्ति पद प्राप्त कराने में सहायीभूत, उदार कहेता सहस्र योजन मान शरीर इससे इसे औदारिक शरीर कहते हैं ।

२ वैक्रिय-जिसमें रुप परिवर्तन करने की शक्ति तथा एकके अनेक छोटे बड़े खेचर भूचर द्रश्य अद्रश्य

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

आदि विविध रूप विविध क्रिया से बनावे उसे वैक्रिय शरीर कहते हैं इसके दो भेद।

१ भव प्रत्यायिक–जो देवता व नेरियों के स्वभाविक ही होता है।

२ लब्धि प्रत्यायिक–जो मनुष्य तिर्यंच को प्रयत्न से प्राप्त होवे।

३ आहारिक शरीर–जो चौदह पूर्वधारी महात्माओं को तपश्चर्यादिक योग द्वारा जब लब्धि उत्पन्न होवे तो तीर्थंकर देवाधिदेव की ऋद्धि देखने को व मन की शङ्का निवारण करने को, उत्तम पुद्गलों का आहार लेकर, जघन्य पोन हाथ का व उत्कृष्ट एक हाथ का, स्फटिक समान सफेद व कोई न देख सके ऐसा शरीर बनाते है। जिससे इसे आहारिक शरीर कहते हैं।

४ तैजस् शरीर–जो तेज के पुद्गलों से अदृश्य व भुक्त (खाये हुवे) आहार को पचावे तथा लब्धिवंत तेजो लेश्या छोडे उसे तैजस् शरीर कहते है।

५ कार्मण कर्म के पुद्गल से उत्पन्न होने वाला व जिसके उदय से जीव पुद्गल ग्रहण करके कर्मादि रूप में परिणमावे तथा आहार को खेंवे उसे कार्मण शरीर कहते हैं।

३ संस्थान द्वार

औदारिक शरीर में संस्थान ६–१ समचतुरस्र संस्थान २ न्यग्रोध परिमंडल संस्थान ३ सादिक संस्थान ४ वामन संस्थान ५ कुब्ज संस्थान ६ हुंड संस्थान।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२ वैक्रिय में-(भव प्रत्ययिक में) देव में सम चतु-रस्र् संस्थान व नेरियों में हुंड संस्थान (लब्धि प्रत्ययिक में) मनुष्य में व तिर्यंच में सम चतुरस्र् सस्थान व अनेक प्रकार का-वायु में हुंड संस्थान।

३ आहारिक शरीर में-स चतुरस्र् संस्थान।

४-५ तैजस् व कार्मण में ६ संस्थान।

४ स्वामी द्वार।

१ औदारिक शरीर का स्वामी-मनुष्य व तिर्यंच।

२ वैक्रिय शरीर का स्वामी--चार ही गति के जीव।

३ आहारिक शरीर का स्वामी--चौदह पूर्व धारी मुनि

४-५ तैजस कार्मण शरीर के स्वामी--सर्व संसारी जीव।

अवगाहना द्वार।

१ औदारिक शरीर की अवगाहना जघन्य आङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन की।

२ वैक्रिय शरीर की अवगाहना जघन्य आङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट लक्ष योजन जाजेरी (अधिक)।

३ आहारिक शरीर की अवगाहना जघन्य एक हाथ न्यून उत्कृष्ट एक हाथ की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४-५ तेजस्, कार्मण शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चौदह राज लोक प्रमाण।

पुद्गल चयन द्वार ।

(आहार कितनी दिशाओं का लेवे)

औदारिक, तेजस्, कार्मण शरीर वाला तीन चार पांच यावत् छै दिशाओं का आहार लेवे ।

वैक्रिय और आहारिक शरीर वाला छः दिशाओं का लेवे ।

७ संयोजन द्वार ।

१ औदारिक शरीर में आहारिक वैक्रिय की भजना (होवे और नहीं भी होवे), तेजस् कार्मण की नियमा (जरूर होवे) ।

२ वैक्रिय शरीर में औदारिक की भजना, आहारिक नहीं होवे व तैजस् कार्मण की नियमा ।

३ आहारिक शरीर में वैक्रिय नहीं होवे, औदारिक, तैजस्, कार्मण होवे ।

४ तेजस् शरीर में औदारिक, वैक्रिय आहारिक की भजना तैजस् की नियमा ।

५ कार्मण शरीर में औदारिक, वैक्रिय आहारिक की भजना तैजस् की नियमा ।

८ द्रव्यार्थक द्वार ।

१ सर्व से थोड़ा आहारिक का द्रव्य जघन्य १-२-३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट पृथक् हजार । इससे वैक्रिय के द्रव्य असंख्यात गुणा इससे औदारिक के द्रव्य असंख्यात गुणा इससे तैजस् कार्मण के द्रव्य--ये दोनों परस्पर बराबर व औदारिक से अनंत गुणा अधिक ।

९ प्रदेशार्थक द्वार ।

१ सर्व से थोड़ा आहारिक का प्रदेश इससे वैक्रिय का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से औदारिक का असंख्यात गुणा इस से तैजस् का अनंत गुणा व इस से कार्मण का अनंत गुणा अधिक ।

१० द्रव्यार्थक प्रदेशार्थक द्वार ।

सर्व से थोड़ा आहारिक का द्रव्यार्थ इस से वैक्रिय का द्रव्यार्थ असंख्यात गुणा उससे औदारिक का द्रव्यार्थ असंख्यात गुणा इस से आहारिक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से वैक्रिय का प्रदश असंख्यात गुणा इस से औदारिक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से तैजस्, कार्मण इन दोनों का द्रव्यार्थ परस्पर समान व औदारिक से अनन्त गुणा अधिक इस से तैजस् का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक इस से कार्मण का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक ।

११ सूक्ष्म द्वार ।

१ सर्व से स्थूल (मोटे) औदारिक शरीर के पुद्गल इस से वैक्रिय शरीर के पुद्गल सूक्ष्म इस से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहारिक शरीर के पुद्गल सूक्ष्म इस से तैजस् शरीर के पुद्गल सूक्ष्म व इस से कार्मण शरीर के पुद्गल सूक्ष्म ।

१२ अवगाहना का अल्प बहुत्व द्वार ।

सब से जघन्य औदारिक शरीर की जघन्य अवगाहना इस से तैजस् कार्मण की जघन्य अवगाहना परस्पर बराबर व औदारिक से विशेष वैक्रिय की जघन्य अवगाहना असंख्यात गुणी इस से आहारिक की जघन्य अवगाहना असंख्यात गुणी इस से आहारिक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेष इससे औदारिक की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात गुणी इस से वैक्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात गुणी इस से तैजस् कार्मण उत्कृष्ट अवगाहना परस्पर बराबर व वैक्रिय से असंख्यात गुणी अधिक ।

१३ प्रयोजन द्वार ।

१ औदारिक शरीर का प्रयोजन मोक्ष प्राप्ति में सहायी भूत होना २ वैक्रिय शरीर का प्रयोजन विविध रूप बनाना ३ आहारिक शरीर का प्रयोजन संशय निवारण करना ४ तैजस शरीर का प्रयोजन पुद्गलों का पाचन करना ५ कार्मण शरीर का प्रयोजन आहार तथा कर्मों को आकर्षण (खेंचना) करना ।

१४ विषय (शक्ति) द्वार ।

औदारिक शरीर का विषय पन्द्रहवा रुचक नामक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वीप तक जानेका (गमन करने का) २ वैक्रिय शरीर का विषय असंख्य द्वीप समुद्र तक जानेका ३ आहारिक शरीर का विषय अढाई द्वीप समुद्र तक जाने का ४ तैजस कार्मण का विषय सर्व लोक में जाने का।

५ स्थिति द्वार।

औदारिक शरीर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम की २ वैक्रिय शरीर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की ३ आहारिक शरीर की अन्तर्मुहूर्त की ४ तैजस कार्मण शरीर की स्थिति दो प्रकार की--अभव्य आश्री आदि अन्त रहित २ मोक्ष गामी आश्री अनादि सान्त (आदि नहीं परन्तु अन्त है)।

१६ अन्तर द्वार।

औदारिक शरीर छोड़ कर फिर औदारिक शरीर प्राप्त करने में अन्तर पड़े तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त व उत्कृष्ट ३३ सागरोपम २ वैक्रिय शरीर छोड़ कर फिर वैक्रिय शरीर पाने में अन्तर पड़े तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनन्त काल ३ आहारिक शरीर में अन्तर पड़े तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन काल से कुछ न्यून ४--५ तैजस, कार्मण शरीर में अन्तर नहीं पड़े अन्तर द्वार का दूसरा अर्थ--आहारिक शरीर को छोड़ शेष शरीर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक में सदा पावे--आहारिक शरीर की भजना (होवे और नहीं भी होवे) नहीं होवे तो उत्कृष्ट ६ माह का अन्तर पड़े ।

॥ इति पांच शरीर सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पांच इन्द्रिय

श्री प्रज्ञापना सूत्र के पन्द्रहवें पद के प्रथम उद्देशे में पांच इन्द्रिय का विस्तार ११ द्वार के साथ कहा है।

गाथा (११ द्वार)

संठाणं[1] बाहुल्लं[2] पोहत्तं[3] कइपएस[4] उगाढे[5];
अप्पबहु[6] पुठ[7] पविठे[8] विसय[9] अणगार[10] आहारे[11]

पांच इन्द्रिय

१ श्रोत्रेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय।

१ संस्थान द्वार:—१ श्रोत्रेन्द्रिय का संस्थान (आकार) कदम्ब वृक्ष के फूल समान २ चक्षु इन्द्रिय का संस्थान मसूर की दाल समान ३ घ्राणेन्द्रिय का संस्थान धमण समान ४ रसेन्द्रिय का संस्थान छूरपना की धार समान ५ स्पर्शेन्द्रिय का संस्थान नाना प्रकार का।

२ बाहुल्य (जाड़ पना) द्वार

पांच इन्द्रिय का बाहुल्य जघन्य उत्कृष्ट आङ्गुल के असंख्यातवें भाग का।

३ पृथुत्व (लम्बाई) द्वार

१ श्रोत्र २ चक्षु और ३ घ्राण। इन तीन इन्द्रियों की लम्बाई जघन्य उत्कृष्ट आङ्गुल के असंख्यातवें भाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की। ४ रसेन्द्रिय की लम्बाई जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट पृथक् (२ से ६) आंगुल की। ५ स्पर्शेन्द्रिय की लम्बाई जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन से कुछ विशेष।

४ प्रदेश द्वार

पांच इन्द्रिय के अनंत प्रदेश होते हैं।

अवगाह द्वार

पांच इन्द्रियों में से प्रत्येक इन्द्रिय में आकाश प्रदेश असंख्यात असंख्यात अवगाह्य हैं।

प्रत्येक इन्द्रिय का अनन्त अनन्त कर्कश व भारी स्पर्श है व वैसे ही अनन्त अनन्त हलका व मृदु स्पर्श है।

६ अल्प बहुत्व द्वार

१ सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय के प्रदेश इससे श्रोत्रेन्द्रिय के प्रदेश संख्यात गुणे इससे घ्राणेन्द्रिय के प्रदेश संख्यात गुणे इससे रसेन्द्रिय के प्रदेश असंख्यात गुणे व इससे स्पर्शेन्द्रिय के प्रदेश संख्यात गुणे।

आकाश प्रदेश अवगाहना का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम चक्षुइन्द्रिय का अवगाह्या आकाश प्रदेश इससे श्रोत्रेन्द्रिय का अवगाह्या आकाश प्रदेश संख्यात गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अवगाह्या आकाश प्रदेश संख्यात गुणा इससे रसेन्द्रिय का अवगाह्या आकाश प्रदेश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंख्यात गुणा व स्पर्शेन्द्रिय का अवगाह्य आकाश प्रदेश संख्यात गुणा ।

प्रदेश और अवगाह्य दोनों का अल्प बहुत्व

सर्व से कम चक्षुइन्द्रिय का अवगाह्य आकाश प्रदेश इससे श्रोत्रेन्द्रिय का संख्यात गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अवगाह्य संख्यात गुणा इससे रसेन्द्रिय का अवगाह्य असंख्यात गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का अवगाह्य संख्यात गुणा इससे चक्षु इन्द्रिय का प्रदेश अनन्त गुणा इससे श्रोत्रेन्द्रिय का प्रदेश संख्यात गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का प्रदेश संख्यात गुणा इससे रसेन्द्रिय का प्रदेश असंख्यात गुणा व इससे स्पर्शेन्द्रिय का प्रदेश असंख्यात गुणा ।

कर्कश व भारी स्पर्श का अल्प बहुत्व

सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय का कर्कश व भारी स्पर्श इससे श्रोत्रेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का अनन्त गुणा ।

हलका व मृदु स्पर्श का अल्प बहुत्व

सर्व से कम स्पर्शेन्द्रिय का हलका व मृदु स्पर्श, इस से रसेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे श्रोत्रेन्द्रिय का अनन्त गुणा व इससे चक्षु इन्द्रिय का अनन्त गुणा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्कश भारी, लघु (हलका) मृदु स्पर्श का एक साथ अल्प बहुत्व—सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय का कर्कश भारी स्पर्श इससे श्रोत्रेन्द्रिय का कर्कश भारी स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे श्रोत्रेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा व इससे चक्षु इन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा।

७ पृष्ट द्वार

जो पुद्गल इन्द्रियों को आकर स्पर्श करते हैं उन पुद्गलों को इन्द्रियें ग्रहण करती हैं पांच इन्द्रियों में से चक्षु इन्द्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रियों को पुद्गल आकर स्पर्श करते हैं। चक्षु इन्द्रिय को आकर नहीं स्पर्श करते हैं।

८ प्रविष्ट द्वार

जिन इन्द्रियों के अन्दर अभिमुख (सामां) पुद्गल आकर प्रवेश करते हैं उसे प्रविष्ट कहते हैं। पांच इन्द्रियों में से चक्षु इद्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रिय प्रविष्ट हैं व चक्षु इन्द्रिय अप्रविष्ट है।

९ विषय द्वार (शक्ति द्वार)

प्रत्येक जाति की प्रत्येक इन्द्रिय का विषय जघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट नीचे अनुसार।

जाति पांच	श्रोत्रेन्द्रिय	चक्षुइंद्रिय	घ्राणेन्द्रिय	रसेन्द्रिय	स्पर्श.
एकेन्द्रिय	०	०	०	०	४०० ध०
बे इन्द्रिय	०	०	०	६४ ध०	८०० ध०
त्रि इन्द्रिय	०	०	१०० ध०	१२८ ध०	१६०० ध.
चौइन्द्रिय	०	२९५४ यो.	२०० ध०	२५६ ध.	३२०० ध.
असंज्ञी प.	१ योजन	५९०८ यो.	४०० ध०	५१२ ध.	६४०० ध.
संज्ञी पं०	१२ योजन	१ ला.यो.जा.	९ यो.	९ यो०	९ योजन

१० अनाकार द्वार (उपयोग)

जघन्य उपयोग काल का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल इस से श्रोत्रेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इससे रसेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष।

उत्कृष्ट उपयोग काल का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम चक्षुइन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल इस से श्रोत्रेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इससे रसेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष।

उपयोग जघन्य उत्कृष्ट दोनों का एक साथ अल्प बहुत्व।

सर्व से कम चक्षुइन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस से श्रोत्रेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इससे रसेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से चक्षुइन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से श्रोत्रेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से रसेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष ।

११ वां आहार द्वार सूत्र श्री प्रज्ञापना में से जानना ।

❀ इति पांच इन्द्रिय सम्पूर्ण ❀

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पी अरूपी का बोल

गाथाः-

कम्मठ पाविठाणा य, मण वय जोगा य कम देहे;
सुहुम प्पएसी खन्धे, ए सव्वे चउ फासा ॥ १ ॥

अर्थ--कर्म (१ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र ८ अन्तराय) आठ ८; पाप स्थानक (१ प्राणातिपात २ मृषावाद ३ अदत्तादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ९ लोभ १० राग ११ द्वेश १२ क्लेश १३ अभ्याख्यान १४ पिशुन १५ पर परिवाद १६ रति अरति १७ माया मृषा १८ मिथ्या दर्शन शल्य) अठारह, २६; २७ मन योग २८ वचन योग २९ कार्मण शरीर और सूक्ष्म प्रदेशी स्कन्ध । एवं सर्व तीश बोल रूपी चउ स्पर्शी है । इनमें सोलह सोलह बोल पावे । पांच वर्ण (१ कृष्ण २ नील ३ रक्त ४ पीत ५ श्वेत), दो गन्ध (६ सुरभि गन्ध ७ दुरभि गन्ध), पांच रस (८ तीक्ष्ण ९ कटु १० कषायला ११ खट्टा १२ मीठा), चार स्पर्श (१३ शीत १४ उष्ण १५ रूक्ष १६ स्निग्ध) ।१।

गाथाः--

घण तण वाय, घनोदहि, पुढविसतेव सतनिरीयाणं;
असंखेज दिव, समुदा, कप्पा, गेवीजा अणुत्तरा सिद्धि ॥२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थः--१ घनवात २ तनुवात ३ घनोदधि, पृथ्वी सात--१०, ११ असंख्यात द्वीप १२ असंख्यात समुद्र, बारह देव लोक २४, नव ग्रीयवेक ३३, पांच अनुत्तर विमान ३८, सिद्धि शिला--३६ ।२।

गाथाः--

उरालिया चउदेहा, पोगल काय छ दव्व लेस्सा य;
तहेव काय जोगेणं ए सव्वेणं अट्ठ फासा ॥३॥

अर्थः--४० औदारिक शरीर ४१ वैक्रिय शरीर ४२ आहारिक शरीर ४३ तैजस् शरीर एवं चार देह--४४पुद्गलास्ति काय का बादर स्कन्ध, ६ द्रव्य लेश्या (१कृष्ण, २ नील ३ कापोत ४ तेजो ५ पद्म ६ शुक्ल) ५०, ५१ काय योग एवं सर्व ५१ बोल रूपी आठ स्पर्श हैं । इनमें वीस वीस बोल पावे । पांच वर्ण--दो गन्ध--७, पांच रस-१२, आठ स्पर्श--१३ शीत १४ उष्ण १ लूखा (रूक्ष) १६ स्निग्ध १७ गुरु (भारी) १८ लघु (हलका) १६ खरखरा २० सुवांल (मृदु-कोमल) ।३।

गाथा--

पाव ठाणा विरइ, चउ चउ बुद्धि उग्गहे;
सन्ना धम्मथी पंच उठाणं, भाव लेस्साति दिठीय ॥४॥

अर्थ--अठारह पाप स्थानक की विरति (पाप स्थानक से निवर्त होना) १८, चार बुद्धि--१६ औत्पातिका २० कामीया २१ विनया २२ परिणामीया; चार मति-

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

२३ अवग्रह २४ इहा २५ अवाय २६ धारणा; चार संज्ञा- २७ आहार संज्ञा २८ भय संज्ञा २६ मैथुन संज्ञा ३० परिग्रह संज्ञा; पंचास्तिकाय-३१ धर्मास्तिकाय ३२ अधर्मास्ति काय ३३ आकाशास्ति काय ३४ काल और ३५ जीवास्ति काय, पांच उठाण-३६ उत्थान ३७ कर्म ३८ वीर्य ३६ बल और ४० पुरुषाकार पराक्रम ६ भाव लेश्या-४६, और तीन दृष्टि-४७ समकित दृष्टि ४८ मिथ्या दृष्टि ४६ मिश्र दृष्टि ।४।

गाथा—

दंसण नाण सागरा अणागारा चउवीसे दंडगा जीव;
ए सव्वे अवन्ना अरूवी अकासगा चेव ॥५॥

अर्थ-दर्शन चार-५० चक्षु दर्शन ५१ अचक्षु दर्शन ५२ अवधि दर्शन ५३ केवल दर्शन, ज्ञान पांच- ५४ मति ज्ञान ५५ श्रुत ज्ञान ५६ अवधि ज्ञान ५७ मनः पर्यव ज्ञान ५८ केवल ज्ञान ५६ ज्ञान का उपयोग सो साकार उपयोग ६० दर्शन का उपयोग सो अनाकार उप योग ६१ चउवीशही दण्डक के जीव ।

एवं सर्व ६१ बोल में वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श कुछ नहीं पावे कारण कि ये सर्व बोल अरूपी के हैं ।

॥ इति रूपी अरूपी का बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* बड़ा बांसठीया *

गाथा

जीव गई इन्दिय काय जोग वेदय कसाय लेस्सा ;
सम्मत नाण दंसण संजय उवओग आहारे १
भासग परित पज्जत्त सुहुम सन्नी भवथिथय ;
चरिम तेसिं पयाणं, बासठीय होई नायव्वा २

एवं २१ द्वार की दो गाथा इसका विस्तारः-

१ समुच्चय जीव द्वार का एक भेद

२ गति द्वार के आठ भेद

१ नरक की गति २ तिर्यंच की गति ३ तिर्यंचनी की गति ४ मनुष्य की गति ५ मनुष्यानी की गति ६ देव की गति ७ देवाङ्गना की गति ८ सिद्ध की गति ।

३ इन्द्रिय द्वार के सात भेद

१ सइन्द्रिय २ एकेन्द्रिय ३ बेइंद्रिय ४ त्रिइंद्रिय ५ चौरिंद्रिय ६ पंचेंद्रिय ७ अनिंद्रिय ।

४ काय द्वार के आठ बोल

१ सकाय २ पृथ्वी काय ३ अपकाय ४ तेजस् काय वायु काय ६ वनस्पति काय ७ त्रस काय ८ अकाय ।

५ योग द्वार के पांच बोल

१ सयोग २ मन योग ३ बचन योग ४ काय योग ५ अयोग ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ वेद द्वार के पांच बोल

१ सवेद २ स्त्री वेद ३ पुरुष वेद ४ नपुंसक वेद ५ अवेद ।

७ कषाय द्वार के छः बोल

१ सकषाय २ क्रोध कषाय ३ मान कषाय ४ माया कषाय ५ लोभ कषाय ६ अकषाय ।

८ लेश्या द्वार के आठ बोल

१ सलेश्या २ कृष्ण लेश्या ३ नील लेश्या ४ कापोत लेश्या ५ तेजो लेश्या ६ पद्म लेश्या ७ शुक्ल लेश्या ८ अलेश्या ।

६ समकित द्वार के तीन बोल

१ समकित २ मिथ्यात्व ३ समभिथ्यात्व (मिश्र)

१० ज्ञान द्वार के दश बोल

१ समुच्चय ज्ञान २ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान ४ अवधि ज्ञान ५ मनः पर्यव ज्ञान ६ केवल ज्ञान ७ समुच्चय अज्ञान ८ मति अज्ञान ६ श्रुत अज्ञान १० विभंग ज्ञान ।

११ दर्शन द्वार के चार बोल

१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन ।

१२ संयति द्वार के नव बोल

१ समुच्चय संयति २ सामायिक चारित्र ३ छेदोपस्थानिक चारित्र ४ परिहार विशुद्ध चारित्र ५ सूक्ष्म संपराय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारित्र ६ यथाख्यात चारित्र ७ संयता संयति ८ असंयति ९ नो संयति--नो असंयति नो संयता संयति ।

१३ उपयोग द्वार के दो बोल

१ साकार उपयोग (साकार ज्ञानोपयोग) २ अनाकार उपयोग (अनाकार दर्शनोपयोग) ।

१४ आहार द्वार के दो बोल

१ आहारिक २ अनाहारिक ।

१५ भाषक द्वार के दो बोल

१ भाषक २ अभाषक ।

१६ परित द्वार के तीन बोल

१ परित २ अपरित ३ नोपरित नोअपरित ।

१७ पर्याप्त द्वार के तीन बोल

१ पर्याप्त २ अपर्याप्त ३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त ।

१८ सूक्ष्म द्वार के तीन बोल

१ सूक्ष्म २ बादर ३ नोसूक्ष्म नो बादर ।

१९ संज्ञी द्वार के तीन बोल

१ संज्ञी २ असंज्ञी ३ नो संज्ञी नो असंज्ञी ।

२० भव्य द्वार के तीन बोल

१ भव्य २ अभव्य ३ नो भव्य नो अभव्य ।

२१ चरिम द्वार के दो बोल

१ चरम २ अचरम ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं २१ द्वार के बोल पर बासठ बोल उतारे हैं।

बासठ बोल की विगतः-जीव के १४ भेद, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६, एवं सर्व मिल कर ६१ बोल और एक अल्प बहुत्व का एवं ६२ बोल।

१ समुच्चय जीव का द्वार

१ समुच्चय जीव में-जीव के १४ भेद, गुणस्थानक १४ योग १५ उपयोग १२, लेश्या ६।

२ गति द्वार

१ नारक गति में-जीव के भेद तीन-संज्ञो का अपर्याप्त और पर्याप्त व असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त। गुण स्थानक ४ प्रथम के, योग ग्यारा ४ मन के ४ वचन के, १ वैक्रिय १ वैक्रियमिश्र, १ कार्मण काय एवं ११, उपयोग ९-३ ज्ञान, ३ अज्ञान ३ दर्शन; लेश्या ३ प्रथम।

२ तिर्यंच गति में-जीव के भेद १४, गुणस्थानक ५ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर) उपयोग ९-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन; लेश्या ६।

३ तिर्यंचनी में-जीव के भेद २-संज्ञी का। गुणस्थानक ५ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर। उपयोग ९-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन; लेश्या ६।

४ मनुष्य गति में-जीव के भेद ३-संज्ञी के दो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और १ असंज्ञी पंचेंद्रिय का अपर्याप्त एवं ३, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

५ **मनुष्यनी** में-जीव के भेद २-संज्ञी का । गुणस्थानक १४, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

६ देव गति में-जीव के भेद ३-दो संज्ञी के और १ असंज्ञी पंचेंद्रिय का अपर्याप्त एवं ३ गुणस्थानक ४ प्रथम, योग ११-४ मनके, ४ वचन के, २ वैक्रिय के और १ कार्मण काय एवं ११, उपयोग ९-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन एवं ९, लेश्या ६ ।

७ देवाङ्गना में-जीव के भेद २-संज्ञी का, गुणस्थानक ४ प्रथम, योग ११-४ मन का, ४ वचन का, २ वैक्रिय का १ कार्मण काय, उपयोग ९-३ अज्ञान, ३ ज्ञान, ३ दर्शन एवं ९, लेश्या ४ प्रथम ।

सिद्ध गति में-जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २--केवल ज्ञान और केवल दर्शन, लेश्या नहीं ।

नरक गति प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

सर्व से कम मनुष्यनी उससे मनुष्य असंख्यात गुणा (संमुर्छिम के मिलने से) उससे नेरिये असंख्यात गुणा उससे तिर्यंचानी असंख्यात गुणी उससे देव असं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ख्यात गुणा उससे देवाङ्गना संख्यात गुणी व उससे सिद्ध अनन्त गुणा व उनसे तिर्यंच अनन्त गुणा।

३ इन्द्रिय द्वार

१ सइन्द्रिय में--जीव के भेद १४, गुणस्थानक १२ प्रथम, योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर। लेश्या ६।

२ एकेन्द्रिय में—जीव के भेद ४ प्रथम। गुणस्थानक १ प्रथम योग ५ -२औदारिक का, २ वैक्रिय का १ कार्मण काय। उपयोग ३--२ अज्ञान का और १ अचक्षु दर्शन लेश्या ४ प्रथम।

बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय--इनमें जीव के भेद दो दो, अपर्याप्त और पर्याप्त। गुणस्थानक २ प्रथम। योग ४--२ औदारिक का १ कार्मण काय १ व्यवहार वचन उपयोग बेइन्द्रिय में पांच उपयोग--२ ज्ञान अज्ञान--२ दर्शन--चक्षु दर्शन और अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ प्रथम।

पंचेन्द्रिय में—जीव के भेद ४--संज्ञी पंचेंद्रिय और असंज्ञी पंचेंद्रिय इन दो का अपर्याप्त और पर्याप्त। गुण स्थानक १२ प्रथम योग १५ उपयोग १०--केवल के दो छोड़ कर। लेश्या ६।

अनिन्द्रिय में--जीव का भेद १--संज्ञी का पर्याप्त। गुणस्थानक २-- (१३ वां और १४ वां), योग ७-१ सत्य मन २ व्यवहार मन ३ सत्य वचन ४ व्यवहार वचन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ औदारिक मिश्र ७ कार्मण काय । उपयोग २--केवल दर्शन । लेश्या १--शुक्ल ।

सइन्द्रिय प्रमुख सात बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम पंचेन्द्रिय २ इससे चोरिन्द्रिय विशेषाधिक ३ इससे त्रिइन्द्रिय विशेषाधिक ४ इससे बेइन्द्रिय विशेषाधिक ५ इससे अनिन्द्रिय अनन्त गुणे(सिद्ध आश्री) ६ इससे एकेन्द्रिय अनंत गुणे (वनस्पति आश्री) ७ इससे सइन्द्रिय विशेषाधिक ।

४ काय द्वार

१ सकाय में-जीव के भेद १४ गुण स्थानक १४ योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६

२-३-४ पृथ्वी काय, अप्काय वनस्पति कायः-इन तीनों में जीव के भेद ४ सूक्ष्म एकेन्द्रिय व बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्त और पर्याप्त एवं ४ गुण स्थानक १ प्रथम योग ३ दो औदारिक का और १ कार्मण काय उपयोग ३-२ अज्ञान और १ अचक्षु दर्शन लेश्या ४ प्रथम ।

५-६ तैजस् काय, वायु कायः-में जीव के भेद ४ पृथ्वी वत्, गुण स्थानक १ प्रथम, योग तैजस् में ३ पृथ्वी वत् वायु में ५-दो औदारिक का और दो वैक्रिय का, एक कार्मण उपयोग ३ पृथ्वी वत् लेश्या ३ प्रथम ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७ त्रस काय में-जीव के भेद १०-एकेंद्रिय के चार छोड़ कर। गुण स्थानक १४, योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६।

८ अकाय में-जीव के भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २ केवल के, लेश्या नहीं।

सकाय प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम त्रस काय २ इससे तैजस् काय असंख्यात गुणा ३ इससे पृथ्वी काय विशेषाधिक ४ इससे अप् काय विशेषाधिक ५ इससे वायु काय विशेषाधिक ६ इससे अकाय अनन्त गुणा ७ इससे वनस्पति काय अनंत गुणा ८ इससे सकाय विशेषाधिक।

५ योग द्वार

सयोग में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम योग १५ उपयोग १२, लेश्या ६।

२ मन योग में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक १३, योग १४, कार्मण का छोड़ कर, उपयोग १२ लेश्या ६।

३ वचन योग में जीव के भेद ५-बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय एवं ५ का पर्याप्त गुण स्थानक १३, योग १४ कार्मण छोड़ कर उपयोग १२ लेश्या ६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ काय योग मेंः-जीव के भेद १४ गुणस्थानक १३ योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६।

५ अयोग मेंः-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक १-चौदहवां योग नहीं, उपयोग २-केवल के लेश्या नहीं।

सयोग प्रमुख पांच बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम मन योगी २ इस से वचन योगी असख्यात गुणे ३ इस से अयोगी अनन्त गुणे ४ इस से काय योगी अनन्त गुणे ५ इस से सयोगी विशेषाधिक।

६ वेद द्वार

१ सवेद में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक ९ प्रथम योग १५, उपयोग १०- केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६

२ स्त्री वेद में-जीव के भेद २- संज्ञी का गुण स्थानक ९ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६।

३ पुरुष वेद मेंः-जीव के भेद २ संज्ञी के गुण स्थानक ९ प्रथम योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६।

४ नपुंसक वेद मेंः-जीव के भेद १४, गुण स्थानक ९ प्रथम, योग १५, उपयोग १०-केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवेद में—जीव का भेद १-संज्ञी का पर्याप्त, गुण-स्थानक ६ नवर्वे से चौदहवें तक, योग ११-४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के, १ कार्मण; उपयोग ६-पांच ज्ञान का और ४ दर्शन का लेश्या १ शुक्ल।

सवेद प्रमुख पांच बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम पुरुष वेदी २ इस से स्त्री वेदी संख्यात गुणा ३ इस से अवेदी अनन्त गुणा इस से नपुंसक वेदी अनन्त गुणा ५ इस से सवेदी विशेषाधिक।

७ कषाय द्वार

१ सकषाय में—जीव के भेद १४, गुण स्थानक १० प्रथम योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६।

२-३-४ क्रोध, मान, और माया कषाय में—जीव के भेद १४, गुण स्थानक ९ प्रथम, योग १५ उपयोग १० लेश्या ६।

५ लोभ कषाय में—जीव के भेद १४, गुण स्थानक १० योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६।

६ अकषाय में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ४ प्रथम ऊपर के, योग ११, ४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के १ कार्मण का। उपयोग ९ पांच ज्ञान का और ४ दर्शन का, लेश्या १ शुक्ल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकषाय प्रमुख ६ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम अकषायी २ इससे मान कषायी अनंत गुणा ३ इससे क्रोध कषायी विशेषाधिक ५ लोभ कषायी विशेषाधिक ६ सकषायी विशेषाधिक ।

८ लेश्या द्वार

१ सलेश्या में–जीव के भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२-३-४ कृष्ण, नील, कापोत लेश्या में जीव के भेद १४ गुण स्थानक ६ प्रथम योग १५ उपयोग १० केवल के दो छोड़कर लेश्या १ अपनी २ ।

५ तेजो लेश्या में–जीव का भेद ३–दो संज्ञी के और एक बादर एकेंद्रिय का अपर्याप्त; गुण स्थानक ७ प्रथम योग १५, उपयोग १०, लेश्या १ अपने खुद की ।

६ पद्म लेश्या में–जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक ७ प्रथम, योग १५ उपयोग १० लेश्या १ अपनी

७ शुक्ल लेश्या में–जीव के भेद २ संज्ञी के, गुण स्थानक १३ प्रथम, योग १५ उपयोग १२, लेश्या १ अपनी ।

८ अलेश्या में जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक १ चौदहवां, योग नहीं, उपयोग २ केवल के, लेश्या नहीं

सलेश्या प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ सर्व से कम शुक्ल लेश्यी २ इस से पद्मलेश्यी संख्यात गुणा ३ इस से तेजो लेश्यी संख्यात गुणा ४ इस से अलेश्यी अनन्त गुणा ५ इस से कपोत लेश्यी अनन्त गुणा ६ इस से नील लेश्यी विशेषाधिक ७ इस से कृष्ण लेश्यी विशेषाधिक ८ इस से सलेश्यी विशेषाधिक।

९ समकित द्वार।

१ सम्यक् दृष्टि में जीव का भेद ६–बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय एवं चार का अपर्याप्त और संज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त एवं ६, गुण स्थानक १२ पहेला और तीसरा छोड़कर, योग १५ उपयोग ९ पांच ज्ञान और चार दर्शन लेश्या ६।

२ मिथ्या दृष्टि में जीव का भेद १४ गुण स्थानक १, योग १३ आहारिक के दो छोड़कर, उपयोग ६–३ अज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

सम्यक् दृष्टि प्रमुख बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

१ सर्व से कम मिश्र दृष्टि २ इस से सम्यक् दृष्टि अनन्त गुणा ३ इस से मिथ्या दृष्टि अनन्त गुणा।

१० ज्ञान द्वार।

१ समुच्चय ज्ञान में जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १२, योग १५, उपयोग ९, लेश्या ६ सम्यक् दृष्टि वत् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२-३ मति ज्ञान श्रुत ज्ञान में जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १० पहेला, तीसरा, तेरहवां, चौदहवां छोड़ कर, योग १५, उपयोग ७, ४ ज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

४ अवधि ज्ञान में जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक १० मति ज्ञान वत्, योग १५, उपयोग ७, लेश्या ६ ।

५ मनः पर्यव ज्ञान में जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक ७ छट्ठे से बारहवें तक, योग १४, कार्मण को छोड़कर, उपयोग ७, लेश्या ६ ।

६ केवल ज्ञान में जीव का भेद १ संज्ञी पर्याप्त गुण स्थानक २-तेरहवां चौदहवां, योग ७-सत्य मन, सत्य वचन व्यवहार मन, व्यवहार वचन, दो औदारिक का, एक कार्मण एवं ७; उपयोग दो-केवल के लेश्या १ शुक्ल ।

७-८-९ समुच्चय अज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान-इन तीन में जीव का भेद १४, गुण स्थानक २-पहेला और तीसरा, योग १३-आहारिक के दो छोड़कर, उपयोग ६-तीन अज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

१० विभंग अज्ञान में-जीव का भेद २-संज्ञी का-गुण स्थानक २-पहेला और तीसरा, योग १३, उपयोग ६, लेश्या ६ ।

समुच्चय ज्ञान प्रमुख दश बोल में रहे हुवे जीवों का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अल्प बहुत्व–सर्व से कम मनः पर्यव ज्ञानी, २ इससे अवधि ज्ञानी असंख्यात गुणा ३ इससे मति ज्ञानी व ४ श्रुत ज्ञानी परस्पर बराबर व पूर्व से विशेषाधिक ५ इससे विभंग ज्ञानी असंख्यात गुणा ६ इससे केवल ज्ञानी अनन्त गुणा ७ इससे समुच्चय ज्ञानी विशेषाधिक ८ इससे मति अज्ञानी व ९ श्रुत अज्ञानी परस्पर बराबर व पूर्व से अनन्त गुणे। १० इससे समुच्चय अज्ञानी विशेषाधिक।

११ दर्शन द्वार

१ चक्षु दर्शन में–जीव का भेद ६–चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय इन तीन का अपर्याप्त और पर्याप्त; गुण स्थानक १२ प्रथम; योग १४–कार्मण को छोड़कर, उपयोग १०–केवल के दो छोड़ कर; लेश्या ६।

२ अचक्षु दर्शन में–जीव का भेद १४, गुणस्थानक १२, योग १५, उपयोग १०, लैश्या ६।

अवधि दर्शन में–जीव का भेद २–संज्ञी का, गुणस्थानक १२, योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६।

केवल दर्शन में–जीव का भेद १ संज्ञी पर्याप्त, गुणस्थानक २–१३ वां, १४ वां, योग ७ केवल ज्ञान वत्, उपयोग २–केवल का, लेश्या १ शुक्ल।

चक्षु दर्शन प्रमुख चार बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम अवधि दर्शनी २ इससे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चक्षु दर्शनी असंख्यात गुणा ३ इससे केवल दर्शनी अनन्त गुणा। ४ इससे अचक्षु दर्शनी अनन्त गुणा।

१२ संयत द्वार

१ संयत (समुच्चय संयम) में जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ९—छट्ठे से चौदहवें तक योग १५ उपयोग ९—तीन अज्ञान के छोड़कर; लेश्या ६।

२-३ सामायिक व छेदोपस्थानिक में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ४—छट्ठ से नववें तक, योग १४ कार्मण का छोड़कर, उपयोग ७। चार ज्ञान प्रथम व तीन दर्शन, लेश्या ६।

४ परिहार विशुद्ध में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक २-छट्ठा व सातवाँ, योग ९—४ मन के ४ वचन के १ औदारिक का, उपयोग ७—४ ज्ञान का ३ दर्शन का, लेश्या ३ (ऊपर की)।

५ सूक्ष्म सम्पराय में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक १-दशवाँ, योग ९, उपयोग ७ लेश्या १—शुक्ल।

६ यथाख्यात में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक ४--ऊपर के, योग ११—४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के व १ कार्मण का, उपयोग ९--तीन अज्ञान के छोड़कर, लेश्या १ शुक्ल।

७ संयता संयत में--जीव का भेद १ संज्ञी का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्याप्त गुण स्थानक १ पांचवाँ, योग १२-२ आहारिक का व एक कार्मण का एवं तीन छोड़कर, उपयोग ६-- तीन ज्ञान व तीन दर्शन लेश्या ६ ।

८ असंयत में-जीव का भेद १४, गुण स्थानक ४ प्रथम के, योग १३- आहारिक का २ छोड़कर, उपयोग ९ ३ ज्ञान के, ३ अज्ञान के, ३ दर्शन के, लेश्या ।

नोसंयत नो असंयत नो संयता संयत में- जीव का भेद नहीं गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं ।

संयत प्रमुख नव बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

१ सर्व से कम सूक्ष्म संपराय चारित्री २ इससे परिहार विशुद्धिक चारित्री संख्यात गुणा ३ इससे यथाख्यात चारित्री संख्यात गुणा ४ इससे छेदोपस्थापनिक चारित्री संख्यात गुणा ५ इससे सामायिक चारित्री संख्यात गुणा ६ इससे संयति विशेषाधिक ७ इससे संयता संयती असंख्यात गुणा ८ इससे नोसंयति नोसंयता संयति अनन्त गुणा ९ इससे असंयति अनन्त गुणा ।

१३ उपयोग द्वार

१ साकार उपयोग में-जीव का भेद १४, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२ अनाकार उपयोग में-जीव का भेद१४, गुण-

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

स्थानक १३-दशवाँ छोड़ कर, योग १५, उपयोग १६, लेश्या ६।

साकार प्रमुख दो बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम अनाकार उपयोगी २ इससे साकार उपयोगी संख्यात गुणा।

१४ आहार द्वार

आहारिक में-जीव का भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम, योग १४ कार्मण का छोड़ कर, उपयोग १२ लेश्या ६।

अनाहारिक में-जीव का भेद ८-सात अपर्याप्त और संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ५-१, २, ४, १३, १४, योग १ कार्मण का, उपयोग १०-मनः पर्यव ज्ञान व चक्षु दर्शन छोड़ कर, लेश्या ६।

आहारिक प्रमुख दो बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम अनाहारिक इससे २ आहारिक असंख्यात गुणा।

१५ भाषक द्वार

भाषक में:-जीव का भेद ५, बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय एवं ५ का पर्याप्त, गुण स्थानक १३ प्रथम का, योग १४-कार्मण का छोड़ कर; उपयोग १२, लेश्या ६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभाषक में-जीव का भेद १०-बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय एवं चार के पर्याप्त छोड़ कर, गुण स्थानक ५-१, २, ४, १३, १४, योग ५-२ औदारिक का २ वैक्रिय का, १ कार्मण का; उपयोग ११-मनः पर्यव ज्ञान का छोड़ कर, लेश्या ६।

भाषक प्रमुख दो बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

१६ परित्त द्वार

परित्त में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२ लेश्या ६ ।

२ अपरित्त में-जीव का भेद १४, गुण स्थानक १ पहेला, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर, उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

३ नो परित्त नो अपरित्त में-जीव का भेद नहीं गुण स्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ केवल के लेश्या नहीं ।

परित प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

१ सर्व से कम परित २ इससे नो परित नो अपरित अनन्त गुणा ३ इससे अपरित अनन्त गुणा ।

१७ पर्याप्त द्वार

१ पर्याप्त में-जीव का भेद ७, गुण स्थानक १४ योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ अपर्याप्त में-जीव का भेद ७, गुण स्थानक ३-१ २, ४, योग ५-२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का, उपयोग ६-३ ज्ञान ३ अज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में--जीव का भेद नहीं, गुणस्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं पर्याप्त प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो पर्याप्त नो अपर्याप्त २ इससे अपर्याप्त अनन्त गुणा ३ इससे पर्याप्त संख्यात गुणा।

१८ सूक्ष्म द्वार

१ सूक्ष्म में–जीव का भेद २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त, गुण स्थानक १ पहला, योग ३-२ औदारिक तथा १ कार्मण उपयोग ३–२ अज्ञान व १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ पहेली।

२ बादर में–जीवका भेद १२-सूक्ष्म का २ छोड़ कर, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

३ नो सूक्ष्म नो बादर में--जीव का भेद नहीं गुणस्थानक नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं। सूक्ष्म प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो सूक्ष्म नो बादर २ इससे बादर अनन्त गुणा ३ इससे सूक्ष्म असंख्यात गुणा।

१६ संज्ञी द्वार

१ संज्ञी में–जीव का भेद २, गुणस्थानक १२ पहेला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योग १५, उपयोग १०–केवल का दो छोड़ कर, लेश्या ६।

२ असंज्ञी में–जीव का भेद १२–संज्ञी का दो छोड़ कर, गुणस्थानक २ पहेला, योग ६–२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का १ व्यवहार वचन, उपयोग ६–२ ज्ञान का २ अज्ञान का २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम की।

नो संज्ञी नो असंज्ञी में–जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक २, १३ वां, १४ वां, योग ७ केवल ज्ञान वत्, उपयोग २ केवल का, लेश्या १ शुक्ल।

संज्ञी प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम संज्ञी २ इससे नो संज्ञी नो असंज्ञी अनन्त गुणा। ३ इससे असंज्ञी अनन्त गुणा।

२० भव्य द्वार।

१ भव्य में जीव का भेद १४ गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अभव्य में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १ पहेला योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर, उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

३ नो भव्य नो अभव्य में जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ लेश्या नहीं।

भव्य प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ सर्व से कम अभव्य २ इस से नो भव्य नो अभव्य अनन्त गुणा ३ इस से भव्य अनन्त गुणा।

२१ चरम द्वार।

१ चरम में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १४ योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अचरम में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १ पहेला, योग १३ आहारिक का दो छोड़ कर, उपयोग १ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

चरम प्रमुख दो बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम अचरम २ इस से चरम अनन्त गुणा।

एवं दो गाथा के २१ बोल द्वार पर ६२ बोल कहे, तदुपरान्त अन्य वीतराग प्रमुख पांच बोल चौदह गुण स्थानक व पांच शरीर पर ६२ बोल—

१ वीतराग में जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ४ ऊपर का, योग ११–२ आहारिक तथा २ वैक्रिय का छोड़कर, उपयोग ६-५ ज्ञान ४ दर्शन, लेश्या १ शुक्ल।

२ समुच्चय केवली में जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक ११ ऊपर का, योग १५, उपयोग ६,५ ज्ञान ४ दर्शन, लेश्या ६।

३ युगल (युगलियों) में जीव का भेद २ संज्ञी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का गुण स्थानक २, १ ला व ४ था, योग ११, ४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के १ कार्मण का, उपयोग ६ २ ज्ञान का, २ अज्ञान का व २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम।

४ असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में--जीव का भेद २, ११ वाँ व १२ वाँ, गुण स्थानक २-(१-२), योग ४ २ औदारिक का १ व्यवहार वचन व १ कार्मण का, उपयोग ६—२ ज्ञान २ अज्ञान २ दर्शन लेश्या ३ प्रथम।

५ असंज्ञी मनुष्य में—जीव का भेद १--११ वाँ, गुण स्थानक १ पहेला, योग ३,२ औदारिक का, १ कार्मण का, उपयोग ३,२ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ प्रथम।

वीतराग प्रमुख पांच बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम युगल २ इससे असंज्ञी मनुष्य असंख्यात गुणा ३ इससे असंज्ञी तिर्यच पंचेन्द्रिय असंख्यात गुणा ४ इससे वीतरागी अनन्त गुणा ५ इससे समुच्चय केवली विशेषाधिक।

गुण स्थानक

१ मिथ्यात्व में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १ पहेला, योग १३ आहारिक दो छोड़कर, उपयोग ६-३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ सास्वादान सम्यक्दृष्टि में-जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १ दूसरा, योग १३ आहारिक का दो छोड़कर, उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६।

३ मिश्र दृष्टि में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक १ तीसरा, योग १०-४ मन के, ४ वचन के १ औदारिक का १ वैक्रिय का, उपयोग ६-३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

४ अव्रती सम्यक् दृष्टि में-जीव का भेद २ संज्ञी का गुण स्थानक १ चोथा, योग १३ सास्वादन सम्यक् दृष्टि वत् उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

५ देश व्रती (संयता संयति) में-जीव का भेद १ १४ वाँ, गुण स्थानक १ पांचवाँ, योग १२-२ आहारिक का व १ कार्मण का छोड़कर उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६।

६ प्रमत्त संयति में--जीव का भेद १ गुण स्थानक १ छठा योग १४ कार्मण का छोड़कर, उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

७ अप्रमत्त संयति में-जीव का भेद १ गुणस्थानक ८ योग ११-४ मन के ४ वचन के १ औदारिक १ वैक्रिय १ आहारिक, उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ३ ऊपर की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८ नी० बा० ९ अनी० बा० १० सूक्ष्म सं० ११ उप० मो० १२ क्षीण मो०--में जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक अपना २ योग ९--४ मनके ४ वचनके १ औदारिक उपयोग ७--४ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या १ शुक्ल।

१३ **सयोगी केवली में**--जीव का भेद १, गुणस्थानक १ तेरहवां, योग ७--२ मनके २ वचन के, २ औदारिक के १ कार्मण उपयोग २--केवल का। लेश्या १ शुक्ल।

१४ अयोगी केवली में जीव का भेद १, गुणस्थानक १, योग नहीं, उपयोग २ केवल के, लेश्या नहीं।

चौदह गुणस्थानक में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम उपशम मोहनीय वाला २ इससे क्षीण मोहनीय वाला संख्यात गुणा ३ इससे आठवें, नववें दशवें गुणस्थानक वाले परस्पर तुल्य व संख्यात गुणे, ४ इससे सयोगी केवली संख्यात गुणा ५ इससे अप्रमत्त संयत गुणस्थानक वाला संख्यात गुणा ६ इससे प्रमत्त सयंत गुणस्थानक वाला संख्यात गुणा ७ इससे देश व्रती असंख्यात गुणा ८ इससे सास्वादन् सम्यक् दृष्टि असंख्यात गुणा ९ इससे मिश्र दृष्टि असंख्यात गुणा १० इससे अव्रती समदृष्टि असंख्यात गुणा ११ इससे अयोगी केवली (सिद्ध सहित) अनन्त गुणा १२ इससे मिथ्या-दृष्टि अनन्त गुणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरीर द्वार

१ औदारिक में--जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

वैक्रिय में--जीव का भेद ४--दो संज्ञी का, एक असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त व बादर एकेन्द्रिय का का पर्याप्त गुणस्थानक ७ प्रथम; योग १२--दो आहारिक का, १ कार्मण छोड़ कर; उपयोग १०--केवल के दो छोड़ कर; लेश्या ६ ।

आहारिक में--जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त । गुणस्थानक २-६ व ७ योग १२--दो वैक्रिय व १ कार्मण छोड़ कर, उपयोग ७-४ ज्ञान व दर्शन, लेश्या ६ ।

४ तैजस् कार्मण में--जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

औदारिक प्रमुख पांच शरीर में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम आहारिक शरीर २ इससे वैक्रिय शरीर असंख्यात गुणा ३ इससे औदारिक शरीर असंख्यात गुणा ४ इससे तैजस् व कार्मण शरीरी परस्पर तुल्य व अनन्त गुणे ।

॥ इति बड़ा बासठीया सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बावन बोल

पहेला द्वार—समुच्चय जीव का।

१ समुच्चय जीव में—भाव ५, उदय, उपशम, क्षायक, क्षयोपशम, परिणामिक आत्मा ८ लब्धि ५ वीर्य ३ दृष्टि ३ भव्य २ दण्डक २४ पक्ष २।

१ गति द्वार के ८ भेद

१ नारकी में—भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १ नारकी का, पक्ष २।

१ तिर्यंच में-भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १-बाल वीर्य व बाल पंडित वीर्य दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक ६—पांच स्थावर, तीन विकल-इन्द्रिय, एक तिर्यंच पंचेन्द्रिय, पक्ष २।

तिर्यंचनी में—भाव ५, आत्मा ७ ऊपरवत्, लब्धि ५, वीर्य दो दृष्टि ३ भव्य अभव्य २ दण्डक १ पक्ष दो।

४ मनुष्य में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५ वीर्य ३ दृष्टि ३ भव्य अभव्य २, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष २।

मनुष्यनी में:-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १ पक्ष २।

६ देवता में—भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १३ देवता का, पक्ष २ ।

७ देवाङ्गना में—भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक १३ देवता के, पक्ष २ ।

सिद्ध गति में भाव २ क्षायक, परिणामिक आत्मा ४, द्रव्य, ज्ञान, दर्शन व उपयोग, लब्धि नहीं वीर्य नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य अभव्य नहीं दण्डक नहीं, पक्ष नहीं ।

३ इन्द्रिय द्वार के ७ भेद

१ सइन्द्रिय में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २ ।

२ एकेन्द्रिय में--भाव ३--उदय, क्षयोपशम परिणामिक; आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक ५, पक्ष २

३ बेइन्द्रिय में-भाव ३ ऊपर अनुसार आत्मा ७ (चारित्र छोड़कर) लब्धि ५, वीर्य १ ऊपर प्रमाणे, दृष्टि २-समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक १ अपना २ पक्ष २

४ त्रिइन्द्रिय में--भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५,

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ त्रिइन्द्रिय का, पक्ष २

५ चौरिन्द्रिय में--भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५ वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ चौरिन्द्रिय का, पक्ष २

६ पंचेन्द्रिय में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६--१३ देवता का, १ नारकी का, १ मनुष्य का एक तिर्यंच का एवं १६ पक्ष २।

७ अनिन्द्रिय में--भाव ३-उदय, क्षायक, परिणामिक आत्मा ७ (कषाय छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य पंडित वीर्य, दृष्टि १ सम्यक् दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

४ सकाय के ८ भेद

१ सकाय में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२ पृथ्वी काय ३ अपकाय ४ तेजस् काय

५ वायु काय तथा वनस्पति काय में--भाव ३-- क्षयोपशम, परिणामिक; आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दण्डक २ अपना २, पक्ष २।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७ त्रस काय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १९ (पांच एकेन्द्रिय का छोड़कर), पक्ष २।

८ अकाय में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो भवी, नो अभवी, दंडक नहीं पक्ष नहीं।

५ सयोगी द्वार के ५ भेद।

१ सयोगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२ मन योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष २।

३ वचन योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १९ (पांच स्थावर छोड़कर), पक्ष २।

४ काय योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

५ अयोगी में भाव ३ उदय, क्षायक, पारिणामिक, आत्मा ६ (कषाय, योग छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

६ सवेद के ५ भेद।

१ सवेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

२ स्त्री वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पक्ष २।

३ पुरुष वेद भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पक्ष २।

४ नपुंसक वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ११ (देवता का १३ छोड़कर), पक्ष २।

५ अवेद में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

७ कषाय के ६ भेद

१ सकषाय में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २४, पक्ष २

२ क्रोध कषाय में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

३ मान कषाय में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

४ माया कषाय में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

५ लोभ कषाय में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

६ अकषाय में–भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

८ सलेशी के ८ भेद

१ सलेशी में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

२ कृष्ण लेश्या में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २२ (ज्योतिषी वैमानिक छोड़ कर) पक्ष २।

१ नील लेश्या में–भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २२ ऊपर प्रमाणे पक्ष २।

कपोत लेश्या में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २२ ऊपर प्रमाणे, पक्ष २।

तेजो लेश्या में–भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, पक्ष २, दण्डक १८ (१३ देवता का १ मनुष्य का, १ तिर्यंच पंचेन्द्रिय का, पृथ्वी, अप; वनस्पति एवं १८)

६ पद्म लेश्या में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ३, वैमानिक, मनुष्य व तिर्यंच एवं ३ का, पक्ष २।

७ शुक्ल लेश्या में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ३ ऊपर प्रमाणे, पक्ष २, ।

८ अलेशी में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, पंडित वीर्य, दृष्टि १, समकित, भव्य १ दंडक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

६ समकित के ७ भेद।

१ समदृष्टि में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दंडक १६ (पांच एकेन्द्रिय का दंडक छोड़कर) पक्ष १ शुक्ल।

२ सास्वादान समदृष्टि में भाव ३, (उदय, क्षयोपशम, परिणामिक), आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य दृष्टि १ समकित, भव्य १, दंडक १६ (पांच स्थावर छोड़कर), पक्ष १ शुक्ल।

३ उपशम समदृष्टि में भाव ४ (क्षायक छोड़कर), आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६ (पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष १ शुक्ल।

४ वेदक समदृष्टि में भाव ३, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, समकित, भव्य १, दंडक १६ ऊपर प्रमाणे, पक्ष १ शुक्ल।

५ क्षायक समदृष्टि में भाव ४ (उपशम छोड़कर) आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६ पक्ष १ शुक्ल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ मिथ्यात्व दृष्टि में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

७ मिश्र दृष्टि में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, बाल वीर्य, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

१० समुच्चय ज्ञान द्वार के १० भेद।

१ समुच्चय ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

२ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ भव्य १ दण्डक १६, पक्ष १ शुक्ल।

४ अवधि ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ भव्य १, दण्डक १६, पक्ष १ शुक्ल।

५ मनः पर्यव ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

६ केवल ज्ञान में भाव ३, (उदय क्षायक, परिणामिक) आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १; भव्य १, दण्डक १, पक्ष १;।

७ समुच्चय अज्ञान ८ मति अज्ञान ६ श्रुत अज्ञान में-भाव तीन; आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १, मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१० विभङ्ग ज्ञान में भाव ३ (उदय, क्षयोपशम परिणामिक), आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय छोड़ कर) पक्ष २।

११ दर्शन द्वार के ४ भेद

१ चक्षु दर्शन में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १७, पक्ष २।

२ अचक्षु दर्शन में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

अवधि दर्शन में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६, पक्ष २।

केवल दर्शन में- भाव ३, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित, भव्य दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

१२ समुच्चय संयति का ६ भेद

१ संयति में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १, शुक्ल।

२ सामायिक चारित्र व छेदोपस्थानिक चारित्र में:—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित दृष्टि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ समकित, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १ शुक्ल ।

४ परिहार विशुद्ध चारित्र में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ पक्ष १ शुक्ल ।

५ सूक्ष्म संपराय चारित्र में--ऊपर प्रमाणे ।

६ यथा ख्यात चारित्र में--भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १ ।

७ असंयति में--भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २ ।

८ संयता संयति में--भाव ५, आत्मा ७ ऊपर अनुसार, लब्धि ५, वीर्य १ बाल पण्डित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक २, पक्ष १ शुक्ल ।

९ नो संयति नो असंयति नो संयता संयति में-भाव २, क्षायक, परिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित, नो भव्य नो अभव्य, दण्डक नहीं, पक्ष नहीं ।

१३ उपयोग द्वार के २ भेद

साकार उपयोग में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२ अनाकार उपयोग में--भाव ५, आत्मा ८,

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

१४ आहारिक के २ भेद

१ आहारिक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

अनाहारिक में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य दो बाल व पण्डित, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

१५ भाषक द्वार के २ भेद

१ भाषक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६, पक्ष २।

२ अभाषक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४ पक्ष २।

१६ परित द्वार के ३ भेद।

१ परित में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य १, दंडक २४, पक्ष २ शुक्ल।

२ अपरित में भाव ३, आत्मा ६, (ज्ञान चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष १ कृष्ण।

३ नो परित नो अपरित में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित, नो भवी नो अभवी, दंडक नहीं, पक्ष नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७ पर्याप्त द्वार के ३ भेद।

१ पर्याप्त में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

२ अपर्याप्त में भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में भाव २ क्षायक व परिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित दृष्टि, नो भव्य नो अभव्य, दंडक नहीं, पक्ष नहीं।

१८ सूक्ष्म द्वार के ३ भेद।

१ सूक्ष्म में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, भव्य अभव्य २, दंडक ५ (पांच स्थावर का), पक्ष २।

२ बादर में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

३ नो सूक्ष्म नो बादर में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो भव्य नो अभव्य दंडक नहीं, पक्ष नहीं।

१९ संज्ञी द्वार के २ भेद।

१ संज्ञी में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय छोड़ कर), पक्ष २।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ असंज्ञी में--भाव ३, आत्मा ७, (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २, भव्य अभव्य २ दण्डक २२, पक्ष २ ।

३ नो संज्ञी नो असंज्ञी में-भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १ शुक्ल ।

२० भव्य द्वार ३ भेद

१ भव्य में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य १ दण्डक २४, पक्ष २ ।

२ अभव्य में—भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, अभव्य १ दण्डक २४, पक्ष १ कृष्ण ।

३ नो भव्य नो अभव्य में--भाव २-क्षायक परिणामिक आत्मा ४ लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित, भव्य अभव्य नहीं, दण्डक नहीं, पक्ष नहीं ।

२१ चरम द्वार के दो भेद

१ चरम में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य २, दण्डक २४, पक्ष २ ।

२ * अचरम में—भाव ४ (उपशम छोड़ कर) आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल

* अचरम अर्थात् अभवी तथा सिद्ध भगवन्त ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीर्य, दृष्टि २-समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, अभव्य १ दण्डक, २४ पक्ष १ कृष्ण ।

शरीर द्वार के ५ भेद

१ औदारिक में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य, अभव्य २, दण्डक २०, पक्ष २।

२ वैक्रिय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २७ (१३ देवता का, १ नारकी का १, मनुष्य का, १ तिर्यंच का व १ वायु का एवं १७), पक्ष २ ।

३ आहारिक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १, पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दंडक १, पक्ष १ शुक्ल ।

४ तैजस व ५ कार्मण में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २ ।

गुण स्थानक द्वार ।

१ मिथ्यात्व गुण स्थानक में भाव ३ (उदय, क्षयोपशम, परिमाणिक), आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य दो, दंडक २४, पक्ष दो ।

२ सास्वादान समदृष्टि गुण स्थानक में भाव ३ ऊपर अनुसार, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक १६ (पांच एकेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष १ शुक्ल।

३ मिश्र गुण स्थानक में भाव ३ ऊपर अनुसार आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिश्र दृष्टि, भव्य १, दंडक १६, (५ एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय छोड़कर) पक्ष १ शुक्ल।

४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि में भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक १६ ऊपर अनुसार; पक्ष १ शुक्ल।

५ देश व्रती गुण स्थानक में भाव ५; आत्मा ७ (देश से चारित्र है सर्व से नहीं); लब्धि ५; वीर्य १; बाल पंडित वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक दो (मनुष्य व तिर्यंच के) पक्ष १ शुक्ल।

६ प्रमत्त संयति गुण स्थानक में भाव ५; आत्मा ८; लब्धि ५; वीर्य १ पंडित वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १; दंडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

७ अप्रमत्त संयति गुण में—भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

नियट्टी बादर गुण० में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९ अनियट्टी बादर गुण० में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष० १ शुक्ल ।

१० सूक्ष्म संपराय गुण० में-भाव ५ आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

११ उपशान्त मोहनीय गुण० में-भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

१२ क्षीण मोहनीय गुण० में-भाव चार (उपशम छोड़ कर), आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

१३ सयोगी केवली गुण० में भाव ३ (उदय, क्षायक, परिणामिक), आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

अयोगी केवली गुण० में-भाव तीन ऊपर समान, आत्मा ६, (कषाय व योग छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

॥ इति बावन बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रोता अधिकार

श्रोता अधिकार श्री नंदि सूत्र में है सो नीचे अनुसार

गाथा

सेल[१] घण, कुड़ग[२], चालणी[३], परिपुणग[४], हंस[५], महिस[६], मेस[७], य;
मसग[८], जलूग[९], बिरालो[१०], जाहग[११], गो[१२], भेरि[१३], आभेरी[१४] सा ।१।

चौदह प्रकार के श्रोता होते हैं जिनमें से प्रथम सेल घण जैसे पत्थर पर मेघ गिरे परन्तु पत्थर मेघ (पानी) से भींजे नहीं वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादिक सुने परन्तु सम्यक् ज्ञान पावे नहीं, बुद्ध होवे नहीं ।

दृष्टान्तः--कुशिष्य रूपी पत्थर, सद् गुरु रूपी मेघ तथा बोध रूपी पानी मुंग शेलिआ तथा पुष्करावर्त मेघ का दृष्टान्तः--जैसे पुष्करावर्त मेघ से मुंग शेलीआ पिघले नहीं वैसे ही एकेक कुशिष्य महान् संवेगादिक गुण युक्त आचार्य के प्रतिबोधने पर भी समझे नहीं, वैराग्य रंग चढ़े नहीं, अतः ऐसे श्रोता छोड़ने योग्य हैं एवं अविनीत का दृष्टान्त जानना—

काली भूमि के अन्दर जैसे मेघ बरसे तो वो भूमि अत्यन्त भींज जावे व पानी भी रक्खे तथा गोधूमादिक (गेहूं प्रमुख) की अत्यन्त निष्पत्ति करे वैसे ही विनीत सुशिष्य भी गुरु की उपदेश रूप वाणी सुनकर हृदय में धार रक्खे, वैराग्य से भींज जावे व अनेक अन्य भव्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवों को विनय धर्म के अन्दर प्रवर्तावे, अतः ये श्रोता आदरवा योग्य है ।

२ कुड़गः--कुंभ का दृष्टान्त । कुंभ के आठ भेद हैं जिनमें प्रथम घड़ा सम्पूर्ण घड़ के गुणों द्वारा व्याप्त है । घड़ के तीन गुणः—१घड़े के अन्दर पानी भरने से किंचित् बाहर जावे नहीं २ स्वयं शीतल है अतः अन्य की भी तृषा शान्त करे—शीतल करे । ३ अन्य का मालिनता भी पानी से दूर करे ।

ऐसे ही एकेक श्रोता विनयादिक गुणों से सम्पूर्ण भरे हुवे हैं (तीन गुण सहित) १ गुर्वादिक को उपदेश सर्व धार कर रक्खे- किंचित् भूले नहीं २ स्वयं ज्ञान पाकर शीतल दशा को प्राप्त हुवे हैं व अन्य भव्य जीव को त्रिविध ताप उपसमा कर शीतल करते हैं ३ भव्य जीव की सन्देह रूपी मालिनता को दूर करे । ऐसे श्रोता आदरने योग्य हैं ।

२ एक घड़े के पार्श्व भाग में काना (छेद युक्त) है इस में पानी भरे तो आधा पानी रहे व आधा पानी बाहर निकल जावे वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुने तो आधा धार रक्खे व आधा भूल जावे ।

३ एक घड़ा नीचे से काना है इसमें पानी भरने से सर्व पानी बह कर निकल जावे किंचित् भी उसमें रहे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं वैसे एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुने तो सर्व भूल जावे परन्तु धारे नहीं।

४ एक घड़ा नया है, इसमें पानी भरे तो थोड़ा२ जम कर बह जावे व सारा घड़ा खाली हो जावे वैसे एकेक श्रोता ज्ञानादि अभ्यास करे परन्तु थोड़ा थोड़ा करके भूल जावे।

५ एक घड़ा दुर्गन्ध वासित है इसमें पानी भरे तो वो पानी के गुण को बिगाड़े वैसे एकेक श्रोता मिथ्यात्वादिक दुर्गन्ध से वासित हैं। सूत्रादिक पढ़ने से यह ज्ञान के गुण को बिगाड़ते हैं (नष्ट करते हैं)।

६ एक घड़ा सुगन्ध से वासित है इसमें यदि पानी भरे तो वो पानी के गुण को बढ़ावे वैसे एकेक श्रोता समकितादिक सुगन्ध से वासित हैं व सूत्रादिक पढ़ाने से यह ज्ञान के गुण को दिपाते हैं।

७ एक घड़ा कच्चा है इसमें पानी भरे तो वो पानी से भींज कर नष्ट हो जावे, वैसे एकेक श्रोता (अल्प बुद्धि वाले) को सूत्रादिक का ज्ञान देने से—नय प्रमुख नहीं जानने से वो ज्ञान से व मार्ग से भ्रष्ट होवे।

८ एक घड़ा खाली है। इसके ऊपर ढक्कन ढांक कर वर्षा समय नेवां के नीचे इसे पानी झेलने के लिये रक्खे अन्दर पानी आवे नहीं परन्तु पेंदे के नीचे अधिक पानी हो जाने से ऊपर तिरने (तरने) लगे व पवनादि से भींत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमुख से टकरा कर फूट जावे वैसे एकेक श्रोता सद्गुरु की सभा में व्याख्यान सुनने को बैठे परन्तु ऊंघ प्रमुख के योग से ज्ञान रूप पानी हृदय में आवे नहीं तथा अत्यन्त ऊंघ के प्रभाव से खराब डाल रूप वायु से अथड़ावे (टक्कर खावे) जिससे सभा में अपमान प्रमुख पावे तथा ऊंघ में पड़ने से अपने शरीर को नुकसान पहुँचावे।

इति आठ घड़े के दृष्टान्त रूप दूसरे प्रकार का श्रोता का स्वरूप।

३ चालणी-एकेक श्रोता चालणी के समान हैं। इस के दो प्रकार, एक प्रकार ऐसा है कि चालनी जब पानी में रक्खे तो पानी से सम्पूर्ण भरी हुई दीखे परन्तु उठा कर देखे तो खाली दीखे वैसा एकेक श्रोता व्याख्यानादि सभा में सुनने को बैठे तो वैराग्यादि भावना से भरे हुवे दीखें परन्तु सभा से उठ कर बाहर जावें तो वैराग्य रूप पानी किंचित् भी दीखे नहीं। ऐसे श्रोता छांडने योग्य हैं।

दूसरा प्रकार-चालनी गेहूँ प्रमुख का आटा चालने से आटा तो निकल जाता है परन्तु कङ्कर प्रमुख कचरा वच रह जाता है वैसे एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुनते समय उपदेशक तथा सूत्र के गुण तो निकाल देवे परन्तु स्खलना प्रमुख अवगुण रूप कचरे को ग्रहण कर रक्खे। ऐसे श्रोता छाड़ने योग्य हैं।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

४ परिपुणग--सुघरी पक्षी के माला का दृष्टान्त । सुघरी पक्षी के माला से घी गालते समय घी घी निकल जावे परन्तु चींटी प्रमुख कचरा रह जाता है वैसे एकेक श्रोता आचार्य प्रमुख का गुण त्याग करके अवगुण को ग्रहण कर लेता है ऐसे श्रोता छांडवा योग्य हैं ।

५ हंस-दूध पानी मिला कर पीने के लिये देने पर जैसे हंस अपनी चोंच से (खटाश के गुण के कारण) दूध दूध पीवे और पानी नहीं पीवे वैसे विनीत श्रोता गुर्वादिक के गुण ग्रहण करे व अवगुण न लेवे ऐसे श्रोता आदरनीय हैं ।

६ महिष--भैंसा जैसे पानी पीने के लिये जलाशय में जावे । पानी पीने के लिये जल में प्रथम प्रवेश करे पश्चात् मस्तक प्रमुख के द्वारा पानी ढोलने व मल मूत्र करने के बाद स्वयं पानी पीवे परन्तु शुद्ध जल स्वयं नहीं पीवे अन्य यूथ को भी पीने नहीं देवे वैसे कुशिष्य श्रोता व्याख्यानादिक में क्लेश रूप प्रश्नादिक करके व्याख्यान डोहले, स्वयं शान्ति युक्त सुने नहीं व अन्य सभा जनों को शान्ति से सुनाने देवे नहीं । ऐसे श्रोता छांडने योग्य हैं ।

७ मेष--बकरा जैसे पानी पीने को जलाशय प्रमुख में जावे तो किनारे पर ही पांव नीचे नमा कर के पानी पीवे, डोहले नहीं व अन्य यूथ को भी निर्मल जल पीने देवे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैसे विनीत शिष्य व श्रोता व्याख्यानादिक नम्रता तथा शान्त रस से सुने, अन्य सभाजनों को सुनने देवे। ऐसे श्रोता आदरनीय हैं।

८ मसग-इस के दो भेद प्रथम मसग अर्थात् चमड़े की कोथली में जब हवा भरी हुई होती है तब अत्यन्त फूली हुई दिखती है परन्तु तृषा शमाये नहीं हवा निकल जाने पर खाली हो जाती है वैसे एकेक श्रोता अभिमान रूप वायु के कारण ज्ञानी वत् तड़ाक मारे परन्तु अपनी तथा अन्य की आत्मा को शान्ति पहुँचावे नहीं ऐसे श्रोता छोड़ने योग्य है।

६ दूसरा प्रकार-मसग (मच्छर नामक जन्तु) अन्य को चटका मार कर परिताप उपजावे परन्तु गुण नहीं करे वरन् नुकसान उत्पन्न करे वैसे एकेक कुश्रोता गुर्वादिक को-ज्ञान अभ्यास कराने के समय अत्यन्त परिश्रम देवे तथा कुवचन रूप चटका मारे। परंतु वैय्यावृत्य प्रमुख कुछ भी न करे और मनमें असमाधि पैदा करे, यह छोड़ने योग्य है।

६ जोंक इसके भेद २ हैं। पहिला जोंक जन्तु गाय वगैरह के स्तन में लग जावे तब खून को पिये दूध को को नहीं पिये। इसी तरह से कोई अविनयी कुशिष्य श्रोता आचार्यादिक के पास रहता हुआ उनके दोषों को देखे परंतु क्षमादिक गुणों को ग्रहण नहीं करे यह भी त्यागने योग्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे प्रकार का—जोंक नामक जन्तु फोड़ा के ऊपर रखने पर उसमें चोट मारकर दुःख पैदा करता और बिगड़े हुए खून को पीता है बाद में शांति पैदा करता है। इसी तरह से कोई विनीत शिष्य श्रोता आचार्यादिक के साथ रहता हुआ पहिले तो वचन रूप चोट को मारे, समय असमय बहुत अभ्यास करता हुआ मेहनत करावे पीछे संदेह रूपी मैल को निकाल कर गुरुओं को शांति उपजावे--परदेशी राजा के समान यह ग्रहण करने योग्य है।

१० बिडाल—जैसे बिल्ली दूध के वर्तन को सींके से जमीन पर पटक कर उसमें मिली हुई धूल के साथ २ दूध को पीती है उसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से सूत्रादिक का अभ्यास करते हुए बहुत अविनय करे, और दूसरे के पास जाकर प्रश्ण पूछ कर सूत्रार्थ को धारण करे परंतु विनय के साथ धारण नहीं करे इसलिए ऐसा श्रोता त्यागने योग्य है।

११ जाहग-सहलो यह एक तिर्यंच की जाति विशेष्य का जीव है यह पहले तो अपनी माता का दूध थोडा थोडा पीता है और फिर वह पचजाने पर और थोड़ा इस तरह थोड़े थोड़े दूध से अपना शरीर पुष्ट करता है पीछे बड़े भारी सर्प का मान भंजन करता है। इसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से अपनी बुद्धि माफिक समय समय पर थोड़ा थोड़ा सूत्र अभ्यास करे और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभ्यास करते हुए गुरुओं को अत्यंत संतोष पैदा करे क्योंकि अपना पाठ बराबर याद करता रहे और उसे याद करने पर फिर दूसरी वार और तीसरी वार इस तरह थोडा थोड़ा लेकर पश्चात् बहुश्रुत हो कर मिथ्यात्वी लोगों का मान मर्दन करे । यह आदरने योग्य है ।

१२ गाय—इसके दो प्रकार । प्रथम प्रकार—जैसे दूधवती गाय को एक शेठ किसी अपने पड़ोसी को सोंप कर अन्य गांव जावे पड़ोसी घांस पानी प्रमुख बराबर गाय को नहीं देवे जिससे गाय भूख तृषा से पीडित होकर दूध में सूखने लग जाती है व दुःखी हो जाती है वैसे ही एकेक श्रोता (अविनीत) आहार पानी प्रमुख वैयावच्च नहीं करने से गुर्वादिक की देह ग्लानि पावे व जिससे सूत्रादिक में घाटा पड़ने लगजाता है तथा अपयश के भागी होते हैं ।

दूसरा प्रकार—एक सेठ पड़ोसी को दूधवती गाय सोंप कर गांव गया पड़ोसी के घांस पानी प्रमुख अच्छी तरह देने से दूध में वृद्धि होने लगी व वो कीर्ति का भागी हुवा वैसे एकेक विनीत श्रोता (शिष्य) गुर्वादिक की अहार पानी प्रमुख वैय्यावच्च विधि पूर्वक करके गुर्वादिक को साता उपजावे जिससे ज्ञान में वृद्धि होवे व साथ २ उसको भी यश मिले यह श्रोता आदरवा योग्य है ।

१३ भेरी—इसके दो प्रकार— प्रथम प्रकार—भेरी

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

को बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी बजावे तो राजा खुशी होकर उसे पुष्कल द्रव्य देवे वैसे ही विनीत शिष्य-श्रोता-तीर्थंकर तथा गुर्वादिक की आज्ञा-नुसार सूत्रादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान प्रमुख अंगीकार करे तो कर्म रूप रोग दूर होवे और सिद्ध गति में अनन्त लक्ष्मी प्राप्त करे यह आदरने योग्य है।

दूसरा प्रकार-भेरी बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी नहीं बजावे तो राजा कोपायमान होकर द्रव्य देवे नहीं वैसे ही अविनीत शिष्य (श्रोता) तीर्थंकर की तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार सूत्रादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान करे नहीं तो उनका कर्म रूप रोग दूर होवे नहीं व सिद्ध गति का सुख प्राप्त करे नहीं यह छोडने योग्य है।

१४ आभीरी-- प्रथम प्रकार-आभीर स्त्री पुरुष एक ग्राम से पास के शहर में गड़वे में घी भर कर बेचने को गये। वहां बाजार में उतारते समय घी का भाजन-बर्तन फूट गया व जिससे घी ढुल गया। पुरुष स्त्री को कुवचन कह कर उपालम्भ देने लगा, स्त्री भी पुनः भर्ता के सामने कुवचन कहने लगी। इस बीच में सब घी निकल कर जमीन पर बहने लगा व स्त्री पुरुष दोनों शोक करने लगे। जमीन पर गिरे हुवे घी को पुनः पूंछ कर ले लिया व बाजार में बेंच कर पैसे सीधे किये। पैसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ले कर सायङ्काल को गाँव जाते समय चोरों ने उन्हें लूट लिया। अत्यन्त निराश हुवे, लोगों के पूछने पर सर्व वृत्तान्त कहा जिसे सुन कर लोगों ने उन्हें बहुत ही ठपका दिया। वैसे ही गुरु के द्वारा व्याख्यान में दिये हुवे उपदेश (सार घी) को लड़ाई झगड़ा करके ढोल दिया व अन्त में क्लेश करके दुर्गति को प्राप्त करे यह श्रोता छोड़ने योग्य है।

दूसरा प्रकार-घी भर कर शहर में जाते समय बर्तन उतारने पर फूट गया, फूटते ही दोनों स्त्री पुरुषों ने मिल कर पुनः भाजन में घी भर लिया। बहुत नुकसान नहीं होने दिया। घी को बेंचकर पैसे सीधे किये व अच्छा संग करके गांव में सुख पूर्वक अन्य सुज्ञ पुरुषों के समान पहोंच गये, वैसे ही विनीत शिष्य (श्रोता) गुरु के पास से वाणी सुनकर व शुद्ध भाव पूर्वक तथा अर्थ सूत्र को धार कर रक्खे; सांचवे। अस्खलित करे, विस्मृति होवे तो गुरु के पास से पुनः२ क्षमा मांग कर धारे, पूछे परन्तु क्लेश झगड़ा करे नहीं। गुरु उन पर प्रसन्न होवे, संयम ज्ञान की वृद्धि होवे, व अन्त में सद् गति पावे यह श्रोता आदरणीय है।

॥ इति श्रोता अधिकार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९८ बोल का अल्प बहुत्व

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तीसरा ।

९८ बोल का अल्प बहुत्व ।

अनुक्रम	महा दण्डक	जीव का भेद १४	गुणस्थान १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६
१	गर्भज मनुष्य सर्व से कम	२,	१४,	१५,	१२,	६,
२	मनुष्याणी संख्यातगु.	२,	१४,	१३,	१२,	६,
३	बादर तैजस काय पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
४	पांच अनुत्तर विमान का देव असंख्यात गु.	२,	१,	११,	६,	१,
५	ऊपर की त्रीक का देव संख्यात गुणा-	२,	२-३,	११,	९,	१,
६	मध्य त्रीक का देव संख्यात गुणा-	२,	२-३,	११,	९,	१,
७	नीचे की त्रीक का देव संख्यात गुणा-	२,	२-३,	११,	९,	१,
८	बारहवां देवलोक का देव संख्यात गुणा-	२,	४,	११,	९,	१,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९ ११ वां देवलोक का देव संख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१० दशवां देवलोक का देव संख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
११ नववां देवलोक का देव संख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१२ सातवीं नरक का नेरिया असंख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१३ छठी नरक का नेरिया असंख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१४ आठवां देवलोक का देव असंख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१५ सातवां देवलोक का देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
१६ पांचवी नरकका नेरिया असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	२,
१७ छट्ठा देवलोक का देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
१८ चोथी नरक का नेरिया असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
१९ पांचवां देवलोकका देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२० तीसरी नरकका नेरिया असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	२,
२१ चोथा देवलोक का देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
२२ तीसरा देवलोकका देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
२३ दूसरी नरक का नेरिया असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
२४ संमूर्छिम मनुष्य अशाश्वत असंख्यात गुणा-	१,	१,	३,	४,	३,
२५ दूसरे देवलोक का देव असंख्यात गुणा-	२,	४,	११,	६,	१,
२६ दूसरे देवलोक की देविये संख्यात गुणी-	२,	४,	११,	६,	१,
२७ पहेले देवलोक का देव संख्यात गुणा-	२,	४,	११,	६,	१,
२८ पहेले देवलोक की देविए संख्यात गुणी-	२,	४,	११,	६,	१,
२९ भवनपति का देव असंख्यात गुणा-	३,	४,	११,	६,	४,
३० भवन पति की देवी संख्यात गुणा	२,	४,	११,	६,	४,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१ पहेली नरक का नेरिया असंख्यात गुणा	३,	४,	"	"	१,
३२ खेचर पुरुष तिर्यंच योनि असंख्यात गुणा	२,	५,	१३,	"	६,
३३ खेचर की स्त्री संख्यात गुणी	२,	५,	"	"	"
३४ स्थलचर पुरुष संख्यात गुणा	२,	५,	"	"	"
३५ स्थलचर की स्त्री संख्यात गुणी	"	"	"	"	"
३६ जलचर पुरुष संख्यात गुणा	"	"	"	"	"
३७ जलचर की स्त्री संख्यात गुणी	"	"	"	"	"
३८ वाण व्यन्तर का देव संख्यात गुणा	३,	४,	११,	"	४,
३९ वाण व्यन्तर की देवी संख्यात गुणी	२,	"	"	"	"
४० ज्योतिष का देव संख्यात गुणा	"	"	"	"	१
४१ ज्योतिष की देवी संख्यात गुणी	"	"	"	"	"

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

४२ खेचर नपुंसक तिर्यंच योनि संख्यात गु.	२-४,५,		१३,	६,	६,
४३ स्थल चर नपुंसक संख्यात गुणा	२-४	”	”	”	”
४४ जलचर नपुंसक संख्यात गुणा	” ”	”	”	”	”
४५ चौरिन्द्रिय पर्याप्त संख्यात गुणा	१,	१,	२,	४,	३,
४६ पंचेन्द्रिय पर्याप्त विशेषाधिक	२,	१२,	१४,	१०,	”
४७ बेइन्द्रिय पर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	२,	३,	”
४८ त्रिइन्द्रिय पर्याप्त विशेषाधिक	”	”	”	”	”
४९ पंचेन्द्रिय अप. असंख्यात गुणा	२	३	५	८-९,	६,
५० चौरिन्द्रिय अप. विशेषाधिक	१,	२,	३,	५,	३,
५१ त्रिइन्द्रिय अप. विशेषाधिक	”	”	”	”	”
५२ बेइन्द्रिय अप. विशेषाधिक	”	”	”	६,	”

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३ प्रत्येक शरीरी बा. वन. प. असं. गु. "	१,	१,		३,	"
५४ बादर निगोद प. का श. असं. गु. "	"	"		"	"
५५ बादर पृथ्वी काय पर्याप्त असं. गु. "	"	"		"	"
५६ बादर अप काय पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
५७ बादर वायु काय पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	४,	३,	३,
५८ बादर तैजस काय अ-पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	३,
५९ प्रत्येक शरीरीबादर वन-स्पति काय अ. अ. गुणा	१,	१,	३,	३,	४,
६० बादर निगोद अपर्याप्त का शरीर असं. गुणा	१,	१,	३,	३,	३,
६१ बादर पृथ्वी काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	४,
६२ बादर अप काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	४,
६३ बादर वायु काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	३,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४ सूक्ष्म तेजस्काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	३,
६५ सूक्ष्म पृथ्वी काय अप. विशेषाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
६६ सूक्ष्म अप काय अप. विशेषाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
६७ सूक्ष्म वायु काय अप. विशेषाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
६८ सूक्ष्म तेजस्काय पर्याप्त संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
६९ सूक्ष्म पृथ्वी काय पर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
७० सूक्ष्म अप काय पर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
७१ सूक्ष्म वायु काय पर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
७२ सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का शरीर असं. गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
७३ सूक्ष्म निगोद पर्याप्तका शरीर संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
७४ अभव्य जीव अनन्त गुणा	१४,	१,	१३,	६,	६,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७५ सम्यक दृष्टि प्रति पाति अनन्त गुणा	१४,	१४,	१५,	२२,	६;
७६ सिद्ध अनन्त गुणा	०;	०;	०;	२;	०;
७७ बादर वनस्पति काय पर्याप्त अनन्त गुणा	१;	१;	१;	३;	३;
७८ बादर जीव पर्याप्त विशेषाधिक	६;	१४;	१४;	१२;	६;
७९ बादर वनस्पति काय अप. असंख्यात गुणा	१;	१;	३;	३;	४;
८० बादर जीव अपर्याप्त विशेषाधिक	६,	३,	५,	८।६,	६,
८१ समुच्चय बादर जीव विशेषाधिक	१२,	१४,	१५,	१२,	६,
८२ सूक्ष्म वनस्पति काय अपर्याप्त असंख्यात गु.	१,	१,	३,	३,	३,
८३ सूक्ष्म जीव अपर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
८४ सूक्ष्म वनस्पति काय पर्याप्त संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
८५ सूक्ष्म जीव पर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
८६ समुच्चय सूक्ष्म जीव विशेषाधिक	२,	१,	३,	३,	३,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८७ भव्य सिद्धि जीव विशेषाधिक	१४,	१४,	१५,	१२,	६,
८८ निगोदके जीव विशेषा.	४,	१,	२,	३,	३,
८९ समुच्चय वनस्पति काय के जीव विशेषाधिक	४,	१,	३,	३,	४,
९० एकेन्द्रिय जीव विशेषा.	४,	१,	५,	३,	४,
९१ तिर्यंच योनी का जीव विशेषाधिक	१४,	५,	१३,	९,	६,
९२ मिथ्यात्व दृष्टि जीव विशेषाधिक	१४,	१,	१३,	९,	६,
९३ अव्रति जीव विशेषा.	१४,	४,	१३,	९,	६,
९४ सकषायी जीव विशेषा.	१४,	१०,	१५,	१०,	६,
९५ छद्मस्थ जीव विशेषा.	१४,	१२,	१५,	१०;	६,
९६ सयोगी जीव विशेषा.	१४,	१३,	१५,	१२,	६,
९७ संसारस्थ जीव विशे.	१४,	१४,	१५,	१२,	६,
९८ सर्व जीव विशेषाधिक	१४,	१४,	१५,	१२,	६,

❀ इति ९८ बोल का अल्प बहुत्व सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल परावर्त

भगवती सूत्र के १२ वें शतक के चोथे उद्देशे में पुद्गल परावर्त्त का विचार है सो नीचे अनुसार ।

गाथा

नाम[१]; गुण[२]; त्ति सरूवं[३]; त्ति ठाणं[४]; कालं[५]; कालोवमंच[६]
काल अप्प बहु[७]; पुग्गल मभ पुग्गलं[८] पुग्गल करणं अप्पबहु[९] ।

पुद्गल परावर्त्त समझाने के लिये नव द्वार कहते हैं ।

१ नाम द्वार–१ औदारिक पुद्गल परावर्त २ वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त ३ तैजस पुद्गल परावर्त्त ४ कार्मण पुद्गल परावर्त्त ५ मन पुद्गल परावर्त्त ६ वचन पुद्गल परावर्त्त ७ श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्त ।

२ गुण द्वार–पुद्गल परावर्त्त किसे कहते हैं ? इसके कितने प्रकार होते हैं ? इसे किस तरह समझना ? आदि सहज प्रश्न शिष्य के द्वारा पूछे जाते हैं तब गुरु उत्तर देते हैंः–इस संसार के अन्दर जितने पुद्गल हैं उन सबों को जीव ने ले ले कर छोड़े हैं । छोड़ कर पुनः पुनः फिर ग्रहण किये हैं पुद्गल परावर्त्त शब्द का यह अर्थ है कि पुद्गल सूक्ष्म रजकण से लग कर स्थूल से स्थूल जो पुद्गल हैं उन सबों के अन्दर जीव परावर्त्त=समग्र प्रकार से फिर चुका है, सर्व में भ्रमण कर चुका है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औदारिक पने (औदारिक शरीर रह कर औदारिक योग्य जो पुद्गल ग्रहण करते हैं) वैक्रिय पने (वैक्रिय शरीर में रह कर वैक्रिय योग्य पुद्गल ग्रहण करे) तैजस् आदि ऊपर कहे हुवे सात प्रकार से पुद्गल जीव ने ग्रहण किये हैं व छोड़े हैं, ये भी सूक्ष्म पने और बादर पने लिये हैं और छोड़े हैं; द्रव्य से, क्षेत्र से काल से व भाव से एवं चार तरह से जीव ने पुद्गल परावर्त्त किये हैं।

इसका विवरण (खुलासा) नीचे अनुसारः—

पुद्गल परावर्त्त के दो भेदः—१ बादर २ सूक्ष्म ये द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से,

१ द्रव्य से बादर पुद्गल परावर्तः—लोक के समस्त पुद्गल पूरे किये परन्तु, अनुक्रम से नहीं याने औदारिक पने पुद्गल पूरे किये बिना पहले वैक्रिय पने लेवे। व तैजस पने लेवे, कोई भी पुद्गल परावर्त पने बीच में लेकर पुनः औदारिक पने के लिये हुवे पुद्गल पूरे करे एवं सात ही प्रकार से बिना अनुक्रम के समस्त लोक के सर्व पुद्गलों को पूरे करे इसे बादर पुद्गल परावर्त्त कहते हैं।

२ द्रव्य से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—लोक के सर्व पुद्गलों को औदारिक पने पूर्ण करे, फिर वैक्रिय पने फिर तैजस पने एवं एक के बाद एक अनुक्रम पूर्वक सात ही पुद्गल परावर्त्त पने पूर्ण करे उसे सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ क्षेत्र से बादर पुद्गल परावर्त्त–चौदह राजलोक के जितने आकाश प्रदेश हैं उन सर्व आकाश प्रदेश को प्रत्येक प्रदेश में मर मर कर अनुक्रम बिना तथा किसी भी प्रकार से पूर्ण करे।

४ क्षेत्र से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्तः–चौदह राज लोक के आकाश प्रदेश को अनुक्रम से एक के बाद एक १-२-३-४-५-६-७-८-९-१० एवं प्रत्येक प्रदेश में मर कर पूर्ण करे उन में पहले प्रदेश में मर कर तीसरे प्रदेश में मरे अथवा पांचवें आठवें किसी भी प्रदेश में मरे तो पुद्गल परावर्त्त करना नहीं गिना जाता है, अनुक्रम से प्रत्येक प्रदेश में मर कर समस्त लोक पूर्ण करे।

५ काल से बादर पुद्गल परावर्त्त—एक काल चक्र (जिसमें उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी सम्मिलित हैं) के प्रथम समय में मरे पश्चात् दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे अथवा तीसरे समय में मरे एवं तीसरे काल चक्र के किसी भी समय में मरे अर्थात् एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के एक २ समय मर कर एक काल चक्र पूर्ण करे।

६ काल से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—काल चक्र के प्रथम समय में मरे, अथवा दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे, तीसरे काल चक्र के तीसरे समय में मरे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चोथे काल चक्र के चोथे समय में मरे, बीचमें नियम के बिना किसी भी समय में मरे (यह हिसाब में नहीं गिना जाता) एवं एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के अनुक्रम से नियमित समय में मरे।

७ **भाव से बादर पुद्गल परावर्त्त**—जीव के असंख्यात परिणाम होते हैं जिनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् ३-२ ५-४-७-६ एवं अनुक्रम के बिना प्रत्येक परिणाम पर मरे व मर कर असंख्यात परिणाम पूर्ण करे।

८ **भाव से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त**—जीव के असंख्यात परिणाम होते हैं उनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् बीच में कितना ही समय जाने बाद दूसरे परिणाम पर, व अनुक्रम से तीसरे परिणामें चोथे परिणामें एवं असंख्य परिणाम पर मर कर पूर्ण करे।

❀ इति गुण द्वार ❀

३ त्रिसंख्या द्वार

१ **पुद्गल परावर्त्त**—सर्व जीवों ने कितने किये २ एक वचन से एक जीव ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त्त किये ३ बहु वचन से सर्व जीवों ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त्त किये।

१ **सर्व जीवों ने**—औदारिक पुद्गल परावर्त्त; वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त; तैजस् पुद्गल परावर्त्त; आदि ये सातों पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त वार किये ७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ एक वचन से—एक जीव ने-एक नरक के जीव ने औदारिक पुद्गल परावर्त्त, वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त आदि सातों पुद्गल परावर्त्त गत कालमें अनन्त अनन्त वार किये, भविष्य काल में कोई पुद्गल परावर्त्त नहीं करेंगें (जो मोक्ष में जावेंगे वो) कोई करेंगें वे जघन्य १-२-३ पुद्गल परावर्त्त करेंगे उत्कृष्ट अनन्त करेंगे एवं भवनपति आदि २४ दण्डक के एक १ जीव ने सात पुद्गल परावर्त्त गत कालमें अनन्त किये, कितने भविष्य काल में (मोक्ष में जाने से) करेंगें नहीं, जो करेंगें वो १-२-३ उत्कृष्ठ अनन्त करेंगें सात पुद्गल परावर्त्त २४ दण्डक के साथ गिनने से १६८ (प्रश्न) हुवे।

३ बहु वचन से—सर्व जीवों ने--नरक के सर्व जीवों ने पूर्व काल में औदारिक पुद्गल परावर्त्त आदि सातों पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त किये भविष्य काल में अनेक जीव अनन्त करेंगें इसी प्रकार २४ दण्डक के बहुतसे जीवों ने ये अनन्त पुद्गल परावर्त्त किये व भविष्य काल में करेंगे इनके भी १६८ (प्रश्न) होते हैं।

७+१६८+१६८=३४३ (प्रश्न) होते हैं।

४ त्रि स्थानक द्वार

४ एक जीव ने किस २ स्थान २ पर कोन २ से पुद्गल परावर्त्त किये, कोन २ से पुद्गल परावर्त्त करेंगे २ बहुत जीवों ने किस २ स्थान पर पुद्गल परावर्त्त किये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व करेंगे २ सर्व जीवों ने किस २ दण्डक में कोन २ से पुद्गल परावर्त्त किये ।

१ एक वचन से—एक जीव ने नरकपने औदारिक पुद्गल परावर्त्त किये नहीं, करेगा नहीं, वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त किये हैं व करेगा करेगा तो जघन्य-१-२-३ उत्कृष्ट अनन्त करेगा । इसी प्रकार तैजस् पुद्गल परावर्त्त, कार्मण पुद्गल परावर्त्त यावत् श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्त किये हैं व आगे करेगा । ऊपर अनुसार । इसी प्रकार असुर कुमार पने पृथ्वी पने यावत् वैमानिक पने पूर्व काल में औदारिक पुद्गल परावर्त वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त यावत् श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्त किये हैं व करेगा । (ध्यान में रखना चाहिये कि जिस दण्डक में जो २ पुद्गल परावर्त्त होवे वो करे और न होवे उन्हें न करे) । एक नेरिया जीव २४ दण्डक में रह कर सात सात (होवे तो हाँ और न होवे तो नहीं) पुद्गल परावर्त्त किये एवं २४+७=१६८ हुवे । एवं २४ दण्डक का जीव २४ दण्डक में रह कर सात सात पुद्गल परावर्त्त करे । अतः १६८+२४=४० ३२ प्रश्न पुद्गल परावर्त्त के होते हैं ।

बहु वचनसे—सर्व जीवों ने नेरिये पने औदारिक पुद्गल परावर्त किये नहीं, करेंगे नहीं, वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त यावत् श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्त किया और करेंगे इसी प्रकार असुर कुमार पने पृथ्वी पने यावत् वैमानिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पने, जो जो घटे वे वे (पुद्गल परावर्त्त) किये व करेंगे एवं २४ दण्डक में बहुत से जीवों ने पुद्गल परावर्त्त सात सात किये पूर्व अनुसार इसके भी ४०३२ प्रश्न होते हैं।

३ किस किस दण्डक में पुद्गल परावर्त्त किये-- सर्व जीवों ने पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय व मनुष्य इन दश दण्डक में औदारिक पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त वार किये १ नेरिये १० भवनपति १२ वायु काय, १३ संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय पर्याप्त, १४ संज्ञी मनुष्य पर्याप्त, १५ वाण व्यन्तर, १६ ज्योतिषी १७ वैमानिक। इन १७ दण्डक में सर्व जीवों ने वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त अनन्त वार किये। २४ दण्डक में तैजस् पुद्गल परावर्त्त, कार्मण पुद्गल परावर्त्त सर्व जीवों ने अनन्त अनन्त वार किये १४ नेरिया व देवता का दण्डक, १५ संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, १६ संज्ञी मनुष्य। एवं १६ दण्डक में सर्व जीवों ने मन पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त वार किये।

पांच एकेन्द्रिय को छोड़कर १६ दण्डक में सर्व जीवों ने वचन पुद्गल परावर्त्त अनन्त किये एवं १३४ प्रश्न होते हैं तीनों ही स्थानक में ८१६८ प्रश्न होते हैं।

॥ इति त्रिस्थानक द्वार ॥

५ काल द्वार--अनन्त उत्सर्पिणी अनन्त अवसर्पिणी व्यतीत होवे तब जाकर कहीं एक औदारिक पुद्गल परावर्त होता है इसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त इतना ही समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाने बाद होता है । सात पुद्गल परावर्त्त में अनन्त अनन्त काल चक्र व्यतीत हो जाते हैं ।

॥ इति काल द्वार ॥

६ काल की ओपमाः—काल समझाने के लिये एक दृष्टान्त दिया जाता है । परमाणु यह सूक्ष्म से सूक्ष्म रज कण, यह अतीन्द्रिय (इन्द्रिय से अगम्य) होता है कि जिसका भाग व हिस्सा किसी भी शस्त्र से किंवा किसी भी प्रकार से हो सक्ता नहीं अत्यन्त बारीक सूक्ष्म से सूक्ष्म रज कण को परमाणु कहते हैं । इस प्रकार के अनन्त सूक्ष्म परमाणु से एक व्यवहार परमाणु होता है । २ अनन्त व्यवहार परमाणु से एक उष्ण स्निग्ध परमाणु होता है । ३ अनन्त उष्ण स्निग्ध परमाणु से एक शीत स्निग्ध परमाणु होता है । ४ आठ शीत स्निग्ध परमाणु से एक ऊर्ध्व रेणु होता है । ५ आठ ऊर्ध्व रेणु से एक त्रस रेणु । ६ आठ त्रस रेणु से एक रथरेणु । ७ आठ रथ रेणु से देव-उत्तर कुरु के मनुष्यों का एक बालाग्र । हरि-रम्यक वर्ष के मनुष्यों का एक बालाग्र ९ इन आठ बालाग्र से हेमवय हिरण्य वय मनुष्यों का एक वालाग्र १० इन आठ बालाग्र से पूर्व विदेह व पश्चिम विदेह मनुष्यों का एक बालाग्र ११ इन बालाग्र से भरत ऐरावत के मनुष्यों का एक बालाग्र १२ इन आठ बालाग्र से एक लीख १३ आठ लीख की एव जूँ, १४ आठ जूँ का एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्ध जव १५ आठ अर्ध जव का एक उत्सेध अङ्गुल १६ छः उत्सेध अङ्गुलों का एक पैर का पहोल पना (चौड़ाई) १७ दो पैर के पहोल पने का एक वेंत १८ दो वेंत एक हाथ दो हाथ एक कुक्षि १९ दो कुक्षि एक धनुष्य २० दो हजार धनुष्य का एक गाउ (कोस) २१ चार गाउ का एक योजन । कल्पना करो कि ऐसा एक योजन का लम्बा, चोड़ा, व गहरा कुवा हो उसमें देव-उत्तर कुरु मनुष्यों के बाल--एक २ बाल के असंख्य खण्ड करे--बाल के इन असंख्य खण्डों से तल से लगाकर ऊपर तक ठूंस २ कर वो कुवा भरा जावे कि जिसके ऊपर से चक्रवर्ती का लश्कर चला जावे परन्तु एक बाल नमे नहीं, नदी का प्रवाह (गङ्गा और सिन्ध नदी का) उस पर बह कर चला जावे परन्तु अन्दर पानी भिदा सके नहीं, अग्नि भी यदि लग जावे तो वो अन्दर प्रवेश कर सके नहीं। ऐसे कुवे के अन्दर से, सो सो वर्ष × के बाद एक बाल--खण्ड निकाले, एवं सो सो वर्ष के बाद एक २ खण्ड निकालने से जब कुवा खाली हो जावे उतने समय को शास्त्र कार एक पल्योपम कहते हैं ऐसे दश क्रोड़ा

× असंख्य समय की एक आवालिका, संख्यात आवालिका का एक श्वास, संख्यात समय का एक निश्वास दो मिलकर एक प्राण सात प्राण का एक स्तोक (अल्प समय), सात स्तोक का एक लव (दो काष्टा का माप) ७७ लव का एक मुहूर्त, तीश मुहूर्त एक अहोरात्रि १५ अहो रात्रि एक पक्ष, दो पक्ष एक माह, बारह माह एक वर्ष ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रोड़ पल्य का एक सागर होता है। २० क्रोड़ा क्रोड़ सागरों का एक काल चक्र होता है।

॥ इति कालोपमा द्वार ॥

७ काल अल्प बहुत्व द्वारः—१ अनन्त काल चक्र जावे तब एक कार्मण पुद्गल परावर्त्त होवे। २ अनन्त कार्मण पुद्गल परावर्त्त जावे तब तैजस पुद्गल परावर्त्त होवे। ३ अनन्त तैजस् पुद्गल परावर्त्त जावे तब एक औदारिक पुद्गल परावर्त्त होवे। ४ अनन्त औ० पु० परा० जावे तब एक श्वासो श्वास पुद्गल परावर्त्त होवे ५ अनन्त श्वा० पु० परा० जावे तब एक मन पुद्गल परा० होवे। ६ अनन्त मन पु० परा० जावे तब एक वचन पु० परा० होवे। ७ अनन्त वचन पु० परा० जावे तब एक वैक्रिय पु० परा० होवे।

॥ इति अल्प बहुत्व द्वार ॥

८ पुद्गल मध्य पुद्गल परावर्त्त द्वारः—१ एक कार्मण पुद्गल परावर्त्त में अनन्त काल चक्र जावे। २ एक तैजस् पुद्गल परा० में अनन्त कार्मण पु० परा० जावे ३ एक औदारिक पु० परा० में अनन्त तैजस् पु० परा० जावे ४ एक श्वासो श्वास पु० परा० में अनन्त औदारिक पु० परा० जावे ५ एक मन पु० परा० में अनन्त श्वासो पु० परा० जावे ६ एक वचन पु० परा० में अनन्त मन पु० परा० जावे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७ एक वैक्रिय पु० परा० में अनन्त वचन पु० परा० जाव।

॥ इति पुद्गल मध्य पुद्गल परावर्त्त द्वार ॥

९ पुद्गल परावर्त्त किये उनका अल्प बहुत्वः—
१ सर्व जीवों ने सर्व से अल्प वैक्रिय पु० परा० किये २ इस से वचन पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये ३ इससे मन पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये ४ इससे श्वासो० पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये ५ इससे औदारिक पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये ६ इससे तैजस् पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये ७ इससे कार्मण पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये।

॥ इति पुद्गल करण अल्प बहुत्व ॥

॥ इति पुद्गल परावर्त्त सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवों की मार्गणा का ५६३ प्रश्न

किस २ स्थान पर मिलते हैं

अनुक्रम	उसकी मार्गणा के प्रश्न	नरक के १४ भेद	तिर्यंच के ४८ भेद	मनुष्य के ३०३ भेद	देवता के १९८ भेद
१	अधो लोक में केवली में जीव के भेद	०	०	१	०
२	निश्चय एकाव तारी में	०	०	०	२
३	तेजो लेशी एकेन्द्रिय में	०	३	०	०
४	पृथ्वी काय में	०	४	०	०
५	मिश्र दृष्टि तिर्यंच में	०	५	०	०
६	उर्ध्व लोक देवी में	०	०	०	६
७	नरक के पर्याप्त में	७	०	०	०
८	दो योग वाले तिर्यंच में	०	८	०	०
९	उर्ध्व लोक नो गर्भज तेजो लेश्या में	०	३	०	६
१०	एकान्त सम्यक् दृष्टि में	०	०	०	१०
११	वचन योगी चक्षु इन्द्रिय तिर्यंच में	०	११	०	०
१२	अधो लोक के गर्भज में	०	१०	२	०
१३	वचन योगी तिर्यंच में	०	१३	०	०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४ अधो लोक वचन योगी औदारिक शरीर में	०	१३	१	०
१५ केवली में	०	०	१५	०
१६ उर्ध्व लोक पंचेन्द्रिय तेजो लेश्या में	०	१०	०	६
१७ सम्यक् दृष्टि घ्राणेन्द्रिय तिर्यंच में	०	१७	०	०
१८ सम्यक् दृष्टि तिर्यंच में	०	१८	०	०
१९ उर्ध्व लोक तेजोलेश्या में	०	१३	०	६
२० मिश्र दृष्टि गर्भज में	०	५	१५	०
२१ औदारिक शरीर में से वैक्रिय करने वाले में	०	६	१५	०
२२ एकेन्द्रिय जीवों में	०	२२	०	०
२३ अधो लोक के मिश्र दृष्टि में	७	५	१	१०
२४ घ्राणेन्द्रिय तिर्यंच में	०	२४	०	०
२५ अधोलोक के वचन योगी देवों में	०	०	०	२५
२६ त्रस तिर्यंच में	०	२६	०	०
२७ शुक्ल लेशी मिश्र दृष्टि में	०	५	१५	७
२८ तिर्यंच एक संहनन वाले में	०	२८	०	०
२९ अधोलोक त्रस औदारिक में	०	२६	३	०
३० एकांत मिथ्यात्वी तिर्यंच में	०	३०	०	०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१ अधोलोक पुरुष वेद भाषक में	०	५	१	२५
३२ पद्म लेशी मिश्र दृष्टि में	०	५	१५	१२
३३ पद्म लेशी वचन योगी में	०	५	१५	१३
३४ उर्ध्वलोक में एकांत मिथ्या. में	०	२८	०	६
३५ अवधिदर्शन औदारिक शरीरमें	०	५	३०	०
३६ उर्ध्व लोक एकांत नपुंसक में	०	३६	०	०
३७ अधो लोक पंचेन्द्रिय नपुंसकमें	१४	२०	३	०
३८ अधो लोक मन योगी में	७	५	१	२५
३९ अधो लोक एकांत असंज्ञी में	०	३८	१	०
४० औदारिक शुक्ल लेशी में	०	१०	३०	०
४१ शुक्ललेशी सम्य. दृष्टि अभा.में	०	५	१५	२१
४२ शुक्ल लेशी वचन योगी में	०	५	१५	२२
४३ उर्ध्व लोक मन योगी में	०	५	०	३८
४४ शुक्ल लेशी देवताओं में	०	०	०	४४
४५ कर्म भूमि मनुष्यों में	०	०	४५	०
४६ अधो लोक के वचन योगी में	७	१३	१	२५
४७ शुक्ल लेशी उर्ध्वलोकमें अव.ज्ञान	०	५	०	४२
४८ अधो लोक में त्रस अभाषक	७	१३	३	२५
४९ उर्ध्वलोक शुक्लेशी अव.दर्शन	०	५	०	४४
५० ज्योतिषी की आगति में	०	५	४१	०
५१ अधोलोक में औदारिक शरीरमें	०	४८	३	०
५२ उर्ध्वलोक शुक्लेशी सम्यँ.दृष्टि	०	१०	०	४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३ अधोलोक के एकांत नपुं. वेद में	१४	३८	१	०
५४ उर्ध्वलोक शुक्ल लेशी में	०	१०	०	४४
५५ अधोलोक बादर नपुंसक में	१४	३८	३	०
५६ तिर्यक् लोक मिश्र दृष्टि में	०	५	१५	३६
५७ अधो लोक पर्याप्त में	७	२४	१	२५
५८ अधोलोक अपर्याप्त में	७	२४	२	२५
५९ कृष्ण लेशी मिश्र दृष्टि में	३	५	१५	३६
६० अकर्म भूमि संज्ञी में	०	०	६०	०
६१ उर्ध्व लोक अनाहारिक में	०	२३	०	३८
६२ अधोलोक एकान्त मिथ्यात्वी में	१	३०	१	३०
६३ उर्ध्व लोक तथा अधोलोक देव (मरनेवालों में	०	०	०	६३
६४ पद्म लेशी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	३०	२४
६५ अधो लोक तेजो लेशी में	०	१३	२	५०
६६ पद्म लेशी में	०	१०	३०	२६
६७ मिश्र दृष्टि देवता में	०	०	०	६७
६८ तेजो लेशी मिश्र दृष्टि में	०	५	१५	४८
६९ उर्ध्व लोक बादर शाश्वत में	०	३१	०	३८
७० अधो लोक में अभाषक में	७	३५	३	२५
७१ अधो लोक अवधि दर्शन में	०४	५	२	५०
७२ तिर्यक् लोक के देवताओं में	०	०	०	७२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७३ अधो लोक के बादर मरने वालों में	७	३८	३	२५
७४ मिश्र दृष्टि नो गर्भज में	७	०	०	६७
७५ उर्ध्व लोक में अवधि ज्ञान में	०	५	०	७०
७६ उर्ध्व लोक में देवताओं में	०	०	०	७६
७७ अधो लोक में चक्षु इन्द्रिय नो गर्भज में	१४	१२	१	५०
७८ उर्ध्व लोक में नो गर्भज सम्यक् दृष्टि में	०	८	०	७०
७९ उर्ध्व लोक में शाश्वत में	०	४१	०	३८
८० धातकी खण्ड में त्रस में	०	२६	५४	०
८१ सम्यक् दृष्टि देवताओं के पर्याप्त में	०	०	०	८१
८२ शुक्ल लेशी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	३०	४२
८३ अधो लोक में मरने वालो में	७	४८	३	२५
८४ शुक्ल लेशी जीवों में	०	१०	३०	४४
८५ अधो लोक कृष्ण लेशी त्रस में	६	२६	३	५०
८६ उर्ध्व लोक पुरुष वेद में	०	१०	०	७६
८७ उर्ध्व लोक घ्राणेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	०	१७	०	७०
८८ उर्ध्व लोक सम्यग् दृष्टि में	०	१८	०	७०
८९ अधो लोक चक्षु इन्द्रिय में	१४	२२	३	५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९० मनुष्य सम्यग् दृष्टि में	०	०	९०	०
९१ अधो लोक में घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३	५०
९२ उर्ध्व लोक त्रस मिथ्यात्वी में	०	२६	०	६६
९३ अधो लोक त्रस में	१४	२६	३	५०
९४ देवता मिथ्यात्वी पर्याप्त में	०	०	०	९४
९५ नो गर्भज अभाषक सम्यग् दृष्टि में	६	८	०	८१
९६ उर्ध्व लोक पंचेन्द्रिय में	०	२०	०	७६
९७ अधो लोक कृष्ण लेशी बादर में	६	३८	३	५०
९८ धातकी खण्ड में प्रत्येक श.में	०	४४	५४	०
९९ वचन योगी देवताओं में	०	०	०	९९
१०० उर्ध्व लोक प्रत्येक शरीर बादर मिथ्यात्वी	०	३४	०	६६
१०१ वचन योगी मनुष्यों में	०	०	१०१	०
१०२ उर्ध्व लोक त्रस में	०	२६	०	७६
१०३ अधो लोक नो गर्भज में	१४	१८	१	५०
१०४ एकान्त मिथ्यात्व शाश्वत में	०	३०	५६	१८
१०५ अधो लोक बादर में	१४	३८	३	५०
१०६ मन योगी गर्भज में	०	५	१०१	०
१०७ अधो लोक कृष्ण लेशी में	६	४८	३	५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०८ औदारिक शरीर सम्यग् दृष्टि में	०	१८	६०	०
१०९ कृष्ण लेशी वैक्रिय शरीर नो गर्भज में	६	१	०	१०२
११० उर्ध्व लोक बादर प्रत्येक शरीर में	०	३४	०	७६
१११ अधो लोक प्रत्येक शरीरमें	१४	४४	३	५०
११२ उर्ध्व लोक मिथ्यात्वी	०	४६	०	६६
११३ वचन योगी घ्राणेन्द्रिय औदारिक में	०	१२	१०१	०
११४ औदारिक वचन योगी में	०	१३	१०१	०
११५ अधो लोक में	१४	४८	३	५०
११६ मनुष्य अपर्याप्त मरने वालों में	०	०	११६	०
११७ क्रिया वादी समोशरण अमर में	६	०	३०	८१
११८ उर्ध्व लोक प्रत्येक शरीर में	०	४२	०	७६
११९ घ्राणेन्द्रिय मिश्र योग शाश्वत में	७	१२	१५	८५
१२० एकान्त असंज्ञी अपर्याप्त में	०	१९	१०१	०
१२१ विभंग ज्ञान वालों में	७	५	१५	९४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२२ कृष्ण लेशी वैक्रिय शरीर स्त्री वेद में	०	५	१५	१०२
१२३ तीन औदारिक शाश्वत में	०	३७	८६	०
१२४ लवण समुद्र में घ्राणेन्द्रिय शाश्वत में	०	१२	११२	०
१२५ लवण समुद्र में तेजो लेशी में	०	१३	११२	०
१२६ मरने वाले गर्भज जीवों में	०	१०	११६	०
१२७ वैक्रिय शरीर मरने वालों में	७	६	१५	९९
१२८ देवियों में	०	०	०	१२८
१२९ एकान्त असंज्ञी बादर में	०	२८	१०१	०
१३० लवण समुद्र त्रस मिश्र योगी में	०	१८	११२	०
१३१ मनुष्य नपुंसक वेदमें	०	०	१३१	०
१३२ शाश्वत मिश्र योगी में	७	२५	१५	८५
१३३ मन योगी सम्यग् दृष्टि असंख्यात भववालों में	७	५	४५	७६
१३४ बादर औदारिक शाश्वत में	०	३३	१०१	०
१३५ प्रत्येक शरीरी एकान्त असंज्ञी में	०	३४	१०१	०
१३६ तीन लेश्या औदारिक शरीरमें	०	३५	१०१	०
१३७ क्रिया वादी अशाश्वत में	६	५	४५	८१
१३८ मन योगी सम्यग् दृष्टि में	७	५	४५	८१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३९ औदारिक शरीर नो गर्भज में	०	३८	१०१	०
१४० कृष्ण लेशी अमर में	३	०	८६	५१
१४१ अवधि दर्शन मरने वालोंमें	७	५	३०	९९
१४२ पंचेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि मरने वालों में	६	१०	४५	८१
१४३ एकांत नपुंसक बादर में	१४	२८	१०१	०
१४४ नो गर्भज शाश्वत में	७	३८	०	९९
१४५ अपर्याप्त सम्यग् दृष्टि में	६	१३	४५	८१
१४६ त्रस नो गर्भज एकांत मि.में	१	८	१०१	३६
१४७ लवण समुद्र के अभाषक में	–	३५	११२	–
१४८ स्त्री वेद वैक्रिय शरीर में	–	५	१५	१२८
१४९ संज्ञी एकांत मिथ्यात्वी में	१	–	११२	३६
१५० तिर्यक् लोक में वचन योगीमें	–	१३	१०१	३६
१५१ तिर्यक् लोक पंचेंद्रिय नपुं.में	–	२०	१३१	–
१५२ तिर्यक्लोक पंचेंद्रिय शाश्वतमें	–	१५	१०१	३६
१५३ एकांत नपुंसक वेदमें	१४	३८	१०१	–
१५४ तेजो लेशी वचन योगी सम्यक् दृष्टि में	–	५	१०१	४८
१५५ तिर्यक् लोक में प्रत्येक- शरीरी बादर पर्याप्त में	–	१८	१०१	३६
१५६ तिर्यक् लोक बादर पर्याप्त में	–	१९	१०१	३६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५७ मनुष्य एकांत मिथ्यात्वी अपर्याप्त में	–	–	१५७	–
१५८ नो गर्भज एकांत मिथ्या दृष्टि बादर में	–	२०	१०१	३६
१५९ तिर्यक् लोक प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	–	२२	१०१	३६
१६० तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी सम्यग् दृष्टि में	–	१८	९०	५२
१६१ तिर्यक् लोक पर्याप्त में	–	२४	१०१	३६
१६२ देवता सम्यग् दृष्टि में	–	–	–	१६२
१६३ स्त्री वेद अवधि दर्शन में	–	५	३०	१२८
१६४ प्रत्येक शरीरी नो गर्भज एकान्त मिथ्या दृष्टि में	१	२६	१०१	३६
१६५ पंचेन्द्रिय नपुंसक वेद में	१४	२०	१३१	–
१६६ अभाषक मरने वालों में	–	३५	१३१	–
१६७ कृष्ण लेशी घ्राणेन्द्रिय वचन योगी में	३	१२	१०१	५१
१६८ कृष्ण लेशी वचन योगी में	३	१२	१०१	५१
१६९ तिर्यक् लोक नो गर्भज कृष्ण लेशी त्रस में	–	१६	१०१	५२
१७० तेजो लेशी वचन योगी में	–	५	१०१	६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७१ नो गर्भज कृष्ण लेशी त्रस मरने वालों में	३	१६	१०१	५१
१७२ कृष्ण लेशी स्त्री वेद सम्यक् दृष्टि में	–	१०	६०	७२
१७३ तेजो लेशी अभाषक में	–	८	१०१	६४
१७४ नो गर्भज कृष्ण लेशी अपर्याप्त में	३	१६	१०१	५१
१७५ औदारिक शरीर चार लेशीमें	–	३	१७२	–
१७६ लवण समुद्र त्रस एकांत मिथ्यात्वी में	–	८	१६८	–
१७७ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	–	१५	६०	७२
१७८ तिर्यक् लोक चक्षु इन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	–	१६	६०	७२
१७९ तिर्यक् लोक समुच्चय नपुंसक वेद में	–	४८	१३१	–
१८० तिर्यक् लोक सम्यग् दृष्टि में	–	१८	६०	७२
१८१ नो गर्भज चक्षु इन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	१३	६	–	१६२
१८२ नो गर्भज घ्राणेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	१३	७	–	१६२
१८३ नो गर्भज सम्यग् दृष्टि में	१३	८	–	१६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८४ मिश्र योगी देवता वैक्रिय शरीर में	—	—	—	१८४
१८५ कृष्ण लेशी सम्यग् दृष्टि में	५	१८	६०	७२
१८६ नील लेशी सम्यग् दृष्टिमें	६	१८	६०	७२
१८७ अभाषक मनुष्य एक संस्थानी में	—	—	१८७	—
१८८ विभंग ज्ञानी देवताओं में	—	—	—	१८८
१८९ तिर्यक् लोक नो गर्भज त्रसमें	—	१६	१०१	७२
१९० लवण समुद्र चक्षु इन्द्रिय में	—	२२	१६८	—
१९१ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी नो गर्भज में	—	३८	१०१	५२
१९२ लवण समुद्र घ्राणेन्द्रिय में	—	२४	१६८	—
१९३ समुच्चय नपुंसक वेद में	१४	७८	१३१	५२
१९४ लवण समुद्र त्रस जीवों में	—	२६	१६८	—
१९५ सम्यग् दृष्टि वैक्रिय शरीरमें	१३	५	१५	१६२
१९६ तेजो लेशी सम्यग् दृष्टि में	—	१०	९०	९६
१९७ एक वेदी चक्षु इन्द्रिय में	१४	१२	१०१	७०
१९८ एकांत मिथ्यात्वी अभाषकमें	१	२२	१५७	१८
१९९ नो गर्भज वैक्रिय मिश्र योगी में	१४	१	—	१८४
२०० वचन योगी तीन शरीर में	७	८	८६	९९
२०१ एक वेदी त्रस में	१४	१६	१०१	७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०२ नो गर्भज विभंग ज्ञानी में	१४	—	—	१८८
२०३ नो गर्भज वैक्रिय शरीरी मिथ्यात्वी में	१४	१	—	१८८
२०४ एकांत मिथ्यात्व दृष्टि तीन शरीर में	—	२९	१५७	१८
२०५ एकांत मिथ्यात्व दृष्टि मरने वालों में	—	३०	१५७	१८
२०६ लवण समुद्र बादर में	—	३८	१६८	—
२०७ मनयोगी मिथ्यात्वी में	७	५	१०१	९४
२०८ अनेक भववाले अवधि ज्ञान में	१३	५	३०	१६०
२०९ समुच्चय संख्यात काल के त्रस मरने वालों में	१	२६	१३१	५१
२१० एकान्त संज्ञी मिश्र योगी में	१३	५	४५	१४७
२११ तिर्यक् लोक नोगर्भज में	—	३८	१०१	७२
२१२ मनयोगी जीवों में	७	५	१०१	९९
२१३ एकान्त मिथ्यात्वी मनुष्य में	—	—	२१३	—
२१४ मिथ्यात्वी वैक्रिय मिश्र योगी में	१४	६	१५	१७९
२१५ औदारिक तेजो लेशी में	—	१३	२०२	—
२१६ लवण समुद्र में	—	४८	१६८	—
२१७ वचन योगी पंचेन्द्रिय में	७	१०	१०१	९९
२१८ त्रस वैक्रिय मिश्र में	१४	५	१५	१८४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१६ वैक्रिय मिश्र में	१४	६	१५	१८४
२२० वचन योगी में	७	१३	१०१	६६
२२१ अचरम बादर पर्याप्त में	७	१६	१०१	६४
२२२ पंचेन्द्रिय शाश्वत में	७	१५	१०१	६६
२२३ वैक्रिय मिथ्यात्वी में	१४	६	१५	१८८
२२४ चक्षु इन्द्रिय शाश्वत में	७	१७	१०१	६६
२२५ प्रत्येक शरीर बादर पर्याप्त में	७	१८	१०१	६६
२२६ औदारिक शरीरी अपर्याप्त में	–	२४	२०२	–
२२७ नोगर्भज बादर अभाषक में	७	२०	१०१	६६
२२८ त्रस शाश्वत में	७	२१	१०१	६६
२२६ प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	७	२२	१०१	६६
२३० त्रस औदारिक शरीरी अभाषक में	–	१३	२१७	–
२३१ पर्याप्त जीवों में	७	२४	१०१	६६
२३२ पंचेन्द्रिय औदारिक मिश्र योगी में	–	१५	२१७	–
२३३ वैक्रिय शरीर में	१४	६	१५	१६८
२३४ औदारिक मिश्र योगी घ्राणेन्द्रिय में	–	१७	२१७	–
२३५ औदारिक मिश्र योगी त्रस में	–	१८	२१७	–
२३६ मनुष्य की आगति नो गर्भज में	६	३०	१०१	६६
२३७ औदारिक शरीरी पंचेन्द्रिय मरने वालों में	–	२०	२१७	–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३८ प्रत्येक शरीरी बादर शाश्वत में	७	३१	१०१	६६
२३६ समदृष्टि मिश्र योगी में	१३	१८	६०	१४८
२४० शाश्वत बादर में	७	३३	१०१	६६
२४१ प्रत्येक शरीरी नोगर्भज मरने वालों में	७	३४	१०१	६६
२४२ बादर औदारिक मिश्र योगी में	–	२५	२१७	–
२४३ औदारिक एकान्त मिथ्यात्वी में	–	३०	२१३	–
२४४ तीन शरीर नो गर्भज मरने वालों में	७	३७	१०१	६६
२४५ संमूर्छिम असंज्ञी त्रस में	१	२१	१७२	५१
२४६ प्रत्येक शरीरी शास्वत में	७	३६	१०१	६६
२४७ अवधि दर्शन में	१४	५	३०	१६८
२४८ तिर्यक् पंचेन्द्रिय अपर्याप्त में	–	१०	२०२	३६
२४६ तिर्यक् चक्षुइन्द्रिय अपर्याप्त में	–	११	२०२	३६
२५० भव्य सिद्धि शाश्वत में	७	४३	१०१	६६
२५१ तिर्यक् त्रस अपर्याप्त में	–	१३	२०२	३६
२५२ औदारिक अभाषक में	–	३५	२१७	–
२५३ मिश्र योगी मरने वालों में	७	३०	१३१	८५
२५४ स्त्री वेद मिश्र योगी में	–	१०	११६	१२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५५ पंचेन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	५	२१३	३६
२५६ चक्षु इन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	६	२१३	३६
२५७ घ्राणेन्द्रिय एकान्त मिथ्यावी	१	७	२१३	३६
२५८ त्रस एकान्त मिथ्यात्वी में	१	८	२१३	३६
२५९ धर्म देव की आगति के घ्राणेन्द्रिय में	५	२४	१३१	९९
२६० पंचेन्द्रिय तीन शरीरी सम्यक् दृष्टि में	१३	१०	७५	१६२
२६१ कृष्ण लेशी अशाश्वत में	३	५	२०२	५१
२६२ पुरुष वेदी सम्यक् दृष्टि में	–	१०	९०	१६२
२६३ प्रत्येक शरीरी समुच्चय असंज्ञी में	१	३९	१७२	५१
२६४ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी स्त्री वेद में	–	१०	२०२	५२
२६५ औदारिक शरीर मरने वालों में	–	४८	२१७	–
२६६ पंचेन्द्रिय कृष्ण लेशी अनहारी में	३	१०	२०२	५१
२६७ चक्षु इन्द्रिय कृष्ण लेशी अनाहारी में	३	११	२०२	५१

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

२६८	एक दृष्टि त्रस काय में	१	८	२१३	४६
२६६	तिर्यक् कृष्ण लेशी त्रस मरने वालों में	—	२६	२१७	२६
२७०	बादर एकान्त मिथ्यात्वी में	१	२०	२१३	३६
२७१	मनुष्य की आगति के मिथ्यात्वी में	६	४०	१३१	६४०
२७२	मनुष्य की आगति के प्रत्येक शरीरी में	६	३६	१३१	६६
२७३	नील लेशी एकांत मिथ्यात्वीमें	०	३०	२१३	३०
२७४	कृष्ण लेशी मिथ्यात्वी में	१	३०	२१३	३०
२७५	क्रिया वादी समोसरण में	१३	१०	६०	१६२
२७६	मनुष्य की आगति में	६	४०	१३१	६६
२७७	चार लेश्या वालों में	०	३	१७२	१०२
२७८	तिर्यक् लोक बादर अभाषक में	०	२५	२१७	३७
२७९	चक्षु इन्द्रिय सम्यक् अनेक भव वालों में	१३	१६	६०	१६०
२८०	पंचेन्द्रिय सम्यक् दृष्टि में	१३	१५	६०	१६२
२८१	चक्षु इन्द्रिय दृष्टि में	१३	१६	६०	१६२
२८२	घ्राणेन्द्रिय दृष्टि में	१३	१७	६०	१६२
२८३	त्रस काय दृष्टि में	१३	१८	६०	१६२
२८४	तिर्यक् लोक के पुरुष वेदमें	०	१०	२०२	७२
२८५	चक्षु इंद्रिय एक संस्थान औदारिक में	०	१२	२७३	०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८६ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थान औदारिक में	०	१३	२७३	०
२८७ तिर्यक् तेजो लेशी में	०	१३	२०२	७२
२८८ तीन शरीरी मनुष्य में	०	०	२८८	०
२८९ त्रस एक संस्थान औदारिक में	०	१६	२७३	०
२९० एक दृष्टि वाले जीवों में	१	३०	२१३	४६
२९१ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी मरने वालों में	०	४८	२१७	२६
२९२ जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २ सागर १ संठाण मरने वालोंमें	२	३८	१८७	६५
२९३ चक्षु इंद्रिय कृष्ण लेशी मरने वालों में	३	२२	२१७	५१
२९४ नो गर्भज की आगति के कृष्ण लेशी त्रस में	०	२६	२१७	५१
२९५ घ्राणेन्द्रिय कृष्ण लेशी मरने वालों में	३	२४	२१७	५१
२९६ एकांत संज्ञी में	१३	५	१३१	१४७
२९७ त्रस कृष्ण लेशी मरने वालोंमें	३	२६	२१७	५१
२९८ पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक संस्थानीमें	७	५	१८७	९९
२९९ चक्षु इंद्रिय पर्याप्त एक संस्था.में	७	६	१८७	९९
३०० स्त्री वेद पर्याप्त एक संस्थानी में	०	०	१७२	१२८
३०१ एक संस्थानी औदारिक बादर में	--	२८	२७३	--

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

३०२ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी अचरम मरने वालों में	७	१४	१८७	६४
३०३ मनुष्य में	--	--	३०३	--
३०४ नो गर्भज पंचेन्द्रिय मिश्र योगी में	१४	५	१०१	१८४
३०५ सम्यक्० आगति कृष्ण लेशी बादर में	३	३४	२१७	५१
३०६ तिर्यक् घ्राणेन्द्रिय मिश्र योगी में	०	१७	२१६	७२
३०७ तिर्यक त्रस मिश्र योगी में	--	१८	२१७	७२
३०८ अशाश्वत मिथ्यात्वी में	७	५	२०२	६४
३०९ सम्यक् आगति एक संस्थानी त्रस में	७	१६	१८७	६६
३१० औदारिक तीन शरीरी एक संस्थानी में	-	३७	२७३	--
३११ औदारिक एक संस्थानी में	-	३८	२७३	--
३१२ नोगर्भज की आगति कृष्ण तीन शरीरी	--	४३	२१७	५२
३१३ अशाश्वत में	७	५	२०२	६६
३१४ कृष्ण लेशी स्त्री वेद में	--	१०	२०२	१०२
३१५ प्र० तीन शरीरी कृष्ण. मरने वालों में	३	४४	२१७	५१
३१६ त्रस अनाहारी अचरम में	७	१३	२०२	६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१७ नो गर्भज घ्राणे. मिथ्या. में	१४	१४	१०१	१८८
३१८ श्रोत्रेन्द्रिय अपर्याप्त में	७	१०	२०२	६६
३१९ कृष्ण लेशी मरने वालों में	३	४८	२१७	५१
३२० तीन शरीरी स्त्री वेद में	—	५	१८७	१२८
३२१ त्रस अपर्याप्त में	७	१३	२०२	६६
३२२ बादर अनाहारी अचरम में	७	१६	२०२	६४
३२३ नोगर्भज पंचेन्द्रिय में	१४	१०	१०१	१६८
३२४ तीन शरीरी त्रस मिथ्या. में	७	२१	२०२	६४
३२५ औदारिक चक्षु इन्द्रिय में	--	२२	३०३	--
३२६ मिथ्यात्वी एक संस्थानी मरने वालों में	७	३८	१८७	६४
३२७ नो गर्भज घ्राणेन्द्रिय में	१४	१४	१०१	१६८
३२८ बादर अभाषक अचरम में	७	२५	२०२	६४
३२९ औदारिक त्रस में	--	२६	३०३	--
३३० औदारिक एकान्त भवधारणी देह	—	४२	२८८	—
३३१ नो गर्भज बादर मिथ्या. में	१४	२८	१०१	१८८
३३२ त्रस एकान्त संख्या काल की स्थिति वाले में	७	२४	२०२	६६
३३३ चक्षु इन्द्रिय एक संस्थानी	७	२०	२०७	६६
३३४ तिर्यक् अधो लोक की स्त्री में	—	१०	२०२	१२२
३३५ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी स्थिति वाले में	७	२२	२०७	६६

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

३३६ कार्मण योग त्रस में	७	१३	२१७	६६
३३७ नोगर्भज प्र.शरीरी अचर.में	१४	३४	१०१	१८८
३३८ अभाषक अचरम में	७	३५	२०२	६४
३३९ उर्ध्व. तिर्यक्. के मरने वालोंमें	०	४८	२१७	७४
३४० नोगर्भज बाद. तीन शरीरीमें	१४	२७	१०१	१६८
३४१ औदारिक बादर में	०	३८	३०३	०
३४२ घाणेंद्रिय मिथ्या.मरने वालोंमें	७	२४	२१७	६४
३४३ तेजो लेश्या वाले जीवों में	०	१३	२०२	१२८
३४४ त्रस मिथ्या. मरने वालोंमें	७	२६	२१७	६४
३४५ तीन शरीरी " " "	७	४२	२०२	६४
३४६ प्रत्येक शरीरी ज. अं. उ. १६ सा. स्थिति के मरने वालों में	५	४४	२१७	८०
३४७ अनाहारक जीवों में	७	२४	२१७	६६
३४८ बादर अभाषक में	७	२५	२१७	६६
३४९ त्रस मरने वालों में	७	२६	२१७	६६
३५० नो गर्भज तीन शरीरी में	१४	३७	१०१	१६८
३५१ औदारिक शरीर में	०	४८	३०३	०
३५२ ज. अं. उ. १७ सागर की स्थिति के मरने वालों में	६	४८	२१७	८१
३५३ नो गर्भज की गति के त्रस तीन शरीर में	२	२१	२२८	१०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५४ मिथ्या० एकान्त संख्या० स्थिति में	७	४६	२०७	६४
३५५ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय एक संस्थानी	—	१०	२७३	७२
३५६ बादर मिथ्या० मरने वालों में	७	३८	२१७	६४
३५७ सम्य० आगति के बादर में	७	३४	२१७	६६
३५८ अभाषक जीवों में	७	३५	२१७	०६
३५९ तिर्यक् घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी में	—	१४	२७३	७२
३६० ,, त्रस ,,	०	१०	२०२	१४८
३६१ ऊर्ध्व, तिर्यक्, पुरुष वेद में	०	१६	२७३	७२
३६२ प्र. शरीरी मिथ्या, मरने वालों में	७	४४	२१७	६४
३६३ सम्य, आगति में	७	३०	२१७	६६
३६४ नो गर्भज की गति के बादर तीन शरीर में	२	३२	२२८	१०२
३६५ ज. अं, उ, २९ सागर की स्थिति के मरने वालों में	७	४८	२१७	६३
३६६ मिथ्या, मरने वालों में	७	४८	२१७	६४
३६७ प्र, शरीरी मरने वालों में	७	४४	२१७	६६
३६८ पुरुष एक संस्था, अनेक भववालों में	—	—	१७२	१६६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६९ अधो.तिर्य.चक्षु.मिश्र योगी में	१४	१६	२१७	१२२
३७० कृष्ण लेशी संख्या. स्थिति वालों में	३	४८	२१७	१०२
३७१ समुच्चय मरने वालों में	७	४८	२१७	९९
३७२ तिर्य. कृष्ण. तीन शरीरी बादर में	—	३२	२८८	५२
३७३ तिर्य. बादर एक संस्थानी में	—	२८	२७३	७२
३७४ अ. ति. बादर कृष्ण एकान्त भव धारणी देह	३	३२	२८८	५१
३७५ तिर्य. पंचेन्द्रिय कृष्णलेशी में	—	२०	३०३	५२
३७६ एक संस्थानी मिश्र योगी पंचेन्द्रिय अनेरियों में	—	५	१८७	१८४
३७७ तिर्य. चक्षु. कृष्ण लेशी में	—	२२	३०३	५२
३७८ भुजपर की गति के पंचे. तीन शरीरी	४	१०	२०२	१६२
३७९ तिर्य. घ्राणेन्द्रिय कृष्ण लेशी	—	२४	३०३	५२
३८० पुरुष तीन शरीरी अचरम में	—	५	१८७	१८८
३८१ तियक्. त्रस कृष्ण लेशी में	—	२६	३०३	५२
३८२ " तीन शरीरी कृष्ण लेशी में	—	४२	२८८	५२
३८३ तिर्य. एक संस्थानी में	—	३८	२७३	७२
३८४ संज्ञी "	१४	—	१७२	१९८
३८५ नोगर्भज की गति के बादर में	२	३८	२४३	१०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८६ उर्ध्व. तिर्य. एकान्त भव धारणी देह पांच अचरम में	—	२०	२८८	७८
३८७ उर्ध्व. तिर्य. त्रस मिथ्या एकान्त भव धारणी देह में	—	२१	२८८	७८
३८८ अधो तिर्य. एकान्त भव धारणी देह बादर में	७	३२	२८८	६१
३८९ संज्ञी अभव्य तीन शरीरी अतिर्यंच में	१४	—	१८७	१८८
३९० पुरुष वेद तीन शरीरी में	—	५	१८७	१९८
३९१ पंचेन्द्रिय कृष्ण. एक संस्थानी में	६	१०	२७३	१०२
३९२ तिर्य. बादर तीन शरीरी में	--	३२	२८८	७२
३९३ तिर्यंच बादर कृष्ण लेशी में	--	३८	३०३	५२
३९४ संज्ञी अभव्य तीन शरीरी	१४	५	१८७	१८८
३९५ तिर्यंच पंचेन्द्रिय में	--	२०	३.३	७२
३९६ उर्ध्व. ति. एकान्त भव धारणी देह पंचेन्द्रिय में	—	२०	२८८	८८
३९७ तिर्य. चक्षु इन्द्रिय में	--	२२	३०३	७२
३९८ ,, घ्राण ,, ,,	--	२४	३०३	७२
३९९ अधो. ति. एकान्त भव धारणी देह में	७	४२	२८८	६१
४०० अभव्य पुरुष वेद में	—	१०	२०२	१८८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०१ तिर्यं. त्रस जीवों में	--	२६	३०३	७२
४०२ ,, तीन शरीरी में	--	४२	२८८	७२
४०३ ,, कृष्ण लेशी में	--	४८	३०३	५२
४०४ समु. संज्ञी असं. भववाले अतिर्यंच में	१४	--	२०२	१८८
४०५ ऊपर की गति के चक्षु. मिश्र योगी में	१०	१६	२१७	१६२
४०६ ,, ,, ,, प्राण ,, ,,	१०	१७	२१७	१६२
४०७ बादर प्र. कृष्ण एक संस्थानी में	६	२६	२७३	१०२
४०८ बादर कृष्ण ,,	६	२७	२७३	१०२
४०९ तिर्यंच एकान्त छद्मस्थ में	—	४८	२८८	७२
४१० पुरुष वेद में	—	१०	२०२	१९८
४११ तिर्यंच प्र. शरीरी बादर में	—	३६	३०३	७२
४१२ स्त्री गति के संज्ञी मिथ्या में	१२	१०	२०२	१८८
४१३ संज्ञी मिथ्यात्वी में	१३	१०	२०२	१८८
४१४ प्रशस्त लेश्या में	--	१३	२०२	१९८
४१५ प्र. शरीरी कृष्ण. एक संस्थानी	६	३४	२७३	१०२
४१६ अप्रशस्त लेशी तीन शरीरी बा. एक संस्था.	१४	२७	२७३	१०२
४१७ प्र. बादर एक संस्था. एकान्त भव धारणी देह	७	२५	२७३	११३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१८ कृष्ण लेशी एक संस्थानी में	६	३८	२७३	१०२
४१९ स्त्री गति कृष्ण. एक संस्थानी	४	३८	२७३	१०२
४२० मिश्र योगी बादर एकान्त असंयम में	१४	२०	२०२	१८४
४२१ स्त्री गति अप्रशस्त लेशी प्र. शरीर एक संस्था.	१२	३४	२७३	१०२
४२२ स्त्री गति के संज्ञी में	१२	१०	२०२	१९८
४२३ समुच्चय संज्ञी में	१४	२३	२०२	१८४
४२४ प्र. शरीरी मिश्र योगी एकान्त असंयम में	१४	१०	२०२	१९८
४२५ मिश्र योगी एकान्त अपच्चक्खाणी में	१४	२५	२०२	१८४
४२६ कृष्ण लेशी बा. प्र. तीन शरीरी में	६	३०	२८८	१०२
४२७ अप्रशस्त लेशी एक संस्थानी	१४	३८	२७३	१०२
४२८ कृष्ण लेशी बादर तीन शरीरी	६	३२	२८८	१०२
४२९ ,, ,, ,, एकान्त असंयम में	६	३३	२८८	१०२
४३० स्त्री गति के त्रस मिश्र अनेक भव वाले	१२	१८	२१७	१८३
४३१ ,, ,, ,, मिथ्या.	१२	१८	२१७	१८४
४३२ त्रस मिश्र योगी संख्या भव वाले	१४	१८	२१७	१८३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३३ ,, ,,	१४	१८	२१७	१८४
४३४ कृ.. प्र. तीन शरीरी में	६	३८	२८८	१०२
४३५ मिश्र योगी बा. मिथ्या.	१४	२५	२१७	१७६
४३६ बा. तीन शरीरी अप्रशस्त लेशी	१४	३२	२८८	१०२
४३७ बा. एकान्त अपच्च. अप्रशस्त लेशी	१४	३३	२८८	१०२
४३८ कृष्ण. तीन शरीरी	६	४२	२८८	१०२
४३९ ,, एकान्त अचक्षु.	६	४३	२८८	१०२
४४० मिश्र योगी बादर	१४	२५	२१७	१८४
४४१ अधो. ति. के चक्षु. तीन शरीरी में	१४	१७	२८८	१२२
४४२ प्र. तीन श.अप्रशस्त लेशी	१४	३८	२८८	१०२
४४३ प्र. मिश्र योगी	१४	२८	२१७	१८४
४४४ प्र. एकान्त भव धा. देह अनेक भववाले	७	३८	२८८	१११
४४५ अधो. ति. तीन शरीरी त्रस मिश्रयोगी में	१४	२१	२८८	१२२
४४६ अप्र. लेश्या तीन शरीरी	१४	४२	२८८	१०२
४४७ एकान्त असंयम अप्रशस्त लेशी	१४	४३	२८८	१०२
४४८ ,, भव धा.देह अनेक भववाले	७	४२	२८८	१११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४९ स्त्रीगति के एकान्त भव देह	६	४२	२८८	११३
४५० भव सिद्धि एकांत भव. देह	७	४२	२८८	११३
४५१ ऊपर की गति कृ० प्र० तीन शरीर	२	४४	३०३	१०२
४५२ भुज पर गति अधो० ति० प्र० तीन शरीर	४	३८	२८८	१२२
४५३ स्त्री० गति कृ० प्र० शरीरी	४	४४	३०३	१०२
४५४ उर्ध्व ति० एकांत छद्म० पं० अनेक भव में	०	२०	२८८	१४६
४५५ कृष्ण० प्र० शरीरी	६	४४	३०३	१०२
४५६ अधो.ति. तीन शरीरी बादर	१४	३२	२८८	१२२
४५७ अप्रशस्त लेशी बादर	१४	३८	३०३	१०२
४५८ उर्ध्व. ति. के एक संस्थानीमें	०	३८	२७३	१४८
४५९ " " एकांत छद्मस्थ चक्षु.	०	२२	२८८	१४८
४६० " " " " घ्राण.	०	२४	२८८	१४८
४६१ अधो." के चक्षु	१४	२२	३०३	१२२
४६२ " " घ्राण०	१४	२५	३०३	१२२
४६३ " " बादर एकांत छ० में	१४	३८	२८८	१२२
४६४ " " त्रस	१४	२६	३०३	१२२
४६५ स्त्री गति के अधो० ति० तीन शरीरी	१२	४२	२८८	१२२
४६६ अधो ति० तीन शरीरी	१४	४२	२८८	१२२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६७	अप्रशस्त लेश्या में	१४	४८	३०३	१०२
४६८	उर्ध्व० ति. तीन शरीरी बादर	०	३२	२८८	१४८
४६९	" " एकांत असंयम "	०	३३	१८८	१४८
४७०	अधो० " छद्म. स्त्री गति में	१२	४८	२८८	१२२
४७१	उर्ध्व० " पंचेन्द्रिय में	०	२०	३०३	१४८
४७२	अधो० ति० एकांत छद्मस्थ	१४	४८	२८८	१२२
४७३	उर्ध्व० ति० के चक्षु इंद्रियमें	०	२२	३०३	१४८
४७४	" " घ्राण "	०	२४	३०३	१४८
४७५	" " एकांत छद्मस्थबादर	०	३८	२८८	१४८
४७६	" " तीन श. अ. भववाले	०	४२	२८८	१४६
४७७	" " त्रस में	०	२६	३०३	१४८
४७८	" " तीन शरीरी	०	४२	२८८	१४८
४७९	" " एकांत असंयम	०	४३	२८८	१४८
४८०	,, ,, एकान्त छद्म. प्र. शरीरी	—	४४	२८८	१४८
४८१	स्त्री गति के अधो. तिर्य.				
४८२	,, ,, ,, ,, अनेक भव वालों में	—	४८	२८८	१४६
४८३	अधो. तिर्य. प्र. शरीरी में	१४	४४	३०३	१२२
४८४	,, ,, ,, ,, ,,	—	४८	२८८	१४८
	प्र. शरीरी में	१२	४४	३०३	१२२
४८५	,, ,, ,, प्र. ,,	१२	४८	३०३	१२२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८६ भुज पर गति के तीन शरीरी बादर	४	३२	२८८	१६२
४८७ अधो. तिर्य. लोक में	१४	४८	३०३	१२२
४८८ खेचर ,, ,, ,,	६	३२	२८८	१६२
४८९ उर्ध्व. तिर्य. बादर में	—	३८	३०३	१४८
४९० स्थल चर ,, ,, ,,	८	३२	२८८	१६२
४९१ खेचर गति पंचेन्द्रिय में	६	२०	३०३	१६२
४९२ उरपर ,, ,, ,,	१०	३२	२८८	१६२
४९३ उर्ध्व. ,, प्र. शरीरी अनेक भव वालों में	—	४४	३०३	१४६
४९४ खेचर ,, प्र. ,, ,,	६	३८	२८८	१६२
४९५ ,, ,, ,, में	—	४४	३०३	१४८
४९६ भुज पर गति के तीन शरीरी में	४	४२	२८८	१६२
४९७ खेचर ,, त्रस में	६	२६	३०३	१६२
४९८ ,, ,, तीन शरीरी में	६	४२	२८८	१६२
४९९ ,, ,, में	—	४८	३०३	१४८
५०० स्थल चर ,, ,,	८	४२	२८८	१६२
५०१ त्रस एक संस्थानी में	१४	१६	२७३	१९८
५०२ उर पर गति तीन शरीरी में	१०	४२	२८८	१६२
५०३ ,, ,, घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३०३	१६२
५०४ खेचर ,, एकान्त छद्मस्थ में	६	४८	२८८	१६२
५०५ तिर्य. ,, त्रस में	१४	२६	३०३	१६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०६ संज्ञी ति. ,, तीन शरीरी में	१४	४२	२८८	१६२
५०७ अन्तर्द्वीप के पर्याप्त के अलद्धिया में	१४	४८	२४७	१६८
५०८ उरपर ,, एकान्त सकषाय में	१०	४८	२८८	१६२
५०९ स्थल चर ,, प्र. शरीरी बादर में	८	३६	३०३	१६२
५१० तिर्यंचणी गति के एकान्त संयोगी में	१२	४८	२८८	१६२
५११ एक संस्थान प्र. शरीरी बादर में	१४	२६	२७३	१६८
५१२ तिर्यंच ,, ,,	१४	४८	२८८	१६२
५१३ एक संस्थान मिथ्यात्वी में	१४	३८	२७३	१८८
५१४ मध्य जीवों का स्पर्श करने वाले एकान्त छद्म चक्षु	१४	२२	२८८	२६०
५१५ तिर्यंचणी गति के बादर में	१२	३८	३०३	१६२
५१६ ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, घ्रा०	१४	२४	२८८	१६०
५१७ ,, ,, स्त्री गति प्र० शरीरी में	१२	३४	२७३	१६८
५१८ पंचेन्द्रिय में एकान्त छद्म० अनेक भववाले	१४	२०	२८८	१६६
५१९ एक संस्थानी में	१४	३४	२७३	१६८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२० पंचे० " "सकषाय में	१४	२०	२८८	१६८
५२१ चक्षु" " अंसयम में	१४	१७	२८८	१६८
५२२ एकान्त सकषाय चक्षु	१४	२२	२८८	१६८
५२३ " अनेक भव वालों में	१४	३८	२७३	१६८
५२४ " " घ्राण	१४	२४	२८८	१६८
५२५ पंचेन्द्रिय मिथ्यात्वी में	१४	२०	३०३	१८८
५२६ " " त्रस में	१४	२६	२८८	१६८
५२७ तिर्यंच गति में	१४	४८	३०३	१६२
५२८ एकान्त छद्म वा मिथ्या	१४	३८	२८८	१८८
५२६ स्त्री गति के त्रस "	१२	२६	३०३	१८८
५३० उत्कृष्ट जीव का भेद				
बादर प्र०शरीर एकांत छद्म०	१४	३६	२८८	१६२
५३१ " पंचे० संख्या० भव०	१२	२०	३०३	१६६
५३२ तीन शरीरी बादर में	१४	३२	२८८	१६८
५३३ एकान्त असंयम बादर में	१४	३३	२८८	१६८
५३४ " छद्म० अभव्य० प्र०				
शरीरी	१४	४४	२८८	१६८
५३५ पंचेन्द्रिय जीवों में	१४	२०	३०३	१६८
५३६ स्त्री गति के बा० एकान्त				
सकषाय में	१२	३८	२८८	१६८
५३७ " घ्राणेन्द्रिय में	१२	२४	३०३	१६८
५३८ " तीन शरीरी में	१२	४२	२८८	१६८

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

५३६ घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३०३	१६८
५४० एकान्त छद्म० बादर में	१४	३८	२८८	१६८
५४१ त्रस जीवों में	१४	२६	३०३	१६८
५४२ तीन शरीरी एकान्त छद्म.	१४	४२	२८८	१६८
५४३ एकान्त असंयम में	१४	४३	२८८	१६८
५४४ प्र. श. एकान्त छद्म.	१४	४४	२८८	१६८
५४५ सम्य. ति. अलद्धिया में	१४	३०	३०१	१६८
५४६ एकान्त छद्म. अनेक भववालों में	१४	४८	२८८	१६६
५४७ स्त्री गति प्र. श. मिथ्या.	१२	४४	३०३	१८८
५४८ एकान्त छद्मस्थ में	१४	४८	२८८	१६८
५४९ मिथ्या. प्र. शरीरी में	१४	४४	३०३	१८८
५५० सम्य. नरक के अलाद्धिया	१	४८	३०३	१६८
५५१ स्त्री गति मिथ्या.	१२	४८	३०३	१८८
५५२ एकेन्द्रिय पर्याप्त का अलद्धिया	१४	३७	३०३	१६८
५५३ मिथ्यात्वी	१४	४८	३०३	१८८
५५४ नव ग्रियवेक पर्याप्त के अलद्धिया	१४	४८	३०३	१८९
५५५ जीवों के मध्य भेद स्पर्शन वाले	१४	४८	३०३	१६८
५५६ नरक पर्याप्ता के अलाद्धिया	७	४८	३०३	१६८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५७ स्त्री गति के प्र. शरीरी में	१२	४४	३०३	१६८
५५८ तिर्य. पं.वैक्रियके अलाद्धिया	१४	४३	३०८	१६८
५५६ प्रत्येक शरीरी में	१४	४४	३०३	१६८
५६० तेजोलेशी एकेन्द्रिय के अलाद्धिया में	१४	४५	३०३	१६८
५६१ अनेक भववाले जीवों में	१४	४८	३०३	१६६
५६२ एकेन्द्रिय वैक्रिय श. अलाद्धिया में	१४	४७	३०३	१६८
५६३ सर्व संसारी जीवों में	१४	४८	३०३	१९८

॥ इति जीवों की मार्गणा के ५६३ भेद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ चार कषाय ❀

सूत्र श्री पन्नवणाजी के पद चौदहवें में चार कषाय का थोकड़ा चला है उसमें श्री गौतम स्वामी वीर भगवान से पूछते हैं कि "हे भगवन्! कषाय कितने प्रकार की होती है ?" भगवान कहते हैं कि 'हे गौतम! कषाय १६ प्रकार की होती है' १ अपने लिये २ दूसरे के निमित्त ३ तदुभया अर्थात् दोनों के लिये ४ खेत अर्थात् खुली हुई जमीन के लिये ५ वथ्थु कहतां ढंकी हुई जमीन के लिये ६ शरीर के निमित्त ७ उपाधि के लिये - निरर्थक ९ जानता १० अजानता ११ उपशान्त पूर्वक १२ अनुपशान्त पूर्वक १३ अनन्तानुबन्धी क्रोध १४ अप्रत्याख्यानी क्रोध १५ प्रत्याख्यानी क्रोध १६ संज्वालन का क्रोध एवं १६ वें समुच्चय जीव आश्री और ऐसेही चौवीश दण्डक आश्री दोनों का इस प्रकार गुणा करने से(१६×२५) ४०० हुवे अब कषाय के द्‌लिया कहते हैं चणीया, उपचणीया, बान्ध्या, वेद्या, उदीरिया, निर्जर्या एवं ६ ये भूत काल वर्तमान काल और भविष्य काल आश्री एवं ६ और ३ का गुणाकार करने से (६×३) १८ हुवे ये १८ एक जीव आश्री और १८ बहु जीव आश्री ३६ हुए ये समुच्चय जीव आश्री और चोवीश दण्डक आश्री एवं (३६×२५) ९०० हुए ४०० ऊपर के और ९०० ये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं १३०० क्रोध के, १३०० मान के, १३०० माया के, और १३०० लोभ के एवं ५२०० होते हैं।

॥ इति चार कषाय सम्पूर्ण ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

श्वासोश्वास

सूत्र श्री पन्नवणाजी के पद सातवें में श्वासोश्वास का थोकड़ा चला है उसमें गौतम स्वामी वीर प्रभु से पूछते हैं कि हे भगवन् ! नेरिये और देवता किस प्रकार श्वासोश्वास लेते हैं ? वीर प्रभु उत्तर देते हैं कि हे गौतम ! नारकी का जीव निरन्तर धमण के समान श्वासोश्वास लेता है असुर कुमार का देवता जघन्य सात थोक उत्कृष्ट एक पक्ष जाजेरा श्वासोश्वास लेते हैं वाण व्यन्तर और नवनिकाय के देवता जघन्य सात थोक उत्कृष्ट प्रत्येक मुहूर्त में ज्योतिषी ज० उ० प्रत्येक मुहूर्त में पहला देवलोक का जघन्य प्रत्येक मुहूर्त में उ० दो पक्ष में दूसरे देवलोक का ज० प्रत्येक मुहूर्त जाजेरा उ० दो पक्ष जाजेरा तीसरे देवलोक का ज० दो पक्ष में उ० सात पक्ष में चौथे देवलोक का ज० दो पक्ष जाजेरा उ० सात पक्ष जाजेरा पांचवें देवलोक का ज० सात पक्ष में उ० दश पक्ष में छट्ठे देवलोक का ज० दश पक्ष में उ० चौदह पक्ष में सातवें देवलोक का ज० चौदह पक्ष में उ० सतरह पक्ष में आठवें देवलोक का ज० सत्तरह पक्ष में उ० अट्ठारह पक्ष में नववें देवलोक का ज० अट्ठारह पक्ष में उ० उन्नीश पक्ष में दशवें देवलोक का ज० उन्नीश पक्ष में उ० वीश में इग्यारहवें देवलोक का ज० वीश पक्ष में उ० एकवीश पक्ष में बारहवें देवलोक का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज० एकवीश पक्ष में उ० बावीश पक्ष में पहली त्रिक का ज० बावीश पक्ष में उ० पच्चीश पक्ष में दूसरी त्रिक का ज० पच्चीश पक्ष में उ० अठावीश पक्ष में तीसरी त्रिक का ज० अठावीश पक्ष में उ० एकतीश पक्ष में, चार अनुत्तर विमान का ज० एकतीश पक्ष में उ० तेंतीश पक्ष में सर्वार्थ सिद्ध का ज० और उ० तेंतीश पक्ष में एवं ३३ पक्ष में श्वास ऊँचा लेते हैं और ३३ पक्ष में श्वास नीचे छोड़ते हैं ।

॥ इति श्वासो श्वास सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्वाध्याय

आकाश की दश अस्वाध्याय ।

१ तारा आकाश से गिरे २ चार ही दिशा लाल होवे ३ अकाल गर्जना हो ४ अकाल में बिजली गिरे ५ अकाल में कड़क होवे ६ दूज के चन्द्रमा की ७ यक्ष का चिह्न होवे ८ ओले गिरे ९ धूँधल गिरे १० ओस गिरे इन सब में अस्वाध्याय होती है ।

औदारिक शरीर की दश अस्वाध्याय ।

१ तत्काल की लीली (नीली) हड्डी गिरी हो २ मांस पड़ा हो ३ खून गिरा हो ४ विष्टा (मल) उलटी पड़ी हो ५ मुर्दा (लाश) जलता हो ६ चन्द्र ग्रहण हो ७ सूर्य ग्रहण हो ८ बड़ा राजा मरे ९ संग्राम चले १० पंचेन्द्रिय का प्राण रहित शरीर पड़ा हो इन सब में अस्वाध्याय होती है ।

काल की १६ अस्वाध्याय

(१) चैत्र शुक्ला पूर्णिमा (२) वैशाख कृष्ण प्रतिपदा (३) आषाढ शुक्ला पूर्णिमा (४) श्रावण कृष्ण प्रतिपदा (५) भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा (६) आश्विन कृष्ण प्रतिपदा (७) आश्विन शुक्ल पूर्णिमा (८) कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा (९) कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा (१०) मार्गशीर्ष कृष्ण

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

प्रतिपदा (११) प्रातः काल (१२) संध्या काल (१३) मध्याह्न काल (१४) मध्य रात्रि (१५) अग्नि प्रकट होवे वह समय, और (१६) आकाश में धूल चढ़े वह समय अर्थात् धूल से सूर्य का प्रकाश मंद होजावे तब अस्वाध्याय होती है।

॥ इति अस्वाध्याय सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२ सूत्रों के नाम

११ अङ्गों के नाम–१ आचाराङ्ग २ सूत्रकृताङ्ग ३ स्थानाङ्ग ४ समवायाङ्ग ५ भगवती (विवाह प्रज्ञप्ति) ६ ज्ञाता (धर्म कथा) ७ उपासक दशाङ्ग ८ अन्तकृताङ्ग (अन्तगढ़) ९ अनुत्तरोपपातिक १० प्रश्न व्याकरण दशाङ्ग ११ विपाक ।

१२ उपाङ्ग के नाम–१ उपपातिक (उववाई) २ राजप्रश्नीय ३ जीवाभिगम ४ प्रज्ञापना ५ जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति ६ चन्द्र प्रज्ञप्ति ७ सूर्य प्रज्ञप्ति ८ निरया वलिका ९ कल्प वतंसिका १० पुष्पिका ११ पुष्पचूलिका १२ वृष्णि दशा ।

चार मूल सूत्र–१ दश वैकालिक २ उत्तरा ध्यान ३ नंदि ४ अनुयोग द्वार ।

चार छेद सूत्र-१ वृहत् कल्प २ व्यवहार ३ निशीथ ४ दशाश्रुत स्कन्ध ।

बत्तीशवां सूत्र आवश्यक सूत्र ।

॥ इति ३२ सूत्रों के नाम सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार

शिष्य (विनय पूर्वक नमस्कार करके पूछता है) हे गुरु ! जीव तत्व का बोध देते समय आपने कहा कि जीव उत्पन्न होते समय अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता कहलाता है । सो यह कैसे ? कृपा करके मुझे यह समझाइये ।

गुरु—हे शिष्य ! जीव यह राजा है । आहार शरीर, इन्द्रिय, श्वासो श्वास, भाषा और मन ये ६ प्रजा हैं और ये चारों गति के जीवों को लागू रहने से ५६३ भेद माने जाते हैं । इनमें पहली आहार पर्याप्ति लागू होती है । यह इस प्रकार से है कि जब जीव का आयुष्य पूर्ण होवे तब वह शरीर छोड़ कर नई गति की योनि में उत्पन्न होने को जाता है । इसमें अविग्रह गति अर्थात् सीधी व सरल बान्ध कर आया हुवा होवे वो जीव जिस समय आया हुवा होवे उसी समय में आकर उत्पन्न होता है उस जीव को आहार का अन्तर पड़ता नहीं इस प्रकार का बन्धन वाला जीव " सीए आहारिए " अर्थात् सदा आहारिक कहलाता है । ऐसा भगवती सूत्र का न्याय है ।

अब दूसरा प्रकार विग्रह गति का बन्ध बान्ध कर आने वाले जीवों का कहा जाता है । इसके तीन प्रकार कितनेक जीव शरीर छोड़ने के बाद एक समय के अन्तर

से, कितनेक दो समय के अन्तर से, और कितनेक तीन समय के अन्तर से, अर्थात् चौथे समय में उत्पन्न हो सकते हैं। एवं चार ही प्रकार से संसारी जीव उत्पन्न हो सक्ते हैं। यह दूसरी विग्रह अर्थात् विषम गति करके उत्पन्न होने वाले जीवों को एक दो, तीन समय उत्पन्न होते अन्तर पड़े, इसका कारण ग्रंथ कार आकाश प्रदेश की श्रेणी का विभागों की तरफ आकार्षित हो जाना बतलाते हैं । गुप्त भेद गीतार्थ गुरु गम्य है । ऐसे जीव जितने समय तक मार्ग में रोके जाते हैं उतने समय तक अनाहारिक (आहार के बिना) कहलाते हैं । ये जीव बान्धी हुई योनि के स्थान में प्रवेश करके उत्पन्न होवें (वास करे) उसी समय वो योनि स्थान—कि जो पुद्गल के बन्धारण से बन्धा हुवा होता है—उसी पुद्गल का आहार-कढाई में डाले हुए वड़े (भुजिये) के समान आहार करते हैं । उसका नाम—ओझ आहार किया हुवा कहलाता है । और सारे जीवन में एक ही वार किया जाता है । इस आहार को खेंच कर पचाने में एक अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है। यह पहली आहार प्राप्ति कहलाती है। (१) इस प्रकार इस आहार के रस का ऐसा गुण है कि उसके रज कण एकत्रित होने से सात धातु रूप स्थूल शरीर की आकृति बनती है। और ये मूल धातु जीवन पर्यन्त स्थूल शरीर को टिका रखते हैं। ऐसे शरीर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप फूल में सुगन्ध की तरह जीव रह सकते हैं यह दूसरी शरीर पर्याप्ति कहलाती है इस आकृति को बान्धने में एक अन्तर्मुहूर्त लगता है (२) इस शरीर के दृढ बन जाने पर उसमें इन्द्रियों के अवयव प्रगट होते हैं । ऐसा होने में अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है यह तीसरी इन्द्रिय पर्याप्ति कहलाती है। (३) उक्त शरीर तथा इन्द्रिय दृढ होने पर सूक्ष्म रूप से एक अन्तर्मुहूर्त में पवन की धमण शुरू होती है यहीं से उस जीव के आयुष्य की गणना की जाती है यह चौथी श्वासोश्वास पर्याप्ति कहलाती है (४) पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त में नाद पैदा होता है। यह पाँचवीं भाषा पर्याप्ति कहलाती है (५) उपरोक्त पांच पर्याप्ति के समय पर्यन्त मन चक्र की मजबूती होती है । उनमें से मन स्फुरणा हो कर सुगन्ध की तरह बाहर आता है उसमें से शरीर की स्थिति के प्रमाण में सूक्ष्म रीति से अमुक पदार्थों के रज कण आकर्षित करने योग्य शक्ति प्राप्त होती है। यह छट्ठा मन पर्याप्ति कहलाती है (६) उक्त रीति से ६ अन्तर्मुहूर्त में ६ पर्याप्ति का बन्ध होता है यह सुन कर शिष्य को शङ्का होती है कि शास्त्रकार ६ पर्याप्ति का बन्ध होने में एक अन्तर्मुहूर्त बतलाते हैं यह कैसे ?

गुरु—हे वत्स ! सारा मुहूर्त दो घड़ी का होता है इसका एक ही भेद है। परन्तु अन्तर्मुहूर्त के जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट एवं तीन भेद होते हैं दो समय से लगा कर

नव समय पर्यन्त की जघन्य अन्त मुहूर्त कह लाती है (१) तदन्तर अन्तर्मुहूर्त दस समय की इग्यारह समय की, एवं एकेक समय गिनते हुवे अन्तर्मुहूर्त के असंख्यात भेद होते हैं (२) और दो घडी (पहर) में एक समय शेष रहे तब वो उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है (३) छः पर्याप्ति का बन्ध होने में छः अन्तर्मुहूर्त लगते हैं। इससे जघन्य और मध्यम अन्तर्मुहूर्त समझना। और अन्त में छः पर्याप्ति में जो एक अन्तर्मुहूर्त लगता है उसे उत्कृष्ट समझना। उक्त छः पर्याप्ति में से एकेन्द्रिय के चार (प्रथम) होती हैं। द्वि-इन्द्रिय, त्रि-इन्द्रिय, चोरिन्द्रिय व असंज्ञी मनुष्य तथा तिर्यंच पंचेन्द्रिय के पांच। और संज्ञी पंचेन्द्रिय के ६ पर्याप्ति होती हैं!

अपर्याप्ता का अर्थ

अपर्याप्ता के दो भेद-१ करण अपर्याप्ता २ लब्धि अपर्याप्ता। १ करण अपर्याप्ता के दो भेद-त्रि-इन्द्रिय वाले पर्या बान्ध कर न रहे वहां तक करण अपर्याप्ता और बान्ध कर रहे तब करण पर्याप्ता कहलाती है लब्धि अपर्याप्ता के दो भेद एकेन्द्रिय से लगा कर पंचेन्द्रिय पर्यन्त, जिसके जितनी पर्याय होती है, उसके उतनी में से एकेक की अधूरी रहे, वहां तक लब्धि अपर्याप्ता कहलाती है। और अपनी जाति की हद तक पूरी बन्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर रहे तब उसे लब्धि पर्याप्ता कहते हैं। एवं करण तथा लब्धि पर्याप्ता के चार भेद होते हैं।

शिष्य-हे गुरु! जो जीव मरता है वो अपर्याप्ता में मरता है अथवा पर्याप्ता में?

गुरु-हे शिष्य! जब तीसरी इन्द्रिय पर्या बान्ध कर जीव करण पर्याप्ता होता है तब मृत्यु प्राप्त कर सकता है। इस न्याय से पर्याप्ता हो कर मरण पाता है। परन्तु करण अपर्याप्ता पने कोई जीव मरण पाते नहीं। वैसे ही दूसरे प्रकार से अपर्याप्ता पने का मरण कहने में आता है यह लब्धि अपर्याप्ता का मरण समझना। यह इस तरह से कि चार वाला तीसरी, पांच वाला तीसरी चौथी, और छः वाला तीसरी चौथी और पांचवी पर्या पूरी बन्धने के बाद मरण पाते हैं। अब दूसरे प्रकार से अपर्याप्ता व पर्याप्ता इसे कहते हैं कि जिस जीव को जितनी पर्या प्राप्त हुई अर्थात् बन्धी उस को उतनी पर्या का पर्याप्ता कहते हैं। और जो बन्धना बाकी रही उसे उसका अपर्याप्ता; अर्थात् उतनी पर्या की प्राप्ति नहीं हो सकी यह भी कह सकते हैं।

ऊपर बताये हुवे अपर्याप्ता और पर्याप्ता के भेदों का अर्थ समझ कर गर्भज, नो गर्भज और एकेन्द्रिय आदि असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों को ये भेद लागू करने से जीव तत्व के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६३ भेद व्यवहार नय से गिनने में आते हैं और ये सर्व कर्म विपाक के फल हैं इससे जीवों की ८४ लक्ष योनियों का समावेश होता है। योनियों में बार बार उत्पन्न होना, जन्म लेना व मरण पाना आदि को संसार समुद्र के नाम से सम्बोधित करते हैं यह सब समुद्रों से अनन्त गुणा बड़ा है। इस संसार समुद्र को पार करने के लिये धर्म रूपी नाव है, व जिसके नाविक (नाव को चलाने वाले) ज्ञानी गुरु हैं। इनका शरण लेकर, आज्ञानुसार, विचार कर प्रवर्तन करने वाला भाविक भव्य कुशलता पूर्वक प्राप्त की हुई जिन्दगी (जीवन) की सार्थकता प्राप्त कर सक्ता है। इसी प्रकार अन्य भी आचरण करना योग्य है।

॥ इति अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्भ विचार

गुरु–हे शिष्य ! पन्न वणा भगवति सूत्र का तथा ग्रंथकारों का अभिप्राय देखने पर, सर्व जन्म और मृत्यु के दुखों का मुख्यतः चौथा मोहनीय कर्म के उदय में समावेश होता है । मोहनीय में ज्ञानावरणीय, दर्शना-वरणीय और अन्तराय कर्म एवं तीन का समावेश होता है । ये चार ही कर्म एकांत पाप रूप हैं इनका फल असाता और दुख है इन चारों ही कर्मों के आकर्षण से आयुष्य कर्म बन्धता है व आयुष्य शरीर के अन्दर रह कर भोगा जाता है भोगने का नाम वेदनीय कर्म है इस कर्म में साता तथा असाता वेदनीय का समावेश होता है और इस कर्म के साथ नाम तथा गोत्र कर्म जुड़ा हुवा है और ये आयुष्य कर्म के साथ सम्बन्ध रखते हैं ये चार कर्म शुभ तथा अशुभ एवं दो परिणामों से बन्धते हैं अतः इन्हें मिश्र कहते हैं इनके उदय से पुन्य तथा पाप की गणना की जाती है ।

इस प्रकार आठ कर्मों का बन्ध होता है और ये जन्म मरण रूप क्रिया के द्वारा भोगे जाते हैं । मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है आयुष्य कर्म इसका दीवान है मन हजूरी सेवक है जो मोह राजा के आदेशानुसार नित्य नये कर्मों का संचय करके बन्ध बान्धता है । ये सब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पन्नवणाजी सूत्र में कर्म प्रकृति पद से समझना। मन सदा चंचल व चपल है और कर्म संचय करने में अप्रमादी व कर्म छोड़ने में प्रमादी है इस से लोक में रहे हुए जड़ चैतन्य रूप पदार्थों के साथ, राग द्वेष की मदद से, यह मिल जाता है। इस कारण उसे "मन योग" कह कर पुकारते हैं। मन योग से नवीन कर्मों की आवक आती है। जिसका पांच इन्द्रियों के द्वारा भोगोपभोग किया जाता है। इस प्रकार एक के बाद एक विपाक का उदय होता है। सबों का मूल मोह है, तद्पश्चात् मन, फिर इन्द्रिय विषय और इन से प्रमाद की वृद्धि होती है कि जिसके वश में पड़ा हुवा प्राणी, इन्द्रियों को पोषण करने के रस सिवाय, रत्नत्रयात्मक अभेदानन्द के आनन्द की लहर का रसीला नहीं हो सक्ता किंतु उलटा ऊंच नीच कर्मों के आकर्षण से नरक आदि चार गति में जाता व आता है। इनमें विशेष करके देव गति के सिवाय तीन गति के जन्म अशुचि से पूर्ण हैं। जिसमें से नरक कुण्ड के अन्दर तो केवल मल मूत्र और मांस रुधिर का कादा (कीचड़) भरा हुवा है व जहां छेदन भेदन आदि का भयङ्कर दुख होता है जिसका विस्तार सुयगडांग सूत्र से जानना।

यहां से जीव मनुष्य या तिर्यंच गति में आता है यहां एकांत अशुचि तथा अशुद्धि का भण्डार रूप गर्भावास

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में आकर उत्पन्न होता है पायखाने से भी अधिक यह नित्य अखूट कीच से भरा हुवा है यह गर्भावास नरक के स्थान का भान कराता है व इसी प्रकार इस में उत्पन्न होने वाला जीव नेरिये का नमूना रूप है। अन्तर केवल इतना ही है कि नरक में छेदन, भेदन, ताड़न, तर्जन, खण्डन, पीसन और दहन के साथ २ दश प्रकार की क्षेत्र वेदना होती है वह गर्भ में नहीं परन्तु गति के प्रमाण में भयङ्कर कष्ट और दुख है।

उत्पन्न होने की स्थिति तथा गर्भ स्थान का विवेचन।

शिष्य-हे गुरु! गर्भस्थान में आकर उत्पन्न होने वाला जीव वहां कितने दिन, कितनी रात्रि, तथा कितने मुहूर्त तक रहता है? और उतने समय में कितने श्वासो-श्वास लेता है?

गुरु-हे शिष्य! उत्पन्न होने वाला जीव २७७॥ अहो रात्रि तक रहता है। वास्तविक रूप से देखा जाय तो गर्भ का काल इतना ही होता है। जीव ८, ३२५ मुहूर्त गर्भस्थान में रहता है। और १४, १०, २२५ श्वासो श्वास लेता है। इसमें भी कमी-बेसी होती है ये सब कर्म विपाक का व्याघात समझना। गर्भ स्थान के लिये यह समझना चाहिये कि माता के नाभि मंडल के नीचे फूल के आकार वत् दो नाडियें हैं। इन दोनों के नीचे उंधे फूल के आकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वत् एक तीसरी नाडी है कि जो योनि नाडी कह लाती है जिसमें जीव के उत्पन्न होने का स्थान है । इस योनि के अन्दर पिता तथा माता के पुद्गल का मिश्रण होता है । योनि रूप फूल के नीचे आम की मंजरी के आकार एक मांस की पेशी होती है जो हर महीने प्रवाहित होने से स्त्री ऋतु धर्म के अन्दर आती है । यह रुधिर ऊपर की योनि नाडी के अन्दर ही आया करता है कारण कि वो नाडी खुली हुई ही रहती है । चोथे दिन ऋतुश्राव बन्द होजाता है । परन्तु अभ्यन्तर में सूक्ष्म श्राव रहता है । स्नान करने पर पवित्र होता है । पांचवे दिन योनि नाडी में सूक्ष्म रुधिर का योग रहता है उस समय यदि वीर्यबिन्दु की प्राप्ति होवे तो उतने समय के लिये वो मिश्र योनि कहलाती है और यह फल प्राप्ति के योग्य गिनी जाती है । यह मिश्रपना बारह मुहूर्त पर्यन्त रहता है । कि जिस अवधि में जीव की उत्पत्ति हो इस में एक दो तीन आदि नव लाख तक उत्पन्न हो सके है । इनका आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम का । इस जीव का पिता एक ही होता है परन्तु अन्य अपेक्षा से नवसो पिता तक शास्त्र का कथन है । यह संयोग से संभव नहीं है परन्तु नदी के प्रवाह के सामने बैठ कर स्नान करने के समय उपरवाड़े से खिंच कर आये हुवे पुरुष बिन्दु (वीर्य) में सैंकड़ों रजकण स्त्री के शरीर में पिचकारी के आकर्षण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की तरह आकर भर जाते हैं । कर्म योग से उसके क्वचित् गर्भ रह जाता है तो जितने पुरुषों के रजकण आये हुवे हों वे सर्व पुरुष उस जीव के पिता तुल्य माने जाते हैं । एक साथ दश हजार तक गर्भ रह सकता है । इस पर मच्छी तथा सर्पनी माता का न्याय है । मनुष्य के अधिक से अधिक तीन सन्तान हो सक्ती हैं शेष मरण पा जाते हैं । एक ही समय नव लाख उत्पन्न हो कर यदि मर जावे तो वह स्त्री जन्म पर्यन्त बाँझ रहती है । दूसरी तरह जो स्त्री कामान्ध बन कर अनियमित रूप से विषय का सेवन करे अथवा व्यभिचारिणी बन कर मर्यादा रहित पर पुरुष का सेवन करे तो वो स्त्री बाँझ होती है । उसके गर्भ नहीं रहता ऐसी स्त्री के शरीर में झेरी (ज़हरी) जीव उत्पन्न होते हैं कि जिनके डङ्क से विकारों की वृद्धि होती है व इससे वह स्त्री देव गुरु धर्म व कुल मर्यादा तथा शियल व्रत के लायक नहीं रह सकती । ऐसी स्त्री का स्वभाव निर्दय तथा असत्यवादी होता है । जो स्त्री दयालु तथा सत्यवादी होती है वो अपने शरीर को यातना करती है । कामवासना पर काबू रखती है । अपनी प्रजा की रक्षा के निमित सांसारिक सुखों के अनुराग की मर्यादा करती है । इस कारण से ऐसी स्त्रियें पुत्र पुत्री का अच्छा फल प्राप्त करती हैं। केवल रुधिर से या केवल बिन्दु से प्रजा प्राप्त नहीं होसक्ती ऐसे ही ऋतु के रुधिर सिवाय अन्य रुधिर प्रजा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राप्ति के निमित्त काम नहीं आसकता। एक ग्रन्थ कार कहते हैं कि सूक्ष्म रीति से सोलह दिन पर्यन्त ऋतुस्राव होता है। यह रोगी स्त्री के नहीं परन्तु निरोगी स्त्री के शरीर में होता है। और यह प्रजाप्राप्ति के योग्य कहा जाता है।

उक्त दिनों में से प्रथम तीन दिनों का ग्रन्थकार निषेध करते हैं। यह नीति मार्ग का न्याय है और इस न्याय को पुण्यात्मा जीव स्वीकार करते हैं। अन्य मतानुसार चार दिन का निषेध है। क्योंकि चौथे दिन को उत्पन्न होने वाला जीव अल्प समय तक ही जीवन धारण कर सक्ता है। ऐसा जीव शक्ति हीन होता है व माता पिता को भार रूप होता है। पांचवें से सोलहवें दिन तक नीति शास्त्रानुसार गर्भाधारण संस्कार के उपयुक्त माने जाते हैं। पश्चात् एक के बाद एक (दिन) का बालक उत्तरोत्तर तेजस्वी बलवान्, रूपवान, बुद्धिवान्, और अन्य सर्व संस्कारों में श्रेष्ट दीर्घायुष्य वाला तथा कुटुम्ब पालक निवड़ता है (होता है) इनमें से छट्ठी, आठवीं, दशवीं, बारहवीं, चौदहवीं एवं सम (बेकी की) रात्रि विशेष करके पुत्री रूप फल देती है। इस में विशेषता यह है कि पांचवीं रात्रि को उत्पन्न होने वाली पुत्री कालान्तर में अनेक पुत्रियों की माता बनती है। पांचवीं, सातवीं, नववीं, इग्यारहवीं, तेरहवीं, पन्द्रहवीं एवं विषम (एकी की) रात्रि का बीज पुत्र रूप में उत्पन्न होता है और वो ऊपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहे गुणवाला निकलता है। दिन का संयोग शास्त्र द्वारा निषेध है। इतने पर भी अगर होवे (सन्तान) तो वो कुटुम्ब की तथा व्यावहारिक सुख व धर्म की हानि करने वाला निकलता है।

गर्भ में पुत्र या पुत्री होने का कारणः-वीर्य के रज कण अधिक और रुधिर के थोड़े होवें तो पुत्र रूप फल की प्राप्ति होती है। रुधिर अधिक और वीर्य कम होवे तो पुत्री उत्पन्न होती है। दोनों समान परिमाण में होवे तो नपुंसक होता है। (अब इनका स्थान कहते हैं) माता के दाहिनी तरफ पुत्र, बांयी कुक्षि में पुत्री और दोनों कुक्षि के मध्य में नपुंसक के रहने का स्थान है। **गर्भ की स्थिति** मनुष्य गर्भ में उत्कृष्ट बारह वर्ष तक जीवित रह सक्ता है। बाद में मर जाता है। परन्तु शरीर रहता है, जो चौवीश वर्ष तक रह सक्ता है। इस सूखे शरीर के अन्दर चौवीशवें वर्ष नया जीव उत्पन्न होवे तो उसका जन्म अत्यन्त कठिनाई से होता है यदि नहीं जन्मे तो माता की मृत्यु होती है। संज्ञी तिर्यंच आठ वर्ष तक गर्भ में जीवित रहता है। **अब आहार की रीति कहते हैं** योनि कमल में उत्पन्न होने वाला जीव प्रथम माता पिता के मिले हुवे मिश्र पुद्गलों का आहार करके उत्पन्न होता है इसका अर्थ प्रजा द्वार से जानना विशेष इतना है कि यह आहार माता पिता का पुद्गल कहलाता है। इस आहार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से सात धातु उत्पन्न होती हैं । इनमें-१ रसी (राध) २ लोही ३ मांस ४ हड्डी ५ हड्डी की मज्जा ६ चर्म ७ वीर्य और नसा जाल एवं सात मिल कर दूसरी शरीर पर्याप्ति अर्थात् सूक्ष्म पुतला कहलाता है । छः पर्याप्ति बंधने के बाद वह बीजक (वीर्य) सात दिवस में चावल के धोवन समान तोलदार हो जाता है । चौदहवें दिन जल के परपोटे समान आकार में आता है । इकवीश दिन में नाक के श्लेश्म के समान और अठावीश दिन में अड़तालीश मासे वजन में हो जाता है । एक महिने में बेर की गुठली समान अथवा छोटे आम की गुठली समान हो जाता है । इसका वजन एक करखण कम एक पल का होता है पल का परिमाण-सोलह मासे का एक करखण और चार करखण का एक पल होता है । दूसरे महिने कची केरी समान, तीसरे महिने पक्की केरी (आम) समान हो जाता है । इस समय से गर्भ प्रमाणे माता को डहोला (दोहद-भाव) उत्पन्न होने लगता है । और यह कर्म कलानुसार फलता है । इस के द्वारा गर्भ अच्छा है या बुरा इसकी परीक्षा होती है । चोथे महिने कणक के पिण्डे के समान हो जाता है इस से माता के शरीर की पुष्टि होने लगती है । पांचवें महिने में पांच अङ्कुरे फूटते हैं जिनमें से दो हाथ,दो पांव,पांचवा मस्तक, छट्ठे महीने रुधिर, रोम नख और केश की वृद्धि होने लगती है । कुल ३॥

क्रोड़ रोम होते हैं। जिनमें से दो क्रोड़ और एकावन लाख गले ऊपर व नव्वाणु लाख गले के नीचे होते हैं। दूसरे मत से-इतनी संख्या के रोम गाडर के कहलाते हैं यह विचार उचित (वाजबी) मालूम होता है। एकेक रोम के उगने की जगह में १॥ से कुछ विशेष रोग भरे हुवे हैं। इस हिसाब से पौने छः करोड़ से अधिक रोग होते हैं। पुन्य के उदय से ये ढंके हुवे होते हैं। यहीं से रोम आहार की शुरूआत होने की सम्भावना है 'तत्वं तु सर्वज्ञ गम्यं'। यह आहार माता के रुधिर का समय समय लेने में आता है और समय समय पर गमता है। सातवें महिने सात सो सिराएं अर्थात् रसहरणी नाड़ियां बन्धती हैं। इनके द्वारा शरीर का पोषण होता है। और इससे गर्भ को पुष्टि मिलती है। इनमें से स्त्री को ६७० (नाड़ियें) नपुंसक को ६८० और पुरुष का ७०० पूरी होती हैं। पांचसो मांस की पेशियाँ बन्धती हैं। जिनमें से स्त्री के तीस और नपुंसक के वीस कम होती हैं इनसे हड्डियें ढंकी हुई रहती हैं। हाड़ में सर्व मिलाकर ३६० सांधे (जोड़) होते हैं। एकेक जोड़ पर आठ आठ मर्म के स्थान हैं। इन मर्म स्थानों पर एक टकोर लगने पर मरण पाता है। अन्य मान्यता से एक सौ साठ संधि और १७० मर्म-स्थान होते हैं। उपरान्त सर्वज्ञ गम्य। शरीर में छः अङ्ग होते हैं। जिनमें से मांस लोही,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और मस्तक की मज्ज (भेजा) ये तीन अङ्ग माता के हैं और हड्डी हाड़ की मज्जा और नख केश रोम ये तीन अङ्ग पिता के हैं । आठवें महीने सर्व अङ्ग उपाङ्ग पूर्ण हो जाते हैं । इस गर्भ को लघु नीत बड़ी नीत श्लेष्म, उधरस, छींक, अंगड़ाई आदि कुछ नहीं होता वो जिस २ आहार को खेंचता है उस अहार का रस इन्द्रियों को पुष्ट करता है । हाड़, हाड़ की मज्जा, चरबी नख, केश की वृद्धि होती है । आहार लेने की दूसरी रीति यह है कि माता की तथा गर्भ की नाभि व ऊपर की रसहरणी नाडी ये दोनो परस्पर वाले (नहरू) के आंटे के समान वींटे हुवे हैं । इसमें गर्भ की नाडी का मुंह माता की नाभि में जुड़ा हुवा होता है । माता के कोठे में पहले जो आहार का कवल पड़ता है वो नाभि के पास अटक जाता है व इसका रस बनता है जिससे गर्भ अपनी जुड़ी हुई रसहरणी नाडी से खेंच कर पुष्ट होता है । शरीर के अन्दर ७२ कोठे हैं जिनमें से पांच बड़े हैं । शीयाले में दो कोठे आहार के और एक कोठा जल का व गर्मी में दो कोठे जल के और एक कोठा आहार का तथा चौमासे में दो कोठे आहार के और दो कोठे जल के माने जाते हैं । एक कोठा हमेशा खाली रहता है । स्त्री के छट्टा कोठा विशेष होता है । कि जिसमें गर्भ रहता है । पुरुष के दो कान, दो चक्षु दो नासिका (छेद), मुँह, लघुनीत, बडी नीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदि नव द्वार अपवित्र और सदा काल बहते रहते हैं। और स्त्री के दो थन (स्तन) और एक गर्भ द्वार ये तीन मिल कर कुल बारह द्वार सदाकाल वहते रहते हैं।

शरीर के अन्दर अठारह पृष्ट दण्डक नामकी पांसलियें हैं। जो गर्भवास की करोड़ के साथ जुड़ी हुई है। इनके सिवाय दो बांसे की बारह कंडक पांसलियें हैं कि जिनके ऊपर सात पुड़ चमड़े के चढ़े हुवे होते हैं। छाती के पड़दे में दो (कलेजे) हैं जिनमें से एक पड़दे के साथ जुड़ा हुवा है और दूसरा कुछ लटकता हुवा है। पेट के पड़दे में दो अंतस (नल) हैं जिनमें से स्थूल नल मल-स्थान है और दूसरा सूक्ष्म लघु नीत का स्थान है। दो प्रणव स्थान अर्थात् भोजन पान पर गमाने (पचाने) की जगह हैं। दक्षिण पर गमे तो दुःख उपजे व बांये पर गमें तो सुख। सोलह आँतरा है, चार आंगुल की ग्रीवा है। चार पल की जीभ है, दो पल की आंखे हैं, चार पल का मस्तक है। नव आंगुल की जीभ है, अन्य मान्यतानुसार सात आंगुल की है। आठ पल का हृदय है पच्चीश पल का कलेजा है। **अब सात धातु का प्रमाण व माप** कहते हैं शरीर के अन्दर एक आढ़ा (टेढ़ा) रुधिर का और आधा आढ़ा मांस का होता है। एक पाथा मस्तक का भेजा, एक आढ़ा लघुनीत, एक पाथा बड़ी नीत का है। कफ, पित्त, और श्लेष्म इन तीनों का एकेक कलव और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आधा कलत्र वीर्य का होता है। इन सबों को मूल धातु कहते हैं कि जिन पर शरीर का टिकाव है। ये सातों धातु जब तक अपने वजन प्रमाण रहते हैं तब तक शरीर निरोगी और प्रकाश मय रहता है। उनमें कमी बेसी होने से शरीर तुरन्त रोग के आधीन हो जाता है।

नाड़ी का विवेचन—शरीर के अन्दर योग शास्त्र के अनुसार ७२००० नाड़ियें हैं। जिनमें से नवसो नाड़ियें बड़ी है, नव नाड़ी धमण के समान बड़ी हैं जिनके धड़कन से रोग की तथा सचेत शरीर की परीक्षा होती है। दोनों पांव की घुंटी के नीचे दो नाड़ी, एक नाभी की, एक हृदय की, एक तालवे की दो लमणे की और दो हाथ की एवं नव। इन सर्व नाड़ियों का मूल सम्बन्ध नाभि से है। नाभि से १६० नाड़ी पेट तथा हृदय ऊपर फैलकर ठेठ ऊंचे मस्तक तक गई हुई हैं। इनके बन्धन से मस्तक स्थिर रहता है। ये नाड़ियें मस्तक को नियम पूर्वक रस पहुंचाती हैं जिससे मस्तक सतेज आरोग्य और तर रहता है। जब नाड़ियों में नुकसान होता है तब आंख, नाक कान और जीभ ये सब कमजोर रोगिष्ट बन जाते हैं व शूल, गुमड़े आदि व्याधियों का प्रकोप होने लगता है।

दूसरी १६० नाडी नाभी के नीचे चली हुई हैं जो जाकर पांव के तलीये तक पहुंची हुई हैं। इनके आकर्षण से गमनागमन करने, खड़े होने व बैठने आदि में सहा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यता मिलती है । ये नाडियें वहां तक रस पहुँचा कर शरीर आदि को आरोग्य रखती हैं । नाडी में नुकसान होने से संधिवा, पक्षा घात (लकवा) पैर आदि का कूटना, कलतर, तोड़ काट, मस्तक का दुखना व आधा-शीशी आदि रोगों का प्रकोप हो जाता है ।

तीसरी १६० नाडी नाभी से तिर्छी गई हुई हैं । ये दोनों हाथों की आंगुलियें तक चली गई हैं । इतना भाग इन नाडियों से मजबूत रहता है । नुकसान होने से पासा शूल, पेट के दर्द, मुंह के व दांतो के दर्द आदि रोग उत्पन्न होने लगते हैं ।

चौथी १६० नाडी नाभी से नीचे मर्म स्थान पर फैली हुई हैं । जो अपान द्वार तक गई हुई हैं । इनकी शक्ति द्वारा शरीर का बन्धेज रहा हुवा है । इनके अन्दर नुकसान होने पर लघु नीत बड़ी नीत आदि की कबाजि-यत (रुकावट) अथवा अनियमित छूट होने लग जाती है । इसी प्रकार वायु कृमि प्रकोप, उदर विकार, अर्श चांदी प्रमेह पवनरोध पांडु रोग, जलोदर, कठोदर, भगंदर, संग्र-हणी आदि का प्रकोप होने लग जाता है ।

नाभी से पच्चीश नाडी ऊपर की ओर श्लेष्म द्वार तक गई हुई हैं । जो श्लेष्म की धातु को पुष्ट करती हैं । इनमें नुकसान होने पर श्लेष्म, पीनस का रोग हो जाता है । अन्य पच्चीश नाडी इसी तरफ आकर पित्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धातु को पुष्ट करती है। जिनमें नुकसान होने पर पित्त का प्रकोप तथा ज्वरादिक रोग की उत्पति होने लग जाती है। तीसरी दश नाड़िएँ वीर्य धारण करने वाली हैं जो वीर्य को पुष्ट करती हैं। इनके अन्दर नुकसान होने पर स्वप्न दोष मुख-लाल घूणित पेशाब आदि विकारों से निर्बलता आदि में वृद्धि होती है।

एवं सर्व मिलाकर ७०० नाड़ी रस खेंच कर पुष्टि प्रदान करती हैं व शरीर को टिकाती हैं। नियमित रूप से चलने पर निरोग और नियम भङ्ग होने पर रोगी (शरीर) हो जाता है।

इसके सिवाय दोसौ नाड़ी और गुप्त तथा प्रगट रूप से शरीर का पोषण करती हैं। एवं सर्व नव सौ नाड़ियें हुईं।

उक्त प्रकार से नव मास के अन्दर सर्व अवयव स-हित शरीर मजबूत बन जाता है। गर्भाधान के समय से जो स्त्री ब्रह्मचारिणी रहती है उस का गर्भ अत्यन्त भाग्य-शाली, मजबूत बन्धेज का, बलवान तथा स्वरूप वान होता है न्याय नीति वाला और धर्मात्मा निकलता है। उभय कुलों का उद्धार करके माता पिता को यश देने वाला होता है और उसकी पांचों ही इन्द्रियें अच्छी होतीं हैं। गर्भाधान से लगा कर सन्तति होने तक जो स्त्री निर्दय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुद्धि रख कर कुशील (मैथुन) का सेवन करती है तो यदि गर्भ में पुत्री होवे तो उनके माता पिता दुष्ट में दुष्ट, पापी में पापी और रौरौ नरक के अधिकारी बनते हैं। गर्भ भी अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहता यदि जिन्दा रहे भी तो वो काना, कुबड़ा, दुर्बल, शक्ति हीन तथा खराब डीलडोल का होता है। क्रोधी, क्लेशी, प्रपंची और खराब चाल चलन वाला निकलता है। ऐसा समझ कर प्रजा (सन्तति) की हितइच्छने वाली जो माताएं गर्भ-काल में शील वन्ती रहती हैं। वे धन्य हैं।

विशेष में उपरोक्त गर्भावास के स्थानक में महा कष्ट तथा पीड़ा उठानी पड़ती है। इस पर एक दृष्टान्त दिया जाता है—जिस मनुष्य का शरीर कोढ तथा पित्त के रोग से गलता होवे ऐसे मनुष्य के शरीर में साड़ातीन क्रोड़ सूईयें अग्नि में गरम करके साडे तीन रोमों के अन्दर पिरोवे। पुनः शरीर पर निमक तथा चूने का जल छींटकर शरीर को गीले चमड़े से मढ़े व मढ़ कर धूप के अन्दर रखे सूखने (शरीर का चमड़ा) पर जो अत्यन्त कष्ट उसे होता है उस (दुख) को सिवाय भोगने वाले के और सर्वज्ञ के अन्य कोई नहीं जान सकता। इस प्रकार वेदना पहिले महीने गर्भ को होती है दूसरे महीने दुगनी एवं उत्तरोत्तर नववें महीने नव गुणी वेदना होती है। गर्भ वास की जगह छोटी है और गर्भ का शरीर (स्थूल) बड़ा है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतः सुकड़ कर के आम के समान अधो मुख करके रहना पड़ता है। इस समय मस्तक छाती पर लगा हुवा और दोनों हाथों की मुट्ठियें आँखों के आड़े दी हुई होती है। कर्म योग से दूसरा व तीसरा गर्भ यदि एक साथ होवे तो उस समय की संकड़ाई व पीड़ा वर्णनातीत है। माता की विष्टा (मल) गर्भ के नाक पर से होकर गिरती है। खराब से खराब गन्दगी में पड़ाहुवा होता है। बैठी हुई माता खड़ी होवे तो उस समय गर्भ को ऐसा मालूम होता है कि मैं आसमान में फेंका जा रहा हूं नीचे बैठते समय ऐसा मालूम होता है कि मैं पाताल में गिराया जा रहा हूं चलती समय ऐसा जान पड़ता है कि मसक में भरे हुवे दहीके समान डोलाया जा रहा हूं रसोई करने के समय गर्भ को ऐसा मालूम होता है कि मैं ईंट की भट्टी में गल रहा हूं। चक्की के पास पीसने के लिये बैठने पर गर्भ जाने कि मैं कुम्हार के चाक पर चढाया जा रहा हूँ। माता चित्ती सोवे तब गर्भ को मालूम होवे कि मेरी छाती पर सवा मन की शिला पड़ी हुई है। मैथुन करने के समय गर्भ को ऊखल मूसल का न्याय है। इस प्रकार माता पिता के द्वारा पहुंचाये हुवे तथा गर्भ स्थान के एवं दो प्रकार के दुखों से पीडित, कुटाये हुवे खण्डाये हुवे और अशुचि से तर बने हुवे इस गर्भ की दया शीलवान माता पिता बिना कौन देख सके? अर्थात् पापी स्त्री पुरुष (विधि गर्भ से अज्ञात) देख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकते हैं ? अथवा नहीं देख सकते ।

गर्भ का जीव माता के दुख से दुखी व सुख से सुखी होता है । माता के स्वभाव की छाया गर्भ पर गिरती है । गर्भ में से बाहर आने के बाद पुत्र पुत्री का स्वभाव, आचार, विचार आहार व्यवहार आदि सर्व माता के स्वभावानुसार होता है । इस पर से माता पिता के ऊंच नीच गर्भ की तथा यश अपयश आदि की परीक्षा सन्तति रूप फोटू के ऊपर से विवेकी स्त्री पुरुष कर सकते हैं कारण कि सन्तति रूप चित्र (फोटू) माता पिता की प्रकृति अनुसार खिंचा हुवा होता है । माता धर्म ध्यान में, उपदेश श्रवण करने में तथा दान पुन्य करने में और उत्तम भावना भावने में संलग्न होवे तो गर्भ भी वैसे ही विचार वाला होता है । यदि इस समय गर्भ का मरण होवे तो वो मर कर देवलोक में जा सकता है । ऐसे ही यदि माता आर्त और रौद्र ध्यान में होवे तो गर्भ भी आर्त और रौद्र ध्यानी होता है । इस समय गर्भ की मृत्यु होने पर वो नरक में जाता है । माता यदि उस समय महाकपट में प्रवृत्त हो तो गर्भ उस समय मर कर तिर्यंच गति में जाता है । माता महा भद्रिक तथा प्रपञ्च रहित विचारों में लगी हुई होवे तो गर्भ मर कर मनुष्य गति में जाता है एवं गर्भ के अन्दर से ही जीव चारों गति में जा सकता है । गर्भ काल जब पूर्ण होता है तब माता तथा गर्भ की नाभी की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विंटी हुई रसहरणी नाडी खुल जाती है। जन्म होने के समय यदि माता और गर्भ के पुन्य तथा आयुष्य का बल होवे तो सीधे मार्ग से जन्म हो जाता है। इस समय कितने ही मस्तक तरफ से अथवा कितने ही पैर तरफ से जन्म लेते हैं। परन्तु यदि माता और गर्भ दोनों भारी कर्मी होवे तो गर्भ टेढ़ा गिर जाता है। जिससे दोनों की मृत्यु हो जाती है। अथवा माता को बचाने के निमित पापी गर्भ के जीव पर, वेध कर छुरी व शस्त्र से खण्ड २ करके जिन्दगी पार की शिक्षा देते हैं। इसका किसी को शोक, संताप होता नहीं।

सीधे मार्ग से जन्म लेने वाले सोने चान्दी के तार समान है। माता का शरीर जतरड़ा है जैसे सोनी तार खेंचता है वैसे गर्भ खिंचा कर (करोड़ों कष्टों से) बाहर निकल आता है। अर्थात् नवमें महीने जो पीड़ा होती है उससे क्रोड़ गुणी पीड़ा जन्म के समय गर्भ को होती है। मृत्यु के समय तो क्रोड़ाक्रोड़ गुणा दुख गर्भ को होता है। यह दुख वर्णतातीत है। ये सर्व खुद के किये हुवे पुन्य पाप के फल हैं जो उदय काल में भोगे जाते हैं। यह सर्व मोहनीय कर्म का संताप है।

ऊपर अनुसार गर्भ काल, गर्भ स्थान तथा गर्भ में उत्पन्न होने वाले जीव की स्थिति का विवेचन आदि तंदुल वियालिया पइना, भगवती जी अथवा अन्य ग्रन्था·

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न्तरों के न्यायानुसार गुरु ने शिष्य को उपदेश द्वारा कह कर सुनाया। अन्त में कहने लगे कि जन्म होने के बाद भङ्गियानी के समान कार्य द्वारा माता संभाल से उछेर कर सन्तति को योग्य उम्र का कर देती है। सन्तति की आशा में माता का यौवन नष्ट हुवा है, व्यवहारिक सुख को तिलांजलि दी गई है। एवं सर्व बातों को तथा गर्भ-वास व जन्म के दुखों को भूल कर यौवन मद में उन्मत्त बने हुवे पुत्र पुत्रियें महा उपकारी माता को तिरस्कार दृष्टि से धिक्कार देकर अनादर करते और स्वयं वस्त्रालङ्कार से सुशो-भित होते हैं। तेल फुलेल, चोवा, चंदन, चंपा, चमेली, अगर, तगर, अमर और अतर आदि में मस्त होकर फूल हार व गजरे धारण करते हैं। इनकी सुगन्ध के अभिमान से अन्धे बन कर ऐसा समझते हैं कि यह सर्व सुगन्ध मेरे शरीर से निकल कर बाहर आरही है। इस प्रकार की शोभा व सुगन्ध माता पिता आदि किसी के भी शरीर (चमड़े) में नहीं है। इस प्रकार के मिथ्याभिमान की आन्धी में पड़े हुवे बेभान अज्ञान प्राणियों को गर्भवास के तथा नरक निगोद के अनन्त दुख पुनः तैयार हैं। इतना तो सिद्ध है कि ये सब विकार पापी माता की मूर्खता के स्वभाव का तथा कम भाग्य के उत्पन्न होने वाले पापी गर्भ के वक्र कर्मों का परिणाम है।

अब दूसरी तरफ विवेकी और धर्मात्मा व शियल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्रत धारण करने वाली सगर्भा माताओं के पुत्र पुत्रियें जन्म लेकर उछरते हैं। इनकी जन्म क्रिया भी वैसी ही होती है। अन्तर केवल इतना कि इन पर माता पिता के स्वभावों की छाया पड़ी हुई होती है। इस प्रकार की माताओं के स्वभाव का पान करके योग्य उम्र वाले पुत्र पुत्रियें भी अपने २ पुन्यों के अनुसार सर्व वैभव का उपभोग करते हैं। इतना होते हुवे भी अपने माता पिता के साथ विनय का व्यवहार करते हैं गुरु जनों के प्रति भक्ति का व्यवहार करते हैं, लज्जा दया, क्षमादि गुणों में और प्रभु प्रार्थना में आगे रहते हैं। अभिमान से विमुख रह कर मैत्री भाव के सम्मुख रहते हैं जीवन योग्य सत्संग करके ज्ञान प्राप्त करते हैं। और शरीर सम्पत्ति आदि की ओर से उदास रहकर आत्म स्मरण में जीवन पूर्ण करते हैं।

अतः सर्व विवेक दृष्टि वाले स्त्री पुरुषों को इस अशुचि पूर्ण गन्दे शरीर की उत्पति पर ध्यान दे कर ममता घटानी चाहिये, मिथ्याभिमान से विमुख रहना चाहिये, मिली हुई जिन्दगी को सार्थक करने के लिये सत्कर्म करने चाहिये कि जिससे उपरोक्त गर्भवास के दुखों को पुनः प्राप्त नहीं करना पड़े एक सत् पुरुष को मन वचन और कर्म से पवित्र होना चाहिए।

॥ इति गर्भ विचार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नक्षत्र और विदेश गमन

शिष्य नमस्कार करके पूछता है कि हे गुरु! नक्षत्र कितने? तारे कितने? इनका आकार कैसा? वे नक्षत्र ज्ञान शक्ति बढ़ाने में क्या मददगार हैं? उन नक्षत्र के समय विदेश गमन करने पर किस पदार्थ का उपभोग करके चलना चाहिये व उस से किस फल की प्राप्ति होती है?

गुरु-(एक साथ छः ही सवालों का जवाब देते हैं)

हे शिष्य! नक्षत्र अठावीश है, जिन सबों के आकार अलग अलग हैं। ये आकार इन नक्षत्रों के ताराओं की संख्या के ऊपर से समझे जा सक्ते हैं। इन के आधार से स्वाध्याय, ध्यान करने वाले मुनि रात्रि की पोरसियों का माप अनुमान कर आत्मस्मरण में प्रवृत्त हो सक्ते हैं। इन में से दश नक्षत्र ज्ञान शक्ति में वृद्धि करने वाले हैं। ज्ञान शक्ति वाले महात्मा अपने संयम की वृद्धि निमित्त तथा भव्य जीवों पर उपकार करने के लिए विदेश में विचरते हैं जिससे अनेक लाभ होने की संभावना है। अतः इन नक्षत्रों का विचार करके गमन करने पर धर्म वृद्धि का कारण होता है। यही नक्षत्रों का फल है। चलने के समय भिन्न भिन्न पदार्थों का उपभोग करने में आता है। उन पदार्थों के साथ मनोभावनाओं का रस मिल कर मिश्रित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रस बनता है! तदनन्तर वे उपभोग में लिए जाते इसे-शकुन बाधा-कहते हैं। इनका मतलब ज्ञानी ही जानते हैं उन के सिवाय अज्ञानी प्राणी इस सर्वोत्तम तत्व को मिथ्याभिमान की परिणति तरफ प्रवृत्त कर के उप-जीविका के साधन रूप उनका गैर उपयोग करते हैं। यह अज्ञानता का लक्षण है।

अठावीश नक्षत्रों में पहला नक्षत्र अभीच है इस के तारे तीन हैं जिन का गाय के मस्तक तथा मुख समान आकार होता है। उत्तम जाति के स्वादिष्ट व सौरभ दार (सुगन्धित) वृक्ष के कुसुमों का उपभोग करके अर्थात् गुलकन्द खाकर गमन करने से अनेक लाभ होते हैं। (१) अन्य मत से अश्वनी नक्षत्र प्रथम गिना जाता है। यह बहुसूत्री गम्य है।(२) दूसरे श्रवण नक्षत्र के तीन तारे हैं। आकार काम धेनु (कावड़) समान है। इसके योग में खीर खाण्ड खाकर पश्चिम सिवाय अन्य तीन दिशाओं में जाने से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। (३) तीसरे धनिष्टा नक्षत्र के पांच तारे हैं। इसका अकार तोते के पिंजरे समान है। इसके संयोग से मक्खण आदि खा कर दक्षिण सिवाय अन्य दिशाओं में गमन करने से कार्य सफल होता है। (४) शतभीखा नक्षत्र के सौ तारे हैं। इसका आकार बिखरे हुवे फूल के समान है इस के योग पर सारे (आखे) तुवर का भोजन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खाकर दक्षिण सिवाय दिशाओं में जाने से भय की संभावना रहती है। (५) पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के दो तारे हैं। इसका आकार अर्ध वाव्य के भाग समान है। इस योग पर करेलेकी शाक खाकर चलने पर लड़ाई होवे परन्तु इससे ज्ञानवृद्धि की संभावना भी है। (६) उत्तरा भाद्र-पद नक्षत्र के दो तारे हैं। इसका आकार भी पूर्वा भाद्र पद समान होता है। इस में दांसकपूर (वंशलोचन) खाकर पिछले पहर चलने से सुख होता है। यह नक्षत्र दीक्षा के योग्य है। (७) रेवती नक्षत्र के बत्तीश तारे हैं। इसका आकार नाव समान है। इस के समय स्वच्छ जल का पान करके चलने से विजय मिलती है। (८) अश्वनी नक्षत्र के तीन तारे हैं। घोड़े के स्कन्ध जैसा आकार है। मटर (वटले) की फली का शाक खाकर चलने से सुख शान्ति प्राप्त होती है। (९) भरणी नक्षत्र के तीन तारे हैं। और इसका आकार स्त्री के गर्भस्थान वत् है। तेल, चावल खा कर चलने पर सफलता मिलती है (१०) कृत्तिका नक्षत्र के छः तारे होते हैं। जिसका नाई की पेटी समान आकार होता है। गाय का दूध पीकर चलने पर सौभाग्य की वृद्धि होती है तथा सत्कार मिलता है। (११) रोहिणी नक्षत्र के पांच तारे होते हैं। व गाडे के ऊंट समान इसका आकार होता है। इस समय हरे मूंग खा कर चलने पर मार्ग में यात्रा के योग्य सर्व सामग्री अल्प परिश्रम से प्राप्त हो जाती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है यह नक्षत्र दीक्षा देने योग्य है। (१२) मृग शीर्ष नक्षत्र के तीन तारे होते हैं। इसका आकार हिरण के सिर समान होता है। इलायची खाकर चलने पर अत्यन्त लाभ होता है। यह नक्षत्र नये विद्यार्थी की तथा नये शास्त्रों का अभ्यास करने वालों की ज्ञानवृद्धि करने वाला है। (१३) आर्द्रा नक्षत्र का एक ही तारा है। इसका रुधिर के बिन्दु समान आकार है। इस समय नवनीत (माखन) खाकर चलने से मरण, शोक, संताप तथा भय एवं चार फल की प्राप्ति होती है। परन्तु ज्ञान अभ्यासियों को सत्वर उत्तम फल देने वाला निकलता है व वर्षा ऋतु के मेघ-बादल की अस्वाध्याय दूर करता है। (१४) पुनर्वसु नक्षत्र के पांच तारे हैं। इसका आकार तराजू के समान है। घृत शक्कर खाकर चलने पर इच्छित फल मिलते हैं (१५) पुष्प नक्षत्र के तीन तारे हैं। जिसका आकार वधमान (दो जुड़े हुवे रामपात्र) समान होता है। खीर खाण्ड खाकर चलने से अनियमित लाभ की प्राप्ति होती है। व इस नक्षत्र में किये हुवे नये शास्त्र का अभ्यास भी बढता है। (१६) अश्लेषा नक्षत्र के छः तारे हैं। इसका आकार ध्वजा समान है। इस समय सीताफल खाकर चले तो प्राणान्त भय की सम्भावना होती है परन्तु यदि कोई ज्ञान अभ्यास, हुन्नर, कला, शिल्प शास्त्र आदि के अभ्यास में प्रवेश करे तो जल तथा तेल के बिन्दु समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस के ज्ञान का विस्तार होता है। (१७) मघा नक्षत्र के सात तारे होते हैं जिनका आकार गिरे हुवे किले की दीवार समान है केसर खाकर चलने पर बुरी तरह से आकस्मिक मरण होता है। (१८) पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के दो तारे होते हैं। इनका आकार आधे पलङ्ग जैसा होता है इस समय कोठिंवड़े (फल) की शाक खाकर चलने से विरुद्ध फल की प्राप्ति होती है परन्तु शास्त्र अभ्यासी के लिए श्रेष्ठ है। (१६) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के भी दो तारे होते हैं और आकार भी आधे पलङ्ग जैसा होता है इस समय कड़ा नामक वनस्पति की फली की शाक खाकर चलने पर सहज ही क्लेश मिलता है। यह नक्षत्र दीक्षा लायक है। (२०) हस्त नक्षत्र के पांच तारे हैं। इसका आकार हाथ के पंजे समान है सिंगोड़े खाकर उत्तर दिशा सिवाय अन्य तरफ चलने से अनेक लाभ हैं व नये शास्त्र अभ्यासियों को अत्यन्त शक्ति देने वाला है। (२१) चित्रा नक्षत्र का एक ही तारा है खिले हुवे फूल जैसा उसका आकार है। दो पहर दिन चढने बाद मूंग की दाल खाकर दक्षिण दिशा सिवाय अन्य दिशाओं में जाने पर लाभ होता है व ज्ञान वृद्धि होती है (२२) स्वांति नक्षत्र का एक तारा है इसका आकार नाग फनी समान होता है आम खाकर जाने पर लाभ लेकर कुशल क्षेम पूर्वक जल्दी घर लौट आसक्ते हैं। (२३) विशाखा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नक्षत्र के पांच तारे होते हैं जिसका आकार घोड़े की लगाम (दामणी) जैसा है इस योग पर अलसी फल खाकर जाने से विकट काम सिद्ध हो जाते हैं। (२४) अनुराधा नक्षत्र के चार तारे हैं। इसका आकार एकावली हार समान होता है। चावल मिश्री खाकर जाने से दूर देश यात्रा करने पर भी कार्य सिद्धि कठिनता से होती है। (२५) जेष्टा नक्षत्र के तीन तारे हैं इनका आकार हाथी के दांत जैसा है इस समय कलथी की शाक अथवा कोल कुट (बोर कुट) खाकर चलने से शीघ्र मरण होता है। (२६) मूल नक्षत्र के इग्यारह तारे हैं इसका वींछे जैसा आकार है मूला के पत्र की शाक खा कर जाने से कार्य सिद्धि में बहुत समय लगता है। इस नक्षत्र को वींछूड़ा भी कहते हैं। ज्ञान अभ्यासियों के लिये तो यह अच्छा है। (२७) पूर्वाषाढ नक्षत्र के चार तारे हैं। हाथी के पाँव समान इसका आकार है इस समय खीर आँवला खाकर जाने से क्लेश कुसम्प व अशान्ति प्राप्त होती है परन्तु शास्त्र अभ्यासियों को अच्छी शक्ति देने वाला होता है (२८) उत्तराषाढ नक्षत्र के चार तारे होते हैं इसका बैठे हुवे सिंह समान आकार है। इस समय पके हुवे बीली फल खाकर जाने से सर्व साधन सहित कार्य सिद्धि होती है यह नक्षत्र दीक्षित करने योग्य है।

ऊपर बताये हुवे अट्ठावीश नक्षत्रों में से पांचवां, बारहवाँ, तेरहवां, पन्द्रहवां, सोलहवां, अठारहवां, वीशवां,

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

एकवीशवां, छब्बीशवां, और सत्तावीशवां एवं दश नक्षत्रों में से अमुक नक्षत्र चन्द्र के साथ योग जोड़ कर गमन करते होवें व उस दिन गुरुवार होवे तब उस समय मिथ्याभिमान दूर कर के विनय भक्ति पूर्वक गुरुवन्दन करे व आज्ञा प्राप्त करके शास्त्राध्ययन करने में तथा वांचन लेने में प्रवृत होवे ऐसा करने से सत्वर ज्ञान वृद्धि होती है परन्तु याद रखना चाहिये कि छः वार छोड कर गुरुवार लेवे दो अष्टमी, दो चउदश, पूर्णिमा, अमावस्या और दो एकम ये सर्व तिथि छोड़ कर शेष अन्य तिथियों में अच्छा चौघडिया देख कर सूर्य-गमन में प्रारम्भ करे।

विशेष में गणीपद (आचार्य), वाचक पद (उपाध्याय) अथवा बड़ी दीक्षा देने के शुभ प्रसंग में दो चोथ, दो छठ, दो अष्टमी, दो नवमी, दो बारस, दो चउदश, पूर्णिमा, तथा अमावस्या आदि चौदह तिथियां निषेध हैं। इन के सिवाय की अन्य तिथि अथवा वार, नक्षत्र योग्य है। ऐसे काल के लिए गणी विधि प्रकरण ग्रंथ का न्याय है। अष्टमी को प्रारम्भ करने पर पढाने वाला मरे अथवा वियोग पड़े अमावस्या के दिन प्रारम्भ करने पर दोनों मरे और एकम के दिन प्रारम्भ करने से विद्या की नास्ति होवे। ऐसा समझ कर तिथि वार नक्षत्र चौघडिया देख कर गुरु सम्मुख ज्ञान लेना चाहिये। यह श्रेय का कारण है।

❀ इति नक्षत्र और विदेश गमन सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ पांच देव ❀

(भगवती सूत्र, शतक १२ उद्देश ६)

गाथा

नाम गुण उवाए, ठी वीयु चवण संचीठणा,
अन्तर अप्पा बहुयं च, नव भेए देव द्वाराए ।१।

१ नाम द्वार, २ गुण द्वार, ३ उववाय द्वार ४ स्थिति द्वार ५ ऋद्धि तथा विकुवणा द्वार ६ चवन द्वार ७ संचिठण द्वार ८ अन्तर द्वार ९ अल्प बहुत्व द्वार ।

१ नाम द्वारः-१ भवि द्रव्य देव २ नर देव ३ धर्म देव ४ देवाधि देव ५ भाव देव ।

२ गुण द्वारः-मनुष्य तथा तिर्यंच पंचेन्द्रिय में से जो देवता में उत्पन्न होने वाले हैं उन्हें भवि द्रव्य देव कहते हैं २ चक्रवर्ती की ऋद्धि भोगने वालों को नर देव कहते हैं ।

चक्रवर्ती की रिद्धि का वर्णन—

नव निधान, चौदह रत्न, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख घोड़े, चौरासी लाख रथ, छन्नु क्रोड़ पायदल, बत्तीश हजार मुकुट बन्ध राजे, बत्तीश हजार सामानिक राजे, सोलह हजार देवता सेवक, चौसठ हजार स्त्री, तीन सो साठ रसोइये, वीश हजार सोना के आगर आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ धर्म देव के गुणः--आठ प्रवचन माता का सेवन करने वाले, नववाड़ विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, दशविध यति धर्म का पालन करने वाले, बारह प्रकार की तपस्या करने वाले, सतरह प्रकार के संयम का आचरण करने वाले, बावीश परिषह को सहन करने वाले, सत्तावीश गुण सहित, तेंतीश अशातना के टालने वाले, छन्नु दोष रहित आहार पानी लेने वाले, को धर्म देव कहते हैं ।

४देवाधिदेव के गुणः-चोंतीश अतिशय सहित विराजमान पैंतीश वचन (वाणी) के गुण सहित, चौसठ इन्द्र के द्वारा पूज्यनीक, एक हजार और अष्ट उत्तम लक्षण के धारक अट्ठारह दोष रहित व बारह गुणों सहित होते हैं उन्हें देवाधिदेव कहते हैं । अठारह दोषों के नामः—१ अज्ञान २ क्रोध ३ मद ४ मान ५ माया ६ लोभ ७ रति ८ अरति ९ निद्रा १० शोक ११ असत्य १२ चोरी १३ भय १४ प्राणि वध १५ मत्सर १६ राग १७ क्रीड़ा-प्रसंग १८ हास्य । १२ गुणों के नामः-१ जहां २ भगवन्त खड़े रहें, बैठें समोसरें वहां २ दश बोलों के साथ भगवन्त से बारह गुणा ऊंचा तत्काल अशोक वृक्ष उत्पन्न हो जाता है और भगवन्त के मस्तक पर छाया करता है । २ भगवन्त जहां २ समोसरें वहां २ पांच वर्ण के अचेत फूलों की वृष्टि होती है जो गिरकर घुटने के बराबर ढेर लगा देते हैं । ३ भगवन्त की योजन पर्यन्त वाणी फैल कर सबों के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन का सन्देह दूर करती है। ४ भगवन्त के चौवीश जोड़ चामर ढुलते हैं ५ स्फटिक रत्न मय पाद पीठ सहित सिंहासन स्वामी के आगे हो जाता है भामण्डल अम्बोड़े के स्थान पर तेज मण्डल विराजे व दशोंदिशाओं का अन्धकार दूर करे ७ आकाश में साड़ाबारह क्रोड़ देव-दुन्दभि बजे ८ भगवन्त के ऊपर तीन छत्र ऊपरा-उपरी विराजे ६ अनन्त ज्ञान अतिशय १० अनन्त अर्चा अतिशय-परम पूज्यपना ११ अनन्त वचन अतिशय १२ अनन्त अपायापगम अतिशय (सर्व दोष रहित पना) एवं बारह गुणों करसहित (५)भाव देव- १भवनपति २ वाण व्यन्तर ३ ज्योतिषी ४ वैमानिक एवं चार प्रकार के देव भाव देव कहलाते हैं।

३ उववाय द्वारः-१ भवि द्रव्य देव में मनुष्य तिर्यंच १, युगलिये २, और सर्वार्थ सिद्ध ३ एवं तीन स्थान छोड़ कर शेष सर्व स्थानों के आकर उत्पन्न होते हैं २ नर देव में चार जाति के देव और पहली नरक एवं पांच स्थान के आकर उत्पन्न होते हैं ३ धर्म देव में छठी सातवीं नरक, तेउ, वायु, मनुष्य तिर्यंच व युगलिये एवं छ स्थानके छोड़ कर शेष सर्व स्थान के आकर उत्पन्न होते हैं ४ देवाधिदेव में पहली दूसरी, तीसरी नरक, और किल्विषी छोड़ कर वैमानिक देव के आकर उपजते हैं ५ भाव देव में तिर्यंच, पंचे-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न्द्रिय और संज्ञी मनुष्य इन दो स्थान के आकर उत्पन्न होते हैं।

४ स्थिति द्वारः–१ भविद्रव्य देवकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्य की। २ नर देव की जघन्य सातसौ वर्ष की उत्कृष्ट चौराशी लक्ष पूर्व की ३ धर्म देव की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट देश उणी (न्यून) पूर्व क्रोड़ की ४ देवाधि देव की जघन्य ७२ वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लक्ष पूर्व की ५ भावदेव की जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की।

५ ऋद्धि तथा विकुवणा द्वारः–भवि द्रव्य देव में जिन्हें वैक्रिय उत्पन्न होवे वो, नर देव को तो होती ही है, धर्म देव में से जिन्हें होवे वो और भाव देव के तो होती ही है एवं ये चारों वैक्रिय रूप करें तो जघन्य १, २, ३, उत्कृष्ट संख्याता रूप करे, शक्ति तो असंख्याता रूप करने की है। परन्तु करे नहीं देवाधि देव की शक्ति अत्यन्त है परन्तु करे नहीं।

६ वचन द्वारः-१ भवि द्रव्य देव चव कर देवता होवे २ नर देव चव कर नरक जावे ३ धर्म देव चव कर वैमानिक में तथा मोक्ष में जावे ४ देवाधिदेव मोक्ष में जावे ५ भाव देव चवकर पृथ्वी अप, वनस्पति बादर में और गर्भज मनुष्य तिर्यंच में जावे।

७ संचिठणा द्वारः–संचिठणा अर्थात् क्या ? देव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का देवपने रहे तो कितने काल तक रह सकता है। भवि द्रव्य देव की संचिठणा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट ३ पल्योपम की। नर देव की जघन्य सातसो वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लक्ष पूर्व की। धर्म देव की परिणाम आश्री एक समय प्रवर्तन आश्री जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट देश उणी पूर्व क्रोड़ की देवाधि देव की जघन्य ७२ वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लक्ष पूर्व की। भाव देव की जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की।

८ अन्तर द्वारः-भवि द्रव्य देव में अन्तर पड़े तो जघन्य दश हजार वर्ष और अन्तर्मुहूर्त अधिक। उत्कृष्ट अनन्त काल का। नर देव में जघन्य एक सागर जाजेरा उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्त्तन में देश न्यून धर्म देव में अन्तर पड़े तो जघन्य दो पल्य जाजेरा उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्त्तन में देश न्यून। देवाधि देव में अन्तर नहीं पड़े भाव देव में अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त का उत्कृष्ट अनन्त काल का।

९ अल्प बहुत्व द्वारः-१ सर्व से कम नर देव २ उनसे देवाधि देव संख्यात गुणा ३ उनसे धर्म देव संख्यात गुणा ४ उनसे भवि द्रव्य देव असंख्यात गुणा और ५ उनसे भाव देव असंख्यात गुणा।

॥ इति पांच देव का थोकड़ा सम्पूर्ण ॥

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

आराधिक विराधिक

(श्री भगवतीजी सूत्र, शतक पहेला, उद्देश दूसरा)

१ असंजति भव्य द्रव्यदेव जघन्य भवनपति उत्कृष्ट नव ग्रीयवेक तक जावे।

२ आराधिक साधु जघन्य पहले देवलोक तक उत्कृष्ट सर्वार्थ सिद्ध विमान तक जावे।

३ विराधिक साधु ज० भवन पति उत्कृष्ट पहले देवलोक तक जावे।

४ आराधिक श्रावक जघन्य पहले देवलोक तक उत्कृष्ट बारहवें देवलोक तक जावे।

५ विराधिक श्रावक जघन्य भवनपति उत्कृष्ट ज्योतिषी तक जावे।

६ असंजति तिर्यंच ज० भवनपति उत्कृष्ट वाण व्यन्तर तक जावे।

७ तापस के मतवाले ज० भवनपति उत्कृष्ट ज्योतिषी तक जावे।

८ कंदर्पीया साधु जघन्य भवनपति उत्कृष्ट पहला देवलोक तक जावे।

९ अंबड़ सन्यासी के मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट पाँचवें देवलोक तक जावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१० जमाली के मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट छट्ठे देवलोक तक जावे ।

११ संज्ञी तिर्यंच जघन्य भवनपति उत्कृष्ट आठवें देवलोक तक जावे ।

१२ गोशाले के मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट बारहवें देवलोक तक जावे ।

१३ दर्शन विराधिक स्वलिंगी साधु जघन्य भवनपति उत्कृष्ट नव ग्रीयवेक तक जावे ।

१४ आजीविका मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट बारहवें देवलोक तक जावे ।

॥ इति आराधिक विराधिक का थोकड़ा सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन जाग्रिका (जागरण)

श्री वीर भगवन्त को गौतम स्वामी पूछने लगे कि हे भगवन् ! जाग्रिका कितने प्रकार की होती है ?

भगवान्–हे गौतम ! जाग्रिका तीन प्रकार की होती है १ धर्म जागरण २ अधर्म जागरण ३ सुदखु जागरण ।

१ धर्म जागरण के चार भेद–१ आचार धर्म २ क्रिया धर्म ३ दया धर्म ४ स्वभाव धर्म ।

१ आचार धर्म के पांच भेदः–१ ज्ञानाचार २ दर्शनाचार ३ चारित्राचार ४ तपाचार ५ वीर्याचार इन में से ज्ञानाचार के ८ भेद, दर्शनाचार के ८ भेद, चारित्रा चार के ८ भेद, तपाचार के १२ भेद, वीर्याचार के ३ भेद एवं ३९ भेद हुवे ।

१ ज्ञानाचार के ८ भेद–१ ज्ञान सीखने के समय ज्ञान सीखे २ ज्ञान लेने के समय विनय करे ३ ज्ञान का बहु मान करे ४ ज्ञान पढने के समय यथा शक्ति तप करे ५ अर्थ तथा गुरु को गोपे (छिपावे) नहीं, ६ अक्षर शुद्ध ७ अर्थ शुद्ध ८ अक्षर और अर्थ दोनों शुद्ध ।

२ दर्शनाचार के ८ भेदः–१ जैन धर्म में शङ्का नहीं करे २ पाखण्ड धर्म की वांछा नहीं करें ३ करणी के फल में संदेह नहीं रक्खे ४ पाखण्डी के आडम्बर देख कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहित नहीं होवे ५ स्वधर्म की प्रशंसा करे ६ धर्म से भ्रष्ट होने वाले को मार्ग पर लावे ७ स्वधर्म की भक्ति करे ८ धर्म को अनेक प्रकार से दिपावे कृष्ण, श्रेणिक समान।

३ चारित्राचार के ८ भेदः-१ इर्या समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आयाण भण्ड मत निखेवणा समिति ५ उचार पासवण खेल जल संघाण परिठावणिया समिति ६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति ।

४ तपाचार के बारह भेदः-छे बाह्य और छे अभ्यन्तर एवं बारह । छे बाह्य तप के नाम-१ अनशन २ उणोदरी ३ वृत्ति संक्षेप ४ रस परित्याग ५ काय क्लेश ६ इन्द्रिय प्रति संलीनता। छे अभ्यन्तर तप के नामः-१ प्रायश्चित २ विनय ३ वैयावच्च ४ सज्झाय ५ ध्यान ६ कायोत्सर्ग एवं सर्व १२ हुवे । इन में से इहलोक पर लोक के सुख की वाञ्छा रहित तप करे अथवा आजीविका रहित तप करे एवं तप के बारह आचार जानना ।

५ वीर्याचार के तीन भेदः-१ बल व वीर्य धार्मिक कार्य में छिपावे नहीं २ पूर्वोक्त ३६ बोल में उद्यम करे ३ शक्ति अनुसार काम करे एवं ३६ भेद आचार धर्म के कहे ।

२ क्रिया धर्मः-इस के ७० भेदों के नाम-चार प्रकार की पिण्ड विशुद्धि ४, ५ समिति, १२ भावना, १२

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

साधु की बारह पडिमा, ५ पांच इन्द्रिय निग्रह, २५ प्रकार की पडीलेहना, ३ गुप्ति, ४ अभिग्रह एवं ७० ।

३ दया धर्म के आठ भेदः-१ स्वदया अर्थात् अपनी आत्मा को पाप से बचावे २ पर दया याने अन्य जीवों की रक्षा करे ३ द्रव्य दया याने देखा देखी दया पाले अथवा लज्जा से जीव की रक्षा करे तथा कुल आचार से दया पाले ४ भाव दया अर्थात् ज्ञान के द्वारा जीव को आत्मा जान कर उस पर अनुकम्पा लावे व दया लाकर जीव की रक्षा करे ५ व्यवहार दया श्रावक को जैसी दया पालने के लिए कहा है वो पाले घर के अनेक काम काज करने के समय यतना रक्खे ६ निश्चय दया याने अपनी आत्मा को कर्म बन्ध से छुड़ावे । विवेचनः-पुद्गल पर वस्तु है । इनके ऊपर से ममता हटा कर उसका परिचय छोड़े, अपने आत्मिक गुण में लीन रहे, जीव का कर्म रहित शुद्ध स्वरूप प्रगट करे, यह निश्चय दया है । चौदह गुणस्थानक के अन्त में यह दया पाई जाती है । ७ स्वरूप दया अर्थात् किसी जीव को मारने के लिये उसे (जीव को) पहिले अच्छी तरह से खिलाते हैं व शरीर पुष्ट करते हैं, सार संभाल लेते हैं । यह दया ऊपर की तथा दीखावा मात्र है । परन्तु पीछे से उस जीव को मारने के परिणाम है । यह उत्तराध्ययन सूत्र के सातवें अध्ययन में बकरे के अधिकार से समझना ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८ अनुबन्ध दया-वह जीव को त्रास देवे परन्तु अन्तर्हृदय से उसको सुख देने की भावना है। जैसे—माता पुत्र का रोग दूर करने के लिये कटुक औषधि पिलाती है परन्तु हृदय से उसका हित चाहती है। तथा जैसे पिता पुत्र को हित शिक्षा देने के लिये ऊपर से तर्जना करे, मारे परन्तु हृदय से उसको सद्गुणी बनाने के लिये उसका हित चाहता है।

४ स्वभाव धर्म—जीव व अजीव की प्रणति के दो भेद—१ शुद्ध स्वभाव से और २ कर्म के संयोग से अशुद्ध प्रणति। इनसे जीव को विषय कषाय के संयोग से विभावना होती है। जिसे दूर करके जीव अपने ज्ञानादिक गुण में रमन करे उसे स्वभाव धर्म कहते हैं। और पुद्गल का एक वर्ण, एक गन्ध, एकरस, दो फरस (स्पर्श) में रमण होवे तो यह पुद्गल का शुद्ध स्वभाव धर्म जानना। इसके सिवाय चार द्रव्य में स्वभाव धर्म है परन्तु विभाव धर्म नहीं। चलन गुण, स्थिर गुण, अवकाश गुण, वर्तना गुण आदि ये अपने २ स्वभाव को छोड़ते नहीं अतः ये शुद्ध स्वभाव धर्म है। एवं चार प्रकार की धर्म जाग्रिका कही।

२ अधर्म जाग्रिका—संसार में धन कुटुम्ब परिवार आदि का संयोग मिलना व इसके लिये आरम्भादिक करना, उन पर दृष्टि रखना व रक्षा करना आदि को अधर्म जाग्रिका कहते हैं।

सुदखु जाग्रिका—सु कहेता अच्छी व दखु कहेता

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

चतुराई की जाग्रिका । यह श्रावक को होती है कारण कि सम्यक् ज्ञान, दर्शन सहित धन कुटुम्बादिक तथा विषय कषाय को खराब जानता है । देश से निवृत्त हुवा है, उदय भाव से उदासीन पने है, तीन मनोरथ का चिंतन करता है । इसे सुदखु जाग्रिका कहते हैं ।

॥ इति तीन जाग्रिका संपूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ काय के भव

श्री गौतम स्वामी वीर भगवान को वंदना नमस्कार करके पूछने लगे कि हे भगवन्! छे काय के जीव अन्तर्मुहूर्त में कितने भव करते हैं?

भगवान–हे गौतम! पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु आदि जघन्य एक भव करे उत्कृष्ट बारह हजार आठ सो चोवीश भव एक अन्तर्मुहूर्त में करे और वनस्पति के दो भेद–१ प्रत्येक २ साधारण। प्रत्येक जघन्य एक भव उत्कृष्ट बावीश हजार भव करे व साधारण जघन्य एक भव और उत्कृष्ट पेंसठ हजार पांचसो छब्बीश भव करे। बेइन्द्रिय जघन्य एक भव उत्कृष्ट ८० भव करे। त्रि–इन्द्रिय जघन्य एक उत्कृष्ट साठ भव करे। चौरिन्द्रिय जघन्य एक उत्कृष्ट चालीश भव करे। असंज्ञी तिर्यंच जघन्य एक भव उत्कृष्ट चोवीश भव करे। संज्ञी तिर्यंच व संज्ञी मनुष्य जघन्य तथा उत्कृष्ट एक भव करे।

॥ इति छकाय के भव सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

⁂ अवधि पद ⁂

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तेंतीशवां)

इसके दश द्वार—१ भेद द्वार २ विषय द्वार ३ संठाण द्वार ४ आभ्यन्तर और बाह्य द्वार ५ देश थकी व सर्व थकी ६ अनुगामी ७ हायमान वर्धमान ८ अवट्ठीया ९ पड़वाई १० अपड़वाई ।

१ भेद द्वार—नेरिये व देव भव प्रत्ये देखे अर्थात् उत्पन्न होने के समय से ही उन्हें अवधि ज्ञान होता है तिर्यंच व मनुष्य क्षयोपशम भाव से देखे ।

२ विषय द्वारः—पहेली नरक का नेरिया जघन्य साढ़े तीन गाउ देखे उत्कृष्ट चार गाउ, दूसरी नरक का नेरिया जघन्य तीन गाउ उत्कृष्ट साड़े तीन गाउ, तीसरी नरक का नेरिया जघन्य अढाई गाउ उत्कृष्ट तीन गाउ, चौथी नरक का नेरिया जघन्य दो गाउ उत्कृष्ट अढाई गाउ, पांचवीं नरक का जघन्य डेढ गाउ उत्कृष्ट दो गाउ, छट्ठी नरक का जघन्य एक गाउ उत्कृष्ट डेढ गाउ, सातवीं नरक का जघन्य आधा गाउ उत्कृष्ट एक गाउ देखे। भवन पति जघन्य पच्चीश योजन तक देखे उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊंचा—पहेले दूसरे देवलोक तक, नीचे—तीसरी नरक के तले तक और तीर्छा—पल के आयुष्य वाले संख्यात द्वीप समुद्र देखे व सागर के आयुष्य वाले असं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ख्यात द्वीप समुद्र देखे। वाण व्यन्तर व नव निकाय के देवता जघन्य पच्चीश योजन उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊंचा—पहेले देव लोक तक नीचे-पाताल कलश तक व तिर्यक संख्यात द्वीप समुद्र देखे। ज्योतिषी जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊंचा—अपने विमान की ध्वजा तक, नीचे-नरक के तले तक और तिर्यक पल के आयुष्य वाले संख्यात द्वीप समुद्र देखे व सागर के आयुष्य वाले असंख्यात द्वीप समुद्र देखे। तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध विमान तक के देवता ऊंचा अपने २ विमान की ध्वजा तक देखे तिर्यक् असंख्यात द्वीप समुद्र देखे नीचे-तीसरे चौथे देवलोक वाले दूसरी नरक के तले पर्यन्त, पांचवें छठ्ठे वाले तीसरी नरक के तले तक, नववें से बारहवें देवलोक तक वाले पांचवी नरक के तले पर्यन्त, नव ग्रीयवेक वाले छठ्ठी नरक के तले तक चार अनुत्तर विमान वाले सातवीं नरक के तले तक और सर्वार्थ सिद्ध के देवता सातवीं नरक के तले तक, तिर्यंच जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट संख्यात द्वीप समुद्र देखे मनुष्य जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट समग्र लोक और अलोक में लोक जितने असंख्यात भाग देखे।

३ संठाण द्वारः—नेरिये त्रिपाई के आकर वत् देखे, भवन पति पालने के आकार वत् वाण व्यन्तर झालर के आकार समान, ज्योतिषी पडहे के आकार वत् देखे। बारह

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

देव लोक के देवता मृदंग के आकार वत् देखे, नवग्रीयवक के देवता फूलों की चंगेरी समान देखे, और अनुत्तर विमान के देवता कुंवारी कन्या की कंचुकी समान देखे।

४ आभ्यन्तर-बाह्य द्वार--नेरिये व देव आभ्यन्तर देखे, तिर्यंच बाह्य देखे मनुष्य आभ्यन्तर और बाह्य दोनों देखे कारण कि तीर्थंकरों को अवधि ज्ञान जन्म से ही होता है।

५ देश और सर्व थकी-नारकी,देवता और तिर्यंच देश थकी और मनुष्य सर्व थकी।

६ अनुगामी और अनानुगामी-नारकी देवता का अवधि ज्ञान अनुगामी (अर्थात् साथ २ रहने वाला) अवधि ज्ञान होता है। तिर्यंच और मनुष्य का अनुगामी तथा अनानुगामी दोनों प्रकार का होता है।

७ हायमान वर्धमान और ८ अवठिया द्वारः- नारकी देवता का अवधि ज्ञान अवठीया होवे (न तो घटे और न बढे, उतना ही रहता है) मनुष्य और तिर्यंच का हायमान, वर्धमान तथा अवठीया एवं तीनों प्रकार का अवधि ज्ञान होता है।

९-१० पड़वाई और अपड़वाई द्वारः-नारकी देवता का अवधि ज्ञान अपड़वाई होता है और मनुष्य व तिर्यंच का अवधि ज्ञान पड़वाई तथा अपड़वाई दोनों प्रकार का होता है।

॥ इति अवधि पद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्म ध्यान

उववाई सूत्र पाठ ।

सेकिंतं धम्मे झाणे? चउविहे, चउ पड़यारे पन्नते तंजहा; आणाविज्जए १ अवाय विज्जए २ विवाग विजए ३ संठाण विजए ४; धम्मस्सणं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पन्नता तंजहा, आणरूइ १ निसग्ग रूई २ सूत्तरूई ३ उवएस रूई ४; धम्मस्सणं झाणस्स चत्तारि आलम्बण पन्नत्ता तंजहा, वायणा १ पुछणा २ परियट्टणा ३ धम्मकहा ४; धम्मस्सणं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहा पन्नता तंजहा, एगच्चाणुप्पेहा १ अणिच्चाणुप्पेहा २ असरणाणुपेहा ३ संसारणुप्पेहा।

भावार्थ-धर्म ध्यान के चार भेद १ आणा-विज्जए कहेता वीतराग की आज्ञा का विचार चिंतन करे। समकित सहित बारह व्रत, श्रावक की इग्यारह पडिमा, पंच महाव्रत, भिक्षु (साधु) की बारह पडिमा, शुभ ध्यान, शुभ योग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप व छकाय की रक्षा एवं वीतराग की आज्ञा का आराधन करे। इसमें समय मात्र का प्रमाद नहीं करे। और चतुर्विध तीर्थ के गुणों का कीर्तन करे। इस प्रकार धर्म ध्यान का यह पहला भेद खतम हुवा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ अवायविजए—संसार के अन्दर जीव को जिसके द्वारा दुख प्राप्त होता है उनका चिंतवन करे अथवा मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय अशुभ योग तथा अठारह पाप स्थानक, काय की हिंसा एवं इनको दुखों का कारण जानकर आश्रव मार्ग का त्याग करे व संवर मार्ग को आदरे। जिस से जीव को दुख नहीं होवे।

३ विपाग विजए—जीव को किस प्रकार सुख दुख की प्राप्ति होती है अर्थात् वो इन्हें किस प्रकार भोगता है इसपर चिंतन व मनन करे। जीव जितने रस के द्वारा जैसे शुभा शुभ ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का उपार्जन किया है वैसे ही शुभा शुभ कर्मों के उदय से जीव सुख दुख का अनुभव करता है। सुख दुख अनुभव करते समय किसी पर राग द्वेष नहीं करना चाहिये किन्तु समता भाव रखना चाहिये। मन वचन काया के शुभ योग सहित जैन धर्म के अन्दर प्रवृत होना चाहिये जिससे जीव को निराबाध परम सुख की प्राप्ति होवे।

४ संठाण विजए:-तीनों लोकों के आकार का स्वरूप चिंतवे। लोक का स्वरूप इस प्रकार है—यह लोक सुपइठक के आकार वत् है। जीव—अजीवों से समग्र भरा हुवा है। असंख्यात योजन की क्रोड़ा क्रोड़ प्रमाणे तीर्छा लोक है जिसके अन्दर असंख्यात द्वीप समुद्र है असंख्यात वाणव्यन्तर के नगर है, असंख्यात ज्योतषी के विमान हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा असंख्यात ज्योतिषी की राजधानीये हैं। इसमें-अढाई द्वीप के अन्दर तीर्थंकर जघन्य २० उत्कृष्ट १७०, केवली जघन्य दो क्रोड़ उत्कृष्ट नव क्रोड़, तथा साधु जघन्य दो हजार क्रोड़ उत्कृष्ट नव हजार क्रोड होते हैं। जिन्हें वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि समाणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवास्सामि। तीर्छे लोक में असंख्याते श्रावक श्राविका हैं उन के गुण ग्राम करना चाहिए तीर्छे लोक से असंख्यात गुणा अधिक ऊर्ध्व लोक है। जिसमें बारह देवलोक नव ग्रीय वेक पांच अनुत्तर विमान एवं सर्व मिला कर चोराशी लाख सत्ताणु हजार तेवीश विमान हैं। इनके ऊपर सिद्ध शीला है जहां पर सिद्ध भगवान विराज मान हैं। उन्हें वंदामि जाव पज्जुवास्सामि। ऊर्ध्व लोक से नीचे अधोलोक है जिसमें चोराशी लाख नरक वासे हैं और सातक्रोड़ बहत्तर लाख भवन पति के भवन हैं। ऐसे तीन लोक के सर्व स्थानक को समकित रहित करणी बिना सर्व जीव अनन्ती बार जन्म मरण द्वारा फरस कर छोड़ चुके हैं। ऐसा जानकर समकित सहित श्रुत और चारित्र धर्म की आराधना करनी चाहिये जिससे अजरामर पद की प्राप्ति होवे।

धर्म ध्यान के चार लक्षण:-१ आणारुई-वीतराग की आज्ञा अङ्गीकार करने की रुचि उपजे उसे आणारुई कहते हैं।

२ निसग्ग रुई:—जीव को स्वभाव से ही तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाति स्मरणादिक ज्ञान से श्रुत सहित चारित्र धर्म करने की रुचि उपजे इसे निसग्ग रुई कहते हैं।

३ सूत्त रुई—इसके दो भेद— १ अंग पविठ २ अंग बाहिर। आचारांगादि १२ अंग अंगपविठ इनमें से ११ अंग कालिक और बारहवां अंग दृष्टिवाद यह उत्कालिक। अंग बाहिर के दो भेद—१ आवश्यक २ आवश्यक व्यतिरिक्त। आवश्यक—सामायकादिक छ अध्ययन उत्कालिक तथा उत्तराध्ययनादिक कालिक सूत्र। उववाई प्रमुख उत्कालिक सूत्र सुनने की तथा पढने की रुचि उत्पन्न होवे उसे सूत्र रुचि कहते हैं।

४ उवएसरुई—अज्ञान द्वारा उपार्जित कर्मों को ज्ञान द्वारा खपावे, ज्ञान से नये कर्म न बान्धे, मिथ्यात्व द्वारा उपार्जित कर्मों को समकित द्वारा खपावे, समकित के द्वारा नवीन कर्म नहीं बान्धे। अव्रत से बन्धे हुवे कर्मों को व्रत द्वारा खपावे व व्रत से नये कर्म न बान्धे। प्रमाद द्वारा उपार्जित कर्मों को अप्रमाद से खपावे और अप्रमाद के द्वारा नये कर्म न बान्धे। कषाय द्वारा बन्धे हुवे कर्मों को अकषाय द्वारा खपावे व अकषाय के द्वारा नये कर्म न बान्धे। अशुभ योग से उपार्जित कर्मों को शुभ योग से खपावे व शुभ योग के द्वारा नये कर्म न बान्धे। पांच इंद्रिय के स्वाद रुप आश्रव से उपार्जित कर्म तप रुप संवर द्वारा खपावे और तप रुप संवर से नवीन कर्म न बांधे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतः अज्ञानादिक आश्रव मार्ग का त्याग करके ज्ञानादिक संवर मार्ग का आराधन करें एवं तीर्थंकरों का उपदेश सुनने की रुचि उपजे। इसे उपदेश रुचि (उवएस रुचि) तथा उगाढ रुचि भी कहते हैं।

धर्म ध्यान के चार अवलम्बन—वायणा, पूछणा, परियट्टणा और धर्म कथा।

१ **वायणा**—विनय सहित ज्ञान तथा निर्जरा के निमित्त सूत्र के व अर्थ के ज्ञाता गुर्वादिक के समीप सूत्र तथा अर्थ की वाचनी लेवे उसे वायणा कहते हैं।

२ **पूछणा**—अपूर्व ज्ञान प्राप्त करने के लिए तथा जैन मत दीपाने के लिए, संदेह दूर करने लिए अथवा अन्य की परीक्षा के लिए यथा योग्य विनय सहित गुर्वादिक से प्रश्न पूछे उसे पूछणा कहते हैं।

३ **परियट्टणा**—पूर्व पठित जिन भाषित सूत्र व अर्थों को अस्खलित करने के लिए तथा निर्जरा निमित्त शुद्ध उपयोग सहित शुद्ध अर्थ व सूत्र की बारंबार स्वाध्याय करे उसे परियट्टणा कहते हैं।

४ **धर्म कथा**—जैसे भाव वीतराग ने परुपे हैं वैसे ही भाव स्वयं अंगीकार करके विशेष निश्चय पूर्वक शङ्का, कंखा, वितिगच्छा रहित अपनी निर्जरा के लिए व पर-उपकार निमित्त सभा के अन्दर वे भाव वैसे ही परुपे, उसे धर्म कथा कहते हैं। इस प्रकार की धर्म कथा कहने वाले तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुन कर श्रद्धा रखने वाले दोनों जीव वीतराग की आज्ञा के आराधक होते हैं। इस धर्म कथा–संवर रुप वृक्ष की सेवा करने से मन वाञ्छित सुख रुप फल की प्राप्ति होती है। **संवर रुपी वृक्ष का वर्णन**–जिस वृक्ष का समकित रुप मूल है, धैर्य रुप कन्द है, विनय रुप वेदिका है, तीर्थंकर तथा चार तीर्थ के गुण कीर्तन रुप स्कन्ध है, पांच महाव्रत रुप बड़ी शाखा है, पच्चीश भावना रुप त्वचा है, शुभ ध्यान व शुभ योग रुप प्रधान पल्लव पत्र हैं, गुण रुप फूल है, शीयल रुप सुगन्ध है, आनन्द रुप रस है, और मोक्ष रुप प्रधान फल है। मेरु गिरि के शिखर पर जैसे चूलिका विराजमान है वैसे ही समकिती के हृदय में संवर रुपी वृक्ष विराजमान होता है। इस संवर रुपी वृक्ष की शीतल छाया जिसे प्राप्त होती है उस जीव के भवोभव के पाप टल जाते हैं और वह अतुल सुख प्राप्त करता है।

उक्त चार प्रकार की कथा विस्तार पूर्वक कहे उसे धर्म कथा कहते हैं। अक्षेवणी, विक्षेवणी, संवेगणी और निर्वेगणी आदि ४ कथाओं का विस्तार चोथे ठाणे दूसरे उद्देशे के अन्दर है।

धर्म ध्यान की चार अणुप्पेहा–जीव द्रव्य तथा अजीव द्रव्य का स्वभाव स्वरुप जानने के लिए सूत्र का अर्थ विस्तार पूर्वक चिंतवें उसे अणुप्पेहा कहते हैं।

१ अणुप्पेहा–एकच्चाणुप्पेहा–मेरी आत्मा निश्चय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नय से असंख्यात प्रदेशी अरुपी सदा सउपयोगी व चैतन्य रुप है। सर्व आत्मा निश्चय नय से ऐसी ही हैं। और व्यवहार नय से आत्मा अनादि काल से अचैतन्य जड़ वर्णादि २० रुप सहित पुद्गल के संयोग से त्रस व स्थावर रुप लेकर अनेक नृत्य कार नट के समान अनेक रुप वाली है! वह त्रस का त्रस रुप में प्रवर्ते तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट दो हजार सागर जाजेरा तक रहे और स्थावर का स्थावर रुप में प्रवर्ते तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट (काल से) अनन्ती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी व क्षेत्र से अनंता लोक प्रमाणे अलोक के आकाश प्रदेश होवे इतने काल चक्र उत्सर्पिणी अवसर्पिणी समझना। इस के असंख्यात पुद्गल परावर्त्तन होते हैं। आंगुल के असंख्यातवें भाग में जितने आकाश प्रदेश आवे उतने असंख्यात पुद्गल परावर्त्तन होते हैं। स्थावर के अन्दर पुद्गल लेकर खेला। यह व्यवहार नय से जानना। त्रस स्थावर में रह कर स्त्री पुरुष नपुंसक वेद में पुद्गल के संयोग में खेला, प्रवर्त हुवा व अनेक रूप धारण किये जैसे-किसी समय देवी रूप में भवनपत्यादिक से इशान देव लोक तक इन्द्र की इद्राणी सुरूपवन्ती अप्सरा हुई जघन्य १० हजार वर्ष उत्कृष्ट ५५ पल्योपम देवाङ्गना के रूप में अनन्ती वार जीव खेला। देवता रूप में भवनपत्यादिक से जाव नव ग्रीयवेक तक महर्धिक महा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्तिवन्त इन्द्रादिक लोक पाल प्रमुख रूपवान देदीप्य-
वान् वंछित भोग संयोग में प्रवर्त हुवा जघन्य १० हजार
वर्ष उत्कृष्ट ३१ सागरोपम एवं अनन्ती वार भोगा। इन्द्र
महाराज के रूप में एक भव के अन्दर ७ पल्योपम की
देवी, बावीश क्रोड़ा क्रोड़, पिच्चाशी लाख क्रोड़, एकोत्तर
हजार क्रोड़, चार से अठावीश क्रोड़, सत्तावन लाख
चौदह हजार दोसो अठ्यासी ऊपर पांच पल्य की ८,
इतनी देवियों के साथ भोग करने पर भी तृप्ति न हुई।
मनुष्य के अन्दर स्त्री पुरुष रूप में हुवा। देव कुरू उत्तर
कुरू के अन्दर युगल युगलानी हुवा जहां महामनोहर रूप
मनवांछित सुख भोगे। दश प्रकार के कल्प वृक्षों से सुख
भोगे। स्त्री पुरुष का क्षण मात्र के लिये भी वियोग नहीं
पड़ा। ३ पल्योपम तक निरन्तर सुख भोगे। हरिवास रम्यक
वास में २ पल्योपम, हेमवय हिरण्य वय क्षेत्र के अन्दर
१ पल्य तक, छप्पन अन्तरद्वीपा के अन्दर पल्योपम का
असंख्यातवां भाग, युगल युगलानी रूप में अनंती बार
स्त्री पुरुष के रुप में खेला परन्तु आत्म तृप्ति नहीं हुई।
चक्रवर्ती के घर स्त्री रत्न के रुप में लक्ष्मी समान रुप
अनंती वार यह जीव पाकर खेला, परन्तु तृप्त नहीं हुवा।
वासुदेव मंडलीक राजा व प्रधान व्यवहारीया के घर स्त्री
रुप में मनोज्ञ सुखों में पूर्व क्रोडादिक के आयुष्य पने
प्रवर्त हुवा। यही जीव मनुष्य के अन्दर कुरुपवान, दुर्भागी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नीच कुल, दरिद्री भर्तार की स्त्री रुप में, अलच्च रुप दुर्भागिणी पने और नट पने प्रवर्त हुवा । तोभी मनुष्य पने स्त्री पुरुष के अवतार पूरे नहीं हुवे । तिर्यंच पंचेन्द्रिय जलचरादि के अन्दर स्त्री वेद से प्रवर्त हुवा । वो जीव सात नरक में, पांच एकेन्द्रिय में, तीन विकलेन्द्रिय तथा असंज्ञी तिर्यंच मनुष्य के अन्दर नियमा नपुंसक वेद से तथा संज्ञी तिर्यंच मनुष्य के अन्दर भी जीव नपुंसक वेद से प्रवर्त हुवा परमार्थे लागठ स्त्री वेद से प्रवर्त हुवा। उत्कृष्ट ११० पल्य और पृथक पूर्व क्रोड़ तक स्त्री वेद में खेला जघन्य आयुष्य भोगने के आश्री अन्तर्मुहूर्त, पुरुष वेद में उत्कृष्ट पृथक् सो सागर जाजेरा तक खेला। जघन्य आयुष्य भोगने के आश्री अन्तर्मुहूर्त, नपुंसक वेद उत्कृष्ट अनन्त काल चक्र असंख्यात पुद्गल परावर्तन तक खेला । जहां गया वहां अकेला पुद्गल के संयोग से अनेक रुप परावर्त्तन किये । यह सर्व रुप व्यवहार नय से जानना। इस प्रकार के परिभ्रमण को मिटाने वाले श्री जैन धर्म के अन्दर शुद्ध श्रद्धा सहित शुद्ध उद्यम पराक्रम करे तब ही आत्मा का साधन होवे व इस समय आत्मा के सिद्ध पद की प्राप्ति होती है । इसमें निश्चय नय से एक ही आत्मा जानना चाहिये । जब शुद्ध व्यवहार में प्रवर्त हो कर अशुद्ध व्यवहार को दूर करे तब सिद्ध गति प्राप्त होती है । इस प्रकार की मेरी एक आत्मा है । अपर परिवार स्वार्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुप है । और पडगसा मीससा और वीससा पुद्गल ये पर्यव करके जैसे स्वभाव में हैं वैसे स्वभाव में नहीं रहते हैं अतः अशाश्वत है । इस लिये अपनी आत्मा को अपने कार्य का साधक व शाश्वत जानकर अपनी आत्मा का साधन करे ।

२ अणाच्चाणुप्पेहा - रुपी पुद्गल की अनेक प्रकार से यतन करने पर भी ये अनित्य हैं । नित्य केवल एक श्री जैन धर्म परम सुख दायक है । अपनी आत्मा को नित्य जान कर समकितादिक संवर द्वारा पुष्ट करे । यह दूसरी अणुप्पेहा है ।

३ असरणाणुप्पेहा–इस भव के अन्दर व पर लोक में जाते हुवे जीव को एक समकित पूर्वक जैन धर्म विना जन्म जरा मरण के दुःख दूर करने में अन्य कोई शरण समर्थ नहीं ऐसा जान कर श्री जैन धर्म का शरण लेना चाहिये जिससे परम सुख की प्राप्ति होवे यह तीसरी अणुप्पेहा है ।

४ संसाराणुप्पेहा–स्वार्थ रुप संसार समुद्र के अन्दर जन्म जरा मरण संयोग वियोग शारीरिक मानसिक दुख, कषाय मिथ्यात्व, तृष्णारुप अनेक जल कल्लोलादिक की लहरों से चार गति चोवीश दण्डक के अन्दर परिभ्रमण करते हुवे जीव को श्री जैन धर्म रुप द्वीप का आधार है और संयम रुप नाव को शुद्ध समकित रुप निर्जामक नाविक (नाव चलाने वाला) है ऐसी नावों के

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

द्वारा जीव-सिद्धि रूप महा नगर के अन्दर पहुंच जाता है। जहां अनन्त अतुल विमल सिद्ध के सुख प्राप्त करता है। यह धर्म ध्यान की चौथी अणुप्रेक्षा है। एवं धर्म ध्यान के गुण जान कर सदा धर्म ध्यान ध्यावें जिससे जीव को परम सुख की प्राप्ति होवे।

॥ इति धर्म ध्यान सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ छ लेश्या ❀

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, ३४ वां अध्ययन)

छ लेश्या के ११ द्वारः—१ नाम २ वर्ण ३ रस ४ गंध ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण ८ स्थानक ९ स्थिति १० गति ११ चवन।

१ नाम द्वार—१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

२ वर्ण द्वारः—कृष्ण लेश्या का वर्ण जल सहित मेघ समान काला, तथा भैंस के सिंग समान काला, अरींठे के बीज समान, गाड़ी के खंजन (काजली) समान और आँख की कीकी समान काला। इनसे भी अनंत गुणा काला।

नील लेश्याः—अशोक वृक्ष, चास पक्षी की पांख और वैडुर्य रत्न से भी अनंत गुणा नीला इस लेश्या का वर्ण होता है।

कापोत लेश्या—अलशी के फूल, कोयल की पांख, कबूतर की गर्दन कुछ लाल कुछ काली आदि। इनसे भी अनंत गुणा अधिक कापोत लेश्या का वर्ण होता है।

तेजो लेश्या—उगता हुवा सूर्य, तोते की चोंच,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीपक की शिखा आदि इनसे अनंत गुणा अधिक इस लेश्या का लाल रंग होता है।

पद्म लेश्या—हरताल, हलदर, सण के फूल आदि इनसे भी अनंत गुणा अधिक पीला इसका रंग होता है।

शुक्ल लेश्या—शंख, अंक रत्न, मोगरे का फूल गाय का दूध, चांदी का हार आदि इनसे भी अनन्त गुणा इस लेश्या का वर्ण श्वेत होता है।

३ रस द्वारः—कड़वा तुम्बा, नीम्ब का रस, रोहिणी नामक वनस्पति का रस आदि इनसे भी अनंत गुणा अधिक कड़वा रस कृष्ण लेश्या का होता है नील लेश्या का रस-सूंठ के रस के समान, पीपला मूल आदि के रस से भी अनंत गुणा कड़वा रस इस नील लेश्या का होता है।

कापोत लेश्या का रस-कच्चो केरी, कच्चा कोठा (कबीट) आदि के रस से भी अनन्त गुणा खट्टा होता है।

तेजो लेश्या का रस-पक्के आम, व पक्के कोठे के रस से अनन्त गुणा अधिक कुछ खट्टा व कुछ मीठा होता है।

पद्म लेश्या का रस-शराब, सिरका व शहत आदि से भी अनन्त गुणा अधिक मधुर होता है।

शुक्ल लेश्या का रस-खजूर, दाख (द्राक्ष) दूध व शकर आदि से भी अनन्त गुणा अधिक मीठा होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ गंध द्वार—गाय, कुत्ता, सर्प आदि के मड़े से भी अनन्त गुणी अधिक अप्रशस्त गन्ध प्रथम तीन लेश्या की होती है। कपूर, केवड़ा, प्रमुख घोटने के समय जैसी सुगन्ध निकलती है उस से भी अनन्त गुणी अधिक प्रशस्त सुगन्ध पिछली लेश्याओं की होती है।

५ स्पर्श द्वार—करवत की धार, गाय की जीभ, मुंझ (ज) का तथा वांस का पान, आदि से भी अनन्त गुणा तीक्षण अप्रशस्त लेश्या का स्पर्श होता है बुर नामक वनस्पति, मक्खन, सरसव के फूल व मखमल से भी अनन्त गुणा अधिक कोमल प्रशस्त लेश्याओं का स्पर्श होता है।

६ परिणाम द्वार—लेश्या तीन प्रकारे प्रणमें-जघन्य, मध्यम, और उत्कृष्ट तथा नव प्रकारे परिणमे ऊपर के तीन प्रकार के पुनः एक एक के तीन भेद होते हैं जैसे जघन्य का जघन्य, जघन्य का मध्यम, और जघन्य का उत्कृष्ट एवं हरेक के तीन तीन करते नव भेद हुवे। ऐसे ही नव के सत्तावीश, सत्तावीश के एकाशी और एकाशी के दो सो तेंतालीश भेद होते हैं। इतने भेदों से लेश्या परिणमती है।

७ लक्षण द्वारः—कृष्ण लेश्या के लक्षण-पांच आश्रव का सेवन करने वाला, अगुप्तिवन्त,छकाय जीव का हिंसक,आरम्भ का तीव्र परिणामी व द्वेषी,पाप करने में साह-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिक,निष्ठुर परिणामी, जीव हिंसा, सुग्या रहित करने वाला और अजितेन्द्री आदि लक्षण कृष्ण लेश्या के हैं। नील लेश्या के लक्षणः—ईर्ष्यावन्त, अमृषावन्त, तप रहित, मायावी पाप करने में शर्माय नहीं, गृधी, धूतारा, प्रमादी रस—लोलुपी, माया का गवेषी, आरंभ का अत्यागी, पाप के अन्दर साहसिक ये लक्षण नील लेश्या के हैं। कापोत लेश्या के लक्षणः—वक्र भाषी, वक्र कार्य करने वाला, माया करके प्रसन्न होवे, सरलता रहित, मुंह पर कुछ और पीठ पीछे कुछ, मिथ्या व मृषा भाषी, चोरी मत्सर का करने वाला,आदि। तेजो लेश्या के लक्षणः—मर्यादा वन्त, माया रहित, चपलता रहित, कुतुहल रहित, विनय वन्त, जितेन्द्री, शुभ योग वंत, उपध्यान तप सहित, दृढ धर्मी, प्रिय धर्मी, पाप से डरने वाला आदि। पद्म लेश्या के लक्षणः—क्रोध मान माया लोभ को जिसने पतले (कम) किये हैं, प्रशांत चित्त, आत्म निग्रही, योग उपध्यान सहित, अल्प भाषी, उपशांत, जितेन्द्री। शुक्ल लेश्या के लक्षणः—आर्त्त ध्यान, रौद्र ध्यान, से सर्वथा रहित, धर्म ध्यानं, शुक्ल ध्यान सहित, दश प्रकार की चित्त समाधि सहित, आत्मनिग्रही, आदि।

८ लेश्या स्थानक द्वारः—असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के जितने समय होते हैं तथा असंख्यात लोक के जितने आकाश प्रदेश होते हैं उतने लेश्या के स्थानक जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९ लेश्या की स्थिति द्वारः—कृष्ण लेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम व अन्तर्मुहूर्त अधिक, नील लेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट दश सागरोपम और पल का असंख्यातवाँ भाग अधिक। कापोत लेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन सागरोपम और पल का असंख्यातवाँ भाग अधिक। तेजो लेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट दो सागर और पल का असंख्यातवाँ भाग अधिक, पद्म लेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट दश सागरोपम और अन्तर्मुहूर्त अधिक। शुक्ल लेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम और अन्तर्मुहूर्त अधिक। एवं समुच्चय लेश्या की स्थिति कही। अब चार गति की लेश्या की स्थितिः—नारकी की लेश्या की स्थिति--कापोत लेश्या की स्थिति जघन्य दश हज़ार वर्ष की उत्कृष्ट तीन सागरोपम और पल का असंख्यातवाँ भाग। नील लेश्या की स्थिति जघन्य तीन सागर और पल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट दश सागर और पल का असंख्यातवाँ भाग कृष्ण लेश्या की स्थिति जघन्य दश सागर और पल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट तेंतीश सागर और अन्तर्मुहूर्त अधिक। एवं नारकी की लेश्या हुई। मनुष्य तिर्यंच की लेश्या की स्थितिः-प्रथम पांच लेश्या की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्ल लेश्या की स्थिति (केवली आश्री) जघन्य अन्त-मुहूर्त की उत्कृष्ट नव वर्ष न्यून क्रोड़ पूर्व की। देवता की लेश्या की स्थितिः—भवन पति और वाण व्यन्तर में कृष्ण लेश्या की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट पल का असंख्यातवां भाग नील लेश्या की स्थिति जघन्य कृष्ण लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल का असंख्यातवां भाग। कापोत लेश्या की स्थिति जघन्य नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल का असंख्यातवाँ भाग। तेजो लेश्या की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, भवनपति वाण व्यन्तर की उत्कृष्ट दो सागर और पल का असंख्यातवां भाग अधिक। वैमानिक देव की पद्म लेश्या की स्थिति जघन्य तेजो लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक। वैमानिक की उत्कृष्ट दश सागर और अन्तर्मुहूर्त अधिक। वैमानिक की शुक्ल लेश्या की स्थिति जघन्य पद्म लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट तेंतीश सागर और अन्तर्मुहूर्त अधिक।

१० लेश्या की गति द्वार—कृष्ण, नील, कापोत ये तीन अप्रशस्त व अधम लेश्या हैं जिनके द्वारा जीव दुर्गति को जाता है। तेजो, पद्म और शुक्ल इन तीन धर्म लेश्या के द्वारा जीव सुगति में जाता है।

११ लेश्या का चवन द्वारः—सर्व लेश्या प्रथम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणमते समय कोई जीव उपजता व चवता नहीं तथा लेश्या के अन्त समय में कोई जीव उपजता व चवता नहीं। परभव में कैसे चवे? इसका वर्णन–लेश्या पर भव की आई हुई अन्तर्मुहूर्त गये बाद शेष अन्तर्मुहूर्त आयुष्य में बाकी रहने पर जीव परभव के अन्दर जावे।

॥ इति श्री लेश्या का थोकड़ा सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योनि पद

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद नववां)

योनि तीन प्रकार की-शीत योनि, उष्ण योनि शीतोष्ण योनि ।

विस्तार—पहेली नरक से तीसरी नरक तक शीत योनिया, चौथी नरक में शीत योनिया विशेष और उष्ण योनीया कम। पांचवीं नरक में उष्ण योनीया विशेष और शीत योनीया कम। छट्ठी नरक में उष्ण योनीया। सातवीं नरक में महा उष्ण योनीया, अग्नि छोड़ कर चार स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, समुच्चय तिर्यंच और मनुष्य में तीन योनी मिले तेउ काय में एक उष्ण योनीया संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य और देवता में एक शीतोष्ण योनीया।

इनका अल्प बहुत्व—सर्व से कम शीतोष्ण योनीया उन से उष्ण योनीया असंख्यात गुणा उन से अयोनीया सिद्ध भगवन्त अनन्त गुणा उन से शीत योनीया अनन्त गुणा। योनी तीन प्रकार की होती है सचेत्त, अचेत्त, मिश्र नारकी और देवता में योनी एक अचेत। पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय समुच्चय तिर्यंच और समुच्चय मनुष्य में योनी तीन ही मिलती है संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य में योनी एक मिश्र। इनका अल्प

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुत्वः--सर्व से कम मिश्र योनीया--उससे अचेत योनीया असंख्यात गुणा और उस से सचित्त योनीया अनन्त गुणा। योनी तीन प्रकार की--संवुड़ा वियड़ा और संवुड़ावियड़ा संवुड़ा अर्थात् ढंकी हुई वियड़ा याने खुली (उघाड़ी) हुई और संवुड़ा वियड़ा याने कुछ ढंकी हुई और कुछ खुली हुई पांच स्थावर देवता और नारकी की योनी एक संवुड़ा, तीन विकलेन्द्रिय, समुच्चय तिर्यंच और मनुष्य में तीनों ही योनी पावे। संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य में योनी एक संवुड़ावियड़ा। इनका अल्प बहुत्व सर्व से कम संवुड़ा वियड़ा उनसे वियड़ा योनीया असंख्यात गुणा। उनसे अयोनीया अनन्त गुणा। उनसे संवुड़ा योनीया अनन्त गुणा। योनी तीन प्रकार की है-संखा अर्थात् शंख के आकार समान। कच्छा याने कछुवे के आकार समान और वंश पत्ता कहेता वांस के पत्र के समान। चक्रवर्ती की स्त्री रत्न की योनी शंख वत्। ऐसी योनी वाली स्त्री के संतान नहीं होती है ५४ सलाखा पुरुष की माता की योनी काचबे (कछुवा) के आकार समान होवे और सर्व मनुष्यों की माता की योनी वांस के पत्र के आकार समान होती है।

❀ इति श्री योनी पद सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ॐ

आठ आत्मा का विचार

शिष्य पूछता है कि हे भगवन् ! संग्रह नय के मत से आत्मा एक ही स्वरुपी कहने में आया है जब कि अन्य मत से आत्मा के भिन्न २ प्रकार कहे जाते हैं । क्या आत्मा के अलग २ भेद हैं ? यदि होवे तो कितने ?

गुरु—हे शिष्य ! भगवतीजी का अभिप्राय देखते आत्मा तो आत्मा ही है, वह आत्मा स्वशक्ति के कारण एक ही रीति से एक ही स्वरुपी है समान प्रदेशी और समान गुणी है अतः निश्चय से एक ही भेद कहने में आता है परन्तु व्यवहार नय के मत से कितने कारणों से आत्मा आठ मानी जाती है । जैसे—१ द्रव्य आत्मा २ कषाय आत्मा ३ योग आत्मा ४ उपयोग आत्मा ५ ज्ञान आत्मा ६ दर्शन आत्मा ७ चारित्र आत्मा ८ वीर्य आत्मा । एवं आठ गुणों के कारण से आत्मा आठ कहलाती हैं और एक दूसरी के साथ मिल जाने से इस के अनेक विकल्प भेद होते हैं जैसा कि आगे के यन्त्र में बताया गया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१	२	३	४	५	६	७	८
द्रव्य आत्मा में	कषाय आ०	योग आ०	उपयोग आ०	ज्ञान आ०	दर्शन आ०	चारित्र आ०	वीर्य आ०
कषाय आत्मा	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०
का भजना	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा
योग आत्मा	योग आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०
की भजना	की नीयमा	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना
उपयोग आत्मा	उपयोग आ०	उपयोग आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०
की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना
ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	उपयोग आ०	उपयोग आ	उपयोग आ०	उपयोग आ०
की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा
दर्शन आत्मा	दर्शन आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०
की भजना	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की भजना	की नीयमा	की भजना
चारित्र आत्मा	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०
की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	का भजना	की नीयमा	की नीयमा
वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	चारित्र आ०
की भजना	की नीयमा	की नीयमा	की भजना	की भजना	की भजना	की नीयमा	की भजना

भजना अर्थात् होवे अथवा नहीं होवे । नीयमा का अर्थ निश्चय होवे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इनका अल्प बहुत्वः-सर्व से कम चारित्र आत्मा उनसे ज्ञान आत्मा अनन्त गुणी। उनसे कषाय आत्मा अनन्त गुणी, उनसे योग आत्मा विशेषाधिक उनसे वीर्य आत्मा विशेषाधिक उनसे द्रव्य आत्मा तथा उपयोग आत्मा तथा दर्शन आत्मा परस्पर तुल्य और (वी. आ. से) विशेषाधिक। यह सामान्य विचार हुवा। अब आठ आत्मा का विशेष विचार कहा जाता है:-

शिष्य-कृपालु गुरू ! आत्म द्रव्य एक ही शक्ति वाला तथा असंख्यात प्रदेशी सत्, चिद् और आनन्दघन कहने में आता है। इसका निश्चय नय से क्या अभिप्राय है ? व्यवहार नय के मत से किस कारण से आत्मा आठ कही जाती है ? और वे आत्मा किन २ संयोग के साथ मिल कर गतागति करती है ? ये सर्व कृपा करके कहो।

गुरु-हे शिष्य ! कारण केवल यही है कि शुद्ध आत्म द्रव्य में पांच ज्ञान, दो दर्शन तथा पांच चारित्र का समावेश होता है। ये सर्व आत्म शुद्धि के कारण अर्थात् साधन है। इनके अन्दर आत्मबल और आत्म वीर्य लगाने से कर्म मुक्त होती हैं जब कि सामने पक्ष में अर्थात् इसके विरुद्ध अशुद्ध आत्म द्रव्य में पच्चीश कषाय, पन्द्रह योग, तीन अज्ञान और दो दर्शन का समावेश होता है। ये सर्व आत्मअशुद्धि के कारण तथा साधन है। इनमें बल या वीर्य लगाने पर चार गतियों में परिभ्रमण करना पड़ता है। ऐसा होने पर प्रत्येक आत्मा भिन्न २ संयोगों के साथ मिलती है। जैसा कि इस यन्त्र में बताया गया है:-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आठ आत्माओं का दूसरा यन्त्र	जीव के चौदह भेद में से	चौदह गुण स्थानकमें से	पंद्रह योग में से	बारह उपयोग में से	छे लेश्याओं में से
१ द्रव्य आत्मा में	समुच्चय १४ भेद पावे	समुच्चय १४ गुण स्थानक पावे	समुच्चय १५ योग पावे	समुच्चय १२ उपयोग पावे	समुच्चय ६ लेश्या
२ कषाय आत्मा में	१४ पावे	प्रथम १० गुण स्थान	१५ पावे	केवल ज्ञान व केवल दर्शनछोड़,शेष १०पावे	६ लेश्या
३ योग आत्मा में	१४ पावे	पहेलेसे तेरह गुण स्थानक तक पावे	१५ पावे	१२ पावे	६ लेश्या
४ उप० आत्मामें	१४ पावे	१४ गुण स्थानक	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या
५ ज्ञान आत्मामें	३ विकलेन्द्रिय असंज्ञी अपर्याप्ता और संज्ञी के दो एवं ६	पहेला और तीसरा छोड़ कर शेष १२ गुण पावे	१५ पावे	तीन अज्ञान छोड़ नव उपयोग पावे	६ लेश्या
६ दर्शन आत्मामें	१४ पावे	१४ पावे	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या
७ चारित्र आत्मामें	१ संज्ञी का पर्याप्त पावे	प्रथम पांच छोड़ शेष नव पावे	१५ पावे	३ अज्ञान छोड़ शेष नव उपयोग	६ लेश्या
८ वीर्य आत्मामें	१४ पावे	१४ पावे	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या

❀ इति आठ आत्मा का विचार सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ व्यवहार समकित के ६७ बोल ❀

इस पर बारह द्वार:- (१) सद्दहणा ४ (२) लिङ्ग ३ (३) विनय १० (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दूषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयना ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ ।

(१) सद्दहणा के चार भेद:-१ परतिर्थी से अधिक परिचय न करे (२) अधर्म पाखण्डियों की प्रशंसा न करे (३) अपने मत के पासत्था उसन्ना व कुलिङ्गी आदि की संगति न करे इन तीनों का परिचय करने से शुद्ध तत्व की प्राप्ति नहीं हो सकित (४) परमार्थ के ज्ञाता संवीग्न गीतार्थ की उपासना करके शुद्ध श्रद्धान धारण करे।

(२) लिङ्ग के तीन भेद:-(१) जैसे युवा पुरुष रंग राग ऊपर राचे वैसे ही भव्यात्मा श्री जैन शासन पर राचे (२) जैसे क्षुधावान पुरुष खीर खाण्ड के भोजन का प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतराग की वाणी का आदर करे (२) जैसे व्यवहारिक ज्ञान सिखने की तीव्र इच्छा होवे, और शिक्षक का योग मिलने पर सिख कर इस लोक में सुखी होवे वैसे ही वीतराग कथित सूत्रों का नित्य सूक्ष्मार्थ न्याय वाले ज्ञान को सिख कर इहलोक और परलोक में मनोवाञ्छित सुख की प्राप्ति करे।

(३) विनय के दश भेद:-(१) अरिहंत का विनय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे (२) सिद्ध का विनय करे (३) आचार्य का विनय करे (४) उपाध्याय का विनय करे (५) स्थविर का विनय करे (६) गण (बहुत आचार्यों का समूह) का विनय करे (७) कुल (बहुत आचार्यों के शिष्यों का समूह) का विनय करे (८) स्वधर्मी का विनय करे (६) संघ का विनय करे (१०) संभोगी का विनय करे एवं दश का बहु मान पूर्वक विनय करे जैन शासन में विनय मूल धर्म कहते हैं। विनय करने से अनेक सद्गुणों की प्राप्ति होती है।

(४) शुद्धता के तीन भेदः-(१) मन शुद्धता मन से अरिहंत-देव-कि जो ३४ अतिशय, ३५ वाणी, ८ महा प्रति हार्य सहित, १८ दूषण रहित १२ गुण सहित हैं वे ही अमर देव व सच्चे देव हैं। इनके सिवाय हजारों कष्ट पड़े तो भी सरागी देवों को मनमे स्मरण नहीं करे (२) वचन शुद्धता-वचन से गुण कीर्तन ऐसे अरिहंत देव के करे व इनके सिवाय सरागी देवों का नहीं करे। (३) काया शुद्धता-काया से अरिहंत सिवाय अन्य सरागी देवों को नमस्कार नहीं करे।

५ लक्षण के पांच भेदः-(१) सम, शत्रू मित्र पर समभाव रक्खे (२) संवेग-वैराग्य भाव रक्खे और संसार असार है, विषय व कषाय से अनन्त काल पर्यन्त भव भ्रमण होता है, इस भव में अच्छी सामग्री मिली है अतः धर्म का आराधन करना चाहिये, इत्यादि नित्य चिंतन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करे (३) निर्वेग—शरीर अथवा संसार की अनित्यता पर चिंतन करे, और बने वहां तक इस मोह मय जगत से अलग रहे अथवा जग-तारक जिनराज की दिक्षा लेकर कर्म शत्रुओं को जीते व सिद्ध पद को प्राप्त करने की हमेशा अभिलाषा (भावना) रक्खे, (४) अनुकम्पा—अपनी तथा पर की आत्मा की अनुकम्पा करे अथवा दुखी जीवों पर दया लावे (५) आस्था (ता)-त्रिलोक पूज्यनीक श्रीवीतराग देव के वचनों पर दृढ श्रद्धा रक्खे हिताहित का विचार करे अथवा अस्तित्त्व भाव में रमण करे ये ही व्यवहार समकित के लक्षण हैं। अतः जिस विषय में अपूर्णता होवे उसे पूरी करे।

(६) भूषण पांचः-(१) जैन शासन में धैर्यवन्त हो कर शासन का प्रत्येक कार्य धैर्यता से करे (२) जैन शासन का भक्तिवान् होवे (३) शासन में क्रियावान् होवे (४) शासन में चतुर होवे। शासन के प्रत्येक कार्य को ऐसी चतुराई (बुद्धि) से करे कि जिससे वह कार्य निर्विघ्नता से समाप्त हो जावे (५) शासन में चतुर्विध संघ की भक्ति तथा बहु सत्कार करने वाला होवे। इन पांच भूषणों से शासन की शोभा होती है।

(७) दूषण पांचः-(१) शङ्का जिन वचन में शङ्का करे (२) कंखा—अन्य मतों का आडम्बर देख कर उनकी वाञ्छा करे (३) वितिगिच्छा—धर्म की करणी के फल में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन्देह करे इसका फल होवेगा या नहीं ? वर्तमान में तो कुछ फल नजर नहीं आता आदि इस प्रकार का सन्देह करे (४) पर पाखण्डी से नित्य परिचय रक्खे (५) पर-पाखण्डियों की प्रशंसा करे । एवं समकित के पांच दूषणों को अवश्य दूर करना चाहिये ।

(८) प्रभावना ८ (१) जिस काल में जितने सूत्र होते हैं उन्हें गुरु गम से जाने यह शासन का प्रभावक बनता है (२) बड़े आडम्बर से धर्म कथा व्याख्यान आदि के द्वारा शासन के ज्ञान की प्रभावना करे (३) महान विकट तपश्चर्या करके शासन की प्रभावना करे (४) तीन काल अथवा तीन मत का ज्ञाता होवे (५) तर्क, वितर्क, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय तथा विद्यादि बल से वादियों को शास्त्रार्थ में पराजय करके शासन की प्रभावना करे (६) पुरुषार्थी पुरुष दीक्षा लेकर शासन की प्रभावना करे (७) कविता करने की शक्ति होवे तो कविता करके शासन की प्रभावना करे (८) ब्रह्मचर्य आदि कोई बड़ा व्रत लेना होवे तो बहुत से मनुष्यों की सभा में लेवे कारण कि इससे लोकों को शासन पर श्रद्धा अथवा व्रतादि लेने की रुचि बढ़े । अथवा दुर्बल स्वधर्मी भाइयों को सहायता करे । यह भी एक प्रकार की प्रभावना है परन्तु आजकल चौमासे में अभक्ष्य वस्तु की अथवा लड्डु आदि की प्रभावना करते हैं । दीर्घ दृष्टि से विचार करने योग्य है कि इस प्रभावना से क्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शासन की प्रभावना होती है ? अथवा इससे कितना लाभ ? इसका बुद्धिवान स्वयं विचार कर सक्ते हैं। यदि प्रभावना से हमारा सच्चा अनुराग व प्रेम होवे तो छोटी २ तत्व ज्ञान की पुस्तकों को बांट कर प्रभावना करे कि जिससे अपने भाइयों को आत्म ज्ञान की प्राप्ति होवे।

(६) आगार ६-(१) राजा का आगार (२) देवता का आगार (३) जाति का आगार (४) माता पिता व गुरु का आगार (५) बलात्कार (जबर्दस्ती) का आगार (६) दुष्काल में सुख पूर्वक आजीविका नहीं चले तो इसका आगार। इन छे प्रकारों के आगार से कोई अनुचित कार्य करना पड़े तो समकित दूषित नहीं होता।

(१०) जयना के ६ भेदः-(१) आलाप-स्वधर्मी भाइयों के साथ एक वार बोले (२) संलाप-स्वधर्मी भाइयों के साथ वारंवार बोले (३) मुनि को दान देवे अथवा स्वधर्मी भाइयों की वात्सल्यता करे। (४) एवं वारंवार प्रति दिन करे (५) गुणी जनों का गुण प्रगट करे (६) तथा वंदना नमस्कार बहु मान करे।

(११) स्थानक के ६ प्रकारः-(१) धर्म रुपी नगर तथा समकित रुपी दरवाजा (२) धर्म रुपी वृक्ष तथा समकित रुपी धड़ (३) धर्म रुपी प्रासाद (महल) तथा समकित रुपी नींव (बुनियाद) (४) धर्म रुपी भोजन तथा सम-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कित रुपी थाल (५) धर्म रुपी माल तथा समकित रुपी दुकान (६)धर्म रुपी रत्न तथा समकित रुपी मंजूषा संदुक या तिजोरी।

१२ भावना के ६ भेदः-(१) जीव चैतन्य लक्षण युक्त असंख्यात प्रदेशी निष्कलङ्क अमूर्ति है। (२) अनादि काल से जीव और कर्मों का संयोग है जैसे-दूध में घी, तिल में तेल, धूल में धातु, फूल में सुगन्ध, चन्द्र की कान्ति में अमृत आदि के समान अनादि संयोग है।(३) जीव सुख दुख का कर्त्ता और भोक्ता है, निश्चय नय से कर्म का कर्ता कर्म है परन्तु व्यवहार नय से जीव है। (४) जीव, द्रव्य, गुण पर्याय, प्राण और गुण स्थानक सहित है (५) भव्य जीवों को मोक्ष होता है (६) ज्ञान दर्शन और चारित्र ये मोक्ष के साधन हैं। एवं ६ भेद।

इस थोकड़े को मुंह जबानी (कंठस्थ) करके सोचो कि इन ६७ बोलो में से (व्यवहार समकित के) मेरे अन्दर कितने बोल हैं। फिर जितने बोल कम होवें उन्हें पूरे करने का प्रयत्न करे तथा पुरुषार्थ द्वारा उन्हें प्राप्त करे।

॥ इति व्यवहार समकित के ६७ बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* काय--स्थिति *

समजन (स्पष्टी करण):-स्थिति दो प्रकार की १ भव स्थिति २ काय स्थिति, एक भव में जितने समय तक रहे वो भव स्थिति जैसे—पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्त-मुहूर्त उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की।

काय स्थिति-पृथ्वी काय आदि एकही काय के जीव उसी काया में बारंबार जन्म मरण करते रहें और अन्य काय, अप, तेउ, वायु आदि में नहीं उपजे वहां तक की स्थिति-वो काय स्थिति।

पुढवी काल=द्रव्य से असं० उत्स० अवस० काल, क्षेत्र से असं० लोक, काल से असंख्यात काल, भाव से अंगुल के असं० भाग के आकाश प्रदेश जितने लोक।

असंख्यात काल=द्रव्य, क्षेत्र, काल से ऊपर वत् भाव से आवलिका के असंख्यातवें भाग के समय जितने लोक।

अर्ध पुद्गल परावर्त्तन काल:=द्रव्य से अनन्त उत्स० अवस० क्षेत्र से अनन्ता लोक, काल से अनन्त काल और भाव से अर्ध पुद्गल परावर्त्तन।

वनस्पति काल=द्रव्य से अनन्त उत्स० अवस०, क्षेत्र से अनन्त लोक, काल से अनन्त काल और भाव से असं० पुद्गल परावर्त्तन।

अ० सा०=अनादि सांत, सा० सा०=सादि सांत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा

जीव गइन्दिय काए जोएं वेद कसाय लेसाय।
सम्मत्त णाण दंसण संयम उवओग आहारे ॥१॥
भासगयं परित्त पज्जत्त सुहूम सन्नी भवऽत्थि।
चरिमेय एतेसित पदाणं कायठिई होइ णायव्वा॥२॥

क्रम	मार्गणा	जघन्य कायस्थिति	उत्कृष्ट कायस्थिति
१	समुच्चय जीवकी	शाश्वता	शाश्वता
२	नारकी की	१० हजार वर्ष	३३ सागरोपम
३	देवता की	"	"
४	देवी की	"	५५ पलकी
५	तिर्यंच की	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल (वन)
६	तिर्यंचणी की	"	३पल्य और प्र० क्रो० पूर्व
७	मनुष्य की	"	" "
८	मनुष्यनी की	"	" "
९	सिद्ध भगवान् की	शाश्वता	शाश्वता
१०	अपर्याप्ता नारकी की	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
११	" देवता की	"	"
१२	" देवी की	"	"
१३	" तिर्यंच की	"	"
१४	" तिर्यंचनी की	"	"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५ " मनुष्य की	"	"	
१६ " मनुष्यनी की	"	"	
१७ पर्याप्ता नारकी	१० हजार वर्ष में अंतर्मुहूर्त न्यून	३३ सागर में अन्त-मुहूर्त न्यून	
१८ " देवता	"	भव स्थिति में	"
१९ " देवी	"	५५ पल्य में	"
२० " तिर्यंच	अन्तर्मुहूर्त	३ पल्य में	"
२१ " तिर्यंचनी	"	"	"
२२ " मनुष्य	"	"	"
२३ " मनुष्यनी	"	"	"
२४ सइन्द्रिय	०	अनादि अनंत अना.सां	
२५ एकेन्द्रिय	अंत मुहूर्त	अनंत काल (वन)	
२६ बेइन्द्रिय	"	संख्यात वर्ष	
२७ तेइन्द्रिय	"	"	
२८ चउइन्द्रिय	"	"	
२९ पंचेन्द्रिय	"	१००० सागर साधिक	
३० अनिन्द्रिय	०	सादि अनंत	
३१ सकायी	०	अ० अनं०, अ० सांत	
३२ पृथ्वी काय	अन्त मुहूर्त	असंख्यात काल	
३३ अप "	"	"	
३४ तेउ "	"	"	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५ वाउ काय	अन्तर्मुहूर्त	असंख्यात काल
३६ वनस्पति काय	,,	अनन्त काल (वन०)
३७ त्रस काय	,,	२००० सागर और सं० वर्ष
३८ अकाय	सादि अनन्त	सादि अनन्त
३९ से ४५, ३१ से ३७ का अपर्याप्ता	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
४६ से ५० ३२ से ३६ का पर्याप्ता	,,	संख्यात वर्ष
५१ सकाय ,,	,,	प्रत्येक सो सागर
५२ त्रस काय पर्याप्ता	,,	,, ,,
५३ समुच्चय बादर	,,	असं० काल असं० जितने लोकाकाश प्रदेश
५४ बादर वनस्पति	,,	,,
५५ समुच्चय निगोद	,,	अनन्त काल
५६ बादर त्रस काय	,,	२००० सागर जाजेरी
५७ से ६२ बादर पृ० अ०, ते०, वा०, प्र. व०, बा. निगोद.	,,	७० क्रोड़ा क्रोड़ सागर
६३ से ६८ समुच्चय सूक्ष्म पृ०, अ०, ते०, वा०, वन०, निगोद	,,	असंख्यात काल

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

७० से ८६ नं. ५२ से ६६ के अपर्याप्ता	अंतर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
८७ से ६३ समुच्चय सूक्ष्म पृ०,अ०,ते,०वा०,व०, निगोद का पर्याप्ता	,,	,,
६४ से ६७ बादर पृ०, अ०, वा०, और प्र. बा. वन. का पर्याप्ता	,,	सं हजार वर्ष
६८ बादर तेउ का पर्याप्ता	,,	सं. अहोरात्रि
६६ समुच्चय बादर ,,	,,	प्र. सो सागर साधिक अंत. मु.
१०० समुच्चय निगोद ,,	,,	अन्तर्मुहूर्त
१०१ बादर ,,	,,	,, ,,
१०२ संयोगी	०	अ. अनं, अ. सांत
१०३ मन योगी	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१०४ वचन योगी	,,	,,
१०५ काय ,,	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल (वन०)
१०६ अयोगी	०	सादि अनन्त.
१०७ सवेदी	०	अ.अ.,अ.सा. सा.सां.,
१०८ स्त्री वेद	१ समय	११० पल्य० प्र. क्रोड़ पूर्व अधिक
१०६ पुरुष वेद	अन्तर्मुहूर्त	प्रत्येक सो सागर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११० नपुंसक वेद	१ समय	अनन्त काल (वन०)
१११ अवेदी	सादि अनन्त	सा. सा., ज. १ स. उ. अं. मु.
११२ सकषायी सादि	अ. अ., अ.	
सांत	सां. सादि सांत	देश न्यून अर्ध पुद्गल
११३ क्रोध कषायी	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
११४ मान ,,	,,	,,
११५ माया ,,	,,	,,
११६ लोभ ,,	१ समय	,,
११७ अकषायी	सा. अ., सा. सां,	ज. १ समय, उ. अं. मु
११८ सलेशी	०	अ. अ. अ. सां.
११९ कृष्ण लेशी	अन्तर्मुहूर्त	१३ सागर अं. मु. अ०
१२० नील ,,	,,	१० ,, पल्य असं भाग अधिक
१२१ कपोत ,,	,,	३ ,, ,,
१२२ तेजो ,,	,,	२ ,, ,,
१२३ पद्म ,,	,,	१० ,, अं. मु. अधिक
१२४ शुक्ल ,,	,,	३३ ,, ,,
१२५ अलेशी	,,	सादि अनन्त
१२६ समकित दृष्टि	,,	सा. अं, सा. स ६६ सा. सा
१२७ मिथ्या ,,	अ. अ., अ. सां,	अनन्त काल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२८	मिथ्या दृष्टि सादि सांत	अं. मु.	सा. सां, (अर्ध. पु.)
१२६	मिश्र दृष्टि	,,	अं. मु.
१३०	क्षायक समकित	०	सादि अनन्त
१३१	क्षयोपशम ,,	अं.मु.	६६ सागर अधिक
१३२	सास्वादान ,,	१ समय	६ आवलिका
१३३	उपशम ,,	,,	अन्तर्मुहूर्त
१३४	वेदक ,,	,,	,,
१३५	सनाणी	अन्तर्मुहूर्त	सा. अ., सा. सा० ६६ सागर
१३६	मति ज्ञानी	,,	६६ सागर अधिक
१३७	श्रुत ,,	,,	,,
१३८	अवधि ,,	१ समय	,,
१३६	मनःपर्यव ,,	,,	देश न्यून क्रोड़ पूर्व
१४०	केवल ,,	०	सादि अनन्त
१४१	अज्ञानी	अ०अ०,अ०सां, सा०सां०की ज० अं०	सा० सांत मु० उ० अर्ध पु०
१४२	मति अ.		
१४३	श्रुत ,,		
१४४	विभंग ज्ञानी	१ समय	३३ सागर अधिक
१४५	चक्षु दर्शनी	अन्तर्मुहूर्त	प्रत्येक हजार सागर
१४६	अचक्षु ,,	०	अ० अ, अ० सां०
१४७	अवधि ,,	१ समय	१३२ सागर साधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४८	केवल ,,	०	सादि अनन्त
१४९	संयती	१ समय	देश न्यून क्रोड़ पूर्व
१५०	असंयती	अं० मु०	अ.अ ,अंस.,सा.सां.
१५१	,, सादि सांत	,,	अनन्त काल(अर्ध पु.)
१५२	संयता संयत	,,	देशन्यून क्रोड़ पूर्व
१५३	नोसंयत नोअसंयत	०	सादि अनंत
१५४	सामायिक चारित्र	१ समय	देशन्यून क्रोड़ पूर्व
१५५	छेदोपस्थानीय ,,	अन्तर्मुहूर्त	,,
१५६	परिहार विशुद्ध,,	,, १८ माह	,,
१५७	सूक्ष्म संपराय ,,	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१५८	यथाख्यात ,,	,,	देशन्यून क्रोड़ पूर्व
१५९	साकार उपयोग	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
१६०	अनाकार ,,	,,	,,
१६१	आहारक छद्मस्थ	२ समय न्यून	असंख्यातो काल
१६२	,, केवली	अन्तर्मुहूर्त	देशन्यून क्रोड़पूर्व
१६३	अनाहारी छद्मस्थ	१ समय	२ समय
१६४	,, केवलीसयोगी	३ ,,	३ ,,
१६५	,, ,, अयोगी	५ ह्रस्व अक्षर	उच्चारण काल
१६६	सिद्ध	०	सादि अनन्त
१६७	भाषक	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१६८	अभाषक सिद्ध	०	सादि अनन्त
१६९	,, संसारी	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७० काय परत	अन्तर्मुहूर्त	असं०काल(पुद.का.)
१७१ संसार परत	,,	अर्ध पु०
१७२ काय अपरत	,,	अन०काल(वन.काल)
१७३ संसार ,,	०	अ० अ०, अ० सां
१७४ नो परतापरत	०	सादि अनन्त
१७५ पर्याप्ता	अन्तर्मुहूर्त	प्रत्येक सो सा०अधिक
१७६ अपर्याप्ता	,,	अन्तर्मुहूर्त
१७७ नो पर्याप्तापर्याप्ता	०	सादि अनन्त
१७८ सूक्ष्म	अन्तर्मुहूर्त	असं०काल (पुद०)
१७९ बादर	,,	,, (लोकाकाश)
१८० नो सूक्ष्म बादर	०	सादि अनन्त
१८१ संज्ञी	अन्तर्मुहूर्त	प्र०सो सागर साधिक
१८२ असंज्ञी	,,	अनन्त काल (वन०)
१८३ नो संज्ञी-असंज्ञी	०	सादि अनन्त
१८४ भव सिद्धिया	०	अनादि सांत
१८५ अभव सिद्धिया	०	,, अनन्त
१८६ नो भव सिद्धिया अभव.सि०		सादि ,,
१८७ से १९१ पांच अस्ति काय स्थित	०	अनादि अनंत
१९२ चर्म	०	,, सांत
१९३ अचर्म	०	अ० अ०, सा० अ०

॥ इति काय स्थिति सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योगों का अल्प बहुत्व

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उद्देश १ ला में)

जीव के आत्म प्रदेशों में अध्यवसाय उत्पन्न होते हैं। अध्यवसाय से जीव शुभाशुभ कर्म (पुद्गल) के ग्रहण करता है यह परिणाम हैं और यह सूक्ष्म हैं। परिणामों की प्रेरणा से लेश्या होती है। और लेश्या की प्रेरणा से मन, वचन, काय का योग होता है।

योग दो प्रकार का १ जघन्य योगः=१४ जीवों के भेद में सामान्य योग संचार २ उत्कृष्ट योग, (तारतम्यता) अनुसार उनका अल्प बहुत्व नीचे अनुसार—

(१) सर्व से कम सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का जघन्य योग उन से

(२) बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का ज० योग असं० गुणा,

(३) बे इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,

(४) ते इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,

(५) चौरिन्द्रिय ,, ,, ,, ,,

(६) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,

(७) संज्ञी ,, ,, ,, ,, ,,

(८) सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता का ,, ,, ,,

(९) बादर ,, ,, ,, ,, ,,

(१०) सूक्ष्म ,, अपर्याप्ता का उ० योग ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(११) बादर ,, ,, ,, ,, ,,
(१२) सूक्ष्म ,, पर्याप्ता का ,, ,, ,,
(१३) बादर ,, ,, ,, ,, ,,
(१४) बे इन्द्रिय का ,, ज० उ० योग ,, ,,
(१५) ते इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,
(१६) चौरिन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(१७) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(१८) संज्ञी ,, ,, ,, ,, ,,
(१९) बेइन्द्रिय का अपर्याप्ता का उ० उ० योग ,, ,,
(२०) ते इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,
(२१) चौरिन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(२२) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(२३) संज्ञी ,, ,, ,, ,, ,,
(२४) बे इन्द्रिय का पर्याप्ता का ,, ,, ,,
(२५) ते इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,
(२६) चौरिन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(७) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(२८) संज्ञी ,, ,, ,, ,, ,,

॥ इति योगों का अल्प बहुत्व ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गलों का अल्प बहुत्व

(श्री भगवती जी सूत्र शतक २५ उद्देशा चौथा)

पुद्गल परमाणु, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्धों का द्रव्य, प्रदेश और द्रव्य प्रदेशों का अल्प बहुत्वः—

(१) सर्व से कम अनंत प्रदेशी स्कंध का द्रव्य, उनसे
(२) परमाणु पुद्गल का द्रव्य अनंत गुणा "
(३) संख्यात प्रदेशी का " संख्यात " "
(४) असंख्यात " " असंख्यात "

प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व भी ऊपर के द्रव्यवत्।

द्रव्य और प्रदेश दोनों का एक साथ अल्प बहुत्वः-

(१) सर्व से कम अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य, उनसे
(२) अनंत प्रदेशी स्कन्ध का प्रदेश अनंत गुणा "
(३) परमाणु पुद्गल का द्रव्य प्रदेश " "
(४) संख्यात प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य संख्यात गुणा "
(५) " " " प्रदेश " "
(६) असंख्यात " " द्रव्य असंख्यात गुणा "
(७) " " " प्रदेश "

❀ क्षेत्र अपेक्षा अल्प बहुत्व ❀

(१) सर्व से कम एक आकाश प्रदेश अवगाह्या द्रव्य उनसे
(२) संख्यात प्रदेश अवगाह्या द्रव्य संख्यात गुणा "

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) असंख्यात " " " असंख्यात " "

इसी प्रकार प्रदेशों का अल्प बहुत्व समझना।

(१) सर्व से कम एक प्रदेश अवगाह्या द्रव्य और प्रदेश उनसे
(२) संख्यात प्रदेश " " संख्यात गुणा "
(३) " " " प्रदेश " "
(४) असंख्यात " " द्रव्य असं० "
(५) " " " प्रदेश "

कालापेक्षा अल्प बहुत्व।

(१) सर्व से कम एक समय की स्थिति के द्रव्य उनसे
(२) संख्यात समय स्थिति के द्रव्य संख्यात गुणा, उनसे
(३) असंख्यात " " " असं० "

इसी प्रकार प्रदेशों का अल्प बहुत्व जानना।

(१) सर्व से कम एक समय की स्थिति के द्रव्य और प्रदेश उनसे
(२) संख्यात समय की स्थिति के द्रव्य संख्यात गुणा "
(३) " " " प्रदेश " "
(४) असं० " " द्रव्य असं० "
(५) " " " प्रदेश " "

भावापेक्षा प्रमाणों का अल्प बहुत्व।

(१) सर्व से कम अनंत गुण काला पुद्गलों का द्रव्य उनसे
(२) एक गुण काला पुद्गल द्रव्य अनंत गुणा "
(३) संख्यात " " " " संख्यात " "
(४) असं० " " " " असं० "

इसी प्रकार प्रदेशों का अल्प बहुत्व समझना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) सर्व से कम अनंत गुणा काला का द्रव्य उनसे
(२) अनंता गुणा काला प्रदेश अनंत गुणा ,,
(३) एक गुण काला द्रव्य और प्रदेश अनंत गुणा ,,
(४) संख्यात प्रदेश काला पुद्गल द्रव्य संख्यात ,, ,,
(५) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,, ,,
(६) असं० ,, ,, ,, द्रव्य असं० ,, ,,
(७) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,

एवं ५ वर्ण; २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श, (शीत; उष्ण; स्निग्ध; रूक्ष) आदि १६ बोलों का विस्तार काले वर्ण अनुसार तीन तीन अल्प बहुत्व करना ।

कर्कश स्पर्श का अल्प बहुत्व ।

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य उनसे
(२) सं० गुण कर्कश का द्रव्य सं० गुणा ,,
(३) असं० गु० ,, ,, असं० ,, ,,
(४) अनंत गु० ,, ,, अनंत ,,

कर्कश स्पर्श प्रदेशापेक्षाअल्प बहुत्व ।

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का प्रदेश उनसे
(२) सं० गुणा कर्कश का प्रदेश असंख्यात गुणा ,,
(३) असं० ,, ,, ,, ,, ,, ,,
(४) अनंत ,, ,, ,, अनंत ,,

कर्कश द्रव्य प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य प्रदेश उनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) संख्यात गुण कर्कश का पुद्गल "संख्यातगुणा"

(३) " " " " प्रदेश असं० " "

(४) असं० " " " द्रव्य " " "

(५) " " " " प्रदेश " " "

(६) अनंत " " " द्रव्य अनंत " "

(७) " " " " प्रदेश " "

इसी प्रकार मृदु, गुरु, व लघु समझना कुल ६९ अल्प बहुत्व हुए—३ द्रव्य के, ३ क्षेत्र के, ३ काल के, व ६० भाव के एवं कुल ६९ अल्प बहुत्व ।

❀ इति पुद्गलों का अल्प बहुत्व सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकाश श्रेणी

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उ० ३)

आकाश प्रदेश की पंक्ति को श्रेणी कहते हैं समुच्चय आकाश प्रदेश की द्रव्यापेक्षा श्रेणी अनन्ती है। पूर्वादि ६ दिशाओं की और अलोकाकाश की भी अनन्ती है।

द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की तथा ६ दिशाओं की श्रेणी असंख्याती प्रदेशापेक्षा समुच्चय आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी अनन्ती है।

प्रदेशापेक्षा लोकाकाश आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी असं० है प्रदेशापेक्षा आलोकाकाश आकाश की श्रेणी संख्याती,असंख्याती, अनंती है पूर्वादि ४ दिशा में अनन्ती है और ऊंची नीची दिशा में तीन ही प्रकार की।

समुच्चय श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी अनादि अनन्त है। लोकाकाश की श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी सादि सान्त है। अलोकाकाश की श्रेणी स्यात् सादि सान्त स्यात् सादि अनन्त स्यात् अनादि सान्त और स्यात् अनादि अनन्त है।

(१) सादि सान्त–लोक के व्याघात में

(२) सादि अनन्त-लोक के अन्तमें अलोक की आदि है परन्तु अन्त नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) अनादि सान्त-अलोक अनादि है परन्तु लोक के पास अन्त है।

(४) अनादि अनन्त-जहां लोक का व्याघात नहीं पड़े वहां चार दिशा में सादि सान्त सिवाय के ३ भांगे। ऊंची नीची दिशा में ४ भांगा।

द्रव्यापेक्षा श्रेणी कुड़जुम्मा है। ६ दिशा में और द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की श्रेणी, ६ दिशा की श्रेणी और अलोकाकाश की श्रेणी भी यही है, प्रदेशापेक्षा आकाश श्रेणी तथा ६ दिशा में श्रेणी कुड़जुम्मा है प्रदेशापेक्षा लोकाकाश की श्रेणी स्यात् कुड़जुम्मा स्यात् दावरजुम्मा है। पूर्वादि ४ दिशा और ऊंची नीची दिशापेक्षा कुड़जुम्मा है।

प्रदेशापेक्षा अलोकाकाश की श्रेणी स्यात् कुड़जुम्मा जाव स्यात् कलयुगा है। एवं ४ दिशा की श्रेणी, परन्तु ऊंची नीची दिशा में कलयुगा सिवाय की तीन श्रेणी है।

श्रेणी ७ प्रकार की भी होती है-ऋजु, Λ एक वंका, M दो वंका, |_ एक कोने वाली, ⌐ दो कोने वाली, ⌒ अर्ध चक्र वाल, O चक्र वाल।

जीव अनुश्रेणी (सम) गति करे, विश्रेणी गति न करे। पुद्गल भी अनुश्रेणी गति ही करे। विश्रेणी गति न करे।

॥ इति आकाश श्रेणी सम्पूर्ण ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

बल का अल्प बहुत्व

पूर्वाचार्यों की प्राचीन प्रति के आधार से—

(१) सर्व से कम सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्ता का बल,				उनसे
(२) बादर निगोद के अपर्याप्ता का बल	असंख्यात	गुणा		,,
(३) सूक्ष्म ,, पर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
(४) बादर ,, ,,	,,	,,	,,	,,
(५) सूक्ष्म पृथ्वी काय के अपर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
(६) ,, ,, पर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
(७ बादर ,, अपर्या०	,,	,,	,,	,,
(८) ,, ,, पर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
(९) ,, वनस्पति के अपर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
(१०) ,, ,, पर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
(११) तनु वाय का	,,	,,	,,	,,
(१२) घनोदधि	,,	,,	,,	,,
(१३) घन वायु	,,	,,	,,	,,
(१४ कुंथवा	,,	,,	,,	,,
(१५) लीख	,,	पांच	गुणा	,,
(१६ जूँ	,,	दश	,,	,,
(१७) चींटी मकोड़े	,,	वीश	,,	,,
(१८) मक्खी	,,	पांच	,,	,,
(१९) डंश मच्छर	,,	दश	,,	,,
(२० भंवरे	,,	वीश	,,	,,
(२१) तीड़	,,	पचाश	,,	,,
(२२) चकली	,,	साठ	,,	,,
(२३) कबूतर	,,	पन्द्रह	,,	,,
(२४) कौवे	,,	सौ	,,	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२५ मुर्गे ,, ,, ,, ,,
(२६) सर्प ,, हजार ,, ,,
(२७) मोर ,, पांचसौ ,, ,,
(२८' बन्दर ,, हजार ,, ,,
(२९) घेटा (सूअर का बच्चा) ,, सौ ,, ,,
(३०) मेंडे ,, हजार ,, ,,
(३१) पुरुष ,, सौ ,, ,,
(३२) वृषभ ,, बारह ,, ,,
(३३) अश्व ,, दश ,, ,,
(३४) भैंसे ,, बारह ,, ,,
(३५) हाथी ,, पांचसौ ,, ,,
(३६) सिंह ,, ,, ,, ,,
(३७) अष्टापद ,, दो हजार ,, ,,
(३८ बलदेव ,, दश हजार ,, ,,
(३९) वासुदेव ,, दो ,, ,,
(४० चक्रवर्ती ,, दो ,, ,,
(४१) व्यन्तर देव ,, क्रोड़ ,, ,,
(४२) नागादि भवनपति ,, असंख्य ,, ,,
(४३) असुर कुमार देवता ,, ,, ,, ,,
(४४) तारा ,, ,, ,, ,, ,,
(४५) नक्षत्र ,, ,, ,, ,, ,,
(४६) ग्रह ,, ,, ,, ,, ,,
(४७) व्यन्तर इन्द्र ,, ,, ,, ,,
(४८) नागादि देवता का इन्द्र ,, ,, ,, ,,
(४९) असुर ,, ,, ,, ,, ,, ,,
(५०' ज्योतिषी ,, ,, ,, ,, ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५१) वैमानिक ,, ,, ,, ,, ,,

(५२) ,, ,, इन्द्र ,, ,, ,, ,,

(५३ तीनों ही काल के इन्द्रों से भी तीर्थंकर की कनिष्ठ अंगुली का बल अनन्त गुणा है। (तत्त्व केवली गम्य)

❀ इति बल का अल्प बहुत्व ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समकित के ११ द्वार

१ नाम २ लक्षण ३ आवन (आगति) ४ पावन ५ परिणाम ६ उच्छेद ७ स्थिति ८ अन्तर ९ निरन्तर १० आगरेश ११ क्षेत्र स्पर्शना और अल्प बहुत्व।

१ नाम द्वार–समकित के ४ प्रकार। क्षायक, उपशम, क्षयोपशम और वेदक समकित।

२ लक्षण द्वारः–७ प्रकृति [अनंतानुबन्धी क्रोध मान, माया, लोभ और ३ दर्शन मोहनीय] का मूल से क्षय करने से क्षायक समकित व ६ प्रकृति उपशमावे और समकित मोहनीय वेदे तो वेदक समकित होता है अनंतानु० चोक का क्षय करे और तीन दर्शन मोह को उपशमावे उसे क्षयोपशम समकित कहते हैं।

३ आवन द्वार–क्षायक सम० केवल मनुष्य भव में आवे शेष तीन समकित चार गति में आवे।

४ पावन द्वार–चार ही समकित गति में पावे।

५ परिणाम द्वार–क्षायक समकित अनन्ता [सिद्ध आश्री] शेष तीन समकित वाला असंख्यात जीव

६ उच्छेद द्वार–क्षायक समकित का उच्छेद कभी न होवे। शेष तीन की भजना।

७ स्थिति द्वार–क्षायक समकित सादि अनन्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपशम समकित ज० उ० अं० मु०, क्षयोप० और वेदक की स्थिति ज० अं० मु०, उ० ६६ सागर जाजेरी ।

८ अन्तर द्वार-क्षायक समकित में अन्तर नहीं पड़े। शेष ३ में अन्तर पड़े तो ज० अं० उ० अनन्त काल यावत् देश न्यून [उणा] अर्ध पुद्गल परावर्त्तन ।

९ निरन्तर द्वार:-क्षायक समकित निरन्तर आठ समय तक आवे शेष ३ समकित आवलिका के असं० में भाग जितने समय निरन्तर आवे ।

१० आगरेश द्वार-क्षायक समकित एक वार ही आवे । उपशम समकित एक भवमें ज० १ वार उ० २ वार आवे और अनेक भव आश्री ज० २ वार आवे शेष २ समकित एक भव आश्री ज० १ वार उ० असंख्य वार और अनेक भव आश्री ज० २ वार उ० असंख्य वार आवे।

११ क्षेत्र स्पर्शना द्वार:-क्षायक समकित समस्त लोक स्पर्शे [केवली समु० आश्री] शेष ३ सम० देश उणा सात राजू लोक स्पर्शे ।

१२ अल्प बहुत्व द्वार:-सर्व से कम उपशम सम० वाला, उनसे वेदक समकित वाला असंख्यात गुणा, उनसे क्षयोप० सम० वाला असंख्यात गुणा, उनसे क्षायक सम० वाला अनन्त गुणा (सिद्धापेक्षा) ।

॥ इति समकित के ११ द्वार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खण्डा जोयणा

[सूत्र श्री जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति]

[1]खण्डा [2]जोयण [3]वासा, [4]पव्वय [5]कूड़ा [6]तित्थ [7]सेढीओ
[8]विजय [9]द्दह [10]सलिलाओ, पिंडए होई संगहणी ।१।

१ लाख योजन लंबे चौड़े जम्बू द्वीप के अन्दर (जिसमें हम रहते हैं) १ खण्ड २ योजन ३ वास ४ पर्वत ५ कूट [पर्वत के ऊपर] ६ तीर्थ ७ श्रेणी ८ विजय ६ द्रह १० नदिएं आदि कितनी हैं ? इसका वर्णन—

जम्बू द्वीप चक्की के पाट समान गोल है इसकी परिधि ३१६२२७ योजन ३ गाउ १२८ धनुष्य १३॥ आंगुल, एक जव, १ जूँ, १ लींख, ६ बालाग्र और १ व्यवहार परमाणु समान है। इस के चारों ओर एक कोट [जगति] है १ पद्मवर वेदिका, १ वन खण्ड और ४ दरवाजों से सुशोभित है।

१ खण्ड द्वार—दक्षिण उत्तर भरत जितने [समान] खण्ड करें तो जम्बू द्वीप के १६० खण्ड हो सक्ते हैं।

नं०	क्षेत्र नाम	खण्ड	योजन कला
१	भरत क्षेत्र	१	५२६—६
२	चूल हेमवन्त पर्वत	२	१०५२–१२
३	हेमवाय क्षेत्र	४	२१०५—५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ महा हेमवन्त पर्वत	८	४२१०—१०
५ हरिवास क्षेत्र	१६	८४२१—१
६ निषिध पर्वत	३२	१६८४२—२
७ महा विदेह क्षेत्र	६४	३३६८४—४
८ नीलवंत पर्वत	३२	१६८४२—२
९ रम्यकू वास क्षेत्र	१६	८४२१—१
१० रूपी पर्वत	८	४२१०—१०
११ हिरणवाय क्षेत्र	४	२१०५—५
१२ शिखरी पर्वत	२	१०५२—१२
१३ ऐरावर्त्त क्षेत्र	१	५२६—६
	१९०	१०००००—०

१९ कला का १ योजन समझना

पूर्व पश्चिम का १ लाख योजन का माप

नं० क्षेत्र का नाम	योजन
१ मेरु पर्वत की चौड़ाई	१००००
२ पूर्व भद्रशाल वन	२२०००
३ ,, आठ विजय	१७७०२
४ ,, चार वक्षार पर्वत	२०००
५ ,, तीन अन्तर नदी	३७५
६ ,, सीतामुख वन	२९२३
७ पश्चिम भद्रशाल वन	२२०००
८ ,, आठ विजय	१७७०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९	,,	चार वक्षार पर्वत	२०००
१०	,,	तीन अन्तर नदी	३७५
११	,,	सीतामुख वन	२९२२
		कुल	१०००८०

२ योजन द्वार:-१ लाख योजन के लम्बे चौड़े जम्बू द्वीप के एक २ योजन के १० अबज खण्ड हो सकते हैं। जो १ योजन सम चोरस जितने खण्ड करे तो ७९०-५६९४१५० खण्ड होकर ३५१५ धनुष्य और ६० आंगुल क्षेत्र बाकी बचे।

३ वासा द्वार:-मनुष्य के रहने वास ७ तथा १० हैं कर्म भूमि के मनुष्यों का ३ क्षेत्र-भरत, ऐरावर्त और महाविदेह अकर्म भूमि मनुष्यों का ४ क्षेत्र-हेमवाय, हिरण-वाय, हरिवास, रम्यकूवास एवं सात १० गिनने होवे तो महाविदेह क्षेत्र के ४ भाग करना-[१] पूर्व महाविदेह [२] पश्चिम महाविदेह [३] देव कुरु [४] उत्तर कुरु एवं १०।

जगति [कोट] ८ योजन ऊँचा और चौड़ा मूल में १२, मध्य में ८ और ऊपर ४ योजन का है। सारा वज्र रत्न मय है। कोट के एक के एक तरफ झरोखे की लाइन है जो ०॥ योजन ऊंची, ५०० धनुष्य चोड़ी है कोपीशा और कांगरा रत्न मय है।

जगति के ऊपर मध्य में पद्मवर वेदिका है जो ०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योजन ऊंची, ५०० धनुष्य चौडी है दोनों तरफ नीले पन्नों के स्तम्भ हैं जिन पर सुन्दर पुतलियें और मोती की मालाएं हैं। मध्य भाग के अन्दर पद्मवर वेदिका के दो भाग किये हुवे हैं। [१] अन्दर के विभाग में एक जाति के वृक्षों का वनखण्ड है जिसमे ५ वर्ण का रत्न मय तृण है। वायुके संचार से जिसमें ६ राग और ३६ रागनियें निकलती हैं। इसमें अन्य वावडियें और पर्वत हैं, अनेक आसन है जहां व्यन्तर देवी-देवता क्रीड़ा करते हैं [२] बाहर के विभाग में तृण नहीं है। शेष रचना अन्दर के विभाग समान है।

मेरु पर्वत से चार ही दिशा में ४५-४५ हजार योजन पर चार दरवाजे हैं। पूर्व में विजय, दक्षिण में विजय-वन्त, पश्चिम में जयन्त और उत्तर में अपराजित नामक हैं प्रत्येक दरवाजा ८ योजन ऊंचा ४ योजन चौड़ा है। दरवाजे के ऊपर नव भूमि और सफेद घुमट, [गुम्बज] छत्र, चामर, ध्वजा तथा ८-८ मंगलीक हैं। दरवाजों के दोनों तरफ दो दो चौंतरे हैं जो प्रासाद, तोरण चन्दन, कलश, झारी, धूप, कड़छा और मनोहर पुतलियों से सुशोभित है।

क्षेत्र का विस्तार

[१] **भरत** क्षेत्र-मेरु के दक्षिण में अर्धचन्द्राकार-वत् है मध्य में वैताढ्य पर्वत आने से भरत के दो भाग हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गये हैं। १ उत्तर भरत २ दक्षिण भरत। भरत की मर्यादा (सीमा) करने वाला चूल हेमवन्त पर्वत पर पद्म द्रह है। जिसके अन्दर से गङ्गा और सिन्धु नदी निकल कर तमस् गुफा और खण्डप्रभा गुफा के नीचे वैताढ्य पर्वत को भेद कर लवण समुद्र में मिलती हैं इनसे भरत क्षेत्र के ६ खण्ड होते हैं।

दक्षिण भरत २३८ योजन ३ कला का है। जिसमें ३ खण्ड हैं-मध्य खण्ड में १४ हजार देश हैं। मध्य भाग में कोशल देश, वनिता [अयोध्या] नगरी है। जो १२ योजन लम्बी, ९ योजन चौडी है। पूर्व में १ हजार और पश्चिम में १ हजार देश हैं। कुल दक्षिण भारत में १६ हजार देश हैं। इसी प्रकार १६ हजार देश उत्तर भरत में है। इस भरत क्षेत्र में काल चक्र का प्रभाव है [६ आरा वत्]।

[२] ऐरावत् क्षेत्र-मेरु के उत्तर में शिखरी पर्वत से आगे भरतवत् है।

[३] महाविदेह क्षेत्र-निषिध और नीलवन्त पर्वत के मध्य में है। पलङ्ग के संठाण वत्. ३२ विजय हैं। मध्य में १० हजार योजन का विस्तार वाला मेरु है। पूर्व पश्चिम दोनों तरफ २२-२२ हजार यो० भद्रशाल वन है। दोनों तरफ १६-१६ विजय हैं।

मेरु के उत्तर में और दक्षिण में २५०-२५० योजन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का भद्रशाल वन है। दक्षिण में निषिध तक देव कुरु और उत्तर में नीलवन्त तक उत्तर कुरु है। ये दोनों दो दो गजदन्त के कारण अर्धचन्द्राकार हैं। इस क्षेत्र में युगल मनुष्य ३ गाउ की अवगाहना उछेध आङ्गुल के और ३ पल्य के आयुष्य वाले रहते हैं। देव कुरु में कुड शाल्मली वृक्ष, चित्र विचित्र पर्वत १०० कंचन गिरि पर्वत और ५ द्रह हैं। इसी प्रकार उत्तर कुरु में भी हैं। परन्तु ये जम्बू सुदर्शन वृक्ष हैं।

निषिध और महाहिमवन्त पर्वत के मध्य में हरिवास क्षेत्र है। तथा नीलवन्त और रूपी पर्वत के बीच में रम्यक् वास क्षेत्र है। इन दो क्षेत्रों में २ गाउ की अवगाहना और २ पल्य की स्थिति वाले युगल मनुष्य रहते हैं।

महाहेमवन्त और चूल हेमवन्त पर्वत के बीच में हेमवाय क्षेत्र और रूपी तथा शिखरी पर्वत के मध्यमें हिरणवाय क्षेत्र है इन दोनों क्षेत्रों में १ गाउ की अवगाहना वाले और १ पल्य का आयुष्य वाले युगल मनुष्य रहते हैं।

क्षेत्र		द० उ० चौड़ाई	बाह	जीवा	धनुष्ट पीठ
		यो० कला	यो० कला	यो० कला	यो० कला
दक्षिण	भरत	२३८ ३	०	९७४८-१२	९७६६-१
उत्तर	,,	,,	१८९२-७॥	१४४७१-६	१४५२८-११
हेमवाय	क्षेत्र	२१०५ ५	६७५५-३	३७६७४-१६	३८७४०-१०
हरिवास	,,	८४२१-१	१३३६१-६	७३९०१-१७	८४०१६-४
महाविदेह	,,	३३६८४ ४	३३७६७-७	१००००००	१५८११३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देव कुरु	,,	११८४२-२	०	५३०००	६०४१८-१२
उत्तर कुरु	,,	११८४२-२	०	५३०००	६०४१८-१२
रम्यक् वास	,,	८४२१-१	१३३६१-६	७३९०१-१७	८४०१६-४
हिरण वाय	,,	२१०५-५	६७५५-३	३७६७४-१६	३८९४०-१०
दक्षिण ऐरावर्त	,,	२३८-३	१८९२-७॥	१४४७१-६	१४५२८-११
उत्तर ,,	,,	२३८-३	०	९७४८-१२	९७६६-१

(४) पञ्चय द्वार (पर्वत)—२६९ पर्वत शाश्वत हैं। देव कुरु में ५ द्रह हैं जिसके दोनों तट पर दश २ कंचन गिरि सर्व सुवर्ण मय हैं दश तट पर १०० पर्वत हैं। इसी प्रकार १०० कंचन गिरि उत्तर कुरु में हैं तथा दीर्घ वैताढ्य १६ वक्षार पर्वत, ६ वर्षधर पर्वत, ४ गजदंता पर्वत, ४ वृतल वैताढ्य, ४ चित विचितादि और १ मेरु पर्वत एवं २३९ हैं।

३४ दीर्घ वैताढ्य–३२ विजय विदेह १ भरत १ ऐरावर्त के मध्य भाग में है। १६ वक्षार-१६-१६ विजय में सीता, सीतोदा नदी से ८-८ विजय के ४ भाग होगये हैं इसके ७ अन्तर हैं। जिनमें ४ वक्षार पर्वत और ३ अंतर नदी हैं। एक एक विभाग में ४ वक्षार पर्वत एवं ४ विभागों में १६ वक्षार हैं। इनके नाम–चित्र विचित्र, निलन, एकशैल, त्रिकुट, वैश्रमण, अंजन, मयांजन, अंकावाई, पवमावाई, आशीविष, सुहावह, चन्द्र, सूर्य, नाग, देव।

६ वर्ष धर–७ मनुष्य क्षेत्रों के मध्य में ६ वर्षधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(चूल हेमवन्त, महा हेमवन्त, निषिध, नीलवन्त, रूपी और शिखरी) पर्वत हैं।

४ गज दंता पर्वत—देव कुरु उत्तर कुरु और विजय के बीच में आये हुवे हैं। नाम—गंधमर्दन, मालवंत, विद्युत्प्रभा और सुमानस।

४ वृतल वैताढ्य-हेमवाय, हिरणवाय, हरिवास, रम्यकूवास के मध्य में हैं। नाम—सद्दावाई, वयड़ावाई गन्धावाई, मालवंता।

४ चित विचितादि निषिध पर्वत के पास सीता नदी के दोनों तट पर चित और विचित पर्वत हैं। तथा नील-वंत के पास सीतोदा के दो तट पर जमग और समग दो पर्वत हैं।

१ जम्बू द्वीप के बराबर मध्य में मेरु पर्वत है।

पर्वत के नाम	ऊंचाई	गहराई	विस्तार
२०० कंचन गिरि पर्वत	१०० यो.	२५ यो.	१०० यो.
३४ दीर्घ वैताढ्य "	२५ यो.	२५ गाउ	५० यो.
१६ वक्षार "	५०० यो.	५०० गाउ	५०० यो.
			यो. कला
चूल हेमवंत और शिखरी	१०० यो.	२५ यो.	१०५२-१२
महा हेमवंत और रूपी	२०० यो.	५० यो.	४२१०-१०
निषिध और नीलवंत	४०० यो.	१०० यो.	१६८४२-२
४ गजदंता पर्वत	५०० यो.	१२५ यो.	३०२०९ ६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ वृतल वैताढ्य	१००० यो.	२५० यो.	१०००-०
चित,विचि.,जमग,सुमग	१००० यो.	२५० यो.	१०००-०
मेरु पर्वत	९९००० यो.	१००० यो.	१००९० यो.

मेरु पर्वत पर ४ वन है-भद्रशाल, नंदन, सुमानस और पण्डक वन ।

१ भद्रशाल वन-पूर्व-पश्चिम २२००० यो० उत्तर दक्षिण २५० यो० विस्तार है । मेरु से ५० यो. दूर चार ही दिशाओं में ४ सिद्धायतन हैं जिनमें जिन प्रतिमा हैं । मेरु से ईशान में ४ पुष्करणी (वावड़ियें) हैं ५० यो. लम्बी, २५ यो. चौड़ी १० यो. गहरी हैं । वेदिका वनखण्ड तोरणादि युक्त हैं । चार बावड़ियों के अन्दर ईशानेन्द्र का महल है ! ५०० यो. ऊंचा, २५० यो. विस्तार वाला है । नीचे लिखी रचना अनुसार अग्निकोन में ४ वावड़ियें हैं-उत्पला, गुम्मा, निलना, उज्वला के अन्दर शक्रेन्द्र का महल है ।

वायु कोन में ४—लिंगा, भिगनाभा, अंजना, अंजन प्रभा के अन्दर शक्रेन्द्र का प्रासाद सिंहासन है।

नैऋत्य कोन में ४—श्रीकन्ता, श्रीचन्दा, श्रीमहीता, श्रीनलीता में ईशानेन्द्र का प्रासाद सिंहासनहै

आठ विदिशा में ८ हस्तिकूट पर्वत हैं । पद्मुत्तर, नीलवंत, सुहस्ति, अंजनगिरि, कुमुद, पोलाश, विठिस और रोयणागिरि ये प्रत्येक १२५ योजन पृथ्वी में ५००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योजन ऊंचा मूल में ५०० यो. मध्य में ३७५ यो. और ऊपर २५० यो. विस्तार वाला है । अनेक वृक्ष, गुच्छा गुमा, वेली, तृण से शोभित है। विद्याधरों और देवताओं का क्रीड़ा स्थान है ।

२ **नन्दन वन**–भद्रशाल से ५०० यो. ऊंचे मेरु पर वलयाकार है । ५०० योजन विस्तार है वेदिका वन-खण्ड, ४ सिद्धायतन, १६ बावड़ियें, ४ प्रासाद पूर्ववत् हैं । ६ कूट हैं । नन्दन वन कूट, मेरु कूट, निषिध कूट, हेमवन्त कूट, रजित कूट, रुचित, सागरचित, वज्र और बल कूट, ८ कूट, ५०० यो. ऊंचे हैं आठों ही पर १ पल्य वाली ८ देवियों के भवन हैं नाम–मेघंकरा, मेघवती, सुमेघा, हेममालिनी, सुवच्छा, वच्छामित्रा, वज्रसेना, बल-हका देवी।बल कूट १००० योजन ऊंचा, मूल में १००० यो. मध्य में ७५० यो. ऊपर ५०० यो. विस्तार है । बल देवता का महल है । शेष भद्रशाल वन समान सुन्दर और विस्तार वाला है ।

(३) **सुमानस वन**–नंदन वन से६२५००यो ऊँचा है ५०० यो० विस्तार वाला मेरु के चारों ओर है । वेदिका वनखण्ड, १६ वावडियें, ४ सिद्धायतन, शक्रेन्द्र ईशानेन्द्र के महल आदि पूर्ववत् है ।

४ **पांडक वन**–सुमानस वन से ३६००० यो० ऊंचा मेरु शिखर पर है । ४९४ यो० चूंडी आकार वत् है। मेरु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की ३२ यो० की चूलिका के चारों ओर (तरफ) लिपटा हुवा है। वेदिका, वन खण्ड, ४ सिद्धायतन, १६ वावडिए, मध्य में ४ महल। सर्व पूर्ववत्।

मध्य की चूलिका (मेरुकी) मूल में १२ यो०, मध्य में ८ यो०, ऊपर ४ यो० का विस्तार वाली। ४० यो० ऊंची है। वैडूर्य रत्न मय है। वेदिका वनखण्ड से विटायी हुई (लिपटी हुई) है मध्य में १ सिद्धायतन है।

पांडक वन की ४ दिशा में ४ शिला हैं। पंडू, पंडूबल, रक्त और रत्न कंबल। प्रत्येक शिला ५०० योजन लम्बी२५०यो०चौडी४यो जाडी अर्धचन्द्र आकार वत् है। पूर्व पश्चिम शिलाओं पर दो २ सिंहासन हैं। जहां महाविदेह के तीर्थकरों का जन्माभिषेक भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देवता करते हैं। उत्तर दक्षिण में एकेक सिंहासन है जहां भरत ऐरावर्त के तीर्थकरों का जन्माभिषेक ४ निकाय के देवता करते हैं।

मेरु पर्वत के ३ करंड हैं। नीचे का १००० यो० पृथ्वी में, मध्य में ६३००० यो० पृथ्वी के ऊपर और ऊपर का ३६००० यो० का; कुल १ लाख योजन का शास्वत मेरु है।

(५) **कूट द्वार**-४६७ कूट पर्वतों पर और ५८ क्षेत्रों में हैं

	ऊंचा यो०	मूल वि०	ऊँचा वि०
चूल हेमवन्त पर ११	५००	५००	२५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महा हेमवन्त	,,	८	,,	,,	,,
निषिध	,,	९	,,	,,	,,
नीलवन्त	,,	९	,,	,,	,,
रूपी	,,	८	,,	,,	,,
शिखरी	,,	११	,,	,,	,,
वैताढ्य ३४×९=		३०६	२५ गाउ	२५ गाउ	१२॥ गाउ
वखार १६×४=		६४	५००	५००	२५०
विद्युत्प्रभा गजदंता पर		९	,,	,,	,,
मालवंता ,,	,,	९	,,	,,	,,
सुमानस ,,	,,	७	,,	,,	,,
गंधमाल ,,	,,	७	,,	,,	,,
मेरु के नंदन वनमें		९	,,	,,	,,
		४६७			
भद्रशाल	,,	८	,,	,,	,,
देव कुरु	में	८	८ यो०	८ यो०	४ यो
उतर कुरु	में	८	,,	,,	,,
चक्रवर्ती के विजय में		३४	,,	,,	,,
		५२५			

गज दंता के २ और नंदन वन का १ कूट और १००० यो० ऊंचा, १००० यो० मूल में और ऊंचा ५०० योजन का विस्तार समझना।

७६ कूट (१६ वखार, ८ उत्तर कुरु ३४ वैताढ्य) पर जिन गृह हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेष कूटों पर देव देवी के महल हैं। ४ वन में चार (१६) मेरु चूलोंपर १, जम्बू वृक्ष पर १, शाल्मली वृक्ष पर १, जिनगृह; कुल ६५ शाश्वत सिद्धायतन् है।

(६) तीर्थ द्वार-३४ विजय (३२ विदेह का, १भरत, १ ऐरा वर्त) में से प्रत्येक तीन २ लौकिक तीर्थ हैं। मगध, वरदाम और प्रभास। जब चक्रवर्ती खण्ड साधने को जाते हैं तब यहां रोक दिये जाते हैं यहां अट्ठम करते हैं। तीर्थ-करों के जन्माभिषेक के लिये भी इन तीर्थों का जल और औषधि देव लाते हैं।

(७) श्रेणी द्वारः-विद्याधरों की तथा देवों की १३६ श्रेणी हैं। वैताढ्य पर १० यो० ऊँचे विद्या० की २ श्रेणी हैं दक्षिण श्रेणी में ५० और उत्तर श्रेणी में ६० नगर हैं। यहाँ से १० यो० ऊँचेपर आभियोग देव की दो श्रेणी (उत्तर की, दक्षिण की) हैं।

एवं ३४ वैताढ्य पर चार २ श्रेणी हैं। कुल ३४×४ =१३६ श्रेणियें हैं।

(८) विजय द्वार-कुल ३४ विजय है, जहां चक्रवर्ती ६ खण्ड का एक छत्र राज्य कर सकते हैं। ३२ विजय तो महाविदेह क्षेत्र के हैं, नीचे (अनुसारः-

पूर्व विदेह	सीता नदी	पश्चिम विदेह	सीतोदा नदी
उत्तर किनारे८	दक्षिण किनारे८	उत्तर किनारे ८	दक्षिण कि.८
कच्छ विजय	वच्छ विजय	पद्म विजय	विप्रा विजय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुकच्छ ,,	सुवच्छ ,,	सुपद्म ,,	सुविप्रा ,,
महा कच्छ ,,	महा वच्छ ,,	महा पद्म ,,	महा विप्रा ,,
कच्छ वती ,,	वच्छ वती ,,	पद्मवती ,,	विप्रावती ,,
आव्रता ,,	रमा ,,	संवा ,,	वग्गु ,,
मंगला ,,	रमक ,,	कुमुदा ,,	सुवग्गु ,,
पुरकला ,,	रमणीक ,,	निलीका ,,	गन्धीला ,,
पुष्कलावती ,,	मंगलावती ,,	सलीलावती ,,	गंधीलाव ,,

प्रत्येक विजय १६५९२ यो० २ कला दक्षिणोत्तर लम्बी और २२२।। यो. पूर्व पश्चिम में चौडी है। ये ३२ तथा १ भरत क्षेत्र, १ ऐरावत् क्षेत्र एवं ३४ चक्रवर्ती हो सकते हैं। इन ३४ विजयों में ३४ दीर्घ वैताढ्य पर्वत, ३४ तमस गुफा, ३४ खण्ड प्रभा गुफा, ३४ राजधानी ३४ नगरी ३४ कृत माली देव, ३४ नट माली देव, ३४ ऋषभ कूट, ३४ गंगा नदी, ३४ सिन्धु नदी ये सब शाश्वत हैं।

(९) द्रह द्वार—६ वर्षधर पर्वतों पर छे, छ, ५ देव-कुरु में और ५ उत्तर कुरु में हैं।

द्रह के नाम (कुंड)	किस पर्वत पर हैं	लम्बाई यो.	चौड़ाई यो.	देवी	गहराई कमल
पद्म द्रह	चूल हेमवन्त	१०००,	५००,	१० श्री.	१२०५०१२०
महा पद्म ,,	महा हेमवन्त	२०००,	१०००,	१० ल.	२४१००२४०
तिगच्छ ,,	निषिध	४०००,	२०००,	१० धृति	४८२००४८०
केशरी ,,	नीलवंत	,,	,,	,, बुद्धि	,,

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

म. पुं.	,,	रूपी	२०००	१०००	,,	ह्री	२४१००२४०
पुंडरीक	,,	शिखरी	१०००	५००	,,	कीर्ति	१२०५०१२०
१० द्रह		जमीनपर	१०००	५००	,,	१० दे.	४१००२४०
						कुल	१६२८०१६७०

देव कुरु के ५ द्रह–निषेढ़, देव कुरु, सूर्य, सूलस और विद्युत प्रभ द्रह।

उत्तर कुरु के ५ द्रह–नीलवंत, उत्तर कुरु, चन्द्र, एरावर्त और मालवंत द्रह।

(१०) नदी द्वार–१४५६०६० नदियें हैं।

विस्तार नीचे अनुसार–

नि. ऊं.=निकलता ऊंडी प्र. ऊं.=समुद्रमें प्रवेश करते ऊंडी

नि. वि= ,, विस्तार प्र. वि= ,, ,, विस्तार

नदी	पर्वत से	कुंड से	नि. ऊं	नि. वि	प्र. ऊं	प्र. वि	परि. नदि.
१ गङ्गा	चूल हेम.	पद्म	०॥गाउ	६। यो.	१। यो.	६२॥यो.	१४०००
२ सिन्धु	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
३ रोहिता	,,	,,	१गाउ	१२॥ यो	२॥ यो	१२५ यो	२८०००
४ रोहितंसा	म. हेम.	म. पद्म	,,	,,	,,	,,	,,
५ हरिकंता	,,	,,	२ गाउ	२५ यो.	५ यो.	२५०यो.	५६०००
६ हरिसलीला	निषिध	तिगच्छ	,,	,,	,,	,,	,,
७ सीता	,,	,,	४ गाउ	५० यो.	१० यो.	५००यो.	५३२०००
८ सीतोदा	नीलवंत	केशरी	,,	,,	,,	,,	,,
९ नरकंता	,,	,,	२ गाउ	२५ यो.	५ यो,	२५०यो.	५६०००
१० नारीकंता	रूपी	महापुंड	,,	,,	,,	,,	,,
११ रूपकूला	,,	,,	१ गाउ	१२॥यो.	२॥ यो.	१२५यो.	२८०००
१२ सुवर्णकूला	शिखरी	पुंडरीक	,,	,,	,,	,,	,,
१३ रक्ता	,,	,,	०॥गाउ	६। यो.	१। यो.	६२॥यो.	१४०००
१४ रक्तोदा	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
७८ विदेह की ६४ नदी	कुंडों से	प्रथ्वीपर	,,	,,	,,	,,	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येक नदी ऊपर बताये हुवे पर्वत तथा कुंडसे निकल कर आगे बहती हुई गंगा प्रभास सिन्धु प्रभास आदि कुंड में गिरती हैं। यहाँ से आगे जाने पर आधे परिवार जितनी नदियें मिलती हैं जिनके साथ बीच में आये हुवे पहाड़ को तोड़ कर आगे बहती हैं जहाँ आधे परिवार की नदियें मिलती हैं जिनके साथ बहकर जम्बूद्वीप की जगति से बाहर लवण समुद्र में मिलती हैं।

गंगा प्रभास आदि कुंड में गंगा द्वीप आदि नामक एकेक द्वीप हैं जिनमें इसी नाम की एकेक देवी सपरिवार रहती हैं इन कुंड, द्वीप और देवियों के नाम शाश्वत हैं।

यन्त्र के अनुसार ७८ मूल नदियें और उन की परिवार की (मिलने वाली) १४५६००० नदियें हैं इस उपरान्त महाविदेह के ३२ विजयों के २८ अन्तर हैं जिन में पहले लिखे हुए १६ वक्षार पर्वत और शेष १२ अंतर में १२ अंतर नदियें हैं इनके नामः-गृहवन्ती, द्रहवन्ती, पंकवन्ती, तंत जला, मंत जला, उगमजला चीरोदा, सिंह सोता, अंतो वहनी, उमालनी, केनमालनी और गंभीर मालनी। ये प्रत्येक नदियें १२५ यो. चौड़ी, २॥ यो. ऊँडी (गहरी) और १६५९२ यो. २ कला की लम्बी हैं एवं कुल नदियें १४५६०९० हैं। विशेष विस्तार जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र से जानना।

॥ इति खण्डा जोयणा (ना) सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण

(१) नीति मान होवे कारण कि नीति धर्म की माता है।

(२) हिम्मतवान व बहादुर होवे कारण कि कायरों से धर्म बन सकता नहीं।

(३) धैर्यवान होवे किंवा प्रत्येक कार्य में आतुरता न करे।

(४) बुद्धिमान होवे किंवा प्रत्येक कार्य अपनी बुद्धि से विचार कर करे।

(५) असत्य से घृणा करने वाला होवे और सत्य बोलने वाला होवे।

(६) निष्कपटी होवे, हृदय साफ स्फटिकरत्न मय होवे।

(७) विनयवान तथा मधुर भाषी होवे।

(८) गुण ग्राही होवे और स्वात्म-श्लाघा न करे (स्वयं अपने गुण अन्य से आदर पाने के लिए न कहे)।

(९) प्रतिज्ञा-पालक होवे अर्थात् जो नियमादि लिए होवें उन्हें बराबर पाले।

(१०) दयावान होवे परोपकार की बुद्धि होवे।

(११) सत्य धर्म का अर्थी होवे और सत्य का पक्ष लेने वाला होवे।

(१२) जितेन्द्रिय होवे कषाय की मन्दता होवे।

(१३) आत्म कल्याण की दृढ इच्छा वाला होवे।

(१४) तत्त्व विचार में निपुण होवे तत्त्व में ही रमन करे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१५) जिसके पास से धर्म की प्राप्ति हुई होवे उसका उपकार कभी भी नहीं भूले और समय आने पर उपकारी के प्रति प्रत्युपकार करने वाला होवे।

॥ इति धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मार्गानुसारी के ३५ गुण

१ न्याय संपन्न द्रव्य प्राप्त करे २ सात कुव्यसन का त्याग करे ३ अभक्ष्य का त्यागी होवे ४ गुण परीक्षा से सम्बन्ध (लग्न) जोड़े ५ पाप-भीरु ६ देश हित कर वर्तन वाला ७ पर निन्दा का त्यागी ८ अति प्रकट, अति गुप्त तथा अनेक द्वार वाले मकान में न रहे ९ सद्गुणी की संगति करे १० बुद्धि के आठ गुणों का धारक ११ कदा-ग्रही न होवे (सरल होवे) १२ सेवाभावी होवे १३ विनयी १४ भय स्थान त्यागे १५ आय-व्यय का हिसाब रक्खे १६ उचित (सभ्य) वस्त्राभूषण पहिने १७ स्वाध्याय करे (नित्य नियमित धार्मिक वाचन, श्रवण करे) १८ अजीर्ण में भोजन न करे १९ योग्य समय पर (भूख लगने पर मित, पथ्य नियमित) भोजन करे २० समय का सदुपयोग करे २१ तीन पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) में विवेकी २२ समयज्ञ (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का ज्ञाता) होवे २३ शांत प्रकृति वाला २४ ब्रह्मचर्य को ध्येय समझने वाला २५ सत्यव्रत धारी २६ दीर्घदर्शी २७ दयालु २८ परोपकारी २९ कृतघ्न न होकर कृतज्ञ होवे (अपकारी पर भी उपकार करे ३० आत्म प्रंशसा न इच्छे, न करे न करावे ३१ विवेकी (योग्यायोग्य का भेद समझने वाला) होवे ३२ लज्जा-वान होवे ३३ धैर्यवान होवे ३४ षड्रिपु (क्रोध, मान,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माया, लोभ, राग, द्वेष) का नाश करे ३५ इन्द्रियों को जीते (जितेन्द्रिय होवे)।

इन ३५ गुणों को धारण करने वाला ही नैतिक धार्मिक जैन जीवन के योग्य हो सक्ता है।

❀ इति मार्गानुसारी के ३५ गुण सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रावक के २१ गुण

(१) उदार हृदयी होवे
(२ यशवन्त ,,
(३) सौम्य प्रकृति वाला ,,
(४) लोक प्रिय ,,
(५) अक्रूर (प्रकृति वाला) ,,
(६) पाप भीरु ,,
(७) धर्म श्रद्धावान ,,
(८) दाक्षिण्य (चतुराई) युक्त ,,
(९) लज्जावान ,,
(१०) दयावन्त ,,
(११) मध्यस्थ (सम) दृष्टि ,,
(१२) गंभीर-सहिष्णु-विवेकी ,,
(१३) गुणानुरागी ,,
(१४) धर्मोपदेश करने वाला ,,
(१५) न्याय पक्षी ,,
(१६) शुद्ध विचारक ,,
(१७) मर्यादा युक्त व्यवहार करने वाला होवे
(१८) विनय शील होवे
(१९) कृतज्ञ (उपकार मानने वाला) होवे
(२०) परोपकारी होवे
(२१) सत्कार्य में सदा सावधान होवे

❀ इति श्रावक के २१ गुण सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल *

१ मोक्ष की अभिलाषा रखने से २ उग्र तपश्चर्या करने से ३ गुरु मुख द्वारा सूत्र सिद्धान्त सुनने से ४ आगम सुन कर वैसी ही प्रवृत्ति करने से ५ पाँच इन्द्रियों को दमन करने से ६ छकाय जीवों की रक्षा करने से ७ भोजन करने के समय साधु साध्वियों की भावना भावने से ८ सद्ज्ञान सीखने व सिखाने से ९ नियाणा रहित एक कोटी से व्रत में रहता हुवा नव कोटी से व्रत प्रत्याख्यान करने से १० दश प्रकार की वैयावृत्यें करने से ११ कषाय को पतले करके निर्मूल करने से १२ शक्ति होते हुवे क्षमा करने से १३ लगे हुवे पापों की तुरन्त आलोचना करने से १४ लिये हुवे व्रतों को निर्मल पालने से १५ अभयदान सुपात्र दान देने से १६ शुद्ध मन से शीयल (ब्रह्मचर्य) पालने से १७ निर्वद्य (पाप रहित) मधुर वचन बोलने से १८ ग्रहण किये हुवे संयम भार को अखण्ड पालने से १९ धर्म-शुक्ल ध्यान ध्याने से २० हर महीने ६-६ पोषध करने से २१ दोनों समय आवश्यक (प्रतिक्रमण) करने से २२ पिछली रात्रि में धर्म जागरण करते हुवे तीन मनोरथादि चिंतवने से २३ मृत्यु समय आलोचनादि से शुद्ध होकर समाधि पण्डित मरण मरने से ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन २३ बोलों को सम्यक् प्रकार से जान कर सेवन करने से जीव जल्दी मोक्ष में जावे ।

॥ इति जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थंकर गोत्र (नाम) बान्धने के २० कारण

(श्री ज्ञाता सूत्र, आठवां अध्ययन)

१ श्री अरिहंत भगवान् के गुण कीर्तन करने से-
२ श्री सिद्ध ,, ,, ,,
३ आठ प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) का आराधन करने से।
४ गुणवंत गुरु के गुण कीर्तन करने से।
५ स्थविर (वृद्ध मुनि) के गुण कीर्तन करने से।
६ बहुश्रुत के ,, ,,
७ तपस्वी ,, ,, ,,
८ सीखे हुवे ज्ञान को वारंवार चिंतवने से।
९ समकित निर्मल पालने से।
१० विनय (७-१०-१३४ प्रकारके) करने से।
११ समय समय पर आवश्यक करने से।
१२ लिये हुवे व्रत प्रत्याख्यान निर्मल पालने से।
१३ शुभ (धर्म-शुक्ल) ध्यान ध्याने से।
१४ बारह प्रकार की निर्जरा (तप) करने से।
१५ दान (अभय दान-सुपात्र दान) देने से।
१६ वैयावृत्य (१० प्रकार की सेवा) करने से।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७ चतुर्विध संघ को शान्ति-समाधि (सेवा-शोभा) देने से

१८ नया २ अपूर्व तत्त्व ज्ञान पढ़ने से ।

१९ सूत्र सिद्धान्त की भक्ति (सेवा) करने से ।

२० मिथ्यात्व नाश और समकित उद्योत करने से ।

जीव अनंतानंत कर्मों को खपाते हैं । इन सत्कार्यों को करते हुवे उत्कृष्ट रसायण (भावना) भावे तो तीर्थंकर गोत्र कर्म बान्धे ।

॥ इति तीर्थंकर गोत्र बान्धने के २० कारण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परम कल्याण के ४० बोल

गुण		दृष्टान्त	सूत्र की साक्षी
१ समकित निर्मल पालने से	परम कल्याण होवे	श्रेणिक महाराज	ठाणांग सूत्र
२ नियाणा रहित तपश्चर्या से	,,	तामली तापस	भगवती ,,
३ तीन योग निश्चल करने से	,,	गजसुकुमाल मुनि,	अंतगढ ,,
४ समभाव सहित क्षमा करने से	,,	अर्जुन माली	,, ,,
५ पांच महाव्रत निर्मल पालने से	,,	गौतम स्वामी	भगवती ,,
६ प्रमाद छोड़ अप्रमादी होने से	,,	शैलग राजर्षि	ज्ञाता ,,
७ इन्द्रिय दमन करने से	,,	हरकेशी मुनि	उ.ध्यान,,
८ मित्रों में माया कपट न करने से	,,	मल्लिनाथ प्रभु	ज्ञाता ,,
९ धर्म चर्चा करने से	,,	केशी गौतम	उ.ध्ययन,
१० सत्य धर्म पर श्रद्धा करने से	,,	वरुण नाग नतुये का मित्र	भगवती,,
११ जीवों पर करुणा करने से	,, ,,	मेघ कुमार (हाथी के भव में)	ज्ञाता ,,

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

१२ सत्य बात निशङ्कता ,, पूर्वक कहने से	आनन्द श्रावक	उपाशकदशा ,,
१३ कष्ट पड़ने पर भी ,, व्रतों की दृढता से ,,	अंबड़ और ७०० शिष्य	उववाई ,,
१४ शुद्ध मन से शीयल ,, पालने से	सुदर्शन शेठ	सुदर्शन चरित्र
१५ परिग्रह की ममता ,, छोड़ने से	कपिल ब्राह्मण	उत्तराध्यय. सूत्र
१६ उदारता से सुपात्र ,, दान देने से.	सुमुख गाथा-पति	विपाक सूत्र
१७ त से डिगते हुवे ,, को स्थिर करने से	राजमती	उत्तराध्य-यन सूत्र
१८ उग्र तपस्या करने से ,,	धन्ना मुनि	अ. सूत्र
१९ अग्लानि पूर्वक ,, वैयावच्च करने से	पंथक मुनि	ज्ञाता ,,
२० सदेव अनित्य ,, भावना भावने से	भरत चक्रवर्ती	जम्बूद्वीप प्र. ,,
२१ अशुभ परिणाम ,, रोकने से	प्रसन्नचन्द्र राजर्षि	श्रेणिक-चरित्र
२२ सत्य ज्ञान पर ,, श्रद्धा रखने से	अर्हन्नक श्रावक	ज्ञाता सूत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३ चतुर्विध संघकी वैयावच्च से.	,,	सनतकुमार चक्र० पूर्व भव में	भगवती ,,
२४ उत्कृष्ट भावसे मुनि सेवा करने से	,,	बाहुबल जी पूर्व भव में	ऋषभ देव चरित्र
२५ शुद्ध अभिग्रह करने से	,,	पांच पाण्डव	ज्ञाता सूत्र
२६ धर्म दलाली ,,	,,	श्रीकृष्ण वासुदेव	अंतगढ ,,
२७ सूत्र ज्ञान की भक्ति	,,	उदाई राजा	भगवती ,,
२८ जीव दया पालने से	,,	धर्मरुचि अणगार	ज्ञाता ,,
२९ व्रत से गिरते ही सावधान होने से	,,	अराणिक अनगार	अवश्यक
३० आपत्ति आने पर धैर्य रखने से	,,	खंदक अणगार	उत्तराध्ययन ,,
३१ जिन राज की भक्ति करने से	,,	प्रभावती रानी	,, ,,
३२ प्राणों का मोह छोड़कर भी दया पालने से	,,	मेघरथ राजा	शांतिनाथ चरित्र
३३ शक्ति होने पर भी क्षमा करने से	,,	प्रदेशी राजा	रायप्रश्नीय सूत्र
३४ सहोदर भाइयों का भी मोह छोड़ने से	,,	राम बलदेव	६३ श्ला. पु. चरित्र
३५ देवादि के उपसर्ग सहने से	,,	काम देव	उपासक सूत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६ देव गुरु वंदन में निर्भीक होने से ,,	सुदर्शन शेठ	अंतगढ़ सूत्र
३७ चर्चा से वादियों को जीतने से ,,	मण्डूक श्रावक	भगवती ,,
३८ मिले हुवे निमित पर शुभ भावना से,,	आर्द्र कुमार	सूत्रकृतांग ,,
३९ एकत्व भावना भावने से ,,	नमिराजर्षि	उत्तराध्यान ,,
४० विषय सुख में गृद्ध न होने से ,,	जिनपाल	ज्ञाता ,,

॥ इति परम कल्यान के ४० बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* तीर्थंकर के ३४ अतिशय *

१ तीर्थंकर के केश, नख न बढ़े, सुशोभित रहे २ शरीर निरोग रहे ३ लोही मांस गाय के दूध समान होवे ४ श्वासोश्वास पद्म कमल जैसा सुगन्धित होवे ५ आहार निहार अदृश्य ६ आकाश में धर्म चक्र चले ७ आकाश में ३ छत्र शोभे तथा दो चामर उड़े ८ आकाश में पाद पीठ सहित सिंहासन चले ६ आकाश में इन्द्रध्वज चले १० अशोक वृक्ष रहे ११ भामण्डल होवे १२ विषम भूमि सम होवे १३ कण्टक ऊंधे (ओंधे) हो जावे १४ छः ही ऋतु अनुकूल होवे १५ अनुकूल वायु चले १६ पांच वर्ण के फूल प्रगट होवे १७ अशुभ पुद्गलों का नाश होवे १८ सुगन्धि वर्षा से भूमि सिंचित होवे १६ शुभ पुद्गल प्रगट होवे २० योजन गामी वाणी की ध्वनि होवे २१ अर्ध मागधी भाषा में देशना देवे २२ सर्व सभा अपनी २ भाषा में समझे २३ जन्म वैर, जाति वैर शान्त होवे २४ अन्यमती भी देशना सुने व विनय करे २५ प्रतिवादी निरुत्तर बने (२६) २५ यो. तक किसी जात का रोग न होवे २७ महामारी (प्लेग) न होवे २८ उपद्रव न होवे २६ स्वचक्र का भय न होवे ३० पर लश्कर का भय न होवे ३१ अतिवृष्टि न होवे ३२ अनावृष्टि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न होवे ३३ दुकाल न पड़े ३४ पहले उत्पन्न हुवे उपद्रव शान्त होवें ।

क्रमशः ४ अतिशय जन्म से होवे, ११ अतिशय केवल ज्ञान उत्पन्न होने बाद प्रगटे और १९ अतिशय देव कृत होवे ।

॥ इति तीर्थंकर के ३४ अतिशय सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा

श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र, अध्य० ६

१ ज्योतिषी समूह में चन्द्र समान व्रतों में ब्रह्मचर्य उत्तम

२ सर्व खानों में सोनेकी खदान कीमती समान ,, ,, ,, कीमती

३ ,, रत्नों में वैडूर्य रत्न प्रधान वैसे ,, ,, ,, प्रधान

४ ,, आभूषणों में मुकुट ,, ,, ,, ,, ,, प्रधान

५ ,, वस्त्रों में क्षेमयुगल ,, ,, ,, ,, ,, ,,

६ ,, चन्दन में गोशीर्ष चन्दन ,, ,, ,, ,, ,, ,,

७ ,, फूलोंमें अरविन्द कमल ,, ,, ,, ,, ,, ,,

८ ,, औषधीश्वर में चूल हेमवंत ,, ,, ,, ,, ,, ,,

९ ,, नादियों में सीता सीतोदा ,, ,, ,, ,, ,, ,,

१० ,, समुद्रों में स्वयं-भूरमण ,, ,, ,, ,, ,, ,,

११ ,, पर्वतों में मेरु ऊँचा और ,, ,, ,, ,, ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२ ,, हाथियों में ऐरावत ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१३ ,, चतुष्पदों में केशरी-
सिंह ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१४ ,, भवनपति में
धरणेन्द्र ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१५ ,, सुवर्ण कुमार देवों
में वेणुदेवेन्द्र ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१६ ,, देवलोक में ब्रह्म-
लोक बड़ा और ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१७ ,, सभाओं में सुधर्मा
सभा बडी और ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१८ ,, स्थिति के देवों में
सर्वार्थ सिद्ध ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१९ ,, दानों में अभय
दान बड़ा और ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२० ,, रंगों में किरमजी रंग ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२१ ,, संस्थानों में
समचतुरस्त्र ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२२ ,, संहननों में वज्र
ऋषभ नाराच बडी और ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२३ ,, लेश्या में शुक्ल
लेश्या ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४ ,, ध्यानों में शुक्ल ध्यान बड़ा ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

२५ ,, ज्ञान में केवल ज्ञान ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

२६ ,, क्षेत्रों में महा विदेह क्षेत्र ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

२७ ,, साधुओं में तीर्थंकर ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

२८ ,, गोल पर्वतों में कुंडल पर्वत ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

२९ ,, वृक्षों में सुदर्शन वृक्ष ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

३० ,, वनों में नंदन वन ,, ,, ,, ,, ,,

३१ ,, ऋद्धि में चक्रवर्ती की ऋद्धि ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

३२ ,, योद्धाओं में वासुदेव ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

❀ इति ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

—:देवोत्पत्ति के १४ बोल:—

निम्न लिखित १४ बोल के जीव यदि देव गति में जावें तो कहां तक जा सकें?

मार्गणा	जघन्य	उत्कृष्ट
१ असंयति भवि द्रव्य देव	भवनपति में	नव ग्रीयवेक में
२ अविराधिक मुनि	सौधर्म कल्पमें	अनुत्तर विमानमें
३ विराधिक मुनि	भवनपति में	सौधर्म कल्प में
४ अविराधिक श्रावक	सौधर्म कल्पमें	अच्युत कल्प में
५ विराधिक श्रावक	भवनपति में	ज्योतिषी में
६ असंज्ञी तिर्यंच	"	व्यन्तर देवों में
७ कंद मूल भक्षक तापस	"	ज्योतिषी में
८ हांसी करने वाले मुनि	"	सौधर्म कल्प में
९ परिव्राजक संन्यासी तापस	"	ब्रह्म देवलोक में
१० आचार्यादि निंदक मुनि	"	लांतक "
११ संज्ञी तिर्यंच	"	आठवें "
१२ आजीविक साधु(गोशालापंथी)	"	अच्युत "
१३ यंत्र मंत्र करनेवाले अभोगी साधु	"	" "
१४ स्वलिंगी ववन्नगा (सम्यक्-श्रद्धा विहीन)	"	नव ग्रीयवेक में

चौदहवें बोल में भव्य जीव हैं शेष में भव्याभव्य दोनों हैं।

❀ इति देवोत्पत्ति के १४ बोल सम्पूर्ण ❀

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षट्द्रव्य पर ३१ द्वार

१ नाम द्वार २ आदि द्वार ३ संठाण द्वार ४ द्रव्य द्वार ५ क्षेत्र द्वार ६ काल द्वार ७ भाव द्वार ८ सामान्य विशेष द्वार ९ निश्चय द्वार १० नय द्वार ११ निक्षेप द्वार १२ गुण द्वार १३ पर्याय द्वार १४ साधारण द्वार १५ साधर्मी द्वार १६ परिणामिक द्वार १७ जीव द्वार १८ मूर्ति द्वार १९ प्रदेश द्वार २० एक द्वार २१ क्षेत्र क्षेत्री द्वार २२ क्रिया द्वार २३ कर्ता द्वार २४ नित्य द्वार २५ कारण द्वार २६ गति द्वार २७ प्रवेश द्वार २८ पृच्छा द्वार २९ स्पर्शना द्वार ३० प्रदेशस्पर्शना द्वार और ३१ अल्प बहुत्व द्वार ।

१ नाम द्वार—१ धर्म २ अधर्म ३ आकाश ४ जीव ५ पुद्गलास्तिकाय ६ काल द्रव्य ।

२ आदि द्वार—द्रव्यापेक्षा समस्त द्रव्य अनादि हैं। क्षेत्रापेक्षा लोक व्यापक हैं। अतः सादि हैं केवल आकाश अनादि है। कालापेक्षा षट् द्रव्य अनादि हैं भावापेक्षा षट् द्रव्य में, उत्पाद व्यय अपेक्षा ये सादिसान्त है।

३ संठाण द्वार—धर्मास्ति काय का संठाण गाड़े के

○○ ओघण, समान ।
○○○○
○○○●○○ इस प्रकार बढते२लोकान्त तक असंख्य प्रदेशी
○○○○○○○○

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। इसी प्रकार अधर्मास्ति काय का संठाण, आकाशास्ति काय का संठाण लोक में गले का भूषण समान अलोक में ओघणाकार, जीव तथा पुद्गल का सम्बन्ध अनेक प्रकार का और काल के आकार नहीं। (प्रदेश नहीं इस कारण)

४ द्रव्य द्वार-गुण पर्याय के समूह युक्त होवे उसे द्रव्य कहते हैं। हरेक द्रव्य के मूल ६ स्वभाव हैं। अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, सत्तत्व, अगुरुलघुत्व, उत्तर स्वभाव अनन्त हैं। यथा नास्तित्व, नित्य, अनित्य, एक, अनेक, भेद, अभेद, भव्य, अभव्य, वक्तव्य, परम इत्यादि धर्म, अधर्म, आकाश, एक एक द्रव्य हैं। जीव, पुद्गल और काल अनन्त हैं।

५ क्षेत्र द्वार-धर्म, अधर्म, जीव और पुद्गल लोक व्यापक है। आकाश लोकालोक व्यापक है। और काल २॥ द्वीप में प्रवर्तन रूप है और उत्पाद व्यय रूप से लोकालोक व्यापक है।

६ काल द्वार-धर्म, अधर्म, आकाश द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त हैं। क्रियापेक्षा सादि सांत हैं। पुद्गल द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त है, प्रदेशापेक्षा सादि सांत है। काल द्रव्य द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त समयापेक्षा सादि सान्त है।

७ भाव द्वार-पुद्गल रूपी है। शेष ५ द्रव्य अरूपी है।

८ सामान्य-विशेष द्वार-सामान्य से विशेष बल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वान है। जैसे सामान्यतः द्रव्य एक है । विशेषतः ६-६ धर्मास्ति काय का सामान्य गुण चलन सहाय है। अधर्मा का स्थिर सहाय, आका. का अवगाहदान, काल का वर्तना, जीव. का चैतन्य, पुद्गल, का जीर्ण गलन विध्वंसन गुण और विशेष गुण छः ही द्रव्यों का अनन्त अनन्त है।

९ **निश्चय व्यवहार द्वार**-निश्चय से समस्त द्रव्य अपने २ गुणों में प्रवृत होते हैं। व्यवहार में अन्य द्रव्यों की अपने गुण से सहायता देते हैं । जैसे लोकाकाश में रहने वाले समस्त द्रव्य आकाश अवगाहन में सहायक होते हैं। परन्तु अलोक में अन्य द्रव्य नहीं अतः अवगाहन में सहायक नहीं होते प्रत्युत अवगाहन में षट्गुण हानि वृद्धि सदा होती रहती है। इसी प्रकार सब द्रव्यों के विषय में जानना।

१० **नय द्वार**-अंश ज्ञान को नय कहते हैं । नय ७ हैं इनके नाम—१ नैगम २ संग्रह ३ व्यवहार ४ ऋजु सूत्र ५ शब्द ६ समभिरूढ और ७ एवं भूत नय, इन सातों नय वालों की मान्यता कैसी है ? यह जानने के लिये जीव द्रव्य ऊपर ७ नय उतारे जाते हैं।

१ नैगम नय वाला-जीव कहने से जीव के सब नामों को ग्र०करे
२ संग्रह " - " " जीव के असंख्य प्रदेशों को "
३ व्यवहार " - " " से त्रस स्थावर जीवों को "
४ ऋजुसूत्र " - " " सुखदुख भोगने वाले जी.को"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ शब्द " – " " चायक समकिति जीव "
६ समभिरूढ" – " " केवल ज्ञानी " "
७ एवं भूत " – " " सिद्ध अवस्था के " "

इस प्रकार सातों ही नय सब द्रव्यों पर उतारे जा सकते हैं।

११ निक्षेप द्वार–निक्षेप ४–१ नाम २ स्थापना ३ द्रव्य और भाव निक्षेप।

१ द्रव्य के नाम मात्र को निक्षेप कहते हैं।
२ द्रव्य की सदृश तथा असदृश स्थापना की (आकृति को स्थापना निक्षेप कहते हैं।
३ द्रव्य की भूत तथा भविष्य पर्याय को वर्तमान में कहना सो द्रव्य निक्षेप।
४ द्रव्य की मूल गुण युक्त दशा को भाव निक्षेप कहते हैं षट्द्रव्य पर ये चारों ही निक्षेप भी उतारे जा सकते हैं।

१२ गुण द्वार–प्रत्येक द्रव्य में चार २ गुण हैं।

१धर्मास्ति काय में ४गुण अरूपी,अचेतन,अक्रिय चलनसहा०
२अधर्मास्ति " " " – " " " स्थिर "
३आकाशास्ति " " – " " "अवगाहनदान
४जीवास्ति काय " " – " चैतन्य; सक्रिय, और उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ काल द्रव्य में ४ गुण–अरूपी, अचेतन, अक्रिय वर्तनागुण
६ पुद्गलास्ति० में ४ " –रूपी, अचेतन, सक्रिय, जीर्णगलन

१३ पर्याय द्वार–प्रत्येक द्रव्य की चार २ पर्याय हैं

१ धर्मास्ति० की ४ पर्याय–स्कंध, देश, प्रदेश, अगुरु लघु
२ अधर्मास्ति० " " – " " " "
३ आकाशास्ति० " " – " " " "
४ जीवास्ति० " " – अव्याबाध, अनावगाह, अमूर्त, "
५ पुद्गलास्ति० " " – वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श
६ काल द्रव्य० " " – भूत, भविष्य, वर्तमान, अगुरु लघु

१४ साधारण द्वार–साधारण धर्म जो अन्य द्रव्य में भी पावे, जैसे धर्मास्ति० में अगुरु लघु, असाधारण धर्म जो अन्य द्रव्य में न पावे, जैसे धर्मास्तिकाय में चलन सहाय इत्यादि ।

१५ साधर्मी द्वार–षट् द्रव्यों में प्रति समय उतपाद व्यय है । क्योंकि अगुरु लघु पर्याय में षट् गुण हानि वृद्धि होती है । सो यह छः ही द्रव्यों में समान है ।

१६ परिणामी द्वार–निश्चय नय से छः ही द्रव्य अपने २ गुणों में परिणमते हैं । व्यवहार से जीव और पुद्गल अन्यान्य स्वभाव में परिणमते हैं । जिस प्रकार जीव मनुष्यादि रूपसे और पुद्गल दो प्रदेशी यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध रूप से परिणमता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७ जीव द्वार—जीवास्ति काय जीव है । शेष ५ द्रव्य अजीव हैं।

१८ मूर्ति द्वार—पुद्गल रूपी है। शेष अरूपी हैं कर्म के साथ जीव भी रूपी है।

१९ प्रदेश द्वार—५ द्रव्य सप्रदेशी हैं। काल द्रव्य अप्रदेशी है। धर्म—अधर्म असंख्य प्रदेशी हैं । आकाश (लोकालोक अपेक्षा) अनन्त प्रदेशी है । एकेक जीव असंख्य प्रदेशी हैं। अनन्त जीवों के अनन्त प्रदेश हैं । पुद्गल परमाणु १ प्रदेशी है । परन्तु पुद्गल द्रव्य अनन्त प्रदेशी है।

२० एक द्वार—धर्म, अधर्म, आकाश एकेक द्रव्य हैं। शेष ३ अनन्त हैं।

२१ क्षेत्र क्षेत्री द्वार—आकाश क्षेत्र है। शेष क्षेत्री हैं। अर्थात् प्रत्येक लोकाकाश प्रदेश पर पाँचों ही द्रव्य अपनी २ क्रिया करते हुवे भी एक दूसरे में नहीं मिलते।

२२ क्रिया द्वार—निश्चय से सर्व द्रव्य अपनी २ क्रिया करते हैं। व्यवहार से जीव और पुद्गल क्रिया करते हैं। शेष अक्रिय हैं।

२३ नित्य द्वार—द्रव्यास्तिक नय से सब द्रव्य नित्य हैं। पर्याय अपेक्षा से सब अनित्य हैं । व्यवहार नय से जीव, पुद्गल अनित्य हैं। शेष ४ द्रव्य नित्य हैं।

२४ कारण द्वार—पांचों ही द्रव्य जीव के कारण हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परन्तु जीव किसी के कारण नहीं । जैसे—जीव कर्ता और धर्मा० कारण मिलने से जीव को चलन कार्य की प्राप्ति होवे । इसी प्रकार दूसरे द्रव्य भी समझना ।

२५ कर्ता द्वार—निश्चय से समस्त द्रव्य अपने २ स्वभाव कार्य के कर्ता हैं । व्यवहार से जीव और पुद्गल कर्ता हैं । शेष अकर्ता हैं ।

२६ गति द्वार- आकाश की गति (व्यापकता) लोकालोक में है । शेष की लोक में है ।

२७ प्रवेश द्वार—एक २ आकाश प्रदेश पर पांचों ही द्रव्यों का प्रवेश है । वे अपनी २ क्रिया करते जारहे हैं । तो भी एक दूसरे से मिलते नहीं जैसे एक नगर में ५ मानस अपने २ कार्य करते रहने पर भी एक रूप नहीं होजाते हैं ।

२८ पृच्छा द्वार—श्री गौतम स्वामी श्री वीर प्रभु को सविनय निम्न लिखित प्रश्न पूछते हैं ।

१ धर्मा०के १ प्रदेश को धर्मा०कहते हैं क्या ? उत्तर नहीं (एवंभूत नयापेक्षा) धर्मा० काय के १-२-३, लेकर संख्यात असंख्यात प्रदेश,जहां तक धर्मा० का १ भी प्रदेश बाकी रहे वहां तक उसे धर्मा०नहीं कह सकते सम्पूर्ण प्रदेश मिले हुवे को ही धर्मा० कहते हैं ।

२ किस प्रकार १ एवंभूत नयवाला थोडे भी टूटे हुवे पदार्थ को पदार्थ नहीं माने, अखण्डित द्रव्य को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही द्रव्य कहते हैं । इसी तरह सब द्रव्यों के विषय में भी समझना ।

३ लोक का मध्य प्रदेश कहां है ?

उत्तर रत्न प्रभा १८०००० योजन की है । उसके नीचे २०००० योजन घनोदधि है । उसके नीचे असंख्य योजन घनवायु, असं० यो० तन वायु और असं० यो० आकाश है उस आकाश के असं० भाग में लोक का मध्य भाग है ।

४ अधोलोक का मध्य प्रदेश कहां है, ? उ० पंक-प्रभा के नीचे के आकाश प्रदेश साधिक में ।

५ ऊर्ध्व लोक का मध्य प्रदेश कहां है ? उ० ब्रह्म देवलोक के तीसरे रिष्ट परतल में ।

६ तिर्छे लोक का मध्य प्रदेश कहां है ? उ० मेरु पर्वत के ८ रुचक प्रदेशों में ।

इसी प्रकार धर्मा०, अधर्मा०, आकाशा० काय द्रव्य के प्रश्नोत्तर समझना, जीव का मध्य प्रदेश ८ रुचक प्रदेशों में है, काल का मध्य प्रदेश वर्तमान समय है ।

२६ स्पर्शना द्वार-धर्मास्ति काय अधर्मा० लोकाकाश, जीव और पुद्गल द्रव्य को सम्पूर्ण स्पर्शा रहे हैं । काल को कहीं स्पर्शे, कहीं न स्पर्शे, इसी प्रकार शेष ४ अस्तिकाय स्पर्शे काल द्रव्य २॥ द्वीप में समस्त द्रव्यों को स्पर्शे अन्य क्षेत्र में नहीं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३० प्रदेश स्पर्शना द्वार—

धर्मा० का एक प्रदेश धर्मा० के कितने प्रदेशों को स्पर्शे ? ज.३ प्र.उ.६ प्र.को स्पर्शे
„ „ „ „ अधर्मा० „ „ „ „ „ ? ज.४ प्र. उ.७ प्र.को स्पर्शे
„ „ „ „ आकाशा०„ „ „ „ „ ? ज.७ प्र. उ.७ प्र. „ „
„ „ „ „ जीव-पुद्गल „ „ „ „ „ ? अनंत प्रदेशों का स्पर्शे
„ „ „ काल द्रव्य „ „ „ „ „ ? स्यात् अनन्त स्पर्शे
स्यात् नहीं

एवं अधर्मा० प्रदेश स्पर्शना समझनी।

आकाशा० का १ प्रदेश धर्मा० का ज० १-२-३ प्रदेश, उ० ७ प्रदेश को स्पर्शे. शेष प्रदेश स्पर्शना धर्मास्तिकायवत् जानना।

जीव का १ प्रदेश धर्मा० का ज.४ उ.७ प्रदेश को स्पर्शे
पुद्गल० „ „ „ „ „ „ „ „ „
काल द्रव्य एकसमय „ „ प्रदेश को स्यात् स्पर्शे, स्यात् नहीं
} शेष प्र० स्पर्शना धर्मास्तिकाय वत्

पुद्गल० के २ प्रदेश „ ज० दुगणा से दो अधिक (६) प्रदेश को स्पर्शे और उ० पांच गुणे से २ अधिक ५×२=१०×२=१२ प्रदेश स्पर्शे

इसी प्रकार ३-४-५ जीव अनन्त प्रदेश ज० दुगणे से २ अधिक उ० पांच गुणे से २ अधिक प्रदेश को स्पर्शे।

३१ अल्प बहुत्व द्वारः-द्रव्य अपेक्षा-धर्म, अधर्म आकाश परस्पर तुल्य है, उनसे जीव द्रव्य अनन्त गुणा, उनसे पुद्गल अनन्त गुणा और उनसे काल अनन्त।

प्रदेश-अपेक्षा-सर्व से कम धर्म, अधर्म का प्रदेश उनसे जीव के प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे पुद्गल के प्रदेश

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

अनन्त गुणा, उनसे काल द्रव्य के प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे आकाश--प्रदेश अनन्त गुणा।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अल्पबहुत्वः--सर्व से कम धर्म, अधर्म, आकाश के द्रव्य, उनसे धर्म अधर्म के प्रदेश असंख्यात गुणा। उनसे जीव द्रव्य अनं० उनसे जीव के प्रदेश असं० उनसे पुद्गल द्रव्य अनं० उनसे पु० प्रदेश असं०, उनसे काल के द्रव्य प्रदेश अनं०, उन से आकाश प्रदेश अनन्त गुणा।

॥ इति षट् द्रव्य पर ३१ द्वार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चार ध्यान

ध्यान के ४ भेद- आर्त्त, रौद्र, धर्म और शुक्ल ध्यान

(१) आर्त ध्यान के ४ पाये--१ मनोज्ञ वस्तु की अभिलाषा करे। २ अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चिंतवे। ३ रोगादि अनिष्ट का वियोग चिंतवे ४ पर भव के सुख निमित निआणा करे।

आर्त ध्यान के ४ लक्षण -१ चिंता शोक करना २ अश्रुपात करना ३ आक्रन्द (विलाप) शब्द करके रोना ४ छाती माथा (मस्तक) आदि कूटकर रोना।

(२) रौद्र ध्यान के ४ पाये- हिंसामें, झूठ में, चोरी में, कारागृह में फसाने में आनन्द मानना (ये पाप करके व कराकर के प्रसन्न होना)।

रौद्र ध्यान के ४ लक्षण--१ तुच्छ अपराध पर बहुत गुस्सा करना, द्वेष करना ४ बड़े अपराध पर अत्यन्त क्रोध--द्वेष करे। ३ अज्ञानता से द्वेष करे और ४ जाव-जीव तक द्वेष रक्खे।

(३) धर्म ध्यान के ४ पाये-१ वीतराग की आज्ञा का चिंतवन करे २ कर्म आने के कारण (आश्रव) का विचार करे ३ शुभाशुभ कर्म विपाक को विचारे ४ लोक संस्थान (आकार) का विचार करे।

धर्म ध्यान ४ लक्षण--१ वीतराग आज्ञा की रुचि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ निःसर्ग (ज्ञान से उत्पन्न) रुचि ३ उपदेश रुचि ४ सूत्र-सिद्धान्त-आगम रुचि।

धर्म ध्यान के ४ अवलम्बन-वांचना, पृच्छना परावर्तना और धर्म कथा।

धर्म ध्यान की ४ अनुप्रेक्षा-१एगचाणुपेहा= जीव अकेला आया, अकेला जायगा एवं जीव के अकेले पन (एकत्व) का विचार। २ अणिच्चाणु पेहा=संसार की अनित्यता का विचार ३ असरणाणु पेहा=संसार में कोई किसी को शरण देने वाला नहीं, इसका विचार और ४ संसाराणुपेहा=संसार की स्थिति (दशा का विचार करना।

(४) शुक्ल ध्यान के ४ पाये-१ एक एक द्रव्य में भिन्न भिन्न अनेक पर्याय-उपनेवा, विन्हेवा, धुवेवा, आदि भावों का विचार करना २ अनेक द्रव्यों में एक भाव (अगुरु लघु आदि) का विचार करना। ३ अचलावस्था में तीनों ही योगों का निरोध करना (रोकना) ३ चौदहवें गुणस्थानक की सूक्ष्म क्रिया से भी निवर्तन होने का चिंतवना।

शुक्ल ध्यान के ४ लक्षण-१देवादि के उपसर्ग से चलित न होवे २ सूक्ष्म भाव (धर्म का) सुन ग्लानि न लावे। ३ शरीर- आत्मा को भिन्न २ चिंतवे और ४ शरीर को अनित्य समझ कर व पुद्गल को पर वस्तु जानकर इनका त्याग करे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्ल ध्यान के ४ अवलम्बन-१ क्षमा २ निर्लोभता ३ निष्कपटता ४ मदरहितता ।

शुक्ल ध्यान की ४ अनुप्रेक्षा-१ इस जीव ने अनन्त वार संसार भ्रमण किया है ऐसा विचारे २ संसार की समस्त पौद्गलिक वस्तु अनित्य है। शुभ पुद्गल अशुभ रूपसे और अशुभ शुभ रूप से परिणमते हैं, अतः शुभाशुभ पुद्गलों में आसक्त बन कर राग द्वेष न करना ३ संसार परिभ्रमण का मूल कारण शुभ कर्म है कर्म बन्ध का मूल कारण ४ हेतु हैं। ऐसा विचारे। ४ कर्म हेतुओं को छोड़ कर स्वसत्ता में रमण करने का विचार करना-ऐसे विचारों में तन्मय (एक रूप) हो जाने को शुक्ल ध्यान कहते हैं।

॥ इति ४ ध्यान सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आराधना पद

श्री भगवतीजी सूत्र, शतक ८ उद्देशा १०

आराधना ३ प्रकार की—ज्ञान की, दर्शन (समकित) की और चारित्र की आराधना।

ज्ञानाराधना—उ० १४ पूर्व का ज्ञान, मध्यम ११ अंग का ज्ञान, ज० ८ प्रवचन का ज्ञान।

दर्शनाराधना—उ० क्षायक समकित, मध्यम क्षयोपशम समकित ज० सास्वादान समकित।

चारित्राराधना—उ० यथाख्यात चारित्र, मध्यम परिहार विशुद्ध चारित्र, ज० सामायिक चारित्र।

उ० ज्ञान	आ० में	दर्शन	आ०	दो	(उत्कृष्ट और मध्यम)
उ० "	"	चारित्र	"	"	(" ")
उ० दर्शन	"	"	"	तीन	(ज० म० उ०)
उ० "	"	ज्ञान	"	"	(")
उ० चारित्र"	"	"	"	"	(")
उ० "	"	दर्शन	"	"	(")

उ० ज्ञान	" वाला	ज०	१ भव करे,	उ०		२	भव करे
म० "	"	"	२ "	"	"	३	" "
ज० "	"	"	३ "	"	"	१५	" "

दर्शन और चारित्र की आराधना भी ऊपर अनुसार।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

जीवों में ज्ञान, दर्शन और चारित्र की आराधना उत्कृष्ट, मध्यम, और जघन्य रीति से हो सकती है। इस पर निम्न लिखित १७ भांगा (प्रकार) हो सकते है।

(इनके चिह्न–उ० ३, म० २, ज० १, समझना,
क्रम–ज्ञान, दर्शन, चारित्र समझना)

३–३–३	२–३–२	२–१–२	१–३–१
३–३–२	२–३–१	२–१–१	१–२–२
३–२–२	२–२–२	१–३–३	१–२–१
२–३–३	२–२–१	१–३–२	१–१–२
			१–१–१

❀ इति आराधना पद सम्पूर्ण ❀

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

विरह पद

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, ६ ठा० पद)

ज० विरह पड़े १ समय का, उ० विरह पड़े तो समुच्य ४ गति, संज्ञी मनुष्य और संज्ञी तिर्यंच में १२ मुहूर्त का १ ली नरक, १० भवनपति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी, १-२ देवलोक और असंज्ञी मनुष्य में २४ मुहूर्त का दूसरी नरक में ७ दिन का, तीसरी नरक में १५ दिन का, चौथी नरक में १ माह का, पांचवी नरक में २ माह का, छट्ठी में ४ माह का और सातवी नरक में, सिद्ध गति तथा ६४ इन्द्रों में विरह पड़े तो ६ माह का।

तीसरे देवलोक में ९ दिन २० मुहूर्त का, चौथे देवलोक में १२ दिन १० मु०
पांचवें ,, २२ ,, १५ ,, छट्ठे ,, ४५ दिन
सातवें ,, ८० ,, का आठवें ,, १००
९—१० ,, सैंकड़ों माह का ११-१२ ,, सैंकड़ों वर्षों का
१ ली त्रिक में सं०सैंकड़ों वर्षों का, दूसरी त्रिक में सं० हजारों वर्षों का
तीसरी ,, ,, लाखों ,, चार अनुत्तर विमान में पल्य के असंख्यातवें भाग का और सर्वार्थ सिद्ध में पल्य के संख्यातवें भाग का विरह पड़े।

५ स्थावर में विरह नहीं पड़े, ३ विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यंच में अन्तर्मुहूर्त का विरह पड़े चन्द्र सूर्य ग्रहण का विरह पड़े तो ज० ६ माह का उ० चन्द्र का ४२ माह का और सूर्य का ४८ वर्ष का पड़े भरत क्षेत्र में साधु साध्वी, श्रावक, श्राविका का विरह पड़े तो ज० ६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हजार वर्ष का। और अरिहंत, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेवों का० ज० ८४ हजार वर्ष का, उ० देश उणा १८ क्रोड़ा-क्रोड़ सागरोपम का विरह पड़े।

❀ इति विरह पद सम्पूर्ण ❀

संज्ञा पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, आठवाँ पद)

संज्ञा-जीवों की इच्छा संज्ञा १० प्रकार की है। आहार, भय, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, लोक और ओघ संज्ञा।

आहार संज्ञा-४ कारण से उपजे-१ पेट खाली होने से २ क्षुधा वेदनीय के उदय से ३ आहार देखने से ४ आहार की चिंतवना करने से।

भय संज्ञा-४ कारण से उपजे- १ अधैर्य रखने से २ भय मोह के उदय से ३ भय उत्पन्न करने वाले पदार्थ देखने से ४ भय की चिंतवना करने से।

मैथुन संज्ञा ४ कारण से उपजे-१ शरीर पुष्ट बनाने से २ वेद मोह के कर्मोदय से ३ स्त्री आदि को देखने से ४ काम भोग का चिंतवन करने से।

परिग्रह संज्ञा ४ कारण से उपजे—१ ममत्व बढाने से २ लोभ मोह के उदय से ३ धन संपति देखने से ४ धन परिग्रह का चिंतवन करने से।

क्रोध, मान माया, लोभ संज्ञा ४ कारण से उपजे-१ क्षेत्र (खुली जमीन) के लिये २ वस्तु (ढंकी हुई जमीन मकानादि) के लिये, ३ शरीर-उपाधि के लिये ४ धन्य धान्यादि औषधि के लिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक संज्ञा-अन्य लोगों को देख कर स्वयं वैसा ही कार्य करना।

ओघ संज्ञा-शून्य चित्त से विलाप करे, घास तोड़े पृथ्वी (जमीन) खोदे आदि।

नरकादि २४ दण्डक में दश दश संज्ञा होवे। किसी में सामग्री अधिक मिल जाने से प्रवृत्ति रूप से है। किसी में सत्ता रूप से है, संज्ञा का अस्तित्व छठे गुणस्थान तक है। इनका अल्प बहुत्व-

आहार, भय, मैथुन, और परिग्रह संज्ञा का अल्प बहुत्व

नारकी में सर्व से कम मैथुन, उस से आहार सं० उस से परिग्रह सं० भय सं०, संख्या० गुणी।

तिर्यंच में सर्व से कम परिग्रह उससे मैथुन सं० भय सं०, आहार संख्या० गुणी।

मनुष्य में सर्व से कम भय उससे आहार सं०, परिग्रह सं०, मैथुन संख्या० गुणी।

देवता में सर्व से कम आहार उस से भय सं०, मैथुन सं०, परिग्रह संख्या० गुणी।

क्रोध, मान, माया और लोभ संज्ञाका अल्प बहुत्व

नारकी में सर्व से कम लोभ, उससे माया सं० मान सं० क्रोध संख्या० गुणी।

तिर्यंच में सर्व से कम मान; उस से क्रोध विशेष; माया विशेष लोभ विशेष अधिक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य में सर्व से कम मान उस से क्रोध विशेष, माया विशेष लोभ विशेष अधिक।

देवता में सर्व से कम क्रोध उस से मान संज्ञा, माया संज्ञा, लोभ संख्या० गुणा।

॥ इति संज्ञा पद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* वेदना--पद *

(श्री पन्नवणाजी सूत्र ३५ वां पद)

जीव सात प्रकार से वेदना वेदे-१ शीत २ द्रव्य ३ शरीर ४ शाता ५ असाता(दुख) ६ अभूगर्माया ७ निन्दा द्वार।

१ वेदना३ प्रकार की--शीत, उष्ण और शीतोष्ण समुच्चय जीव ३ प्रकार की वेदना वेदे । १--२--३ नारकी में उष्ण वेदना वेदे । कारण नेरिया शीत योनिया हैं)। चौथी नारकी (नरक) में उष्ण वेदना के वेदक अनेक (विशेष), शीत वेदना वाला कम । (दो वेदका) पांचवी नारकी में उष्ण वेदना के वेदक कम, शीत वेदना के वेदक विशेष । छट्ठी नरक में शीत वेदना और सातवीं नरक में महाशीत वेदना है शेष २३ दण्डक में तीनों ही प्रकार की वेदना पावे ।

२ वेदना चार प्रकार की--द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से । समुच्चय जीव और २४ दण्डक में चार प्रकार की वेदना वेदी जाती है ।

द्रव्य वेदना=इष्ट अनिष्ट पुद्गलों की वेदना । क्षेत्र वेदना=नरकादि शुभाशुभ क्षेत्र की वेदना । काल वेदना= शीत उष्ण काल की वेदना । भाव वेदना=मंद तीव्र रस (अनुभाग) की ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

३ वेदना तीन प्रकार की--शारीरिक, मानसिक और शारीरिक--मानसिक। समुच्चय जीव में ३ प्रकार की वेदना। संज्ञी के १६ दण्डक में ३ प्रकार की। स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय में १ शारीरिक वेदना।

४ वेदना ३ प्रकार की--शाता, अशाता और शाता-अशाता। समुच्चय जीव और २४ दण्डक में तीनों ही वेदना होती है।

५ वेदना ३ प्रकार की—सुख, दुख और सुख-दुख समुच्चय और २४ दण्डक में तीन ही प्रकार की वेदना वेदी जाती है।

६ वेदना २ प्रकार की—उदीरणा जन्य (लोच तपश्चर्यादि से); २ उदय जन्य (कर्मोदय से) तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में दोनों ही प्रकार की वेदना; शेष २२ दण्डक में उदय जन्य (औपक्रमीय) वेदना होवे।

७ वेदना २ प्रकार की निंदा और अनिंदा। नारकी, १० भवनपति और व्यन्तर एवं १२ दण्डक में दो वेदना। संज्ञी निंदा वेदे। असंज्ञी अनिंदा वेदे। (संज्ञी असंज्ञी मनुष्य, तिर्यंच में से मर कर गये इस अपेक्षा समझना)।

पांच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय अनिंदा वेदना वेदे (असंज्ञी होने से)। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में दोनों प्रकार की वेदना, ज्योतिषी और वैमानिक में दोनों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार की वेदना । कारण कि दो प्रकार के देवता हैं ।

१ अमायी सम्यक दृष्टि--निंदा वेदना वेदते हैं ।

२ मायी मिथ्यादृष्टि-अनिंदा वेदना वेदते हैं ।

*** इति वेदना पद सम्पूर्ण ***

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

-:समुद्घात-पद:-

(श्री पन्नवणाजी सूत्र ३६ वाँ पद)

जीव के लिये हुवे पुद्गल जिस जिस रूप से परिणमते हैं उन्हें उस उस नामसे बताया गया है । जैसे कोई पुद्गल वेदनी रूप परिणमे, कोई कषाय रूप परिणमें, इन ग्रहण किये हुवे पुद्गलों को सम और विषम रूप से परिणाम होने को समुद्घात कहते हैं ।

१ नाम द्वार—वेदनी, कषाय, मरणान्तिक, वैक्रिय तैजस्, आहारिक और केवली समुद्घात । ये सात समुद्घात २४ दण्डक ऊपर उतारे जाते हैं ।

समुच्चय जीवों में ७ समु०, नारकी में ४ समु. प्रथम की, देवता के १३ दण्डक में ५ समुद्घात प्रथम की, वायु में ४ समु० प्रथम की, ४ स्थावर ३ विकलेन्द्रिय में ३ समु० प्रथम की, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ५ प्रथम की, मनुष्य में ७ समुद्घात पावे ।

२ काल द्वार—६ समु० का काल असंख्यात समय और केवली समुद्घात का काल ८ समय का ।

(३) २४ दण्डक एकेक जीव की अपेक्षा--वेदनी, कषाय, मरणान्तिक, वैक्रिय और तैजस् समु० २४ दण्डक में एक एक जीव भूतकाल में अनन्ती करी और भविष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में कोई करेगा, कोई नहीं करेगा। करे तो १--२--३ वार संख्यात, असंख्यात और अनन्त करेगा।

आहारिक समु० २३ दण्डक में एकेक जीव भूत काल में स्यात् करे, स्यात् न करे। यदि करे तो १--२--३ वार, भविष्य में जो करे तो १--२--३--४ वार करेगा। मनुष्य दण्डक के एकेक जीव भूत काल में की होवे तो १--२--३--४ वार की, शेष पूर्व वत्। केवली समु० २३ दण्डक के एकेक जीव भूतकाल में करे तो १ वार करेगा। मनुष्य में की होवे तो भूत में १ वार, व भविष्य में भी एक वार करेगा।

४ अनेक जीव अपेक्षा २४ दण्डक-पांच (प्रथम की) समु० २४ दण्डक के अनेक जीवों ने भूतकाल में अनन्ती करी भविष्य में अनन्ती करेगा।

आहारिक समु० २२ दण्डक के अनेक जीव आश्री भूतकाल में असंख्याती करी और भविष्य में असंख्याती करेगा। वनस्पति में भूत भविष्य की अनन्ती कहनी मनुष्य में भूत-भविष्य की स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती कहनी।

केवली समु० २२ दण्डक में भूतकाल में नहीं भविष्य में असंख्याती करेगा, वनस्पति में भूतकाल में नहीं करी भविष्य में अनन्त करेगा मनुष्य के अनेक जीव भूत में करी होवे तो १-२-३ उ० प्रत्येक सौ वार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भविष्य में स्यात संख्याती स्यात् असंख्याती करेगा।

५ परस्पर की अपेक्षा २४ दण्डक-एक एक नेरिया भूतकाल में नेरिया रूप में अनन्ती वेदनी समु० करी भविष्य में कोई करेगा, कोई नहीं करेगा, जो करेगा तो १-२-३ संख्याती, असंख्याती अनंती करेगा एवं एकेक नेरिया, असुर कुमार रूप में यावत् वैमानिक देव रूप से कहना।

एकेक असुर कुमार रूप में वेदनी समु० भूतकाल में अनन्ती करी, भविष्य में करे तो जाव अनंती करेगा असुर कुमार देव असुर कुमार रूप में वेदनी समु० भूत में अनंती करी, भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा एवं वैमानिक तक कहना और ऐसे ही २४ दण्डक में समझना।

कषाय समु० एकेक नेरिया नेरिया रूप से भूत में अनंती करी भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा एकेक नेरिया असुर कुमार रूप से भूतकाल में अनंती करी भविष्य में करे तो संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा ऐसे ही व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक रूप से भी भविष्य में करे तो असंख्याती व अनंती करेगा।

उदारिक के १० दण्डक में भूतकाल में अनंती करी भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनंती करे एवं भवनपति का भी कहना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेक पृथ्वी काय के जीव नारकी रूप से कषाय समु० भूत काल में अनंती करी और भविष्य में करेगा तो स्यात् संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा एवं भवन पति, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक रूप से भी भविष्य में असंख्याती, अनंती करेगा उदारिक के १० दण्डक में भविष्य में स्यात् १-२-३ जाव संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा। एवं उदारिक के १० दण्डक, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक असुर कुमार के समान समझना!

एकेक नेरिया नेरिये रूप से मरणांतिक समु० भूत में अनंती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ संख्याती जाव अनंती करेगा एवं २४ दण्डक कहना परन्तु स्वस्थान परस्थान सर्वत्र १-२-३ कहना, कारण मरणांतिक समु० एक भव में एक ही बार होती है।

एकेक नेरिया नेरिये रूप से वैक्रिय समु० भूत काल में अनंती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा। ऐसे ही २४ दण्डक, १७ दण्डक पने कषाय समु० समान करे सात दण्डक (४ स्थावर ३ विकले-न्द्रिय) में वैक्रिय समु० नहीं।

एकेक नेरिया नेरिये रूप से तैजस समु० भूत में नहीं करी, भविष्य में नहीं करेगा।

एकेक नेरिया असुर कुमार रूप से भूत काल में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तैजस समु० अनंती करी और भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा एवं तैजस् समु० १५ दण्डक में मरणांतिक अनुसार।

आहारिक समु० मनुष्य सिवाय २३ दण्डक के जीवों ने अपने तथा अन्य २३ दण्डक रूप से नहीं करी और न करेगें, एकेक २३ दण्डक के जीव ने मनुष्य रूप से आहारिक समु० जो करी होवे तो १-२-३ और भविष्य में जो करे तो १-२-३-४ वारं करेंगे।

केवली समु० मनुष्य सिवाय २३ दण्डक के जीवों ने अपने तथा अन्य २३ दण्डक रूप से भूत काल में नहीं करी और न भविष्य में करेंगे, मनुष्य रूप से भूत काल में नहीं की और भविष्य में करें तो १ वार करेंगे। एकेक मनुष्य २३ दण्डक रूपसे केवली समु० करी नहीं और करेंगे भी नहीं। एकेक मनुष्य मनुष्य रूप से केवली समु० करी होवे तो १ वार और करेगें तो भी १ वार।

६ अनेक जीव परस्परः-अनेक नेरियों ने नेरिये रूप से वेदनीय समु० भूत में अनंती करी, भविष्य में अनंती करेगें एवं २४ दण्डकों का समझना। शेष २३ दण्डक में भी नारकी वत्। वेदनी के समान ही कषाय, मरणांतिक, वैक्रिय और तैजस् समु० का समझना परन्तु वैक्रिय समु० १७ दण्डक में और तैजस समु० १५ दण्डक में कहनी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक नेरिये २३ दण्डक (मनुष्य सिवाय) रूप से आहा० समु० न की, न करेंगें, मनुष्य रूप से भूतकाल में असं० की, भविष्य में असं० करेगें । एवं २३ दण्डक (वनस्पति सिवाय) रूप से भी समझना । वनस्पति में अनंती कहनी ।

एकेक मनुष्य २३ रूप से आहा० समु० की नहीं और करेगें भी नहीं । मनुष्य रूप से भूत काल में स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती की और भविष्य में भी करें तो स्यात् संख्या०, स्यात् असं० करेगें ।

अनेक नरकादि २३ दण्डक के जीवों ने अनेक नरकादि २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नहीं और करेंगे भी नहीं मनुष्य रूप से की नहीं, जो करे तो संख्या० असं० करेगें ।

अनेक मनुष्यों ने २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नहीं, व करेगें भी नहीं । और मनुष्य रूप से की होवे तो स्यात् संख्याती की । भविष्य में करें तो स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती करेगें ।

(७) अल्प बहुत्व द्वार ।

समुच्चय अल्प बहुत्व	नरक का अल्प बहुत्व
	१ सर्व से कम मर०स.वाले
१ सर्व से कम आहा. समु. वाले	२ उनसे वैक्रिय समु.अ.गु.
२ केवली समु. वाले संख्या. गुणा	३ ,, कषाय ,, संख्या. ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ तैजस ,, ,, असंख्य. ,,
४ वैक्रिय ,, ,, ,, ,,
५ मरणांतिक ,, ,, अनंत ,,
६ कषाय ,, ,, असं० ,,
७ वेदनी ,, ,, विशेष ,,
८ असमोहिया ,, ,, असं. ,,

४ ,, वेदनी ,, ,, ,,
५ ,, असमो. ,, ,, ,,

देवता का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम तै. समु. वाले
२ उनसे मर. स. वाले अ. गु.
३ ,, वेदनी समु. वाले ,, ,,
४ ,, कषाय ,, ,, संख्या. ,,
५ ,, वैक्रिय ,, ,, ,, ,,
६ ,, असमोहिया ,, ,, ,, ,,

मनुष्य का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम आहा. समु. वाले
२ उनसे के. समु. संख्या. गुणा
३ तैजस ,, ,, असंख्या. ,,
४ ,, वैक्रिय ,, ,, संख्या. ,,
५ ,, मरणांतिक ,, ,, असं. ,,
६ ,, वेदनी ,, ,, ,, ,,
७ ,, कषाय ,, ,, संख्या. ,,
८ ,, असमोहिया ,, ,, ,, ,,

तिर्यंच पंचेन्द्रिय का अ. ब.

१ सर्व से कम तै. समु. वाले
२ उनसे वै. समु. वाले अ. गु
३ ,, मरणांतिक ,, ,, ,, ,,
४ ,, वेदनी ,, ,, ,, ,,
५ ,, कषाय ,, ,, ,, ,,
६ ,, असमो. ,, ,, ,, ,,

पृथ्व्यादि ४ स्था० का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम मरणांतिक समु० वाले
२ उनसे कषाय समु० वाले संख्या० गुणा
३ ,, वेदनी ,, ,, विशेषाइया
४ ,, असमोहिया ,, ,, असंख्या० ,,

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

वायु काय का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम वैक्रिय समु० वाले

२ उनसे मरणांतिक समु० वाले असं. गुणा

३ ,, कषाय० ,, संख्या० ,,

४ ,, वेदनी ,, विशेषइया

५ ,, असमोहिया ,, असं० गुणा

विकलेन्द्रिय का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम मरणांतिक समुद्घात वाले

२ उनसे वेदनी समुद्घात वाले असंख्यात गुणा

३ ,, कषाय ,, ,, संख्यात ,,

४ ,, असमोहिया ,, ,, असंख्यात ,,

॥ इति समुद्घात पद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपयोग पद

(श्री पन्नवणाजी सूत्र २९ वां पद)

उपयोग २ प्रकार का-१ साकार उपयोग २ निराकार उपयोग १ साकार उपयोग के ८ भेदः- ५ ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यव और केवल ज्ञान) और ३ अज्ञान (मति, श्रुत, अज्ञान, विभंग ज्ञान) अनाकार उप० ४ प्रकार का-चक्षु, अचक्षु, अवधि और दर्शन २४ दण्डक में कितने २ उपयोग पाये जाते हैं—

दण्डक	नाम	उपयोग	आकार	अनाकार
	समुच्चय जीवों में	२	८	४
१	नारकी में	२	६	३
१३	देवता में	२	६	३
५	स्थावर में	२	२	१
१	बेइन्द्रिय में	२	४	१
१	तेइन्द्रिय में	२	४	१
१	चौरेन्द्रिय में	२	४	२
१	तिर्यंच पंचेन्द्रिय में	२	६	३
१	मनुष्य में	२	८	४

❀ इति उपयोग पद सम्पूर्ण ❀

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

उपयोग अधिकार

(श्री भगवतीजी सूत्र शतक १३ उद्देशा १-२)

उपयोग १२—५ ज्ञान, ३ अज्ञान और ४ दर्शन एवं १२ उपयोग में से जीव किस गति में कितने साथ ले जाते हैं, व लाते हैं इसका वर्णन—

(१) १—२—३ नरक में जाते समय ८ उपयोग (३ ज्ञान, ३ अज्ञान, २ दर्शन—अचक्षु और अवधि) लेकर आवे और ७ उपयोग लेकर (ऊपर में से विभंग छोड़ कर) निकले ४-५-६ नरक में ८ उपयोग (ऊपरवत्) लेकर आवे और ५ उपयोग (२ ज्ञान २ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन) लेकर निकले ७ वीं नरक में ५ उपयोग (३ ज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग (२ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन) लेकर निकले।

(२) भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी देव में ८ उपयोग (३ ज्ञान ३ अज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ५ उपयोग (२ ज्ञान २ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन) लेकर निकले १२ देवलोक ६ ग्रीयवेक में ८ उपयोग लेकर आवे और ७ उपयोग (विभंग ज्ञान छोडकर) लेकर निकले अनुत्तर विमान में ५ उपयोग (३ ज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और येही ५ उपयोग लेकर निकले।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) ५ स्थावर में ३ उपयोग (२ अज्ञान १ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग लेकर निकले ३ विकलेन्द्रिय में ५ उपयोग (२ ज्ञान २ अज्ञान १ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग (२ अज्ञान १ दर्शन) लेकर निकले, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ५ उपयोग लेकर आवे और ८ उपयोग लेकर निकले मनुष्य में ७ उपयोग (३ ज्ञान २ अज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ८ उपयोग लेकर निकले सिद्ध में केवल ज्ञान, केवल दर्शन लेकर आवें और अनंत काल तक आनन्दघन रूप से शाश्वता विराजमान होवे।

❀ इति उपयोग अधिकार सम्पूर्ण ❀

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

नियंठा

निर्ग्रंथों पर ३६ द्वार-भगवती सूत्र शतक २५ उद्देशा छठा-१ पन्नवणा (प्ररूपणा) २ वेद ३ राग (सरागी) ४ कल्प ५ चारित्र ६ पडिसेवन (दोष सेवन) ७ ज्ञान ८ तीर्थ ९ लिंग १० शरीर ११ क्षेत्र १२ काल १३ गति १४ संयम स्थान १५ (निकासे) चारित्र पर्याय १६ योग १७ उपयोग १८ कषाय १९ लेश्या २० परिणाम (३) २१ बन्ध २२ वेद २३ उदीरणा २४ उपसंपझाण (कहां जावे ?) २५ संज्ञाबहुत्ता २६ आहार २७ भव २८ आगरेस (कितनी वार आवे ?) २९ काल स्थिति ३० आन्तरा ३१ समुद्घात ३२ क्षेत्र (विस्तार) ३३ स्पर्शना ३४ भाव ३५ परिणाम (कितने पावे ?) और ३६ अल्प बहुत्व द्वार ।

१ पन्नवणा द्वार-निर्ग्रंथ (साधु) ६ प्रकार के प्ररूपे गये हैं यथा—१ पुलाक २ वकुश ३ पडिसेवणा (ना) ४ कषाय कुशील ५ निर्ग्रंथ ६ स्नातक ।

१ पुलाक-चावल की शाल समान जिसमें सार वस्तु कम और भूसा विशेष होता है । इसके दो भेद-१ लब्धि पुलाक कोई चक्रवर्ती आदि किसी जैन मुनि की अथवा जिन शासन आदि की अशातना करे तो उसकी सेना आदि को चकचूर करने के लिये लब्धि का प्रयोग करे

उसे पुलाक लब्धि कहते हैं । २ चारित्र पुलाक इसके ५ भेद-ज्ञान पुलाक, दर्शन पुलाक, चारित्र पुलाक, लिंग पुलाक (अकारण लिंग-भेष बदले) और अह सुहम्म पुलाक (मन से भी अकल्पनीय वस्तु भोगने की इच्छा करे ।)

वकुश-खले में गिरी हुई शाल वत् इसके ५ भेद-१ आभोग (जान कर दोष लगावे) २ अनाभोग (अजानता दोष लगे) संवुडा (प्रकट दोष लगे) ४ असंवुडा (गुप्त दोष लगे) ५ अहासुहम्म (हाथ मुंह धोवे, कज्जल आंजे इत्यादि)

३ पडिसेवण--शाल के उफने हुवे खले के समान इसके ५ भेदः- १ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र में अतिचार लगावे ४ लिंग बदले ५ तप करके देवादि की पदवी की इच्छा करे ।

४ कषाय कुशील- फोंतरे वाली-कचरे बिना की शाल समान इसके ५ भेद-१ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र में कषाय करे ४ कषाय करके लिंग बदले ५ तप करके कषाय करे ।

५ निर्ग्रंथ-फोंतरे निकाली हुई व खण्डी हुई शालवत् इसके ५ भेद-१ प्रथम समय निर्ग्रंथ (दशवें गुण० से ११ वें तथा १२ वें गुण० पर चढ़ता प्रथम समयका) २ अप्रथम समय निर्ग्रंथ (११-१२ गुण० में दो समय से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अधिक हुवा हो) ३ चरम समय (एक समय छद्मस्थपन का बाकी रहाहो) अचरम समय (दो समय से अधिक समय जिसकी छद्मस्थ अवस्था बाकी बची होवे) और ५ अहासुम्म निर्ग्रंथ (सामान्य प्रकारे वर्ते)

६ स्नातक--शुद्ध, अखण्ड, चावल समान, इसके ५ भेद, १ अच्छवी (योग निरोध) २ असबले (सबले दोष रहित) ३ अकम्मे (घातिक कर्म रहित) ४ संशुद्ध (केवली) और ५ अपरिस्सवी (अबंधक)

२ वेद द्वार-१ पुलाक पुरुष वेदी और नपुंसक वेदी २ वकुश पु० स्त्री० नपुं० वेदी ३ पडिसेवणा-तीन वेदी ४ कषाय-कुशील तीन वेदी और अवेदी (उपशान्त तथा क्षीण) ५ निर्ग्रंथ अवेदी (उपशान्त उथा क्षीण) और ६ स्नातक क्षीण अवेदी होवे।

३ राग द्वार-४ निर्ग्रंथ सरागी, निर्ग्रंथ (पांचवाँ) वीतरागी (उपशान्त तथा क्षीण) और स्नातक क्षीण वीतरागी होवे।

४ कल्प द्वार-कल्प पांच प्रकार का (स्थित, अस्थित, स्थिवर, जिन कल्प और कल्पातीत) पालन होता है। इसके १० भेद (प्रकार)—१ अचेल, २ उद्देशी, ३ राज पिंड, ४ सेज्जान्तर, ५ मास कल्प, ६ चोमासी कल्प, ७ व्रत, ८ प्रतिक्रमण ९ कीर्ति धर्म १० पुरुषा ज्येष्ट।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं १० कल्पों में से प्रथम का और अन्तका तीर्थंकर के शासन में स्थित कल्प होते हैं शेष २२ तीर्थंकर के शासन में अस्थित कल्प हैं उक्त १० कल्पों में से ४-७ ६-१० एवं ४ स्थित कल्प हैं और १-२-३-५-६-८ अस्थित कल्प है।

स्थिवर कल्प=शास्त्रोक्त वस्त्र-पात्रादि रक्खे।

जिन कल्प=ज. २ उ. १२ उपकरण रक्खे।

कल्पातीत=केवली, मनः पर्यव, अवधि ज्ञानी, १४ पूर्व धारी, १० पूर्व धारी, श्रुत केवली और जातिस्मरण ज्ञानी।

पुलाक=स्थित, अस्थित और स्थिवर कल्पी होवे।

वकुश और पडिसेवणा नियंठा में कल्प ४, स्थित, अस्थित, स्थिवर और जिन कल्पी।

कषाय कुशील में ५ कल्प-ऊपर के ४ और कल्पातीत निर्ग्रंथ और स्नातक-स्थित, अस्थित और कल्पातीत में होवे।

५चरित्र द्वार-चारित्र ५ हैं। सामायिक २ छेदोपस्थापनीय ३ परिहार विशुद्ध ४ सूक्ष्म संपराय ५ यथाख्यात पुलाक, वकुश, पडिसेवणा में प्रथम दो चारित्र। कषाय-कुशील में ४ चारित्र और निर्ग्रंथ, स्नातक में यथाख्यात चारित्र होवे।

६ पडिसेवण द्वार-मूल गुण पडि। (महाव्रत में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोष) और उत्तर गुणपडि । (गोचरी आदि में दोष); पुलाक, वकुश, पडिसेवणा में मूल गुण, उत्तर गुण दोनों की पडि० शेष तीन नियंठा अपडिसेवी । (व्रतों में दोष न लगावे) ।

७ ज्ञान द्वार–पुलाक, वकुश, पडिसेवणा नियंठा में दो ज्ञान तथा तीन ज्ञान, कषाय कुशील और निर्ग्रंथ में २--३--४ज्ञान और स्नातक में केवल ज्ञान । श्रुत ज्ञान आश्रीपुलाक के ज० ९ पूर्व न्यून, उ० ९ पूर्व पूर्ण, वकुश और पडिसेवणा के ज० ८ प्रवचन । उ० दश पूर्व० कषाय कुशील तथा निर्ग्रंथ के ज० ८ प्रवचन, उ० १४ पूर्व स्नातक सूत्र व्यतिरिक्त ।

८ तीर्थ द्वार--पुलाक, वकुश, पडिसेवणा तीर्थ में होवे । शेष तीन तीर्थ में और अतीर्थ में होवे । अतीर्थ में प्रत्येक बुद्ध आदि होवे ।

९ लिंग द्वार--ये ६ नियंठा (साधु) द्रव्य लिंग अपेक्षा स्वलिंग, अन्य लिंग अपेक्षा गृहस्थ लिंग में होवे। भावापेक्षा स्वलिंग ही होवे ।

१० शरीर द्वार--पुलाक, निर्ग्रंथ, और स्नातक में ३ (औ० तै० का०), वकुश, पडिसे० में ४ (औ० वै० तै० का०), कषाय कुशील में ५ शरीर ।

११ क्षेत्र द्वार--६ नियंठा जन्म अपेक्षा १५ कर्म–भूमि में होवे । संहरण अपेक्षा । ५ नियंठा (पुलाक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिवाय) कर्म भूमि और अकर्म भूमि में होवे । प्रसंगोपात पुलाक लब्धि आहारिक शरीर, साध्वी, अप्रमादी, उपशम श्रेणी वाले, क्षपक श्रेणीवाले और केवली होने बाद संहरण नहीं हो सके ।

१२ काल द्वार--पुलाक, निर्ग्रंथ और स्नातक अवस० काल में तीसरे चोथे आरे में जन्मे और ३-४--५ वें आरे में प्रवर्ते० उत्स० काल में २--३--४ आरे में जन्में और ३-४ थे आरे में प्रवर्ते । महा विदेह में सदा होवे ।

पुलाक का संहरण नहीं होवे, परन्तु निर्ग्रंथ, स्नातक संहरण अपेक्षा अन्य काल में भी होवें । वकुश पडिसेवण और कषाय कुशील अवस० काल के ३--४--५ आरे में जन्मे और प्रवर्ते । उत्स० काल के २--३--४आरे में जन्मे और ३-४ आरे में प्रवर्ते महाविदेह में सदा होवे ।

नाम	गति		स्थिति	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	सुधर्म देव०	सहस्त्रार दे०	प्रत्येक पल्य.	१८सा.
वकुश	" "	अच्युत "	"	२२ "
पडिसेवण	" "	" "	"	२२ "
कषाय कुशील	" "	अनुत्तर विमान	"	३३ "
निर्ग्रंथ	अनुत्तरविमान	सार्वार्थ सिद्ध	३१ सागर	३३ "
स्नातक	" "	मोक्ष	३३ "	३३ "

देवताओं में ५ पदवियें हैं—१ इन्द्र २ लोकपाल ३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रयत्रिंशक ४ सामानिक ५ अहमिन्द्र। पुलाक, वकुश, पडि सेवण, प्रथम ४ पदवी में से १ पदवी पावे। कषाय कुशील ५ पदवी में से १ पावे, निर्ग्रंथ अहमिन्द्र होवे- स्नातक आराधक अहमिन्द्र होवे तथा मोक्ष जावे. विराधक ज० विरा० होवे तो ४ पदवी में से १ पदवी पावे० उ० वि० २४ दण्डक में भ्रमण करे।

१४ संयम द्वार-संख्याता स्थान असंख्याता है। चार नियंठा में असंख्याता संयम स्थान और निर्ग्रंथ, स्नातक में संयम स्थान एक ही होवे। सर्व से कम नि० स्ना० के सं० स्था०। उनसे पुलाक के सं० स्था० असंख्यात गुणा० उनसे वकुश के सं० स्था० असंख्यात गुणा, उनसे पडि सेवण सं० स्था० असंख्यात गुणा० उनसे कषाय कुशील का सं० स्था० असंख्यात गुणा।

१५ निकासे-(संयम का पर्याय) द्वार-सर्वों का चारित्र पर्याय अनन्ता अनन्ता, पुलाक से पुलाक का चारित्र पर्याय परस्पर छठाणवलिया। यथा:-

१ अनन्त भाग हानि, २ असंख्य भाग हानि, ३ संख्यात भाग हानि।

४ संख्यात भाग हानि ५ असंख्य भाग हानि ६ अनन्त भाग हानि।

१ अनन्त ,, वृद्धि २ ,, ,, वृद्धि ३ संख्यात ,, वृद्धि

४ संख्यात ,, ,, ५ ,, ,, ,, ६ अनन्त ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुलाक--वकुश, पडिसेवण से अनन्त गुणा हीन। कषाय कुशील छठाणवलिया। निर्ग्रन्थ, स्नातक से अनन्त गुणा हीन वकुश, पुलाक से अनन्त गुणा वृद्धि। वकुश वकुश से छठाण वलिया, वकुश–पडिसेवण, कषाय कुशील से छठाणवलिया। निर्ग्रन्थ स्नातक से अनन्त गुण हीन।

पडिसेवण, वकुश समान समझना० कषाय कुशील चार नियंठा (पुलाक, वकुश, पडिसे० कषाय कुशील) से छठाण वलिया और निर्ग्रन्थ स्नातक से अनन्त गुण हीन।

निर्ग्रन्थ प्रथम ४ नियंठा से अनन्त गुण अधिक० निर्ग्रन्थ स्नातक को निर्ग्रन्थ समान (ऊपर वत्) समझना।

अल्प बहुत्व–पुलाक और कषाय कुशील का ज० चारित्र पर्याय परस्पर तुल्य० उनसे पुलाक का उ० चा० प० अनन्त गुणा, उनसे वकुश और पडिसेवण का ज० चा० प० परस्पर तुल्य और अनन्त गुणा, उनसे वकुश का उ० चा पर्याय अनन्त गुणा० उनसे निर्ग्रंथ और स्नातक का ज० उ० चा० पर्याय परस्पर तुल्य और अनन्त गुणा।

१६ योग द्वार–५ नियंठा सयोगी और स्नातक सयोगी तथा अयोगी।

१७ उपयोग द्वार–६ नियंठाओं में साकार-निराकार दोनों प्रकार का उपयोग।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८ कषाय द्वार—प्रथम ३ नियंठा में सकषायी (संज्वलन का चोक) कषाय कुशील में सज्वलन ४ ३-२ १ निर्ग्रंथ अकषायी (उपशम तथा क्षीण) और स्नातक अकषायी (क्षीण)

१९ लेश्या द्वार—पुलाक, वकुश, पडिसेवण में ३ शुभ लेश्या, कषाय कुशील में ६ लेश्या, निर्ग्रन्थ में शुक्ल लेश्या स्नातक में शुक्ल लेश्या अथवा अलेशी ।

२० परिणाम द्वार—प्रथम नियंठा में तीन परिणाम १ हायमान २ वर्धमान ३ अवस्थित-१ घटता २ बढता ३ समान) हाय वर्ध की स्थिति ज० १ समयकी उ० अं० मु० अवस्थित की ज० १ समय उ० ७ समय की, निर्ग्रंथ में वर्धमान परिणाम अवस्थित में २ परिणाम स्थिति ज०१ समय, उ० अं० मु० स्नातक में २ (वर्ध० अव०) वर्ध की स्थिति ज० १ समय, उ० अं० मु० अव० की स्थिति ज० अं० मु० उ० देश उणी पूर्व क्रोड़ की ।

२१ बन्ध द्वार—पुलाक ७ कर्म (आयुष्य सिवाय) बान्धे, वकुश और पडिसेवण ७ ८ कर्म बान्धे, कषाय कुशील ६-७ तथा ८ कर्म (आयु-मोह सिवाय) बान्धे निर्ग्रन्थ १ शाता वेदनीय बान्धे और स्नातक शाता वेदनीय बान्धे अथवा अबन्ध (नहीं बान्धे)

२२ वेदे द्वार—४ नियंठा ८ कर्म वेदे निर्ग्रन्थ ७ कर्म (मोह सिवाय) वेदे स्नातक ४ कर्म (अघाती) वेदे ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२३ उदीरण द्वार—पुलाक ६ कर्म (आयु—मोह सिवाय) की उदी० करे बकुश पडिसेवण ६-७ तथा ८ कर्म उदेरे कषाय कुशील ५-६-७-८ कर्म उदेरे (५ होवे तो आयु, मोह वेदनीय छोड़कर), निर्ग्रन्थ २ तथा ५ कर्म उदेरे (नाम—गोत्र) और स्नातक अनुदारिक।

२४ उपसंपझणं द्वार—पुलाक, पुलाक को छोड़-कर कषाय कुशील में अथवा असंयम में जावे, बकुश बकुश को छोड़ कर पडिसेवण में, कषाय कुशील में असं-यम में तथा संयमासंयम में जावे। इसी प्रकार चार स्थान पर पडिसेवण नियंठा जावे कषाय कुशील ६ स्थान पर (पु०, व०, पडि०, असंय०, संयमासं० तथा निर्ग्रन्थ में) जावे निर्ग्रथ निर्ग्रन्थ पने को छोड़ कर कषाय कुशील स्नातक तथा असंयम में जावे और स्नातक मोक्ष में जावे।

२५ संज्ञा द्वार--पुलाक, निर्ग्रन्थ और स्नातक नो-संज्ञा बहुता। बकुश, पडिसेवण और कषाय कुशील संज्ञा बहुता और नोसंज्ञा बहुता।

२६ आहारिक द्वार--पनियंठा आहारिक और स्नातक आहारिक तथा अनाहारिक।

२७ भव द्वार—पुलाक और निर्ग्रन्थ भव करे ज० १ उ० ३ बकुश, पडि०, कषाय कु० ज० १ उ० १५ भव करे और स्नातक उसी भव में मोक्ष जावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८ आगरेस द्वार–पुलाक एक भव में ज० १ वार उ० ३ वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ वार उ० ७ वार आवे वकुश पडि० और कषाय कु० एक भव में ज० १ वार उ० प्रत्येक १०० वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ वार उ० प्रत्येक हजार वार, निर्ग्रन्थ एक भव आश्री ज० १ वार उ० २ वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ उ० ५ वार आवे स्नातक पना ज० उ० १ ही वार आवे।

२६ काल द्वार–(स्थिति) पुलाक एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० अं० मु०, अनेक जीव अपेक्षा ज० उ० अन्तर्मुहूर्त की वकुश एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० देश उणा पूर्व क्रोड़, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता पडिसे०, कषाय कु० वकुश वत् निर्ग्रन्थ एक तथा अनेक जीवापेक्षा ज० १ समय उ० अन्तर्मुहूर्त स्नातक एक जीवाश्री ज० अं० मु०, उ० देश उणा पूर्व क्रोड, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता है।

३० आन्तरा (अन्तर) द्वार:–प्रथम ५ नियंठा में आन्तरा पड़े तो १ जीव अपेक्षा ज० अं० मु०, उ० देश उणा अर्ध पुद्गल परावर्तन काल तक स्नातक में एक जीवापेक्षा अन्तर न पड़े अनेक जीवापेक्षा अन्तर पड़े तो पुलाक में ज० १ समय, उ० संख्यात काल, निर्ग्रन्थ में ज० १ समय उ० ६ माह शेष ४ में अन्तर न पड़े।

३१ समुद्घात द्वार–पुलाक में ३ समु० (वेदनी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कषाय मरणांतिक) वकुश में तथा पडिसे० में ५ समु० (वे०, क०, म०, वै० ते०) कषाय कुशील में ६ समु० (केवली समु० नहीं) निर्ग्रन्थ में नहीं स्नातक में होवे तो केवली समुद्घात।

३२ क्षेत्र द्वार—पांच नियंठा लोक के असंख्यातवें भाग में होवे और स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में होवे अथवा समग्र लोक में (केवली समु० अपेक्षा) होवे

३३ स्पर्शना द्वार—क्षेत्र द्वार वत्।

३४ भाव द्वार—प्रथम ४ नियंठा क्षयोपशम भाव में होवे। निर्ग्रन्थ उपशम तथा क्षायिक भाव में होवे और स्नातक क्षायिक भाव में होवे।

३५ परिमाण द्वार—(संख्या प्रमाण) स्यात् होवे, स्यात् न होवे, होवे तो कितना ?

नाम	वर्तमान पर्याय अपेक्षा		पूर्व पर्याय अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	१-२-३	प्रत्येक सौ (२०० से ९००	१--२-३	प्रत्येक हजार (२से९ हजार)
वकुश	,,	,,		प्रत्येक सो क्रोड(नियमा)
पडिसेवरण	,,	,,		,, ,,
कषाय कुशील	,,	प्रत्येक हजार		प्रत्येक हजार क्रोड़ ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ	,, १६२	१--२--३ प्रत्येक सौ ०
स्नातक	,, १०८	प्रत्येक क्रोड़ नियमा

३६ अल्प बहुत्व द्वार-सर्व से कम निर्ग्रन्थ नियंठा, उनसे पुलाक वाले संख्यात गुणा । उनसे स्नातक संख्यात गुणा । उनसे बकुश सं०, उनसे पडिसेवण संख्यात गुणा, और उनसे कषाय कुशील का जीव संख्यात गुणा ।

॥ इति नियंठा सम्पूर्ण ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

संजया (संयति)

(श्री भगवती जी सूत्र शतक २५, उद्देशा ७)

संयति पांच प्रकारके--(इनके ३६ द्वार नियंठा समान जानना) १ सामायिक चारित्री २ छेदोपस्थापनीय चारित्री ३ परिहार विशुद्ध चारित्री ४ सूक्ष्म संपराय चारित्री ५ यथाख्यात चारित्री ।

१ सामायिक चारित्री के दो भेद–१ स्वल्प काल का--प्रथम और चरम तीर्थंकर के साधु होते हैं ज. ७ दिन, मध्यम ४ मास (माह) उ० ६ माह की कच्ची दीक्षा वाले (२) जावजीव के--२२ तीर्थंकर के, महाविदेह क्षेत्र के और पक्की दीक्षा लिये हुवे साधु (सामायिक चारित्री)।

२ छेदोपस्थापनीय (दूसरी वार नई दीक्षा लिये हुवे) संयति के दो भेद–१ सातिचार–पूर्व संयम में दोष लगने से नई दीक्षा लेवे वो । (२) निरतिचार–शासन तथा संप्रदाय बदल कर फिर दीक्षा लेवे जैसे पार्श्व जिन के साधु महावीर प्रभु के शासन में दीक्षा लेवे ।

३ परिहार विशुद्ध चारित्री- ९–९ वर्ष के नव जन दीक्षा ले । २० वर्ष गुरुकुल वास करके ९ पूर्व सीखे। पश्चात् गुरु आज्ञा से विशेष गुण प्राप्ति के लिये नव ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधु परिहार विशुद्ध चारित्र ले । जिनमें से ४ मुनि ६ माह तक तप करे, ४ मुनि वैयावच्च करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । दूसरे ६ माह में ४ वैयावच्ची मुनि तप करे, ४ तप करने वाले वैयावच्च करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । तीसरे ६ माह में १ व्याख्यान देने वाला तप करे, १ व्याख्यान देवे और ७ मुनि वैयावच्च करे । तपश्चर्या उनाले में एकान्तर उपवास, शियाले छठ छठ पारणा, चोमासे अठम २ पारणा करे एवं १८ माह तप कर के जिन कल्पी होवे अथवा पुनः गुरुकुल वास स्वीकारे ।

सूक्ष्म संपराय चारित्री के २ भेद–संक्लेश परिणाम–उपशम श्रेणी से गिरने वाले (२) विशुद्ध परिणाम--क्षपक श्रेणी पर चढने वाले ।

५ यथाख्यात चारित्री के २ भेद–(१) उपशान्त वीतरागी ११ वें गुणस्थान वाले (२) क्षीण वीतरागी के २ भेद छद्मस्थ और केवली (सयोगी तथा अयोगी) ।

२ वेद द्वार–सामा०, छेदोप० वाले सवेदी (३ वेद) तथा अवेदी (नववें गुण अपेक्षा) परि० वि०, पुरुष या पुरुष नपुसंक वेदी सूक्ष्म सं० और यथा० अवेदी ।

३ राग द्वार–४ संयती सरागी और यथाख्यात संयती वीतरागी ।

४ कल्प द्वार–कल्प के ५ भेद, नीचे अनुसार--

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ स्थिति कल्प नियंठा में बताये हुवे १० कल्प, प्रथम तथा चरम तीर्थंकर के शासन में होवे।

२ अस्थित कल्प=२२ तीर्थंकर के साधुओं में होवे १० कल्प में से शय्यान्तर, कृतकर्म और पुरुष ज्येष्ट एवं ४ तो स्थित हैं और वस्त्रकल्प, उद्देशीक, आहार कल्प, राजपीठ, मासकल्प, चातुर्मासिक कल्प और प्रतिक्रमण कल्प एवं ६ अस्थित होवे।

३ स्थिवर कल्प=मर्यादापूर्वक वस्त्र-पात्रादि उपकरण से गुरुकुलवास, गच्छ और अन्य मर्यादा का पालन करे।

४ जिनकल्प=जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट उत्सर्ग पक्ष स्वीकार करके, अनेक उपसर्ग पक्ष स्वीकार करके तथा अनेक उपसर्ग सहन करते हुवे जङ्गल आदि में रहे (विस्तार नंदी सूत्र में से जानना)

५ कल्पातीत=आगम विहारी अतिशय ज्ञान वाले महात्मा जो कल्प रहित भूत-भावि के लाभालाभ देख कर वर्ते।

सामायिक संयति में ५ कल्प, छेदोप० परि० में ३ कल्प (स्थित, स्थिवर, जिनकल्प) सूक्ष्म, यथा० में २ कल्प (अस्थित और कल्पातीत) पावे।

५ चारित्र द्वार--सामा०, छेदो० में ४ नियंठा (पुलाक, वकुश, पडिसेवरा, और कषाय कुशील) परि०, सूक्ष्म में १ नियंठा (कषाय कुशील) और यथा० में २ नियंठा (निर्ग्रन्थ और स्नातक) पावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ पडिसेवण द्वार--सामा०, छेदो०, संयति मूल गुण प्रति सेवी (५ महाव्रत में दोष लगावे) तथा उत्तर गुण प्रति सेवी (दोष लगावे) तथा अप्रति सेवी (दोष नहीं भी लगावे) शेष ३ संयति अप्रति सेवी (दोष नहीं लगावें)

७ **ज्ञान** द्वार—४ संयति में ४ ज्ञान (२-३-४) की भजना और यथाख्यात में ५ ज्ञान की भजना ज्ञानाभ्यास अपेक्षा—सामा०, छेदो०, में ज० अष्ट प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) उ० १४ पूर्व तक परि० में ज० ९ वें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु तक उ० ९ पूर्व सम्पूर्ण सूक्ष्म सं० और यथा० ज० अष्ट प्रवचन तक उ० १४ पूर्व तथा सूत्र व्यतिरिक्त।

८ तीर्थ द्वार—सामायिक और यथाख्यात संयति तीर्थ में, अतीर्थ में, तीर्थंकर में और प्रत्येक बुद्ध में होवे छेदो०, परि०, सूक्ष्म० तीर्थ में ही होवे।

९ लिंग द्वार-परि० द्रव्ये भावे स्वलिंगी होवे शेष चार संयति द्रव्ये स्वलिंगी, अन्यलिंगी तथा गृहस्थ लिंगी होवे परन्तु भावे स्वलिंगी होवे।

१० शरीर द्वार—सामा०, छेदो०, में ३-४-५ शरीर होवे शेष तीन में ३ शरीर।

११ क्षेत्र द्वार—सामा०, सूक्ष्म०, तथा०, १५ कर्म भूमि में और छेदो०, परि० ५ भरत ५ ऐरावर्त में होवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संहरण अपेक्षा अकर्म भूमि में भी होवे, परन्तु परिहार विशुद्ध संयति का संहरण नहीं होवे ।

१२ काल द्वार—सामा०अवसर्पिणी काल के ३ ४-५ आरा में जन्में और ३-४-५ आरा में विचरे, उत्स० के २ ३-४ आरा में जन्में और ३-४ आरा में विचरे महा विदेह में भी होवे। संहरण अपेक्षा अन्य क्षेत्र (३० अकर्म भूमि) मे भी होवे। छेदो० महाविदेह में नहीं होवे, शेष ऊपर वत् परि० अवस० काल के ३—४ आरा में जन्मे—प्रवर्ते,उत्स० काल के २-३-४ आरा में जन्में और ३-४ आरा में प्रवर्ते सूक्ष्म० यथा० संयति अवस० के ३-४ आरा में जन्मे और प्रवर्ते। उत्स० काल के २-३-४ आरा में जन्मे और ३-४ आरा में प्रवर्ते महाविदेह में भी पावे, संहरण अन्यत्र भी होवे।

१३ गति द्वार—

सं० नाम	गति		स्थिति	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामा०छेदोप०	सौधर्म कल्प	अनुत्तर विमान	२ पल्य	३३सागर
परिहार विशुद्ध	,,	सहस्रार ,,	२ ,,	१८ ,,
सूक्ष्म संपराय	अनुत्तर विमान	अनुत्तर,,	३१ सागर	३३ ,,
यथा ख्यात	,, ,,	,,	,, ३१ ,,	३३ ,,

देवता में ५ पदवी हैं—इन्द्र, सामानिक त्रियस्त्रिंशक, लोकपाल और अहमेन्द्र, सामा० छेदो० आराधक होवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो पांच में से १ पदवी पावे, परि० प्रथम ४ में से १ पदवी पावे । सूक्ष्म० यथा० वाले अहमेन्द्र पद पावे, ज० विराधक होवे तो ४ प्रकार के देवों में उपजे, उ० विराधक होवे तो संसार भ्रमण करे ।

१४ **संयम स्थान**--सामा० छेदो० परि० में असंख्यासं० स्थान होवे० सूक्ष्म० में अं० मु० के जितने असंख्य और यथा० का सं० स्थान एक ही है । इनका अल्प बहुत्व ।

सर्व से कम यथा० संयति के संयम स्थान
उनसे सूक्ष्म संपराय के सं० स्थान असंख्यात गुणा
,, परि हार वि० ,, ,, ,, ,, ,,
,, सामा० छेदो० ,, ,, ,, ,, ,, परस्पर तुल्य

१५ निकासे द्वार-एकेक संयम के पर्यव (पजवा) अनन्ता अनन्त हैं प्रथम तीन संयति के पर्यव परस्पर तुल्य तथा षट् गुण हानि वृद्धि सूक्ष्म०यथा०से ३ संयम अनन्त गुणा न्यून हैं सूक्ष्म० तीनों ही से अनन्त गुणा अधिक है परस्पर षट् गुण हानि वृद्धि और यथा० से अनन्त गुणा न्यून है यथा० चारों ही से अनन्त गुणा अधिक है परस्पर तुल्य है ।

अल्प बहुत्व ।

१ सर्व से कम सामा०छेदो० के ज० संयम पर्यव(परस्पर तुल्य) उन.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ परिहार विशुद्ध के	,,	,,	,,	अनन्त गुणा	,,		
३ ,, ,, ,,	उत्कृष्ट	,,	,,	,,	,,		
४ सामा० छेदो०	,,	,,	,,	,,	,,	,,	
५ सूक्ष्म संपराय	,, जघन्य	,,	,,	,,	,,		
६ ,, ,,	,, उत्कृष्ट	,,	,,	,,	,,		
७ यथा ख्यात	,, ज० उ०	,,	,,	,, परस्पर तुल्य			

१६ योग द्वार-४ संयति,सयोगी और यथा॰सयोगी और अयोगी।

१७ उपयोग द्वार-सूक्ष्म में साकार उपयोगी होवे शेष चार में साकार-निराकार दोनों ही उपयोग वाले होवें।

१८ कषाय द्वार-३ संयति संज्वलन का चोक (चारों की कषाय) में होवे सूक्ष्म०संज्व०लोभ में होवे और यथा० अकषायी (उपशान्त तथा क्षीण) होवे

१६ लेश्या द्वार-सामा० छेदो० में ६ लेश्या परि० में ३ शुभ लेश्या सूक्ष्म०में शुक्ल लेश्या यथा०में १ शुक्ल लेश्या तथा अलेशी भी होवे।

२० परिणाम द्वार-तीन संयति में तीनों ही परिणाम उनकी स्थिति हायमान तथा वर्धमान की ज० १ उ० ७ अं० मु० की, अवस्थित की ज० १ समय उ० ७ समय की, सूक्ष्म० में २ परिणाम (हायमान वर्धमान) इनकी स्थिति ज० उ० अं० मु० की, यथा०में २ परिणाम; वर्धमान (ज० उ० अं० मु० की स्थिति) और अवस्थित (ज० १ समय उ० देश उणा क्रोड़ पूर्व की स्थिति)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१ बन्ध द्वार--तीन संयति ७-८ कर्म बांधे. सूक्ष्म० ६ कर्म बान्धे, (मोह, आयु. छोड़ कर), यथा० बांधे तो शाता वेदनी अथवा अबन्ध (नहीं बान्धे)

२२ वेदे द्वार--चार संयति ८ कर्म वेदे यथा० ७ कर्म (मोह सिवाय) तथा ४ कर्म (अघातिक) वेदे।

२३ उदीरणा द्वार--सामा० छेदो०परि०७ ८-६ कर्म उदेरे (उदिरणा करे) सूक्ष्म० ५-६ कर्म उदेरे (६ होवे तो आयु, मोह सिवाय) ५ होवे तो आयु, मोह, वेदनी सिवाय यथा० ५ कर्म तथा २ कर्म (नाम--गोत्र) उदेरे तथा उदि०.नहीं करे

२४ उपसंपज्झाणं द्वार–सामा० वाले सामा० संयम छोडे तो ५ स्थान पर (छेदो० सूक्ष्म० संयम०तथा असंयम में) जावे, छेदो० वाले छोडे तो ५ स्थान पर (सामा० परि० सूक्ष्म०संयमा०तथा असंयम में) जावे परि० वाले छोडे तो २ स्थान पर (छेदो०असंयम में) जावे, सूक्ष्म० वाले छोडे तो ४ स्थान पर (सामा० छेदो०यथा०असंयम में) जावे, यथा० वाले छोड़े तो ३ स्थान पर (सूक्ष्म० असंयम तथा मोक्ष में) जावे।

२५ संज्ञा द्वार--३ चारित्र में ४ संज्ञावाला तथा संज्ञा रहित शेष में संज्ञा नहीं ।

२६ आहार द्वार–४ संयम में आहारिक और यथा० आहारिक और अनाहारिक दोनों होवे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७ भव द्वार–३ संयति ज० १ भव करे उ० ८ भव (८ मनुष्य का, ७ देवता का एवं १५ भव) करके मोक्ष जावे सूक्ष्म ज० १ भव उ० ३ भव करे यथा० ज० १ उ० ३ भव करके तथा उसी भव में मोक्ष जावे ।

२८ आगरेस द्वार–संयम कितनी वार आवे ?

नाम	एक भव अपेक्षा		अनेक भव अपेक्षा	
	ज.	उत्कृष्ट	ज.	उत्कृष्ट
समायिक	१	प्रत्येक सौ वार	२	प्रत्येक हजार वार
छेदोपस्था०	१	,,	२	नव सो वार से अधिक
परिहार वि०	१	तीन वार	२	,, ,,
सूक्ष्म सं०	१	चार ,,	२	नव वार
यथा ख्यात	१	दो ,,	२	पांच ,,

२९ स्थिति द्वार–संयम कितने समय रहे ?

नाम	एक जीवापेक्षा		अनेक जीवापेक्षा	
	ज०	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	१ स.	देश उ. क्रो. पू०	शाश्वता	शाश्वता
छेदोपस्था०	,,	,,	२० वर्ष २५० वर्ष	५० क्रोड़ सागर
परिहार वि०	,,	२९ वर्ष उणा	,, देश उणा	देश उ. क्रो. पू.
सूक्ष्म संपराय	,,	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
यथा ख्यात	,,	देश उणा क्रो. पू.	शाश्वता	शाश्वता

३० अन्तर द्वार–एक जीवापेक्षा ५ संयति का अन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज० अं० मु० उ० देश उणा अर्ध पुद्गल परावर्तन काल, अनेक जीवापेक्षा–सामा०, यथा० में अन्तर नहीं पड़े, छेदो० में ज० ६३००० वर्ष, परि० में ज० ८४००० वर्ष का, दोनों में उ० देश उणा १८ क्रोड़ाक्रोड़ सागर का, और सूक्ष्म० में ज० १ समय उ० ६ माह का अन्तर पड़े।

३१ समुद्घात द्वार--सामा० छेदो० में ६ समु० (केवली समु० छोड़ कर) परि० में ३ प्रथम की, सूक्ष्म० में नहीं और यथा० में १ केवली समुद्घात ।

३२ क्षेत्र द्वार–पांचों ही संयति लोक के असंख्यातवें भाग होवे, यथा० वाले केवली समु० करे तो समस्त लोक प्रमाण होवे ।

३३ स्पर्शना द्वार–क्षेत्र द्वार समान ।

३४ भाव द्वार–४ संयति क्षयोपशम भाव में होवे और यथाख्यात उपशम तथा क्षायिक भाव में होवे ।

३५ परिणाम द्वार–स्यात् पावे तो–

नाम	वर्तमान अपेक्षा		पूर्व पर्याय अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	१-२-३	प्रत्येक हजार	नियमसे प्रत्येक ह०	क्रोड़
छेदोपस्था०	,,	,, सो	प्र.सो क्रोड़ ,,	सो ,,
परिहार वि०	,,	,,	,, १-२-३	,, हज़ार
सूक्ष्म संपराय	,,	१६२(१०८क्षपक ५४ उपशम)	,,	,, सो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यथाख्यात ,, १६२ ,, नियम से ,, ,, क्रोड़❀

३६ अल्प बहुत्व द्वार:-

सर्व से कम सूक्ष्म संपराय संयम वाले, उनसे-
परिहार वि० संयम वाले संख्यात गुणा ,,
यथाख्यात ,, ,, ,, ,, ,,
छेदोपस्था० ,, ,, ,, ,, ,,
सामायिक ,, ,, ,, ,,

* केवली की अपेक्षा से समझना.

॥ इति संजया (संयति) सम्पूर्ण ॥

अष्ट प्रवचन (५ समिति ३ गुप्तिः)

(श्री उत्तराध्यान सूत्र २४ वाँ अध्ययन)

पाँच समिति-(विधि) के नाम-१ इरिया समिति (मार्ग में चलने की विधि) २ भाषा (बोलने की) समिति ३ एषणा (गोचरी की) समिति ४ निक्षेपणा (आदान भंडमत्त वस्त्र पात्रादि देने व रखने की) समिति ५ परिठावणिया (उच्चार, पासवण खेल-जल, संधाण-बडीनीत लघुनीत, बलखा लींट आदि परठने की) समिति ।

तीन गुप्ति (गोपना) के नाम-१ मन गु० २ वचन गु० काया गुप्ति ।

१ इर्या समिति के ४ भेद-(१) आलम्बन ज्ञान दर्शन, चरित्र का (२) काल-अहो रात्रि का (३) मार्ग कुमार्ग छोड़ कर सुमार्ग पर चलना (४) यत्ना (जयणा सावधानी) के ४ भेद द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्य से छकाय जीवों की यत्ना करके चले क्षेत्र से घुसरी (३॥ हाथ प्रमाण जमीन आगे देखते हुवे चले) काल से रास्ते चलते नहीं बोले और भाव से रास्ते चलते वांचन पूछने (पृच्छना) पर्यट्टणा, धर्म कथा आदि न करे और न शब्द, रूप, गंध रस, स्पर्शादि विषय में ध्यान दे ।

२ भाषा समिति के ४ भेद--द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव द्रव्य से आठ प्रकार का भाषा (कर्कश, कठोर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छेद कारी, भेदकारी, अधार्मिक, मृषा, सावद्य.निश्चयकारी) नहीं बोले क्षेत्र से रास्ते चलते न बोले काल से १ पहर रात्रि बीतने पर जोर से नहीं बोले भाव से राग द्वेष युक्त भाषा न बोले ।

३ एषणा समिति के ४ भेद--द्रव्य क्षेत्र, काल भाव द्रव्य से ४२ तथा ९६ दोष टालकर निर्दोष आहार, पानी वस्त्र, पात्र, मकानादि याचे (मांगे) क्षेत्र से २ गाउ (कोस) उपरान्त ले जाकर आहार पानी नहीं भोगे, काल से पहले पहर का आहार पानी चोथे पहर में न भोगवे भाव से मांडले के ५ दोष (संयोग. अंगाल, धूम, परिमाण, कारण) टाल कर अनासक्तता से भोगवे ।

४ आदान भण्डमत्त निखेवणीया समिति—मुनियों के उपकरण ये हैं-१ रजोहरण २ मुँहपत्ति १ चोल पट्टा (५ हाथ) ३ चादर (पछेड़ी) साध्वी ४ पछेड़ी रक्खे, काष्ट तुम्बी तथा मिट्टी के पात्र, १ गुच्छा, १ आसन १ संस्तारक (२॥ हाथ लम्बा बिछाने का कपड़ा) तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र वृद्धि निमित्त आवश्यक वस्तुएं ।

(१) द्रव्य से ऊपर कहे हुवे उपकरण यत्ना से लेवे, रक्खें तथा वापरे (काम में लेवे)

(२) क्षेत्र से व्यवस्थित रक्खे जहां तहां बिखरे हुवे नहीं रक्खे ।

(३) काल से दोनों समय (१ से और चौथे पहर में) पडिलेहन तथा पूजन करे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४) भाव से ममता रहित संयम साधन समझ कर भोगवे ।

५ उच्चार पासवण खेल जल संघाण परिठावणिया समिति के ४ भेद—(१) द्रव्य मलमूत्रादि १० प्रकार के स्थान पर वेठे नहीं (१ जहां मनुष्यों का आवन जावन हो २ जीवों की जहां घात होवे ३ विषम-ऊँची नीची भूमि पर ४ पोली भूमि पर ५ सचित्त भूमिपर ६ संकडी (विशाल नहीं) भूमि पर ७ तुरन्त की (अभी की) अचित्त भूमि पर ८ नगर गाँव के समीप में ६ लीलन फूलन होवे वहां १० जीवों के बिल (दर) होवे वहां-न वेठे) (२) क्षेत्र से वस्ती को दुर्गंछा होवे वहां तथा आम रास्ते पर न वेठे (३) काल से वेठने की भूमि को कालो काल पडिलेहण करे व पूंजे (४) भाव से वेठने को निकले तब आवस्सही ३ वार कहे वेठने के पहिले शक्रेन्द्र महाराज की आज्ञा मांगे वेठते समय वोसिरे ३ वार कहे और वेठ कर आते समय निस्सही ३ वार कहे जल्दी सूख जावे इस तरह वेठे ।

३ गुप्ति के चार चार भेद ।

१ मन गुप्ति के ४ भेद–(१) द्रव्य से आरंभ समारंभ में मन न प्रवर्तावे (२) क्षेत्र से समस्त लोक में (३) काल से जाव जीव तक (४) भाव से विषय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कषाय, आर्त रौद्र राग द्वेष में मन न प्रवर्तावे ।

२ वचन गुप्ति के ४ भेद-(१) द्रव्य से चार विकथा न करे (२) क्षेत्र से समग्र लोक में (३) काल से जाव जीव तक (४) भाव से सावद्य (राग द्वेष विषय कषाय युक्त) वचन न बोले ।

३ काया गुप्ति के ४ भेद-(१) द्रव्य से शरीर की शुश्रूषा (सेवा-शोभा) नहीं करे (२) क्षेत्र से समस्त लोक में (३) काल से जाव जीव तक (४) भाव से सावद्य योग (पाप कारी कार्य) न प्रवर्तावे (न सेवन करे)

॥ इति अष्ट प्रवचन सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२ अनाचार

(श्री दशवैकालिक सूत्र; तीसरा अध्ययन)

(१) मुनि के निमित तैयार किया हुआ आहार, वस्त्र, पात्र तथा मकान भोगवे तो अनाचार लागे।

(२) मुनि के निमित खरीदे हुए आहार; वस्त्र, पात्र तथा मकान भोगवे तो अनाचार लागे।

(३) नित्य एक घर का आहार भोगवे तो ,, ,,

(४) सामने लाया हुवा ,, ,, ,, ,,

(५) रात्रि भोजन करे तो ,, ,,

(६) देश स्नान (शरीर को पूछ कर तथा सारे शरीरका स्नान करके) करे तो अनाचार लागे

(७) सचित अचित पदार्थों की सुगन्ध लेवे तो ,, ,,

(८) फूल आदि की माला पहिने तो ,, ,,

(९) पंखे आदि से पवन हवा चलावे तो ,, ,,

(१०) तेल घी आदि आहार का संग्रह करे तो ,, ,,

(११) गृहस्थ के वासन में भोजन करे तो ,, ,,

(१२) राजपिण्ड बलिष्ट आहार लेवे तो ,, ,,

(१३) दान शाला में से आहार आदि लेवे तो ,, ,,

(१४) शरीर का विना कारण मर्दन करे करावे ,, ,,

(१५) दांतुन करे तो ,, ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१६) गृहस्थों की सुख शाता पूछ कर खुशामद करे तो „ „
(१७) दर्पण में अंगोपांग निरखे तो „ „
(१८) चोपड शतरञ्ज आदि खेल खेले तो „ „
(१९) अर्थोपार्जन जुगार सट्टा आदि करे तो „ „
(२०) धूप आदि निमित्त छत्री आदि रक्खे तो „ „
(२१) वैद्यगिरि करके आजीविका चलावे तो „ „
(२२) जूतियें मोजे आदि पैरो में पहिने तो „ „
(२३) अग्निकाय आदि का आरंभ (ताप आदि) करे तो „ „
(२४) गृहस्थों के यहां गादी तकियादि पर बैठे तो „ „
(२५) „ „ पलंग, खाट आदि „ „
(२६) मकान की आज्ञा देने वाले के यहां से (शय्यान्तर) वहोरे तो „ „
(२७) विना कारण गृहस्थों के यहां बैठ कर कथादि करे तो „ „
(२८) „ „ शरीर पर पीठी, मालिस आदि करे तो „ „
(२९) गृहस्थ लोगों की वैयावच्च (सेवा) आदि करे तो „ „
(३०) अपनी जाति कुल आदि बता कर आजीविका करे तो „ „

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३१) सचित्त पदार्थ (लीलोत्री, कच्चा पानी आदि) भोगवे तो ,, ,,

(३२) शरीर में रोगादि होने पर गृहस्थों की सहायता लेवे तो ,, ,,

(३३) मूला आदि सचित लिलोत्री, (३४) सेलड़ी के टुकड़े (३५) सचित कंद (३६) सचित मूल, (३७) सचित फल फूल (३८) सचित बीजआदि (३९) सचित नमक (४०) सेंधा नमक (४१) सांभर नमक (४२) धूलखारा का नमक (४३) समुद्रका नमक (४४) काला नमक ये सर्व सचित नमक भोगवे (खावे व वापरे) तो अनाचार लगे।

(४५) कपड़े को धूप आदि से सुगन्ध मय बनावे तो ,, ,,

(४६) भोजन करके वमन करे तो ,, ,,

(४७) विना कारण रेच [जुलाब] आदि लेवे तो ,, ,,

[४८] गुह्य स्थानों को धोवे, साफ करे तो ,, ,,

[४९] आंख में अञ्जन, सुरमा आदि लगावे तो ,, ,,

[५०] दांतों को रंगावे तो ,, ,,

[५१] शरीर को तेल आदि लगा कर सुन्दर बनावे तो ,, ,,

[५२] शरीर की शोभा के लिये बाल, नख आदि उतारे तो अनाचर लागे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपरोक्त बावन अनाचारों को टाल कर साधु साध्वी सदा निर्मल चारित्र पाले ।

॥ इति ५२ अनाचार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहार के १०६ दोष

मुनि १०६ दोष टाल कर गोचरी करे यह भिन्न २ सूत्रों के आधार से जानना आचारांग, सूयगडांग तथा निशीथ सूत्र के आधार से ४२ दोष कहे जाते हैं।

(१) आधाकर्मी-मुनि के निमित्त आरंभ करके बनाया हुवा।

(२) उद्देशिक-अन्य मुनि निमित्त बना हुवा आधा कर्मी आहार।

(३) पूति कर्म-निर्वद्य आहार में आधाकर्मी अंश मात्र मिला हुवा होवे वो तथा रसोई में साधु के निमित कुछ अधिक बनाया हुवा होवे।

(४) मिश्र दोष-कुछ गृहस्थ निमित, कुछ साधु निमित बनाया हुवा मिश्र आहार।

(५) ठवणा दोष-साधु निमित रक्खा हुवा आहार

(६) पाहुड़िय-महेमान के लिये बनाया हुवा (साधु निमित महेमानों की तिथि बदली होवे)

(७) पावर--जहां अन्धेरा गिरता होवे वहां साधु निमित खिड़की आदि करा देवे।

(८) क्रिय-साधु निमित खरीद कर लाया हुवा

(९) पामिच्चे-साधु निमित उधार लाया हुवा

(१०) परियट्टे-साधु निमित वस्तु बदले में देकर लाया हुवा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(११) अभिद्रत—अन्य स्थान से सामने लाया हुवा
(१२) भिन्ने—कपाट चक आदि उवाड कर दिया हुवा
(१३) मालोहड- माल (मेढ़ी) ऊपर से कठिनता से उतारा जा सके वो।
(१४) अच्छीजे- निर्बल पर दबाव डाल कर बलपूर्वक दिलावे वो।
(१५) अणिसिट्ठ--हिस्से की चीज में से कोई देना चाहे कोई नहीं चाहे एसी वस्तु।
(१६) अज्जोयर--गृहस्थ साधु निमित अपना आहार अधिक बनाया हुवा होवे।
(१७) धाइदोष- गृहस्थ के बच्चों को खेला कर लिया हुवा।
(१८) दुइ दोष—दूतिपना (समाचार आदि लाना व लेजाना) करके लिया हुवा।
(१९) निमित—भूत व भविष्य के निमित कह कर लिया हुवा।
(२०) आजीव--जाति कुल आदि का गौरव बता कर लिया हुवा।
(२१) वणी मग्ग—भिखारी समान दीनता से याचा (मांगा) हुवा।
(२२) तिगंछ--औषधि (दवा) आदि बताकर लिया हुवा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२३) कोहे--क्रोध कर के (२४) माने--मान कर (२५) माये--कपट कर के (२६) लोभे--लोभ कर के लिया हुवा।

(२७) पुव्वं पच्छं संथुव--पहेले तथा बाद में देने वाले की स्तुति कर के लिया हुवा।

[२८] विज्जा--गृहस्थों को विद्या बताकर लिया हुवा

[२९] मंत्त--मन्त्र तन्त्र आदि " " "

[३०] चून्न--रसायन आदि (एक वस्तु में दूसरी वस्तु मिलाकर तीसरी वस्तु बनाना) सिखाकर लिया हुवा।

[३१] जोगे--लेप, वशीकरण आदि बताकर लिया हुवा।

[३२] मूल कर्म--गर्भ पात आदि की दवा बता कर लिया हुवा ऊपरोक्त दोषों में से प्रथम १६ दोष 'उद्गमन' अर्थात् भद्रिक श्रावक भक्ति के कारण अज्ञान साधुओं को लगाते हैं। पीछे के १६ दोष 'उत्पात' हैं। ये मुनि स्वयं लगा लेते हैं।

अब दश दोष नीचे लिखे जाते हैं जो साधु और गृहस्थ दोनों के प्रयोग से लगाये जाते हैं।

(३३) संकिए--जिसमें साधु तथा गृहस्थ को शुद्धता (निर्दोषता) की शङ्का होवे।

[३४] मंक्खिए--वहोराने वाले के हाथ की रेखा अथवा बाल सचित से भीजे हुवे होवे तो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[३५] निक्खित्ते–सचित्त वस्तु पर अचित्त आहार रक्खा होवे।

[३६] पहिये--अचित्त वस्तु सचित्त से ढंकी होवे वो।

[३७] मिसीये–सचित्त–अचित्त वस्तु मिली होवे।

[३८] अपरिणिये--पूरा अचित्त आहार जो न हुवा हो

[३९] सहारिये–एक बर्तन से दूसरे बर्तन (नहीं वपराया हुआ) में लेकर दिया हुआ।

[४०] दायगो--अंगोपांग से हीन ऐसे गृहस्थों से लेवे कि जिन्हें चलने फिरने से दुःख होता होवे।

[४१] लीत्तू--तुरन्त के लीपे हुवे आंगन पर से लिया हुवा।

[४२] छंडिये--पहोरावने के समय वस्तु नीचे गिरती-टपकती होवे।

आवश्यक सूत्र में बताये हुवे ५ दोष।

[१] गृहस्थों के दरवाजे आदि खुला कर लेवे तो।

[२] गौ, कुत्ते आदि के लिए रक्खी हुई रोटी लेवे तो।

[३] देवी देवता के नैवेद्य व बलिदान निमित बनी हुई वस्तु लेवे तो।

[४] बिना देखी चीज–वस्तु लेवे तो।

[५] प्रथम निरस आहार पर्याप्त आया हुवा होवे तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी सरस आहार निमित निमंत्रण आने पर रस लोलुपता से सरस आहार ले लेवे तो।

श्री उत्तराध्ययन सूत्र में बताये हुवे २ दोष।

[१] अन्य कुल में से गोचरी नहीं करते हुवे अपने सज्जन सम्बन्धियों के यहीं से गोचरी करे तो।

[२] बिना कारण आहार ले और बिना कारण आहार त्यागे ।

६ कारण से आहार लेवे	६ कारण से आहार छोड़े
क्षुधा वेदनी सहन नहीं होनेसे	रोगादि होजाने से
आचार्यादि की वैयावच्च हेतुसे	उपसर्ग आने से
ईर्या शोधने के लिए	ब्रह्मचर्य के नहीं पलने पर
संयम निर्वाह निमित	जीवों की रक्षा के लिए
जीवों की रक्षा करने के लिए	तपश्चर्या के लिए
धर्म कथादि कहने के लिए	अनशन[संथारा]करने के लिए

श्री दशवैकालिक सूत्र में बताये हुवे २३ दोष।

[१] जहां नीचे दरवाजे में से होकर जाना पड़े वहां गोचरी करने से

[२] जहां अंधेरा गिरता होवे उस स्थान पर " "

[३] गृहस्थों के द्वार पर बैठे हुवे बकरे बकरी।

[४] बच्चे बच्ची।

[५] कुत्ते।

[६] गाय के बछड़े आदि को उलांघ कर जावे तो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[७] अन्य किसी प्राणी को उलांघ कर जाने से।
[८] साधु को आया हुवा जान कर गृहस्थ संघटे [सचितादि] की चीजों को आगे पीछे कर देवें वहां से गोचरी करने पर।
[९] दान निमित बनाया हुवा।
[१०] पुन्य निमित बनाया हुवा।
[११] रंक- भिखारी के लिए बनाया हुवा।
[१२] बाबा साधु के लिए बनाया हुआ आहार लेवे तो।
[१३] राज पिण्ड [रईसानी-बलिष्ट] आहार लेवे तो।
[१४] शय्यांतर-पिंड मकान दाता के यहां से लेवे तो।
[१५] नित्य-पिंड हमेशा एक ही घर से आहार लेवे तो।
(१६) पृथ्वी आदि सचित्त चीजों से लगा हुवा लेवे तो,,
(१७) इच्छा पूर्ण करने वाली दानशालाओं से से आहार ,, ,,
(१८) तुच्छ वस्तु (कम खाने में आवे और अधिक पाठनी पड़े) गोचरी में लेवे तो।
(१९) आहार देने के पहिले सचित्त पानी से हाथ धोया होवे तथा वहोराने के बाद सचित्त पानी से हाथ धोवे तो।
(२०) निषिद्ध कुल-(मद्य मांसादि अभक्ष्य भोजी) का आहार लेवे तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२१] अप्रतीतकारी [स्त्री पुरुष दुराचारी होवे ऐसे कुलका] का आहार लेवे तो।

[२२] जिसने अपने घर पर आने के लिये मना किया होवे ऐसे गृहस्थ के घर का आहार लेवे तो

[२३] मदिरादि वस्तु की गोचरी करे तो—महा दोष है

—: श्री आचारांग सूत्र में बताये हुवे ८ दोष:—

[१] मेहमान निमित्त बनाये हुवे आहार में से उनके जीमने के पहिले आहार लेवे तो।

[२] त्रस जीवों का मांस [जो सर्वथा निषिद्ध है] लेवे तो महादोष।

[३] पुन्यार्थ धन-धान्य में से बनाया हुवा आहार लेवे तो।

[४] रसोई [ज्योनार—जीमनवार] में से आहार लेवे तो।

[५] जिस घर पर बहुतसे भिखारी—भोजनार्थी इकट्ठे हुवे हो उस घर में से आहार लेवे तो।

[६] गरम आहार को फूंक देकर वहोराया हुवा

(७) भूमि गृह (भोंयरा—ऊंडी भकारी) में से निकाला हुवा आहार लेवे तो।

(८) पंखे आदि से ठण्डे किये हुवे आहार को लेवे तो

श्री भगवती सूत्र में बताये हुवे १२ दोष

(१) संयोग दोष आये हुवे आहार में मनोज्ञ बनाने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के लिये अन्य चीजें मिलावे (दूध में शक्कर आदि मिलावे)

(२) द्वेष-दोष-निरस आहार मिलने से घृणा लावे तो

(३) राग-दोष-सरस ,, ,, ,, खुशी ,, ,,

(४) अधिक प्रमाण में [ठूंस २ कर] आहार करे तो

[५] कालातिक्रम दोष-पहेले पहेर में लिये हुवे का ४ थे पहेर में आहार करे तो।

[६] मार्गातिक्रम दोष-दो गाउ से अधिक दूर लेजाकर आहार करे तो।

[७] सूर्योदय पहेले सूर्योदय पश्चात् आहार करे तो।

[८] दुष्काल तथा अटवी में दानशालाओं का ,, लेवे तो।

[९] ,, में गरीबों के लिये किया हुवा आहार ,, ,,

[१०] ग्लान-रोगी प्रमुख ,, ,, ,, ,, ,, ,,

[११] अनाथों के लिये ,, ,, ,, ,, ,,

[१२] गृहस्थ के आमन्त्रण से उसके घर जाकर आहार लेवे तो।

श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र में बताये हुवे ५ दोष

[१] मुनिके निमित्त आहार का रूपान्तर करके देवे तो

[२] ,, ,, ,, ,, ,, पर्याय पलट ,, ,, ,,

[३] गृहस्थ के यहां से अपने हाथ द्वारा आहार लेवे तो

[४] मुनि के निमित्त भंडारिये आदि के अन्दर से निकाल कर दिया हुवा आहार लेवे तो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[५] मधुरवचन बोल कर [खुशामद करके] आहार का याचना करके लेवे तो।

श्री निशीथ सूत्र में बताये हुवे ६ दोष।

[ ] गृहस्थ के यहां जाकर 'इस बर्तन में क्या है' इस प्रकार पूछ २ कर याचना करे तो।

(२) अनाथ, मजूर के पास से दीनतापूर्वक याचना करके आहार ले तो।

(३) अन्य तीर्थी (बाबा-साधु) की भिक्षा में से याचकर आहार लेवे तो।

(४) पासत्था (शिथिलाचारी) के पास से याचकर लेवे तो।

(५) जैन मुनियों की दुर्गंछा करने वाले कुल में से आहार लेवे तो।

(६) मकान की आज्ञा देने वाले को (शय्यांतर) साथ लेकर उसकी दलाली से आहार लेवे तो।

श्री दशा श्रुत स्कन्ध सूत्र में बताये हुवे २ दोष

(१) बालक निमित्त बनाया हुवा आहार लेवे तो
(२) गर्भवन्ती " " " " " "

श्री बृहत्कल्प सूत्र में बताया हुआ १ दोष

(१) चार प्रकार का आहार रात्रि को वासी रखकर दूसरे रोज भोगवे तो दोष।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं ४२×५+२+२३+८+१२+५×६×२×१=१०६
इनमें ५ मांडला का और १०१ गोचरी का दोष जानना।

॥ इति आहार के १०६ दोष सम्पूर्ण ॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

साधु-समाचारी

तथा

साधुओं के दिन कृत्य और रात्रि कृत्य
श्री उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २६

समाचारी १० प्रकार की:-(१) आवस्सिय (२) निसिहिय (३) आपुच्छणा (४) पडि पुच्छणा (५) छंदणा (६) इच्छा कार (७) मिच्छा कार (८ तहकार (९) अब्भुठणा और (१०) उप-संपया समाचारी।

(१) आवस्सिय-साधु आवश्यक-जरूरी (आहार निहार, विहार) कारण से उपाश्रय से बाहर जावे तब 'आवस्सिय' शब्द बोल कर निकले।

(२) निसिहिय-कार्य समाप्त होने पर लौट कर जब पुनः उपाश्रय में आवे तब 'निसिहिय' शब्द बोल कर आवे।

(३) आपुच्छणा-गोचरी, पडिलेहण आदि अपने सर्व कार्य गुरु की आज्ञा लेकर करे।

(४) पडिपुच्छणा-अन्य साधुओं का प्रत्येक कार्य गुरु की आज्ञा ले कर करना।

(५) छंदणा-आहार पानी गुरु की आज्ञानुसार दे देवे और अपने भाग में आये हुवे आहार को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी गुरुजनों आदि को आमन्त्रित करने के बाद खावे।

(६) इच्छाकार-[पात्रलेपादि] प्रत्येक कार्य में गुरु की इच्छा पूछ कर करे।

(७) मिच्छाकार-यत्किंचित् अपराध के लिये गुरु समक्ष आत्म निंदा करके 'मिच्छा मि दुक्कड़ं' दे।

(८) तहकार-गुरु के वचन को सदा 'तहत्त' प्रमाण कह कर प्रसन्नता से कार्य करे।

(९) अब्भुठणा-गुरु, रोगी, तपस्वी आदि की ग्लानता (घृणा) रहित वैयावच्च करे।

(१०)उपसंवया-जीवन पर्यन्त गुरुकुल वास करे (गुरु आज्ञानुसार विचरे)

दिन कृत्य

चार पहर दिन के और चार पहर रात्रि के होते हैं। दिन तथा रात्रि के चोथे भाग को पहर कहना।

(१) दिन निकलते ही प्रथम पहर के चोथे भाग में सर्व उपकरणों का पडिलेहण करे (२) तत्पश्चात् गुरु को पूछे कि मैं वैयावच्च करूं अथवा सज्झाय ? गुरु की आज्ञा मिलने पर वैसा ही १ पहर तक करे। (३) दूसरे पहर में ध्यान (किये हुवे स्वाध्याय की चिंतवन) करे (४) तीसरे पहर में गोचरी करे, प्रासुक आहार लाकर गुरु को बतावे, संविभाग करे और बड़ों को आमन्त्रित करके आहार करे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) चोथे पहर के ३ भाग तक स्वाध्याय करे (६) चोथे भाग में उपकरणों का पडिलेहण करे तथा पठाने की भूमि भी पडिलेहे; तत्पश्चात् (७) देवसी प्रतिक्रमण करे (६ आवश्यक करे) ।

रात्रि कृत्य

देवसी प्रति क्रमण करने के बाद प्रथम पहर में असज्झाय टाल कर स्वाध्याय करे दूसरे पहर में ध्यान करे, स्वाध्याय का अर्थ चिंतवे तत्पश्चात् निद्राआवे तो तीसरे पहर में सविध यत्ना पूर्वक संथारा संस्तारी कर स्वल्प निद्रा लेकर चोथे पहर की शुरूआत में उठे, निद्रा के दोष टालने के निमित काउसग्ग करे, पोन पहर तक स्वाध्याय सज्झाय करे. चोथे पहर में चोथे (अंतिम) भाग में रायसि प्रतिक्रमण करे पश्चात् गुरु वंदन करके पच्चखाण करे ।

॥ इति साधु समाचारी सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहोरात्रि की घडियों का यन्त्र

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र २६ वां अध्ययन)

७ स्वासोश्वास का १ थोव, ७ थोव का १ लव, ३८॥ लव की १ घड़ी (२४ मिनिट) प्रति दिन २॥ लव लव और २॥ थोव दिन बढता और घटता है, इसका यन्त्र।

	दिन कितनी घड़ी का				रात्रि कितनी घड़ी की			
माह	वदि ७	अ.	शुदि ७	पूर्णिमा	विदि ७	अ.	शु. ७	पूर्णि.
आषाढ	३४॥	३५	३५॥	३६	२५॥	२५	२४॥	२४
श्रावण	३५॥	३५	३४॥	३४	२४॥	२५	२५॥	२६
भाद्रपद	३२॥	३३	३२॥	३२	२६॥	२७	२७॥	२८
आश्विन	३१॥	३१	३०॥	३०	२८॥	२९	२९॥	३०
कार्तिक	२९॥	२९	२८॥	२८	३०॥	३१	३१॥	३२
मार्गशीर्ष	२७॥	२७	२६॥	२६	३२॥	३३	३३॥	३४
पोष	२५॥	२५	२४॥	२४	३४॥	३५	३५॥	३६
माघ	२४॥	२५	२५॥	२६	३५॥	३५	३४॥	३४
फाल्गुन	२६॥	२७	२७॥	२८	३३॥	३३	३२॥	३२
चैत्र	२८॥	२९	२९॥	३०	३१॥	३१	३०॥	३०
वैशाख	३०॥	३१	३१॥	३२	२९॥	२९	२८॥	२८
ज्येष्ठ	३२॥	३३	३३॥	३४	२७॥	२७	२६॥	२६

॥ इति अहोरात्रि की घडियों का यन्त्र सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिन पहर माप का यन्त्र

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २६)

दिन में प्रथम दो पहर में माप उत्तर तरफ मुंह रखकर लेवे और पीछले दो पहर में माप दक्षिण तरफ मुँह रखकर लेवे दाहिने पैर के घुटने तक की छाया को अपने पगले (पावने) और अङ्गुल से मापे इस प्रकार पोरसी तथा पोन पोरसी का माप पैर और आङ्गुल बताने वाला यन्त्र—

१ ली और ४ थी	१ पौरसी				पोन पोरसी			
माह	विदि ७	अ.	शुदि ७	पू.	विदि ७	अ.	शुदि ७	पूर्णिमा
अषाढ	प. आं.	प. आं.	प. आं.	प. आं.	प. आं.	प. आं.	प. आं.	प. आं.
	२–३	२–२	२–१	२–०	२–६	२–८	२–७	२–६
श्रावण	२–१	२–२	२–३	२–४	२–७	२–८	२–६	२-१०
भाद्रपद	२–५	२–६	२–७	२–८	३–१	३–२	३–३	३–४
आश्विन	२–६	२-१०	२-११	३–०	३–५	३–६	३–७	३–८
कार्तिक	३–१	३–२	३–३	३–४	३–६	३-१०	३ ११	४-०
मा.शीर्ष	३–५	३–६	३–७	३–८	४–३	४–४	४–५	४–६
पोष	३–६	३-१०	३-११	४–०	४–७	४–८	४–६	४-१०
माघ	३-११	३-१०	३–६	३–८	४–६	४–८	४–७	४–६
फाल्गुन	३–७	३–६	३–५	३–४	४–३	४–२	४–१	४–०
चैत्र	३–३	३–२	३–१	३–०	३-११	३-१०	३–६	३–८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैशाख	२-११	२-१०	२-९	२-८	३-७	३-६	३-५	३-४
ज्येष्ठ	२-७	२-६	२-५	२-४	३-१	३-०	२-११	२-१०

गुटना (ढींचण) के बदले बेंत से माप करना होवे तो ऊपर से आधा समझना ।

॥ इति दिन पहर माप का यन्त्र सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात्रि पहर देखने [जानने] की विधि

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २६)

जिस काल के अन्दर जो जो नक्षत्र समस्त रात्रि पूर्ण करता होवे वो नक्षत्र के चोथे भाग में आता हो । उस समय ही पोरसी आती है रात्रि की चोथी पोरसी चरम (अन्तिम) चोथे भाग को (दो घटी रात्रि को) पाउस (प्रभात) काल कहते हैं । इस समय सज्झाय से निवृत हो कर प्रति क्रमण करे । नक्षत्र निम्न लिखित अनुसार है ।

श्रावण में--१४ दिन उत्तराषाढा, ७ दिन अभिच, ८ दिन श्रवण १ धनिष्टा

भाद्रपद में--१४ दिन धनिष्टा, ७ दिन शतभिखा, ८ दिन पूर्वा भाद्रपद, १ दिन उत्तरा भाद्रपद

आश्विन में--१४ दिन उत्तरा भाद्रपद, १५ दिन रेवती १ दिन अश्वनी

कार्तिक में--१४ दिन अश्वनी, १५ दिन भरणी, १ दिन कृतिका

मगशर में--१४ दिन कृतिका, १५ दिन रोहिणी, १ दिन मृगशर

पोष में १४ दिन मृगशर, ८ दिन आर्द्रा, ७ दिन पुनर्वसु १ दिन पुष्य ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माघ में--१४ दिन पुष्य, १५ दिन अश्लेषा, १ दिन मघा।

फाल्गुन में--१४ दिन मघा, १५ दिन पूर्वा फाल्गुनी, १ दिन उत्तरा फाल्गुनी।

चैत्र में--१४ दिन उत्तरा फाल्गुनी, १५ दिन हस्ति, १ दिन चित्रा।

वैशाख में--१४दिन चित्रा,१५ दिन स्वाति, १ दिन विशाखा।

ज्येष्ठ में--१४ दिन विशाखा, १५ दिन अनुराधा, १ दिन ज्येष्ठा।

आषाढ में--१४ दिन ज्येष्ठा, १५ दिन मूल और १ दिन पूर्वाषाढा।

अन्तिम एकेक दिन लिखा है। वो नक्षत्र पूर्णिमा के दिन होवे तो उस महिने का अन्तिम दिन समझना।

॥ इति रात्रि पहर जानने की विधि सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४ पूर्व का यंत्र

१४ पूर्व के नाम	पद संख्या	कर्त्ता	वत्थु	चूलवत्थु	शाही [स्याही] हास्त	विषय-वर्णन
उत्पाद	क्रोड़		१०	४	१	सर्व द्रव्य, गुण पर्याय की उत्पति और नाश
अगणीय	७० लाख		१४	१२	२	स० द्र० गु० प० का ज्ञान
वीर्य	६० "		८	८	४	जीवों के वीर्य का वर्णन
आस्ति नास्ति	१ क्रोड़	पांचवे गणधर श्री सुधर्मास्वामी	१८	१०	८	आस्ति नास्ति का स्वरूप और स्याद्वाद
ज्ञान प्रमाद	२ "		१२	०	१६	पांच ज्ञान का व्याख्यान
सत्य	" २६ "		२	०	३२	सत्य संयम का "
आत्मा	" १ "८०ला.		१६	०	६४	नय प्रमाण, दर्शन सहित आत्म स्वरूप
कर्म	" ८४ लाख		३०	०	१२८	कर्म प्रकृति, स्थिति अनुभाग, मूल उतर प्रकृति
प्रत्याख्यान प्रमाद	१क्रो १ह०		२०	०	२५६	प्रत्याख्यान का प्रतिपादन
विद्या प्रमाद	२६ क्रोड़		१५	०	५१२	विद्या के अतिशय का व्याख्यान
कल्याणक	" १ "		१२	०	१०२४	भगवान के कल्याणक का "
प्राणावाय	" ६ "		१३	०	२०४८	भेदस, हतप्राण के वि. का'
क्रियावशाल	०१क्रो.५०ला.		३०	०	४०६६	क्रिया का व्याख्यान
लोक बिंदु-सार	६६ लाख		२५	०	८१६२	बिन्दु में लोक स्वरूप, सर्व अक्षर सन्निपात

अम्बाड़ी सहित हाथी के समान स्याही के ढगले से १ पूर्व लिखाया जाता है एवं १४ लिखने के लिये कुल १६३८३ हाथी प्रमाण स्याही की जरूरत होती है इतनी स्याही से जो लिखा जाता है उस ज्ञान को १४ पूर्व का ज्ञान कहते हैं।

॥ इति १४ पूर्व का यन्त्र सम्पूर्ण ॥

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र २९ वां अध्ययन)

(१) वैराग्य तथा मोक्ष पहुंचने की अभिलाषा ।

(२) विषय--भोग की अभिलाषा से रहित होना ।

(३) धर्म करने की श्रद्धा ।

(४) गुरु स्वधर्मी की सेवा--भक्ति करना ।

(५) पाप का अलोचन करना ।

(६) आत्म दोषों की आत्म--साक्षी से निन्दा करना ।

(७) गुरु के समीप पाप की निन्दा करना ।

(८) सामायिक (सावद्य पाप से निवृत होने की मर्यादा) करे ।

(९) तीर्थंकरों की स्तुति करे ।

(१०) गुरु को वंदन करे ।

(११) पाप निवर्तन--प्रति क्रमण करे ।

(१२) काउसग्ग करे (१३) प्रत्याख्यान करे (१४) संध्या समय प्रतिक्रमण करके नमोत्थुणं कहे, स्तुति मंगल करे (१५) स्वाध्याय का काल प्रतिलेखे (१६) प्रायश्चित लेवे (१७) क्षमा मांगे (१८) स्वाध्याय करे (१९) सिद्धान्त की वाचनी देवे (२०) सूत्र--अर्थ के प्रश्न पूछे (२१) वारंवार सूत्र ज्ञान फेरे (२२) सूत्रार्थ चिंतवे (२३) धर्म कथा कहे (२४) सिद्धान्त की आराधना करे (२५) एकाग्र शुभ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन की स्थापना करे (२६) सतरह भेद से संयम पाले (२७) बारह प्रकार का तप करे (२८) कर्म टाले (२९) विषय सुख टाले (३०) अप्रतिबन्धपना करे (३१) स्त्री पुरुष नपुंसक रहित स्थान भोगवे (३२) विशेषतः विषय आदि से निवर्ते (३३) अपना तथा अन्य का लाया हुवा आहार वस्त्रादि इकट्ठे करके बांट लेवे इस प्रकार के संभोग का पच्चखाण करे (३४) उपकरण का पच्चखाण करे (३५) सदोष आहार लेने का पच्चखाण करे (३६) कषाय का पच्चखाण करे करे (३७) अशुभ योग का पच्च० (३८) शरीर शुश्रूषा का पच्च० (३९) शिष्य का पच्च० (४०) आहार पानी का पच्च० (४१) दिशा रूप अनादि स्वभाव का पच्च० (४२) कपट रहित यति के वेष और आचार में प्रवर्ते (४३) गुणवन्त साधु की सेवा करे (४४) ज्ञानादि सर्व गुण संपन्न होवे (४५) राग द्वेष रहित प्रवर्ते (४६) क्षमा सहित प्रवर्ते (४७) लोभ रहित प्रवर्ते (४८) अहङ्कार रहित प्रवर्ते (४९) कपट रहित (सरल-निष्कपट) प्रवर्ते (५०) शुद्ध अन्तःकरण (सत्यता) से प्रवर्ते (५१) करण सत्य (सविधि क्रिया काण्ड करता हुवा) प्रवर्ते (५२) योग (मन, वचन, काया) सत्य प्रवर्ते (५३) पाप से मन निवृत कर मनगुप्ति से प्रवर्ते (५५) काय-गुप्ति से प्रवर्ते (५६) मन में सत्य भाव स्थापित करके प्रवर्ते (५७) वचन (स्वाध्यादि) पर सत्य भाव स्थापित करके प्रवर्ते (५८) काया को सत्य भाव से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवर्तावे (५६) श्रुत ज्ञानादि से सहित होवे (६०) समकित सहित होवे (६१) चारित्र सहित होवे (६२) श्रोत्रेन्द्रिय– (६३) चक्षुइन्द्रिय- (६४) घ्राणेन्द्रिय–(६५) रसेन्द्रिय–(६६) स्पर्शेन्द्रिय–का निग्रह करे (६७-७०) क्रोध, मान, माया, लोभ जीते (७१) राग द्वेष और मिथ्यात्व को जीते (७२) मन, वचन, काया के योगों को रोकते हुवे शैलेषी अवस्था धारण करके और (७३) कर्म रहित होकर मोक्ष पहुँचे।

एवं आत्मा ७३ बोलों के द्वारा क्रमशः मोक्ष प्राप्त करके शीतलीभूत होती है।

॥ इति सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४ राज लोक

लोक असंख्यात क्रोड़ा क्रोड़ योजन के विस्तार में है जिसमें पंचास्ति काय भरी हुई है अलोक में आकाश सिवाय कुछ नहीं है। लोक का प्रमाण बताने के लिये 'राज' संज्ञा दी जाती है।

३,८१,१२,६७० मन का एक भार, ऐसे १००० भार वजन के एक गोले को ऊंचा फेके तो ६ महिने ६ दिन, ६ पहर, ६ घड़ी, ६ पल में जितना नीचे आवे उतने क्षेत्र को १ राजु कहते हैं ऐसे १४ राजु का लम्बा (ऊंचा) यह लोक है।

'राज' के ४ प्रकार है-(१) घनराज=लम्बाई, चौड़ाई ऊंचाई एकेक राजु (२) परतर राज=घन राज का चोथा भाग (३) सूचि राज=परतर राज का चोथा भाग (४) खंड राज=सूचि राज का चौथा भाग।

अधो लोक ७ राजु जाड़ा (ऊंचा) है जिसमें एकेक राजु की जाड़ी ऐसी ७ नरक है।

नाम	जाड़ी	चौड़ाई	घनराज	परतरराज	सूचिराज	खंडराज
रत्न प्रभा	१राजु	१ राजु	१ राजु	४ राजु	१६ राजु	६४ राजु
शर्कर	"	" २॥ "	६। "	२५ "	१०० "	४०० "
वालु	"	" ४ "	१६ "	६४ "	२५६ "	१०२४ "

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंक	"	"	५	" २५ "	१०० "	४०० "	१६०० "
धूम	"	"	६	" ३६ "	१४४ "	५७६ "	२३०४ "
तम	"	"	६॥	" ४२। "	१६६ "	६७६ "	२७०४ "
तमतमा"		"	७	" ४६ "	१६६ "	७८४ "	३१३६ "

अधो लोक में कुल १७५॥ घनराज, ७०२ परतर राज, २८०८ सूचि राज, ११२३२ खण्ड राज हैं ।

१८०० योजन जाड़ा व १ राज विस्तार वाला तिर्छा लोक है जिसमें असंख्यात द्वीप समुद्र (मनुष्य तिर्यंच के स्थान), और ज्योतिषी देव हैं तिर्छा और उर्ध्व लोक मिल कर ७ राजु है ।

समभूमि से १॥ राजु ऊंचा १-२ देवलोक है यहां से १ राजु ऊँचा तीसरा-चौथा देवलोक है यहां से ०॥। राजु ऊंचा ब्रह्म देवलोक है ०। राजु ऊंचा लांतक देवलोक यहाँ से ०। राजु ऊंचा सातवाँ देवलोक, ०। राजु ऊंचा आठवाँ, ०॥ राजु ऊंचा ६-१० वाँ देवलोक, ०॥ राजु ऊंचा ११-१२ देवलोक, १ राजु ऊंचा नव ग्रीयवेक १ राजु ऊंचा ५ अनुत्तर विमान आते हैं इनका क्रमशः बढता घटता विस्तार यन्त्रानुसार है—

स्थान	जाड़ा	विस्तार	घनराज	परतरराज	सूचिराज	खंडराज
सम भूमिसे	०॥	१	०॥	२	८	३२
यहां से	०॥	१॥	$१\frac{१}{८}$	४।	१८	७२
"	०।	२	१	४	१६	६४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१-२देवलोकसे	०।	२॥	१॥ $\frac{१}{१६}$	६।	२५	१००
यहां से	०॥	३	४।	१८	७२	२८८
३-४देवलोकसे	०॥	४	८	३२	१२८	५१२
५ वां ,,	०॥।	५	१८॥।	७५	३००	१२००
६ ठ्ठा ,,	०।	५	६।	२५	१००	४००
७ वाँ ,,	०।	४	४	१६	६४	२५६
८ वाँ ,,	०।	४	४	१६	६४	२५६
९-१० ,,	०॥	३	४॥	१८	७२	२८८
११-१२ ,,	०॥	२॥	३ $\frac{१}{८}$	१२॥	५०	२००
यहां से	०।	२॥	१॥ $\frac{१}{१६}$	६।	२५	१००
नव ग्रीयवेक	०॥।	२	३	१२	४८	१९२
यहां से	०॥	१।	१ $\frac{१}{८}$	४॥	१८	७२
५ अनु. वि.	०॥	१	०॥	२	८	३२

कुल ऊर्ध्व लोक के ६३॥ घन राज हुवे और समस्त लोक के २३९ घन राज हुवे ।

॥ इति १४ राजलोक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारकी का नरक वर्णन

नरक के २१ द्वार–१ नाम २ गोत्र ३ (जाड़ापना) ऊंचाई ४ चौड़ाई ५ पृथ्वी पिण्ड ६ करण्ड ७ पाथड़ा ८ आंतरा ९ पाथड़ा पाथड़ा का आन्तरा (अन्तर) १० घणोदधि ११ घनवायु १२ तनवायु १३ आकाश १४ नरक नरक का अन्तर १५ नरक वासा १६ अलोक अन्तर १७ वलिया १८ क्षेत्र वेदना १९ देव वेदना २० वैक्रिय २१ अल्प बहुत्व द्वार।

१ नाम द्वार–१ घमा २ वंशा ३ शीला ४ अञ्जना ५ रीट्ठा ६ मघा ७ माघवती।

२ गोत्र द्वार–१ रत्न प्रभा २ शर्करा प्रभा ३ वालु प्रभा ४ पंक प्रभा ५ धूम प्रभा ६ तम प्रभा ७ तमतमा (महा तम) प्रभा।

३ जाड़ा पना द्वार–प्रत्येक नरक एकेक राजु जाडी है।

(४) चौड़ाई–१ ली नरक १ राजु चौड़ी, २ री २॥ राजु, तीसरी ४ राजु, चौथी ५ राजु, पांचवी ६ राजु, छट्ठी ६॥ राजु, और ७ वीं नरक ७ राजु चौड़ी है परन्तु नेरिये १ राजु विस्तार में (त्रस नाल प्रमाण) ही हैं।

(५) पृथ्वी पिण्ड द्वार–प्रत्येक नरक असंख्य २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योजन की है परंतु पृथ्वी पिंड १ ली नरक का १८०००० यो०, दूसरी का १३२००० यो०, तीसरी का १२८००० यो०, चोथी का १२०००० यो०, पांचवी का ११८००० यो०, छट्ठी का ११६००० यो०, और सातवीं का १०८००० योजन का पृथ्वी पिण्ड है।

(६) करण्ड द्वार-पहेली नरक में ३ करण्ड हैं (१) खरकरण्ड १६ जात का रत्न मय १६ हजार योजन का (२) आयुल बहूल पानी (जल) मय ८० हजार योजन का (३) पंक बहूल कर्दम मय ८४ हजार योजन का कुल १८०००० योजन है शेष ६ नरकों में करण्ड नहीं।

७ पाथड़ा ८ आन्तरा द्वार--पृथ्वी पिण्ड में से १००० योजन ऊपर और १००० योजन नीचे छोड़ कर शेष पोलार में आन्तरा और पाथड़ा है। केवल ७ वीं नरक में ५२५०० यो० नीचे छोड़ कर ३००० योजन का एक पाथड़ा है।

पहेली	नरक	में	१३	पाथड़ा,	१२	आन्तरा	है
दूसरी	,,	,,	११	,, ,	१०	,,	,,
तीसरी	,,	,,	९	,, ,	८	,,	,,
चोथी	,,	,,	७	,, ,	६	,,	,,
पांचवीं	,,	,,	५	,, ,	४	,,	,,
छट्ठी	,,	,,	३	,, ,	२	,,	,,

पहेली नरक के १२ आन्तरा में से २ ऊपर के छोड़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर शेष १० आन्तराओं में दश जाति के भवन पति रहते हैं। शेष नरकों में भवन पति देवताओं के वास नहीं हैं। प्रत्येक पाथड़ा ३००० योजन का है जिसमें १००० योजन ऊपर, १००० योजन नीचे छोड़ कर मध्य के १००० योजन के अन्दर नेरिये उत्पन्न होने की कुम्भियें हैं।

९ एकेक पाथड़े का अन्तर--पहेली नरक में ११५८३$\frac{१}{३}$ यो०, दूसरी में ९७०० यो०, तीसरी में १२७५० यो०, चोथी में १६१६६$\frac{२}{३}$ यो०, पांचवीं में २५२५० यो०, छट्ठी में ५२५०० यो०, का अतन्र है सातवीं में एक ही पाथड़ा है।

१० घनोदधि द्वार--प्रत्येक नरक के नीचे २० हजार योजन का घनोदधि है।

११ घनवायु द्वार--प्रत्येक नरक के घनोदधि नीचे असंख्य योजन का घनवायु है।

१२ तनवायु द्वार--प्रत्येक नरक के घनवायु नीचे असंख्य योजन का तनवायु है।

१३ आकाश द्वार--प्रत्येक नरक के तनवायु नीचे असंख्य योजन का आकाश है।

१४ नरक--नरक का अन्तर--एक नरक में दूसरी नरक से असंख्य असंख्य योजन का अन्तर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५ नरक वासा द्वार–पहेली नरक में ३० लाख, दूसरी में २५ लाख, तीसरी में १५ लाख, चोथी में १० लाख, पांचवीं में ३ लाख, छट्ठी में ९९९९५ और सातवीं नरक में ५ नरक वासा हैं। इनमें ४/५ नरकवासा असंख्यात योजन का है जिनमें असंख्यात नेरिये हैं। १/५ नरक वासा संख्यात योजन का है और उनमें संख्यात नेरिया हैं।

तीन चिमटी बजाने में जम्बूद्वीप की २१ वार प्रदक्षिणा करने की गति वाले देवों को ज. १–२–३ दिन० उ० ६ माह लगे कितनों का अन्त आवे और कितनों का नहीं आवे, एवं विस्तार वाला असंख्य योजन का कोई २ नरक वासा है।

१६ अलोक अन्तर–१७ वलोया द्वार–अलोक और नरक में अन्तर है, जिसमें घनोदधि, घनवायु और तनुवायु का तीन वलय (चूड़ी कड़ा) के आकार समान आकार है—

नरक	रत्न प्र०	शर्कर प्र०	वालु प्र०	पंक प्र०	धूम प्र०	तम प्र०	तमतमा प्र०
अलोक अं०	१२ यो.	१२ २/३ यो०	१३ १/३ यो.	१४ यो.	१४ २/३ यो.	१५ १/३ यो.	१६ यो०
वलय सं०	३	३	३	३	३	३	३
घनोदधि	६ यो.	६ १/३ यो०	६ २/३ यो०	७ यो०	७ १/३ यो.	७ २/३	८ यो०
घनवात	४॥ यो०	४॥। "	५ "	५। "	५॥ "	५॥। "	६ "
तनवात	१॥ "	१॥ १/१२ "	१॥ २/१२ "	१॥। "	१॥। १/१२ "	१॥। २/१२ "	२ "

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८ क्षेत्र वेदना द्वार–दश प्रकार की है–अनन्त क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दाह (जलन), ज्वर, भय, चिंता, खुजली, और पराधीनता, एक से दूसरी में, दूसरी से तीसरी में (इस प्रकार) अनन्त अनन्त गुणी वेदना सातवीं नरक तक है नरक के नाम के अनुसार पदार्थों की भी अनन्ती वेदना है ।

१९ देव कृत वेदना–१·२·३ नरक में परमाधामी देव पूर्व कृत पाप याद करा २ कर विविध प्रकार से मार–दुख देते हैं शेष नरक के जीव परस्पर लड़ २ कर कटा करते हैं ।

२० वैक्रिय द्वार–नेरिये खराब (तीक्ष्ण) शस्त्र के समान रूप बनाते हैं अथवा वज्रमुख कीड़े रूप होकर अन्य नेरियों के शरीरों में प्रवेश करते हैं अन्दर जाने बाद बड़ा रूप बना कर शरीर के टुकड़े २ कर डालते हैं ।

२१ अल्प बहुत्व द्वार सर्व से कम सातवीं नरक के नेरिये, उससे ऊपर ऊपर के असंख्यात गुणे नेरिये जानना, शेष विस्तार २४ दण्डकादि थोकड़ों में से जानना ।

॥ इति नारकी का वर्णन सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भवनपति विस्तार

भवनपति देवों के २१ द्वार–१ नाम २ वासा ३ राजधानी ४ सभा ५ भवन संख्या ६ वर्ण ७ वस्त्र ८ चिन्ह ६ इन्द्र १० सामानिक ११ लोकपाल १२ त्रयस्त्रिंश १३ आत्म रक्षक १४ अनीका १५ देवी १६ परिषद् १७ परिचारणा १८ वैक्रिय १६ अवधि २० सिद्ध २१ उत्पन्न द्वार।

१ नाम द्वार–१० भेद–१ असुर कुमार २ नाग कुमार ३ सुवर्ण कुमार ४ विद्युत कुमार ५ अग्नि कुमार ६ द्वीप कुमार ७ दिशा कुमार ८ उदधि कुमार ६ वायु कुमार १० स्तनित कुमार।

२ वासा द्वार–पहेली नरक के १२ आन्तराओं में से नीचे के १० आन्तराओं में दश जाति के भवनपति रहते हैं।

३ राजधानी द्वार–भवनपति की राजधानी तिर्छे लोक के अरुण वर द्वीप–समुद्रों में उत्तर दिशा के अन्दर 'अमर चंचा' बलेन्द्र की राजधानी है और दूसरे नव-निकाय के देवों की भी राजधानियें हैं। दक्षिण दिशा में 'चमर चंचा' चमरेन्द्र की और नव निकाय के देवों की भी राजधानियें हैं।

४ सभा द्वार–एकेक इन्द्र के पांच सभा हैं–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) उत्पात सभा (देव उत्पन्न होने के स्थान), (२) अभिषेक सभा (इन्द्र के राज्याभिषेक का स्थान) (३) अलंकार सभा (देवों के वस्त्र भूषण—अलंकार सजने के स्थान) (४) व्यवसाय सभा (देवयोग्य धर्म नीति की पुस्तकों का स्थान) और (५) सौधर्मी सभा (न्याय-इन्साफ करने का स्थान)

५ भवन संख्या-कुल भवन ७७२००००० हैं जिन में ४ क्रोड़ ६ लाख भवन दक्षिण में और ३ क्रोड़ ६६ लाख भवन उत्तर दिशा में हैं विस्तार यन्त्र से समझना।

६ वर्ण, ७ वस्त्र ८ चिन्ह ६ इन्द्र द्वार—यन्त्र से जानना—

नाम	भवन उत्तर लाख	भवन दक्षिण लाख	वर्ण	वस्त्र वर्ण	चिन्ह	इन्द्र दो २ उतर के	इन्द्र दो २ दक्षिण के
असुरकुमार	३०	३४	काला	रक्त	चूडामणि	बलेन्द्र	चमरेन्द्र
नाग ”	४०	४४	श्वेत	नीला	नागफण	भूतेन्द्र	धरणेन्द्र
सुवर्ण ”	३४	३८	सुवर्ण	श्वेत	गरुड़	वेणुदाली	वेणुदेव
विद्युत ”	३६	४०	रक्त	नीला	वज्र	हरिसिंह	हरिकन्त
अग्नि ”	३६	४०	”	”	कलश	अग्नि मानव	अग्निसिंह
द्वीप ”	३६	४०	”	”	सिंह	विशेष्ट	पूर्ण
दिशा ”	३६	४०	पांडुर	”	अश्व	जल प्रभ	जलकन्त
उदधि ”	३६	४०	सुवर्ण	श्वेत	गज	अमृत वाहन	अमृत गति
पवन ”	४६	५०	श्याम	पं.वर्ण	मगर	प्रभंजन	वेलव
स्तनित ”	३६	४०	सुवर्ण	श्वेत	वर्धमान	महाघोष	घोष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामानिक देव–(इन्द्र के उमराव समान देव) चमरेन्द्र ६४०००, बलेन्द्र के ६०००० और शेष १८ इन्द्रों के छः २ हजार सामानिक देव हैं।

११ लोक पाल देव–(कोट वाल समान) प्रत्येक इन्द्र के चार २ लोक पाल हैं।

१२ त्रयास्त्रिंश देव–(राज गुरु समान) प्रत्येक इन्द्र के तेंतीश २ त्रयास्त्रिंश देव हैं।

१३ आत्म रक्षक देव–चमरेन्द्र के २५६००० देव, बलेन्द्र के २४०००० देव और शेष इन्द्रों के २४–२४ हजार देव हैं।

१४ अनीका द्वार–हाथी, घोड़े, रथ, महिष, पैदल, गंधर्व, नृत्यकार एवं ७ प्रकार की अनीका है प्रत्येक अनीका की देव संख्या–चमरेन्द्र के ८१२८०००, बलेन्द्र के ७६२०००० और १८ इन्द्रों के ३५५६००० देव होते हैं।

१५ देवी द्वार–चमरेन्द्र तथा बलेन्द्र की ५–५ अग्रमहिषी (पटरानी) हैं प्रत्येक पटरानी के आठ हजार देवियों का परिवार है एकेक देवी आठ हजार वैक्रिय करे अर्थात् ३२ क्रोड वैक्रिय रूप होते हैं शेष १८ इन्द्रों की ६–६ अग्रमहिषी हैं एकेक के ६–६ हजार देवियों का परिवार है और सर्व ६–६ हजार वैक्रिय करे एवं २१ क्रोड ६० लाख वैक्रिय रूप होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६ परिषद् द्वार—परिषदा (सभा) तीन प्रकार की हैं।

१ आभ्यन्तर सभा—सलाह योग्य बड़ों की सभा जो मान पूर्वक बुलाने से आवें (और भेजने पर जावें)

२ मध्यम सभा—सामान्य विचार वाले देवों की सभा जो बुलाने से आवे परन्तु बिना भेजे जावें।

३ बाह्य सभा—जिन्हें हुक्म दिया जा सके ऐसे देवों की सभा, जो बिना बुलाये आवें और जावें।

इन्द्र	आभ्यन्तर सभा		मध्य सभा		बाह्य सभा	
	देव सं०	स्थिति	देव सं०	स्थिति	देव सं०	स्थिति
चमरेन्द्र	२४०००	२॥ पल्य	२८०००	२ पल्य	३२०००	१॥ पल्य
बलेन्द्र	२००००	३॥ ,,	२४०००	३ ,,	२८०००	२॥ ,,
दक्षिण के ६ इन्द्र	६००००	१ ,,	७००००	०॥ ,, से अ०	८००००	०॥ ,, से अ०
उत्तर के ६ इन्द्र	५००००	०॥ ,, स अ०	६००००	,, ,,	७००००	,, ,, से न्यून

इन्द्र	आभ्यन्तर सभा		मध्यम सभा		बाह्य सभा	
	देवी सं०	स्थिति	देवी सं०	स्थिति	देवी सं०	स्थिति
चमरेन्द्र	३५०	१॥ पल्य	३००	१ पल्य	२५०	१ पल्य
बलेन्द्र	४५०	२॥ ,,	४००	२ ,,	३५०	१॥ ,,
दक्षिण के ६ इन्द्र	१७५	०॥ ,, से न्यून	१५०	०। ,, से अ०	१२५	०। ,,
उत्तर के ६ इन्द्र	२२५	०॥ पल्य	२००	०॥ पल्य से न्यून	१७५	०। ,, से अ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७ परिचरण द्वार-(मैथुन) पांच प्रकार का- मन, रूप शब्द, स्पर्श और काय परिचारण (मनुष्य वत् देवी के साथ भोग)

१८ वैक्रिय करे तो-चमरेन्द्र देव-देवियों से समस्त जंबूद्वीप भरे, असंख्य द्वीप भरने की शक्ति है परन्तु भरे नहीं।

बलेन्द्र देव-देवियों से साधिक जंबूद्वीप भरे, असंख्य भरने की शक्ति है परन्तु भरे नहीं।

१८ इन्द्र देव-देवियों से समस्त जंबूद्वीप भरे संख्यात द्वीप भरने की शक्ति है परन्तु भरे नहीं।

लोकपाल देवियों की शक्ति संख्यात द्वीप भरने की शेष सबों की सामानिक,त्रयस्त्रिंश देव-देवी और लोकपाल देव की वैक्रिय शक्ति अपने इन्द्रवत्, वैक्रिय का काल १५ दिन का जानना।

१६ अवधि द्वार-असुर कुमार देव ज० २५ यो० उ० ऊर्ध्व सौधर्म देवलोक, नीचे तीसरी नरक, तीच्छीं असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने व देखे शेष ६ जाति के भवनपति देव ज० २५ यो० उ० ऊंचा ज्योतिषी के तले तक, नीचे पहली नरक, तीच्छीं संख्यात द्वीप समुद्र तक जाने-देखे।

२० सिद्ध द्वार-भवनपति में से निकले हुवे देव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य होकर १ समय में १० जीव मोक्ष जासके भवनपति-देवियों में से निकली हुई देवियें (मनुष्य होकर) पाँच जीव मोक्ष जा सके ।

२१ उत्पन्न द्वार-सर्व प्राण, भूत, जीव सत्य भवनपति देव व देवी रूप से अनन्त बार उत्पन्न हुवे परन्तु सत्य ज्ञान बिना गरज सरी नहीं (उद्देश्य पूर्ण हुवा नहीं)

शेष विस्तार लघुदण्डक आदि थोकड़े से जानना चाहिये ।

॥ इति भवनपति विस्तार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाण व्यन्तर विस्तार

वाण व्यन्तर के २१ द्वार-१ नाम २ वास ३ नगर ४ राजधानी ५ सभा ६ वर्ण ७ वस्त्र ८ चिन्ह ९ इन्द्र १० सामानिक ११ आत्म रक्षक १२ परिषद् १३ देवी १४ अनीका १५ वैक्रिय १६ अवधि १७ परिचारणा १८ सुख १९ सिद्ध २० भव २१ उत्पन्न द्वार ।

१ नाम द्वार-१६ व्यन्तर-१ पिशाच २ भूत ३ यक्ष ४ राक्षस ५ किन्नर ६ किंपुरुष ७ महोरग ८ गंधर्व ९ आणपन्नी १० पान पन्नी ११ ईसीवाय १२ भूय वाय १३ कन्दिय १४ महा कन्दिय १५ कोहण्ड १६ पयंग देव ।

२ वासा द्वार-रत्न प्रभा नरक के ऊपर का १ हजार योजन का जो पिण्ड है उसमें १०० योजन ऊपर १०० योजन नीचे छोड़ कर ८०० योजन में ८ जाति के वाण-व्यन्तर देव रहते हैं और ऊपर के १०० यो० पिण्ड में १० यो० ऊपर, १० यो० नीचे छोड़कर ८० यो० में ९ से १६ जाति के व्यन्तर देव रहते हैं । (एकेक की यह मान्यता है कि ८०० यो० में व्यन्तर देव और ८० यो० में १० जृम्भका देव रहते हैं ।)

३ नगर द्वार-ऊपर के वासाओं में वाणव्यन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवों के असंख्यात नगर हैं जो संख्याता संख्याता योजन के विस्तार वाले और रत्नमय हैं।

४ राजधानी द्वार—भवनपति से कम विस्तार वाली प्रायः १२ हजार योजन की तीच्छें लोक के द्वीप समुद्रों में रत्नमय राजधानियें हैं।

५ सभा द्वार—एकेक इन्द्र के ५-५ सभा हैं भवन पति वत्।

६ वर्ण द्वार—यक्ष, पिशाच, महोरग, गंधर्व का श्याम वर्ण, किन्नर का नील, राक्षस और किंपुरुष का श्वेत, भूत का काला। इन वाण व्यन्तर देवों के समान शेष ८ व्यन्तर देवों के शरीर का वर्ण जानना।

७ वस्त्र द्वार—पिशाच, भूत, राक्षस के नीले वस्त्र, यक्ष किन्नर किंपुरुष के पीले वस्त्र, महोरग गन्धर्व के श्याम वस्त्र एवं शेष व्यन्तरों के वस्त्र जानना।

८ चिन्ह और ९ इन्द्र द्वार—प्रत्येक व्यन्तर की जाति के दो २ इन्द्र हैं।

व्यन्तर देव	दक्षिण इन्द्र	उत्तर इन्द्र	ध्वजा पर चिन्ह
पिशाच	कालेन्द्र	महा कालेन्द्र	कदम वृक्ष
भूत	सुरूपेन्द्र	प्रति रुपेन्द्र	सुलक्ष ,,
यक्ष	पूर्णेन्द्र	माणिभद्र	वड ,,
राक्षस	भीम	महा भीम	खटंक उपकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्नर	किन्नर	किंपुरुष	अशोक वृक्ष
किंपुरुष	सापुरुष	महापुरुष	चंपक ,,
महोरग	अतिकाय	महाकाय	नाग ,,
गंधर्व	गति रति	गति यश	तुंबरु ,,
आणपन्नी	सनिहि	सामानी	कदम्ब ,,
पाण पन्नी	धाई	विधाई	सुलस ,,
ईसी वाय	ऋषि	ऋषि पाल	बड़ ,,
भूय वाय	ईश्वर	महेश्वर	खटंक उपकर
कन्दिय	सुविच्छ	विशाल	अशोक वृक्ष
महाकान्दिय	हास्य	हास्यरति	चंपक ,,
कोदण्ड	श्वेत	महाश्वेत	नाग ,,
पयंग देव	पतंग	पतंग पति	तुंबरु ,,

१० सामानिक द्वार—सर्व इन्द्रों के चार चार हजार सामानिक हैं ।

११ आत्म रक्षक द्वार—सर्व इन्द्रों के सोलह सोलह हजार आत्म रक्षक देव हैं ।

१२ परिषदा द्वार—भवन पति समान इनके भी तीन प्रकार की सभा हैं । (१) आभ्यन्तर (२) मध्यम (३) बाह्य ।

सभा	देव संख्या	स्थिति	देवी संख्या	स्थिति
आभ्यन्तर	८०००	०॥ पल्य	१००	०। पल्य जाजेरी
मध्यम	१००००	०॥ "से न्यून	१००	०। "
बाह्य	१२०००	०। पल्य जा०	१००	०। " से न्यून

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३ **देवी द्वार**-प्रत्येक इन्द्र के चार चार देवी, एक एक देवी हजार के परिवार सहित सब देवियें हजार हजार वैक्रिय रूप कर सकती हैं।

१४ **अनीका द्वार**-हाथी, घोडे आदि ७ प्रकार अनीका है प्रत्येक में ५०८००० देव होते हैं!

१५ **वैक्रिय द्वार**-समग्र जम्बू द्वीप भरा जाय इतने रूप बनावे, संख्यात द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है।

१६ **अवधि द्वार**-ज० २५ यो०, उ० ऊंचा ज्योतिषी का तला, नीचे पहली नरक और तीर्च्छे संख्यात द्वीप समुद्र जाने देखे।

१७ **परिचारण द्वार**-(मैथुन) ५ प्रकार से भवन पति समान।

१८ **सुख द्वार**-अबाधित मनुष्यों के सुखों से अनन्त गुणा सुख है।

१९ **सिद्ध द्वार**-वाण व्यन्तर देवों में से निकल कर १ समय में १० सिद्ध हो सके व देवियों में से ५ हो सके।

२० **भव द्वार**-संसार भ्रमण करे तो १-२-३ जीव अनन्त भव करे।

२१ **उत्पन्न द्वार**-सर्व जीव अनन्ती वार वाण व्यतन्र में उत्पन्न हो आये हैं परन्तु इन पौद्गलिक सुखों से सिद्धि नहीं हुई।

॥ इति वाण व्यन्तर विस्तार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्योतिषी देव विस्तार

ज्योतिषी देव २॥ द्वीप में (चर चलने वाले) और २॥ द्वीप बारह स्थिर हैं ये पक्की ईंट के आकारवत हैं सूर्य–सूर्य के और चन्द्र–चन्द्र के एकेक लाख योजन का अन्तर है चर ज्योतिषी से स्थिर ज्यो० आधी कान्ति वलि हैं चन्द्र के साथ अभिच नक्षत्र और सूर्य के साथ पुष्य नक्षत्र का सदा योग है मानुषोतर पर्वत से आगे और अलोक से ११११ योजन इस तरफ उसके बीच में स्थिर ज्यो० देव-विमान हैं परिवार चर ज्यो० समान जानना ।

ज्यो० के ३१ द्वार–१ नाम २ वासा ३ राजधानी ४ सभा ५ वर्ण ६ वस्त्र ७ चिन्ह ८ विमान चौड़ाई ९ विमान जाडाई १० विमान वाहक ११ मांडला १२ गति १३ ताप क्षेत्र १४ अन्तर १५ संख्या १६ परिवार १७ इन्द्र १८ सामानिक १९ आत्म रक्षक २० परिषदा २१ अनीका २२ देवी २३ गति २४ ऋद्धि २५ वैक्रिय २६ अवधि २७ परिचारणा २८ सिद्ध २९ भव ३० अल्प बहुत्व ३१ उत्पन्न द्वार।

१ नाम द्वार–१ चन्द्र २ सूर्य ३ ग्रह ४ नक्षत्र और ५ तारा

२ वासा द्वार--तीर्च्छे लोक में समभूमि से ७९०

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

योजन ऊंचे पर ११० यो० में और ४५ लाख यो० के विस्तार में ज्यो०देवों के विमान हैं जैसे—७६० यो० ऊंचे पर ताराओं के विमान, यहाँ से १०यो०ऊंचे पर सूर्य का यहाँ से८०यो० ऊँचा चन्द्र का, यहाँ से ४ यो० ऊँचा नक्षत्र के यहाँ से ४ यो० ऊँचा बुध का यहाँ से ३ यो० शुक्र का यहाँ से ३ यो० बृहस्पती का, ३ यो० मंगल का और यहाँ से ३ यो० ऊँचा शनिश्चर का विमान है सर्व स्थानों पर ताराओं के विमान ११० योजन में हैं।

३ राजधानी--तीर्छे लोक में असंख्यात राजधानियें हैं।

४ सभा द्वार--ज्योतिषी के इन्द्रों के भी ५-५ सभा हैं। (भवनपति समान)

५ वर्ण द्वार--ताराओं के शरीर पंचवर्णी हैं। शेष ४ देवों का वर्ण सुवर्ण समान हैं।

६ वस्त्र द्वार-सर्व वर्ण के सुन्दर, कोमल वस्त्र सब देवताओं के होते हैं।

७ चिन्ह द्वार—चन्द्र पर चन्द्र मंडल, सूर्य पर सूर्य मंडल, एवं सर्व देवताओं के मुकुट पर अपना अपना चिन्ह है।

८ विमान चौड़ाई और ६ जाड़ाई द्वार—एक यो० के ६१ भागों में से ५६ भाग ($\frac{५६}{६१}$ यो०) चन्द्र विमान की चौड़ाई, ४८ भाग सूर्य विमान की, दो गाउ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रह वि० की, १ गाउ नक्षत्र वि० की और ०॥ गाउ तारा वि० की चौड़ाई है। जाड़ाई इस से आधी २ जानना सर्व विमान स्फटिक रत्न मय हैं।

१० **विमान वाहक**–ज्योतिषी विमान आकाश के आधार पर स्थित रह सकते हैं परन्तु स्वामी के बहुमान के लिये जो देव विमान उठाकर फिरते हैं उनकी संख्या–चन्द्र सूर्य के विमान के १६–१६ हजार देव, ग्रह के विमान के ८–८ हजार देव, नक्षत्र विमान के ४–४ हजार और तारा विमान के २–२ हजार देव वाहक हैं। ये समान २ संख्या में चारों ही दिशाओं में मुँह करके–पूर्व में सिंह रूप से, पश्चिम में वृषभ रूप से, उत्तर में अश्व रूप से, और दक्षिण में हस्ति रूप से, देव रहते हैं।

११ **मांडला द्वार**--चन्द्र सूर्य आदि की प्रदक्षिणा (चारों ओर चक्कर लगाना)-दक्षिणायन से उत्तरायण जाने के मार्ग को 'मांडला' कहते हैं। मांडले का क्षेत्र ५१० यो० का है। जिसमें ३३० यो० लवण समुद्र में और १८० यो० जंबूद्वीप में है। चन्द्र के १५ मांडले हैं। जिनमें से १० लवण में, ५ जंबू द्वीप में हैं। सूर्य के १८४ मांडलों में से ११९ लवण में और ६५ जंबू द्वीप में हैं। ग्रह के ८ मांडलों में से ६ लवण में और २ जंबू द्वीप में हैं। जंबू द्वीप में ज्योतिषी के मांडले हैं वे निषिध और नील वन्त पर्वत के ऊपर हैं। चन्द्र के मांडलों का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर ३५ $\frac{३०}{६१}$ योजन का है। सूर्य के प्रत्येक मंडल से दूसरे मंडल का अन्तर दो २ योजन का है।

१२ गति द्वार--सूर्य की गति कर्क संक्राति को (आषाढी पूर्णिमा) १ मुहूर्त में ५२५१ $\frac{२९}{६१}$ क्षेत्र तथा मकर संक्राति (पोष पूर्णिमा) को १ मुहूर्त में ५३०५ $\frac{१}{६१}$ क्षेत्र है। चन्द्र की गति कर्क संक्राति को १ मु० में ५०७३ $\frac{७५४}{१३७२५}$ और मकर संक्राति को ५१२५ $\frac{६९९०}{१३७२५}$ है।

१३ ताप क्षेत्र--कर्क संक्राति को ताप क्षेत्र ९७५-२६ $\frac{२९}{६१}$ और ऊगता सूर्य ४७२०३ $\frac{२१}{६१}$ योजन दूर से दृष्टि गोचर होता है। मकर संक्राति को ताप क्षेत्र ६३६६३ $\frac{१६}{१६}$ उगता सूर्य ३१८३१ $\frac{३८॥}{६१}$ यो० दूर से दृष्टि गोचर होता है।

१४ अन्तर द्वार--अन्तर दो प्रकार का पड़े १ व्याघात--किसी पदार्थ का बीच में आजाने से और २ निर्व्याघात--बिना किसी के बीच में आये व्याघात अपेक्षा ज० २६६ योजन का अन्तर कारण--निषिध नीलवन्त पर्वत का शिखर २५० यो० है और यहां से ८--८योजन दूर ज्यो० चलते हैं अर्थात् २५०×८+८=२६६ उ० १२२४२ योजन कारण--मेरु शिखर १० हजार यो० का है और इस

से ११२१ यो० दूर ज्यो० विमान फिरते हैं। अर्थात् १००००+११२१+११२१=१२२४२ यो० का अन्तर है। अलोक और ज्यो० देवों का अन्तर ११११ यो० का, मांडलापेक्षा अन्तर मेरु पर्वत से ४४८८० यो० अन्दर के मांडल का और ४५३३० यो० बाहर के मंडल का अन्तर है। चन्द्र चन्द्र के मंडल का ३५ $\frac{३०४}{६१७}$ यो० का और सूर्य सूर्य का मंडल का दो यो० का अन्तर है निर्व्याघात अपेक्षा ज० ५०० धनुष्य का और उ० २ गाउ का अन्तर है।

१५ संख्या द्वार–जम्बू द्वीप में २ चंद्र, २ सूर्य हैं लवण समुद्र में ४ चंद्र, ४ सूर्य हैं धातकी खण्ड में १२ चंद्र, १२ सूर्य हैं कालोदधि समुद्र में ४२ चंद्र, ४२ सूर्य हैं पुष्कराधं द्वीप में ७२ चंद्र, ७२ सूर्य हैं एवं मनुष्य क्षेत्र में १३२ चंद्र १३२ सूर्य हैं आगे इसी हिसाब से समझना अर्थात् पहले द्वीप व समुद्र में जितने चंद्र तथा सूर्य होवें उनको तीन से गुणा करके पीछे की संख्या गिनना (जोड़ना)।

दृष्टांत—कालोदधि में चंद्र सूर्य जानने के लिये उससे पहले धात की खण्ड में १२ चंद्र १२ सूर्य हैं उन्हें १२+३=३६ में पीछे की संख्या (लवण समुद्र के ४ और जम्बू द्वीप के २ एवं ४+२=६) जोड़ने से ४२ हुवे।

१६ परिवार द्वार–एकेक चंद्र और एकेक सूर्य के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८ नक्षत्र, ८८ ग्रह और ६६६७५ क्रोड़ा क्रोड़ तारों का परिवार है।

१७ इन्द्र द्वार–असंख्य चंद्र, सूर्य हैं ये सर्व इन्द्र हैं परंतु क्षेत्र अपेक्षा १ चंद्र इन्द्र और १ सूर्य इन्द्र है।

१८ सामानिक द्वार–एकेक इन्द्र के ४--४ हजार सामानिक देव हैं।

१६ आत्म रक्षक द्वार–एकेक इन्द्र के १६–१६ हजार आत्म रक्षक देव हैं।

२० परिषदा–तीन–तीन हैं अभ्यन्तर सभा में ८००० देव, मध्य सभा में १० हजार और बाह्य सभा में १२ हजार देव हैं देवियें तीनों ही सभा की १००-१०० हैं प्रत्येक इन्द्र की सभा इसी प्रकार जानना।

२१ अनीका द्वार–एकेक इंद्र के ७-७ अनीका हैं व प्रत्येक अनीका में ५ लाख ८० हजार देवता हैं सात अनीका भवनपति वत्।

२२ देवी द्वार–एकेक इंद्र की ४-४ अग्र महिषी हैं एकेक पटरानी के चार चार हजार देवियों का परिवार है एकेक देवी ४—४ हजार रूप वैक्रिय करे अर्थात् ४+४०००=१६०००+४०००=६४०००००० देवी, रूप एकेक इंद्र के हैं।

२३ जाति द्वार–सर्व से मंद जाति चंद्र की, उससे सूर्य की शीघ्र (तेज) उससे ग्रह की तेज, उससे नक्षत्र की तेज और उससे तारा की तेज गति है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४ ऋद्धि द्वार—सर्व से कम ऋद्धि तारा की उससे उत्तरोत्तर महा ऋद्धि ।

२५ वैक्रिय द्वार—वैक्रिय रूप से सम्पूर्ण जम्बू द्वीप भरते हैं संख्याता जम्बू द्वीप भरने की शक्ति चंद्र सूर्य, सामानिक और देवियों में भी है ।

२६ अवधि द्वार—तीर्छा ज० उ० संख्यात द्वीप समुद्र ऊंचा अपनी ध्वजा पताका तक और नीचे पहली नरक तक जाने—देखे ।

२७ परिचारणा-पांचों ही मनुष्य वत्) प्रकार से भोग करे ।

२८ सिद्ध द्वार-ज्योतिषी देव से निकल कर १ समय में १० जीव और ज्योतिषी देवियों से निकल कर १ समय में २० जीव मोक्ष जा सकते हैं ।

२९ भव द्वार—भव करे तो ज० १ २-३ उ० अनन्ता भव करे ।

३० अल्प बहुत्व द्वार—सर्व से कम चंद्र सूर्य, उन से नक्षत्र, उन से ग्रह और उन से तारे (देव) संख्यात संख्यात गुणा हैं ।

३१ उत्पन्न द्वार—ज्योतिषी देव रूप से यह जीव अनन्त अनन्त वार उत्पन्न हुवा परन्तु वीतराग आज्ञा का आराधन किये विना आत्मिक सुख नहीं प्राप्त कर सका ।

॥ इति ज्योतिषी देव विस्तार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैमानिक देव

विमान वासी देवों के २७ द्वार—१ नाम २ वासा ३ संस्थान ४ आधार ५ पृथ्वीपिण्ड ६ विमान ऊँचाई ७ विमान संख्या ८ विमान वर्ण ९ विमान विस्तार १० इन्द्र नाम ११ इन्द्र विमान १२ चिन्ह १३ सामानिक १४ लोक पाल १५ त्रायस्त्रिशंक १६ आत्म रक्षक १७ अनीका १८ परिषदा १९ देवी २० वैक्रिय २१ अवधि २२ परिचारणा २३ पुन्य २४ सिद्ध २५ भव २६ उत्पन्न २७ अल्प बहुत्व द्वार।

१ नाम द्वार—१२ देव लोक—सौधर्म ईशान, सनत्कुमार, महेन्द्र ब्रह्म, लंतक, महाशुक्र, सहस्रार, आणत प्राणत, आरण, अच्युत नव ग्रीयवेक—भद्द, सुभद्द, सुजाने सुमानसे, सुदर्शने, प्रियदंसण, अमोहे, सुप्रतिबुद्ध और यशोधरे ५ अनुत्तर—विमान—विजय, विजयंत जयंत, अपराजित, और सर्वार्थसिद्ध, पांचवें देव लोक के तीसरे परतर में नव लोकांतिक देव हैं और ३ किल्विषी मिल कर कुल ३८ जाति के वैमानिक देव हैं।

२ वासा द्वार—ज्योतिषी देवों से असंख्य क्रोड़ा क्रोड़ यो० ऊँचा वैमानिक देवों का निवास है। राजधानियें और ५-५ सभाएं अपने देवलोक में ही हैं। शकेन्द्र, ईशानेन्द्र के महल, उनके लोकपाल और देवियों की राजधानियें तीर्छे लोक में भी हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३ संठाण द्वार—१, २, ३, ४, और ९, १०, ११, १२, एवं ८ देव लोक अर्ध चंद्राकार हैं । ५, ६, ७, ८ देव लोक और ९ ग्रीयवक पूर्ण चन्द्राकार हैं । चार अनुत्तर विमान त्रिकोन चारों ही तरफ हैं और बीच में सर्वार्थ सिद्ध विमान गोल चन्द्राकार है ।

४ आधार द्वार-विमान और पृथ्वी पिण्ड रत्न मय है । १—२ देव लोक घनोदधि के आधार पर है । ३—४—५ देव घन वायु के आधार से है । ६—७-८ देव० घनोदधि घनवायु के आधार से है । शेष विमान आकाश के आधार पर स्थित हैं ।

५ पृथ्वी पिण्ड ६ विमान ऊंचाई, ७ विमान और परतर, ८ वर्ण द्वार—

विमान	पृथ्वी पिण्ड	वि० ऊंचाई	वि० संख्या	परतर	वर्ण
१	२७०० यो०	५०० यो०	३२ लाख	१३	५ वर्ण
२	२७०० "	५०० "	२८ "	१३	५ "
३	२६०० "	६०० "	१२ "	१२	४ "
४	२६०० "	६०० "	८ "	१२	४ "
५	२५०० "	७०० "	४ "	६	३ "
६	२५०० ,,	७०० ,,	५० हजार	५	३ ,,
७	२४०० ,,	८०० ,,	४० ,,	४	२ ,,
८	२४०० ,,	८०० ,,	६ ,,	४	२ ,,
९	२३०० ,,	९०० ,,	४०० (९–१० दोनों)	४	१ ,,
१०	२३०० ,,	९०० ,,		४	१ ,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११	२३०० ,,	९०० ,,	३००	४	१	,,
१२	२३०० ,,	९०० ,,		४	१	,,
९ ग्री.	२२०० ,,	१००० ,,	३१८	९	१	,,
५ अनु०	२१०० ,,	११०० ,,	५	१	१	,,

९ **विमान विस्तार**–कितने ही विमानों का विस्तार (चार भाग का) असं० योजन का और कितने ही का (एक भाग का संख्यात योजन के विस्तार का है परन्तु सर्वार्थ सिद्ध विमान १ लाख यो० के विस्तार में है।

१० **इन्द्र द्वार**–१२ देवलोक के १० इन्द्र हैं आगे सर्व अहमेन्द्र हैं।

११ **विमान द्वार**–तीर्थंकरों के कल्याण के समय मृत्युलोक में वैमानिक देव जो विमान में बैठकर आते हैं उनके नाम–पालक, पुष्प, सुमानस, श्रीवत्स, नन्दी वर्तन, कामगमनाम, मनोगम, प्रियगम, विमल, सर्वतोभद्र।

१२ चिह्न १३ सामानिक १४ लोकपाल १५ त्रयस्त्रिंश १६ आत्म रक्षक—

इन्द्र	चिन्ह	सामानिक	लोक पाल	त्रयस्त्रिंश	आत्म रक्षक
शक्रेन्द्र	मृग	८४ हजार	४	३३	३३६०००
ईशानेन्द्र	महिष	८० ,,	४	३३	३२००००
सनत्कु० इन्द्र	शूकर	७२ ,,	४	३३	२८८०००
महेन्द्र	सिंह	७० ,,	४	३३	२८००००
ब्रह्मेन्द्र	अज (बकरा)	६० ,,	४	३३	२४००००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लंतकेन्द्र	मंडूक(मेंडक)	५०	,,	४	३३	२०००००
महा शुक्रेन्द्र	अश्व	४०	,,	४	३३	१६००००
सहस्त्रेन्द्र	हस्ति	३०	,,	४	३३	१२००००
प्राणतेन्द्र	सर्प	२०	,,	४	३३	८००००
अच्युतेन्द्र	गरुड़	१०	,,	४	३३	४००००

१७ अनीका—प्रत्येक इंद्र की अनीका ७-७ प्रकार की है प्रत्येक अनीका में देवता उन इंद्रों के सामानिक से १२७ गुणा होते हैं।

१८ परिषदा द्वार—प्रत्येक इंद्र के तीन ३ प्रकार की परिषदा होती हैं।

इन्द्र	अभ्यन्तर देव	मध्यम देव	बाह्य प० देव	देवियें
१	१२ हजार	१४ हजार	१६ हजार	शकेन्द्र
२	१० ,,	१२ ,,	१४ ,,	७००
३	८ ,,	१० ,,	१२ ,,	६००
४	६ ,,	८ ,,	१० ,,	५००
५	४ ,,	६ ,,	८ ,,	ईशानेन्द्र
६	२ ,,	४ ,,	६ ,,	९००
७	१ ,,	२ ,,	४ ,,	८००
८	५००	१ ,,	२ ,,	७००
९	२५०	५००	१ ,,	शेष ८ इन्द्रों के
१०	१२५	२५०	५००	देवियें नहीं

१९ देवी द्वार—शक्रेन्द्र के आठ अग्रमहिषी देवियें हैं एकेक देवी के १६-१६ हजार देवियों का परिवार है। प्रत्येक देवी १६-१६ हजार वैक्रिय करे इसी प्रकार ईशानेन्द्र की भी ८×१६०००=१२८०००×१६०००=२०

४८०००००० जानना शेष में देवियें नहीं होवे केवल पहले दूसरे देव लोक रहे और ८ वें देव लोक तक जाया करे।

२० वैक्रिय द्वार-शक्रेन्द्र वैक्रिय के देव-देवियों से २ जंबू द्वीप भर देते हैं, ईशानेन्द्र २ जंबू द्वीप जाजेरा सनत्कुमार ४ जंबू० महेन्द्र ४ जंबू०जाजेरा, ब्रह्मेन्द्र ८ जंबू० लंतकेन्द्र ८ जंबू० जाजेरा, महाशुक्र १६ जंबू० सहस्रेन्द्र १६ जंबू० जाजेरा प्राणतेन्द्र ३२ जंबू०, अच्युतेंद्र ३२ जंबू० जाजेरा भरे० (लोक पाल, त्रयास्त्रिंश, देवियें आदि अपने इंद्रवत्) असंख्य जंबूद्वीप भरदेने की शक्ति है परंतु इतने वैक्रिय नहीं करते हैं।

२१ अवधि द्वार-सर्व इंद्र ज० अङ्गुल के असंख्यातवें भाग अवधि से जाने-देखे० उ० ऊंचा अपने विमान की ध्वजा पताका तक-तीर्छा असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने देखे और नीचे-१-२ देवलोक वाले पहली नरक तक, ३-४ देव० दूसरी नरक तक, ५-६ देव० तीसरी नरक तक, ७--८ देव० चोथी नरक तक, ९ से १२ देव० पांचवी नरक तक, ९ ग्रीयवेक छट्ठी नरक तक, ४ अनुत्तर विमान ७ वीं नरक तक और सर्वार्थ सिद्ध वाले त्रस नाली सम्पूर्ण (पाताल कलश) जाने देखे।

२२ परिचारणा-१-२ देव में पांच (मन, शब्द, रूप, स्पर्श और काय) परिचारणा, ३-४ देव० में स्पर्श

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परि०, ५-६ देव-में रूप परि०, ७-८ देव-में शब्द परि० ९ से १२ देव० में मन परि०, आगे नहीं ।

२३ पुन्य द्वार-जितने पुन्य व्यंतर देव १०० वर्ष में क्षय करते हैं उतने पुन्य नागादि ९ देव २०० वर्ष में, असुर० ३०० वर्ष में, ग्रह-नक्षत्र-तारा ४०० वर्ष में, चंद्र सूर्य ५०० वर्ष में, सौधर्म--ईशान १००० वर्ष में, ३—४ देव० २००० वर्ष में, ५-६ देव. ३००० वर्ष में, ७-८ देव. ४००० वर्ष में, ९ से १२ दे. ५००० वर्ष में, १ ली. त्रिक १ लाख वर्ष में दूसरी त्रिक २ लाख वर्ष में, तीसरी त्रिक ३ लाख वर्ष में, ४ अनु. वि. ४ लाख वर्ष में और सर्वार्थ सिद्ध के देवता ५ लाख वर्ष में इतने पुन्य क्षय करते हैं ।

२४ सिद्ध द्वार-वैमानिक देव में से निकले हुवे मनुष्य में आकर एक समय में १०८ सिद्ध हो सक्ते हैं देवी में से निकल कर २० सिद्ध हो सक्ते हैं ।

२५ भव द्वार-वैमानिक देव होने के बाद भव करे तो ज० १-२-३ संख्यात, असंख्यात यावत् अनन्त भव भी करे ।

२६ उत्पन्न द्वार-नव ग्रीयवेक वैमानिक देव रूप में अनन्ती वार यह जीव उत्पन्न हो चुका है ४ अनु० वि० में जाने के बाद संख्यात (२-४) भव में और सर्वार्थ सिद्ध से १ भव में मोक्ष जावे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७ अल्प बहुत्व द्वार–सर्व से कम ५ अनुत्तर विमान में देव, उनसे उतरते २ नववें देवलोक तक संख्यात गुणा, ८ में से उतरते दूसरे देवलोक तक असंख्यात गुणा देव, उनसे दूसरे देव की देवियें संख्यात गुणी, उनसे पहले देवलोक के देव संख्यात गुणा और उनसे पहले देवलोक की देवियें संख्यात गुणी ।

॥ इति वैमानिक देवाधिकार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यादि २१ बोल अर्थात् डालापाला

संख्या के २१ बोल हैं:—१ जघन्य संख्याता २ मध्यम संख्याता ३ उत्कृष्ट संख्याता असंख्याता के नव भेद

१ ज० प्र० असंख्यात	४ ज० युक्ता अ०	७ ज० अ० अ०
२ म० ,, ,,	५ म० ,, ,,	८ म० ,, ,,
३ उ० ,, ,,	६ उ० ,, ,,	९ उ० ,, ,,

अनंता के ९ भेद

१ ज० प्रत्येक अनंता	४ ज० युक्ता अनंता	७ ज० अनंता अ-
२ म० ,, ,,	५ म० ,, ,,	८ म० ,, ,,
३ उ० ,, ,,	६ उ० ,, ,,	९ उ० ,, ,,

ज० संख्याता में एक दो तक गिनना म० संख्याता में तीन से आगे यावत् उ० संख्याता में एक न्यून उ० संख्याता के लिये माप बताते हैं--

चार पाला--(१) शीलाक (२) प्रति शीलाक (३) महा शीलाक (४) अनवस्थित इनमें से प्रत्येक पाला धान्य मापने की पाली के आकार वत् है किन्तु प्रमाण में १ लक्ष योजन लम्बे चौडे ३१६२२७ यो० अधिक की परिधि वाला, १० हजार यो०गहरा८ यो०की जगती कोट जिसके ऊपर०॥ यो० की वेदिका इस प्रकार पाला की कल्पना करना तथा इनमें से अनवस्थित पाला को सरसव के दानों से सम्पूर्ण भर कर कोई देव उठावे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जम्बूद्वीप से शुरू करके एकेक दाना एकेक द्वीप और समुद्र में डालता हुवा चला जावे अन्त में १ दाना बच जाने पर द्वीप व समुद्र में डालने से रुके बचा हुवा दाना शीलाकवाला के अन्दर डाले जितने द्वीप व समुद्र तक डालता हुआ पहुँच चुका है उतना बडा लम्बा और चोडा पाला किन्तु १० हजार यो० गहरा ८ यो० जगती०॥ यो० की वेदिका वाला बनावे इसे सरसव से भर कर आगे के द्वीप व समुद्र में एकेक दाना डालता जावे एक दाना बच जाने पर ठहर जावे बचे हुवे दाने को शालाक पाले में डाले पुनः उतने ही द्वीप तथा समुद्र के विस्तार वत् (गहराइ जगती ऊंचा वत्) बनाकर सरसव से भरकर आगे के एकेक द्वीप व एकेक समुद्र में एकेक दाना डालता जावे बचे हुवे एक दाने को डाल कर शीलाक को भर देवे भर जाने पर उसे उठा कर अन्तिम (बाकी भरे हुवे) द्वीप तथा समुद्र से आगे एकेक दाना डाल कर खाली करे एक दाना बचने पर पुनः उसे प्रति शीलाक पाले में डाले इस प्रकार आगे २ के द्वीप समुद्र को **अनवास्थित पाला** बनावे बच हुवे एक दाने से शीलाक भरे शीलाक की बचत के एकेक दाने से प्रति शीलाक को भरे प्रति शीलाक को खाली करते हुवे बचत के एकेक दाने से महा शीलाक को भरे इस प्रकार महा शीलाक को भर देवे पश्चात् प्रति शीलाक, शीलाक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और अनवस्थित को क्रम से भर देवे ।

इस तरह चार ही पाले भर देवे अन्तिम दाना जिस द्वीप व समुद्र में पड़ा होवे वहां से प्रथम द्वीप तक डाले हुवे सब दानों को एकत्रित करे और चार ही पालों के एकात्रित किये हुवे दानों का एक ढेर करे इस में से एक दाना निकाल ले तो उत्कृष्ट संख्याता, निकाला हुवा एक दाना डाल दे तो जघन्य प्रत्येक असंख्याता जानना इस दाने की संख्या को परस्पर गुणाकार (अभ्यास) करे और जो संख्या आवे वो जघन्य युक्ता असंख्याता कहलाती है इस में से एक दाना न्यून वो उ० प्र० असंख्याता दो दाना न्यून वो मध्यम प्र० असंख्याता (१ आवलिका का समय ज० युक्ता असंख्याता जानना) ।

जघन्य युक्ता असंख्याता की राशि (ढेर) को परस्पर गुणा करने से ज० असंख्याता असंख्यात संख्या निकलती है इस में से १ न्यून वो उ० युक्ता असंख्यात दो न्यून वाली म० युक्ता असंख्याता जानना ।

ज० असं० असंख्याता की राशि को परस्पर गुणित करने से ज० प्रत्येक अनंता संख्या आती है इस में से २ न्यून वाली संख्या म० असं० असंख्याता और १ न्यून वाली उ० असं० असंख्याता जानना ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज० प्र० अनन्ता की राशि को परस्पर गुणित करने से ज० युक्ता अनन्ता, इस में से २ न्यून म० प्र० अनन्ता, १ न्यून उ० प्र० अनन्ता जानना।

ज० यु० अनन्ता को परस्पर गुणित करने से ज० अनन्तानन्त संख्या होती है जिसमें से २ न्यून वाली म० युक्ता अनन्ता १ न्यून वाली उ० युक्ता अनन्ता जानना।

ज० अनन्तानन्त को परस्पर गुणाकार करने से म० अनन्तानन्त संख्या निकलती है और परस्पर गुणाकार करे तो उ० अनन्तानन्त संख्या जानना परन्तु संसार में उत्कृष्ट अनन्तानन्त संख्या वाले कोई पदार्थ नहीं है।

तत्व केवली गम्य।

॥ इति संख्यादि २१ बोल सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाण—नय

श्री अनुयोग द्वार-सूत्र तथा अन्य ग्रन्थों के आधार पर २४ द्वार कहे जाते हैं।

(१) सात नय (२) चार निक्षेप (३) द्रव्य गुण पर्याय (४) द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव (५) द्रव्य-भाव (६) कार्य कारण (७) निश्चय-व्यवहार (८) उपादान-निमित्त (९) चार प्रमाण (१०) सामान्य-विशेष (११) गुण-गुणी (१२) ज्ञेय-ज्ञान, ज्ञानी (१३) उपनेवा, विहनेवा, धुवेवा (१४) आधेय-आधार (१५) आविर्भाव-तिरोभाव (१६) गौणता-मुख्यता (१७) उत्सर्ग-अपवाद (१८) तीन आत्मा (१९) चार ध्यान (२०) चार अनुयोग (२१) तीन जागृति (२२) नव व्याख्या (२३ आठ पक्ष (२४) सप्त-भंगी।

१ नय-(पदार्थ के अंश को ग्रहण करना) प्रत्येक पदार्थ के अनेक धर्म होते हैं और इनमें से हर एक को ग्रहण करने से एकेक नय गिना जाता है—इस प्रकार अनेक नय हो सकते हैं परन्तु यहां संक्षेप से ७ नय कहे जाते हैं।

नय के मुख्य दो भेद हैं-द्रव्यास्तिक (द्रव्य को ग्रहण करना) और पर्यायास्तिक (पर्याय को ग्रहण करना) द्रव्यास्तिक नय के १० भेद-१ नित्य २ एक ३ सत् ४ वक्तव्य ५ अशुद्ध ६ अन्वय ७ परम ८ शुद्ध ९ सत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१० परम-भाव-द्रव्यास्तिक नय-पर्यायास्तिक नय के ६ भेद-१ द्रव्य २ द्रव्य व्यंजन ३ गुण ४ गुण व्यंजन ५ स्वभाव ६ विभाव-पर्यायास्तिक नय । इन दोनों नयों के ७०० भेद हो सकते हैं ।

नय सात-१ नैगम २ संग्रह ३ व्यवहार ४ ऋजु-सूत्र ५ शब्द ६ समभिरूढ ७ एवं भूत नय इनमें से प्रथम ४ नयों को द्रव्यास्तिक, अर्थ तथा क्रिया नय कहते हैं और अन्तिम तीन को पर्यायास्तिक शब्द तथा ज्ञान नय कहते हैं ।

१ नैगम नय-जिसका स्वभाव एक नहीं, अनेक मान, उन्मान, प्रमाण से वस्तु माने तीन काल, ४ निक्षेप सामान्य-विशेष आदि माने इसके तीन भेद—

(१) अंश-वस्तु के अंश को ग्रहण करके माने जैसे निगोद को सिद्ध समान माने ।

(२) आरोप—भूत, भविष्य और वर्तमान, तीनों कालों को वर्तमान में आरोप करे ।

(३) विकल्प—अध्यवसाय का उत्पन्न होना एवं ७०० विकल्प हो सकते हैं ।

शुद्ध नैगम नय और अशुद्ध नैगम एवं दो भेद भी हैं।

२ संग्रह नय-वस्तु की मूल सत्ता को ग्रहण करे जैसे सर्व जीवों को सिद्ध समान जाने, जैसे एगे आया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्मा एक है । (एक समान स्वभाव अपेक्षा) ३ काल ४ निक्षेप और सामान्य को माने, विशेष न माने ।

३ व्यवहार नय-अन्तःकरण (आन्तरिक दशा) की दरकार (परवाह) न करते हुवे व्यवहार माने जैसे जीव को मनुष्य तिर्यंच, नरक, देव माने । जन्म लेने वाला मरने वाला आदि, प्रत्येक रूपी पदार्थों में वर्ण, गन्ध आदि २० बोल सत्ता में हैं परन्तु बाहर जो दिखाई देवे केवल उन्हें ही माने जैसे हंस को श्वेत, गुलाब को सुगन्धी शर्कर को मीठी माने । इसके भी शुद्ध अशुद्ध दो भेद सामान्य के साथ विशेष माने, ४ निक्षेप, तीन ही काल की बात माने ।

४ ऋजु सूत्र-भूत, भविष्य की पर्यायों को छोड़ कर केवल वर्तमान-सरल पर्याय को माने वर्तमान काल, भाव निक्षेप और विशेष को ही माने जैसे साधु होते हुवे भोग में चित्त जाने पर भोगी और गृहस्थ होते हुवे त्याग में चित्त जाने से उसे साधु माने ।

ये चार द्रव्यास्तिक नय हैं । ये चारों नय समकित, देश व्रत, सर्व व्रत, भव्य अभव्य दोनों में होवे परन्तु शुद्धोपयोग रहित होने से जीव का कल्याण नहीं होता ।

५ शब्द नय-समान शब्दों का एक ही अर्थ करे विशेष, वर्तमान काल और भाव निक्षेप को ही माने । लिंग भेद नहीं माने । शुद्ध उपयोग को ही माने जैसे शक्र-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न्द्र देवेन्द्र, पुरेन्द्र, सूर्चापति इन सबों को एक माने ।

६ **समभिरुढ नय**-शब्द के भिन्न २ अर्थों को माने जैसे—शुक्र सिंहासन पर बैठे हुवे को ही शक्रेन्द्र माने एक अंश न्यून होवे उसे भी वस्तु मान लेवे; विशेष भाव निक्षेप और वर्तमान काल को ही माने.

७ **एवं भूत नय**-एक अंश भी कम नहीं होवे उसे वस्तु माने । शेष को अवस्तु माने, वर्तमान काल और भाव निक्षेप को ही माने ।

जो नय से ही एकान्त पक्ष ग्रहण करे उसे नयाभास (मिथ्यात्वी) कहते हैं । जैसे ७ अन्धों ने १ हाथी को दंतुशल, सूण्ड, कान, पेट, पाँव, पूंछ और कुंभस्थल माना वे कहने लगे कि हाथी मूसल समान, हडूमान समान, सूप समान कोठी समान, स्तम्भ समान, चामर समान तथा घट समान है । सम दृष्टि तो सबों को एकान्त वादी समझ कर मिथ्या मानेगा परन्तु सर्व नयों को मिलाने पर सत्य स्वरूप बनता है अतः वही समदृष्टि कहलाता है ।

२ **निक्षेप चार**-एकेक वस्तु के जैसे अनंत नय हो सकते हैं वैसे ही निक्षेप भी अनंत हो सकते हैं परंतु यहां मुख्य चार निक्षेप कहे जाते हैं । निक्षेप—सामान्य रूप प्रत्यक्ष ज्ञान है वस्तु तत्व ग्रहण में अति आवश्यक है इसके चार भेद

१ **नाम निक्षेप**-जीव व अजीव का अर्थ शून्य, यथार्थ तथा अयथार्थ नाम रखना ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२ स्थापना निक्षेप–जीव व अजीव की सदृश (सद् भाव) तथा असदृश (असदृश भाव) स्थापना (आकृति व रूप] करना सो स्थापना निक्षेप।

(३) द्रव्य निक्षेप–भूत और वर्तमान काल की दशा को वर्तमान में भाव शून्य होते हुवे कहना व मानना; जैसे युवराज तथा पदभ्रष्ट राजा को राजा मानना, किसी के कलेवर (लाश) को उसके नाम से जानना ।

(४) भाव निक्षेप–सम्पूर्ण गुण युक्त वस्तु को ही वस्तु रूप से मानना ।

दृष्टान्त–महावीर नाम सो नाम निक्षेप किसी ने अपना यह नाम रक्खा हो, महावीर लिखाहो, चित्र निकाला हो, मूर्ति होवे अथवा कोई चीज रख कर महावीर नाम से सम्बोधित करते हों तो यह महावीर का स्थापना निक्षेप केवल ज्ञान होने के पहिले संसारी जीवन को तथा निर्वाण प्राप्त करने के बाद के शरीर को महावीर मानना सो महावीर का द्रव्य निक्षेप और महावीर स्वयं केवल ज्ञान दर्शन सहित विराजमान हों उन्हीं को ही महावीर मानना [कहना] सो भाव निक्षेप इस प्रकार जीव, अजीव आदि सर्व पदार्थों का चार निक्षेप लगाकर ज्ञान हो सकता है ।

३ द्रव्य गुण-पर्याय द्वार-धर्मास्ति काय आदि जैसे ६ द्रव्य हैं, चलन सहाय आदि स्वभाव यह प्रत्येक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का अलग २ गुण है और द्रव्यों में उत्पाद व्यय, ध्रुव आदि परिवर्तन होना सो पर्याय है।

दृष्टान्त--जीव-द्रव्य, ज्ञान, दर्शन आदि गुण, मनुष्य, तिर्यंच, देव, साधु आदि दशा यह पर्याय समझना

४ द्रव्य, क्षेत्र काल भाव द्वार--द्रव्य-जीव अजीव आदि, आकाश प्रदेश यह क्षेत्र, समय यह काल [घड़ी जाव काल चक्र तक समझना] वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श आदि सो भाव। जीव, अजीव सवों पर द्रव्य क्षेत्र काल भाव घट (लागु हो) सक्ता है।

५ द्रव्य--भाव द्वार-- भाव को प्रकट करने मे द्रव्य सहायक है। जैसे द्रव्य से जीव अमर, शाश्वत भाव से अशाश्वत है। द्रव्य से लोक शाश्वत है भाव से अशाश्वत है। अर्थात् द्रव्य यह मूल वस्तु है, सदैव शाश्वती है भाव यह वस्तु की पर्याय है अशाश्वती है।

जैसे भौंरे के लक्कड़ कुतरते समय ' क ' ऐसा आकार बनजाता है सो यह द्रव्य ' क ' और किसी पण्डित ने समझ कर ' क ' लिखा सो भाव ' क ' जानना।

६ कारण-कार्य द्वार--साध्य को प्रगट कराने वाला, तथा कार्य को सिद्ध कराने वाला कारण हैं। कारण विना कार्य नहीं हो सक्ता। जैसे घट बनाना यह कार्य है और इस लिये मिट्टी, कुम्हार, चाक (चक्र) आदि कारण अवश्य चाहिये अतः कारण मुख्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७ निश्चय व्यवहार–निश्चय को प्रगट करानेवाला व्यवहार है। व्यवहार बलवान है व्यवहार से ही निश्चय तक पहुँच सक्ते हैं जैसे निश्चय में कर्म का कर्ता कर्म है व्यवहार से जीव कर्मों का कर्ता माना जाता है जैसे निश्चय से हम चलते हैं। किन्तु व्यवहार से कहा जाता है कि गाँव आया; जल चूता है परन्तु कहा जाता है कि छत चूती इत्यादि है

८ उपादान--निमित्त--उपादान यह मूल कारण हैं जो स्वयं कार्य रूप में परिणमता है। जैसे घट का उपादान कारण मिट्टी और निमित यह सहकारी कारण जैसे घट बनाने में कुम्हार, पावडा, चाक आदि। शुद्ध निमित्त कारण होवे तो उपादान को साधक होता है और अशुद्ध निमित्त होवे तो उपादान को बाधक भी होता है।

९ चारप्रमाण–प्रत्यक्ष, आगम, अनुमान उपमा, प्रमाण। प्रत्यक्ष के दो भेद– १ इन्द्रिय प्रत्यक्ष (पांच इन्द्रियों से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान) और २ नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष (इन्द्रियों की सहायता के बिना केवल आत्म-शुद्धता से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान) इसके २ भेद-- १ देस से (अवधि और मनः पर्यव) और २ सर्व से (केवल ज्ञान)

आगम प्रमाण-शास्त्र वचन, आगमों के कथन को प्रमाण मानना।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

अनुमान प्रमाण– जो वस्तु अनुमान से जानी जावे इसके ५ भेद–

१ कारण से–जैसे घट का कारण मिट्टी है, मिट्टी का कारण घट नहीं ।

२ गुण से– जैसे पुष्प में सुगन्ध, सुवर्ण में कोमलता, जीव में ज्ञान ।

३ आसरण– जैसे धूँवे से अग्नि, बिजली से बादल आदि समझना व जानना ।

४ आवयवेणं– जैसे दंतूशल से हाथी चूडियों से स्त्री, शासन रुचि से समकिति जानना ।

दिट्ठि सामन्न– सामान्य से विशेष को जाने जैसे १ रुपये को देख कर अनेक रुपये जाने । १ मनुष्य को देखने से समस्त देश के मनुष्यों को जाने ।

अच्छे बुरे चिन्ह देख कर तीनों ही काल के ज्ञान की कल्पना अनुमान से हो सकती है ।

उपमा प्रमाण– उपमा देकर समान वस्तु से ज्ञान (जानना) करना । इसके ४ भेद–(१) यथार्थ वस्तु को यथार्थ उपमा (२) यथार्थ वस्तु को अयथार्थ उपमा (३) अयथार्थ वस्तु को यथार्थ उपमा और (४) अयथार्थ वस्तु को अयथार्थ उपमा ।

१० सामान्य विशेष– सामान्य से विशेष बलवान है । समुदाय रूप जानना सो सामान्य । विविध भेदानु-

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

भेद से जानना सो विशेष । जैसे द्रव्य सामान्य जीव अ-जीव, ये विशेष । जीव द्रव्य सामान्य, संसारी सिद्ध विशेष इत्यादि ।

११ गुण गुणी—पदार्थ में जो खास वस्तु (स्वभाव) है वो गुण और जो गुण जिसमें होता वो वस्तु (गुण धारक) गुणी है । जैसे ज्ञान यह गुण और जीव गुणी, सुगन्ध गुण और पुष्प गुणी । गुण और गुणी अभेद (अभिन्न) रूप से रहते हैं ।

१२ ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी-- जानने योग्य (ज्ञान के विषय भूत) सर्व द्रव्य ज्ञेय । द्रव्य का जानना सो ज्ञान है और पदार्थों का जानने वाला वो ज्ञानी । ऐसे ही ध्येय ध्यान ध्यानी आदि समझना ।

१३ उपन्नेवा, विहन्नेवा, धूवेवा— उत्पन्न होना, नष्ट होना और निश्चल रूप से रहना जैसे जन्म लेना मरना व जीव याने कायम (अमर) रहना ।

१४ आधेय—आधार—धारण करने वाला आधार और जिसके आधार से (स्थित)रहे वो आधेय । जैसे-- पृथ्वी आधार, घटादि पदार्थ आधेय, जीव आधार, ज्ञानादि आधेय ।

१५ आविर्भाव -तिरोभाव--जो पदार्थ गुण दूर है वो तिरो भाव और जो पदार्थ गुण समीप में है वो आविर्भाव। जैसे दूध में घी का तिरोभाव है और मक्खन में घी का आविर्भाव है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६ गौणता--मुख्यता-अन्य विषयों को छोड कर आवश्यक वस्तुओं का व्याख्यान करना सो मुख्यता और जो वस्तु गुप्त रूप से अप्रधानता से रही हुई हो वो गौणता। जैसे--ज्ञान से मोक्ष होता ऐसा कहने में ज्ञान की मुख्यता रही और दर्शन, चारित्र तपादि की गौणता रही।

१७ उत्सर्ग--अपवाद--उत्सर्ग यह उत्कृष्ट मार्ग है और अपवाद उसका रक्षक है। उत्सर्ग मार्ग से पतित अपवाद का अवलम्बन लेकर फिर से उत्सर्ग (उत्कृष्ट) मार्ग पर पहुँच सकता है। जैसे सदा ३ गुप्ति से रहना यह उत्सर्ग मार्ग है और ५ समिति यह गुप्ति के रक्षक--सहायक अपवाद मार्ग हैं। जिन कल्प उत्कृष्ट मार्ग है, स्थविर कल्प अपवाद मार्ग। इत्यादि षट् द्रव्य में भी जानना चाहिये।

१८ तीन आत्मा--बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा।

बहिरात्मा- शरीर, धन, धान्यादि समृद्धि, कुटुम्ब परिवार आदि में तल्लीन होवे सो मिथ्यात्वी।

अन्तरात्मा--बाह्य वस्तु को अन्य समझ कर उसे त्यागना चाहे व त्यागे वो अन्तरात्मा ४ से १२ गुणस्थान वाले।

परमात्मा--सर्व कार्य जिसके सिद्ध हो गये हों व कर्म मुक्त हो कर जो स्व-स्वरूप में लीन है वो सिद्ध परमात्मा।

१९ चार ध्यान--१ पदस्थ--पंच परमेष्टि के गुणों का ध्यान करना सो पदस्थ ध्यान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ पिंडस्थ–शरीर में रहे हुवे अनन्त गुण युक्त चैतन्य का अध्यात्म–ध्यान करना।

३ रूपस्थ–अरूपी होते हुवे भी कर्म योग से आत्मा संसार में अनेक रूप धारण करती है। एवं विचित्र संसार अवस्था का ध्यान करना व उससे छूटने का उपाय सोचना।

४ रूपातीत–सच्चिदानन्द, अगम्य, निराकार, निरंजन सिद्ध प्रभु का ध्यान करना।

२० चार अनुयोग–१ द्रव्यानुयोग–जीव, अजीव, चैतन्य जड़ (कर्म) आदि द्रव्यों का स्वरूप का जिसमें वर्णन होवे २ गणितानुयोग–जिसमें क्षेत्र, पहाड़, नदी, देवलोक, नारकी, ज्योतिषी आदि के गणित–माप का वर्णन होवे ३ चरण करणानुयोग–जिसमें साधु-श्रावक का आचार, क्रिया का वर्णन होवे ४ धर्म कथानुयोग–जिसमें साधु श्रावक, राजा रंक, आदि के वैराग्य मय बोध दायक जीवन प्रसंगों का वर्णन होवे

२१ जागरण तीन–(१) बुध जाग्रिका--तीर्थंकर और केवलियों की दशा (२) अबुध जाग्रिका -छद्मस्थ मुनियोंकी और (३) सुदाखु जाग्रिका--श्रावकों की (अवस्था)।

२२ व्याख्या नव—एकेक वस्तु की उपचार नय से ९–९ प्रकार से व्याख्या हो सकती है।

(१) द्रव्य में द्रव्य का उपचार–जैसे काष्ट में वंशलोचन

(२) द्रव्य में गुण का " – " जीव ज्ञानवन्त है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) " " पर्याय का " – " " स्वरूपवान है
(४) गुण में द्रव्य का " – " अज्ञानी जीव है
(५) " " गुण " " – " ज्ञानी होने पर भी क्षमावंत है।
(६) गुण में पर्याय का " – " यह तपस्वी बहुत स्वरूपवान है।
(७) पर्याय में द्रव्य का " – " यह प्राणी देवता का जीव है।
(८) " " गुण का " – " यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है।
(९) " " पर्याय का " – " यह मनुष्य श्याम वर्ण का है इत्यादि।

२३ पक्ष आठ–एक वस्तु की अपेक्षा से अनेक व्याख्या हो सकती है। इस में मुख्यतया आठ पक्ष लिये जा सकते हैं। नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य और अवक्तव्य ये आठ पक्ष निश्चय व्यवहार से उतारे जाते हैं।

पक्ष	व्यवहार नय अपेक्षा	निश्चय नय अपेक्षा
नित्य	एक गति में घूमने से नित्य है	ज्ञान दर्शन अपेक्षा नित्य है
अनित्य	समय २ आयुष्य क्षय होने से अनित्य है	अगुरु लघु आदि पर्याय से अनित्य है
एक	गति में वर्तन दशा से एक है	चैतन्य अपेक्षा जीव एक है
अनेक	पुत्र पुत्री, भाई आदि स. से अ. है	असंख्य प्रदेशापेक्षा अनेक है
सत्	स्वगति, स्वक्षेत्रापेक्षा सत् है	ज्ञानादि गुणापेक्षा सत् है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असत्	पर गति पर क्षेत्रापेक्षा असत् है	पर गुण अपेक्षा असत् है
वक्तव्य	गुणस्थान आदि की व्याख्या हो सकने से	सिद्ध के गुणों की जो व्याख्या हो सके
अव्यक्तव्य	जो व्याख्या केवली भी नहीं कर सके	सिद्ध के गुणों की जो व्याख्या नहीं हो सके

२४ सप्त भंगी–१स्यात–अस्ति, २ स्यात् नास्ति ३ स्यात् अस्ति-नास्ति ४ स्यात् वक्तव्य ५ स्यात् अस्ति अवक्तव्य ६ स्यात् नास्ति अवक्तव्य ७ स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य ।

यह सप्त भंगी प्रत्येक पदार्थ (द्रव्य) पर उतारी जा सकती है । इसमें ही स्याद्वाद का रहस्य भरा हुवा है। एकेक पदार्थ के अनेक अपेक्षा से देखने वाला सदा सम भावी होता है ।

दृष्टान्त के लिये सिद्ध परमात्मा के ऊपर सप्त भंगी उतारी जाती है ।

१ स्यात् अस्ति–सिद्ध स्वगुण अपेक्षा है ।

२ स्यात् नास्ति-सिद्ध पर गुण अपेक्षा नहीं (पर-गुणों का अभाव है)

(३) स्यादास्ति-नास्ति- सिद्धों में स्वगुणों की अस्ति और परगुणों की नास्ति है ।

(४) स्यादवक्तव्य–अस्ति-नास्ति युगपत् है तो भी एक समय में नहीं कही जा सकती है ।

(५) स्यादास्ति अवक्तव्य—स्वगुणों की अस्ति है तो भी १ समय में नहीं कही जा सकती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(६) स्यान्नास्त्यवक्तव्य—पर गुणों की नास्ति है और १ समय में नहीं कहे जा सके है।

(७) स्यादस्ति नास्त्य वक्तव्य—अस्ति नास्ति दोनों हैं परन्तु एक समय में कहे नहीं जासक्के

इस स्याद्वाद स्वरूप को समझ कर सदा समभावी बन कर रहना जिससे आत्म-कल्याण होवे।

॥ इति नय प्रमाण विस्तार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाषा—पद

(श्रीपन्नवणा सूत्र के ११ वें पद का अधिकार)

(१) भाषा जीव को ही होती है । अजीव को नहीं होती किसी प्रयोग से (कारण से) अजीव में से भी भाषा निकलती हुई सुनी जाती है । परन्तु यह जीव की ही सत्ता है ।

(२) भाषा की उत्पत्ति—औदारिक, वैक्रिय, और आहारिक इन तीन शरीर द्वारा ही हो सकती है ।

(३) भाषा का संस्थान—वज्र समान है भाषा के पुद्गल वज्र संस्थान वाले हैं ।

(४) भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोक के अन्त (लोकान्त) तक जाते हैं ।

(५) भाषा दो प्रकार की है—पर्याप्त भाषा (सत्य असत्य) और अपर्याप्त भाषा (मिश्र और व्यवहार भाषा)

(६) भाषक—समुच्चय जीव और त्रस के १६ दण्डक में भाषा बोली जाती है । ५ स्थावर और सिद्ध भगवान अभाषक हैं । भाषक अल्प हैं । अभाषक इन से अनन्त हैं ।

(७) भाषा चार प्रकार की है—सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार भाषा १६ दण्डकों में चार ही भाषा तीन दण्डकों (विकलेन्द्रिय) में व्यवहार भाषा है ५ स्थावर में भाषा नहीं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) स्थिर-अस्थिर—जीव जो पुद्गल भाषा रूप से लेते हैं वे स्थिर हैं या अस्थिर ? आत्मा के समीप रहे हुवे स्थिर पुद्गलों को ही भाषा रूप से ग्रहण किये जाते हैं। द्रव्य क्षेत्र, काल भाव अपेक्षा चार प्रकार से ग्रहण होता है ।

१ द्रव्य से अनन्त प्रदेशी द्रव्य को भाषा रूप से ग्रहण करते हैं ।

२ क्षेत्र से असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे ऐसे अनन्त प्रदेशी द्रव्य को भाषा रूप में लेते हैं।

३ काल से १-२-३-४-५-६-७-८-९-१० संख्याता और असंख्याता समय की एवं १२ बोल की स्थिति वाले पुद्गलों को भाषा रूप से लेते हैं ।

४ भाव से—५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श वाले पुद्गलों को भाषा रूप में ग्रहण करते हैं । यह इस प्रकार एकेक वर्ण, एकेक रस, और एकेक स्पर्श के अनन्त गुणा अधिक के १३ भेद करना अर्थात् वर्ण के ५+१३ =६५, गन्ध के २×१३=२६, रस के ५×१३-६५ और स्पर्श के ४×१३=५२ बोल हुवे ॥

इन में द्रव्य का १ बोल, क्षेत्र का १ और काल के १२ बोल मिलाने से २२२ बोल हुवे ये २२२ बोल वाले पुद्गल द्रव्य भाषा रूप से ग्रहण होते हैं—(१) स्पर्श किये हुवे (२) आत्म अवगाहन किये हुवे (३)अनन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवगाहन किये हुवे (४) अणु वा सूक्ष्म (५) बादर स्थूल (६) ऊर्ध्व दिशा का (७) अधो दिशा का (८) तीर्छी दिशा का (९) आदि का (१०) अन्त का (११) मध्य का (१२) स्वविषय का (भाषा योग्य) (१३) अनुपूर्वी [क्रमशः] (१४) त्रस नाली की ६ दिशा का (१५) ज. १ समय उ. असंख्यात समय की अं. मु के सान्तर पुद्गल (१६) निरन्तर ज. २ समय ज. २ समय उ. असंख्य समय की अं. मु. का (१७) प्रथम के पुद्गलों को ग्रहण करे, अन्त समय त्यागे मध्यम कहे और छोड़ता रहे ये १७ बोल और ऊपर के २२२ मिल कर कुल २३९ बोल हुवे समुच्चय जीव और १९ दण्डक एवं २० गुणा करने से २३९ ×२०=४७८० बोल हुवे

(९) सत्य भाषा पने पुद्गल ग्रहे तो समुच्चय जीव और १६ दण्डक ये १७ बोल २३९ प्रकार से [ऊपर अनसार] ग्रहे अर्थात् १७×२३९=४०६३ बोल इसी प्रकार असत्य भाषा के ४०६३ बोल और मिश्र भाषा के ४०६३ बोल, तथा व्यवहार भाषा के समुच्चय जीव और १९ दण्डक एवं २०+२३९= ४७८० बोल, कुल मिल कर २१७४९ बोल एकवचनापेक्षा और २१७४९ बहुवचनापेक्षा, कुल ४३४९८ भांगा भाषा के हुवे ॥

[१०] भाषा के पुद्गल मुँह में से निकलते जो वो भेदाते निकलें तो रास्ते में से अनन्त गुणी वृद्धि होते २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक के अन्त भाग तक चले जाते हैं, जो अभेदाते पुद्गल निकलें तो संख्यात योजन जाकर [विध्वंसी] लय पा जाते हैं ॥

(११) भाषा के भेदाते पुद्गल निकलें। वो ५ प्रकार से (१(खण्डा भेद-पत्थर, लोहा, काष्ट आदि के टुकड़े वत् (२) परतर भेद-अबरख के पुड़वत् (३) चूर्ण भेद-धान्य कठोल वत् (४) अगुतड़िया भेद-तालाब की सूखी मिट्टी वत् (५) उक्करिया भेद-कठोल आदि की फलीयां फटने के समान इन पांचों का अल्प बहुत्व-सर्व से कम उक्करिया, उनसे अणतडिया अनन्त गुणा, उनसे चूर्णिय अनन्त गुणा, उनसे परतर अनन्त गुणा, उनसे खण्डा-भेद भेदाते पुद्गल अनन्त गुणा।

(१२) भाषा पुद्गल की स्थिति ज० अं० मु० की

(१३) भाषक का आन्तरा ज० अं० मु०; अनन्त काल का (वनस्पति में जाने पर)।

(१४) भाषा पुद्गल काया योग से ग्रहण किये जाते हैं।

(१५) भाषा पुद्गल वचन योग से छोड़े जाते हैं।

(१६) कारण-मोह और अन्तराय कर्म के क्षयोप-शम और वचन योग से सत्य और व्यवहार भाषा बोली जाती है। ज्ञानावरण और मोहकर्म के उदय से और वचन योग से असत्य और मिश्र भाषा बोली जाती है। केवली सत्य और व्यवहार भाषा ही बोलते हैं। उनके चार घातिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्म क्षय हुवे हैं। विकलेन्द्रिय केवल व्यवहार भाषा संसार रूप ही बोलते हैं और १६ दण्डक के जीव चारों ही प्रकार की बोलते हैं।

(१७) जीव जिस प्रकार की भाषा रूपमें द्रव्य ग्रहण करते हैं वे उसी प्रकार की भाषा बोलते हैं।

(१८) वचन द्वार—बोलने वाले—व्याख्यानदाताओं को नीचे का वचन ज्ञान करना (जानना) चाहिए एक वचन द्वि वचन, बहु वचन; स्त्री वचन, पुरुष वचन, नपुंसक वचन, अध्यवसाय वचन, वर्ण (गुण, कीर्तन), अवर्ण (अवर्ण वाद), वर्णावर्ण (प्रथम गुण करने के बाद अवर्ण वाद), अवर्ण वर्ण (प्रथम अवगुण करके पश्चात् गुण कहना), भूत—भविष्य—वर्तमान काल वचन, प्रत्यक्ष—परोक्ष वचन, इन १६ प्रकार के सिवाय विभक्ति तद्धित, धातु, प्रत्यय आदि का ज्ञाता होवे।

(१६) शुभ इरादे से चार प्रकार की भाषा बोलने वाला आराधक हो सकता है।

(२०) चार भाषा के ४२ नाम हैं. सत्य भाषा के १० प्रकार—१ लोक भाषा २ स्थापना सत्य (चित्रादि के नाम से कहलाने वाली] ३ नाम सत्य [गुण होवे या नहीं होवे जो नाम होवे वो कहना] ४ रूप सत्य [तादृश रूप समान कहना जैसे हनुमान समान- रूप पुतले को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हनुमान कहना] ५ अपेक्षा सत्य ६७ व्यवहार सत्य [८] भाव सत्य [९] योग सत्य [१०] उपमा सत्य।

असत्य वचन के १० प्रकार—१ क्रोध से २ मान से ३ माया से ४ लोभ से ५ राग से ६ द्वेष से ७ हास्य से ८ भय से [इन कारणों से बोली हुई भाषा—आत्म ज्ञान भूलकर] बोली हुई होने से सत्य होने पर भी असत्य है। ९ पर परिताप वाली १० प्राणातिपात [हिंसक] भाषा एवं १० प्रकार की भाषा असत्य है।

मिश्र भाषा के १० प्रकार—इस नगरमें इतने मनुष्य पैदा हुवे, इतने मरे, आज इतने जन्म मरण हुवे, ये सर्व जीव हैं, ये सर्व अजीव है, इनमें आधे जीव हैं, आधे अजीव हैं, यह वनस्पती समस्त अनन्त काय है वह सर्व परित्त काय है, पोरसी दिन आगया, इतने वर्ष व्यतीत होगये, तात्पर्य यह कि जब तक जिस बात का निश्चय न होवे (चाहे कार्य हुआ हो) वहां तक मिश्र भाषा

व्यवहार भाषा के १२ प्रकार—१ संबोधित भाषा [हे वीर, हे देव इ०] २ आज्ञा देना ३ याचना करना ४ प्रश्नादि पूछना ५ वस्तु--तत्त्व- प्ररूपणा करनी ६ प्रत्याख्यानादि करना ७ सामने वाले की इच्छानुसार बोलना " **जहासुहं** " ८ उपयोग शून्य बोलना ९ इरादा पूर्वक व्यवहार करना १० शंका युक्त बोलना ११ अस्पष्ट बोलना १२ स्पष्ट बोलना. जिस भाषा में असत्य न होवें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और संपूर्ण या निश्चय सत्य न होवे तो उसे व्यवहार भाषा जानना।

२१ अल्प बहुत्व—सर्व से कम सत्य भाषक, उनसे मिश्र भाषक असंख्यात गुणा, उससे असत्य भाषक असंख्यात गुणा, उनसे व्यवहार भाषक असंख्यात गुणा और उनसे अभाषक (सिद्ध तथा एकेन्द्रिय) अनन्त गुणा।

॥ इति भाषा पद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुष्य के १८०० भांगा

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, पद छट्ठा)

पांच स्थावर में जीव निरन्तर उत्पन्न होवे और इनमें से निरन्तर निकलें १६ दण्डक में जीव सान्तर और निरन्तर उपजे और सान्तर तथा निरन्तर निकले सिद्ध भगवान सान्तर और निरन्तर उपजे परन्तु सिद्ध में से निकले नहीं ४ स्थावर समय समय असंख्याता जीव उपजे और असंख्याता चवे, वनस्पति में समय समय अनन्ता जीव उपजे और अनन्त चवे १६ दण्डक में समय समय १-२ ३ यावत् संख्याता, असंख्याता जीव उपजे और चवे। सिद्ध भगवान १-२-३ जाव १०८ उपजे परन्तु चवे नहीं।

आयुष्य का बन्ध किस समय होता है ? नारकी, देवता, और युगलिये आयुष्य में जब ६ माह शेष रहे तब पर भव का आयुष्य बान्धे शेष जीव दो प्रकार बान्धे-- **सोपक्रमी और निरुपक्रमी** । निरुपक्रमी तो नियमा तीसरा भाग आयुष्य का शेष रहने पर बान्धे और सोपक्रमी आयुष्य के तीसरे, नववें, सत्तावीश वें, एकाशीवें, २४३ वें भाग में तथा अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में परभव का आयुष्य बान्धें आयुष्यकर्म के साथ साथ ६ बोल (जाति, गति, स्थिति, अवगाहना, प्रदेश और अनुभाग) का बन्ध होता है।

समुच्चय जीव और २४ दण्डक के एकेक जीव ऊपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के ६ बालों का बन्ध करे (२५×६=१५०), ऐसे ही अनेक जीव बन्ध करे। १५०+१५०=३००, ३०० निद्धस और ३०० निकांचित बन्ध होवे। एवं ६०० भांगा (प्रकार) नाम कर्म के साथ, ६०० गोत्र कर्म के साथ और ६०० नाम गोत्र के साथ (एकट्ठा साथ लगाने से आयुष्य कर्म के १८०० भांगे हुवे)।

जीव जाति निद्धस आयुष्य बान्धते हैं, गाय जैसे पानी को खेंचकर पीवे वैसे ही वे आकर्षित करते हैं, कितने आकर्षण से पुद्गल ग्रहण करते हैं। उस समय १--२--३ उत्कृष्ट ८ कर्म खेंचते हैं उसका अल्प बहुत्व सर्व से कम ८ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव, उनसे ७ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव संख्यात गुणा, उनसे ६ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव संख्यात गुणा, उनसे ५--४--३ २ और १ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव क्रमशः संख्यात संख्यात गुणा।

जैसे जाति नाम निद्धस का समुच्चय जीव अपेक्षा अल्प बहुत्व बताया है वैसे ही गति आदि ६ बोलों का अल्प बहुत्व २४ दण्डक पर होता है। एवं १५० का अल्प बहुत्व यावत् ऊपर के १८०० भांगों का अल्प बहुत्व कर लेवे।

॥ इति आयुष्य के १८०० भांगा सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ सोपक्रम-निरुपक्रम ❀

(श्री भगवती जी सूत्र शतक २० उद्देशा)

सोपक्रम आयुष्य ७ कारण से टूट सकता है-१ जल से २ अग्नि से ३ विष से ४ शस्त्र से ५ अति-हर्ष ६ शोक से ७ भय से (बहुत चलना बहुत खाना, मैथुन का सेवन करना आदि न्याय से)।

निरुपक्रम आयुष्य बन्धा हुआ पूरा आयुष्य भोगवे बीच में टूट नहीं। जीव दोनों प्रकार के आयुष्य वाले होते हैं।

१ नारकी, देवता, युगल मनुष्य, तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, प्रति वासुदेव, बलदेव इन के आयुष्य निरुपक्रमी होते हैं शेष सर्व जीवों के दोनों प्रकार का आयुष्य होता है।

२ नारकी सोपक्रम (स्वहस्ते शस्त्रादि से) से उपजे, पर उपक्रम से तथा बिना उपक्रम से १ तीनों प्रकार से। तात्पर्य कि मनुष्य तिर्यंच पने जीव नरक का आयुष्य बान्धा होवे तो मरत समय अपने हाथों से दूसरों के हाथों से अथवा आयुष्य पूर्ण होने के बाद मरे, एवं २४ दण्डक जानना।

३ नेरिये नरक से निकले तो स्वोपक्रम से परोपक्रम से तथा उपक्रम से ? बिना उपक्रम से। एवं १३ देवता के

दण्डक में भी विना उपक्रम से चवे, स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य एवं १० दण्डक के जीव तीनों ही उपक्रम से चवे ।

४ नारकी स्वात्म ऋद्धि (नरकायु आदि) से उत्पन्न होवे कि पर ऋद्धि से ? स्वऋद्धि से और निकले (चवे) भी स्वऋद्धि से एवं २३ दण्डक में जानना ।

५ २४ दण्डक के जीव स्वप्रयोग (मन वचन काय) से उपजे और निकले, पर प्रयोग से नहीं ।

६ २४ दण्डक के जीव स्वकर्म से उपजे और निकले (चवे), पर कर्म से नहीं ।

॥ इति सोपक्रम निरुपक्रम सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

* ह्रियमाण-वड्ढमाण *

श्री भगवती सूत्र, शतक ५ उ० ८

(१) जीव ह्रियमान (घटना) है या वर्द्धमान (बढना) ? न तो ह्रियमान है और न वर्द्धमान परन्तु अवस्थित (वध-घट विना जैसे का तैसा रहे) है।

(२) नेरिया ह्रियमान, वर्धमान और अवस्थित भी हैं एवं २४ दण्डक, सिद्ध भगवान वर्धमान और अवस्थित हैं।

(३) समुच्चय जीव अवस्थित रहे तो शाश्वता नेरिया ह्रियमान, वर्धमान रहे तो ज० १ समय उ० आवलिका के असंख्यातवें भाग और अवस्थित रहे तो विरह काल से दुगणा (देखो विरह पद का थोकड़ा) एवं २४ दण्डक में अवस्थित काल विरह काल से दूना, परन्तु ५ स्थावर में अवस्थित काल ह्रियमान वत् जानना। सिद्धों में वर्धमान ज० १ समय, उ० ८ समय और अवस्थित काल ज० १ समय उत्कृष्ट ६ माह।

॥ इति ह्रियमाण वड्ढमाण सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सावचया सोवचया

(श्री भगवती सूत्र, शतक ५, उ० ८)

१ सावचया [वृद्धि] २ सोवचया [हानि] ३ सावचया सोवचया [वृद्धि-हानि] और ४ निरूवचया [न तो वृद्धि और न हानि] इन चार भागों पर प्रश्नोतर समुच्चय जीवों में चौथा भांगा पावे, शेष तीन नहीं, २४ दण्डक में चार ही भांगा पावे। सिद्ध में भागा २ (सावचया-और निरुवचया-निरवचया)

समुच्चय जीवों में जो निरुवचया-निरवचया है वो सर्वार्ध है। और नारकी में निरुवचया-निरवचया सिवाय तीन भागों की स्थिति ज० १ समय की उ० आवालिका के असंख्यात भाग की तथा निरुवचया-निरवचया की स्थिति विरह द्वार वत्, परन्तु पांच स्थावर में निरुवचया-निरवचया भी ज० १ समय, उ० आवलिका के असंख्यातवें भाग सिद्ध में सावचया ज० १ समय उ० ८ समय की और निरूवचया-निरवचया की ज० १ समय की उ० ६ माह की स्थिति जानना।

नोटः-पांच स्थावर में अवस्थित काल तथा निरुवचया निरवचया काल आवलिका ये असंख्यातवें भाग कही हुई है यह परकायापेक्षा है। स्वकाय का विरह नहीं पड़ता।

॥ इति सावचया सोवचया सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृत संचय

(श्री भगवती सूत्र, शतक २०, उद्देशा १०)

(१) कृत संचय-जो एक समय में दो जीवों से संख्याता जीव उत्पन्न होते हैं।

(२) अकृत संचय-जो एक समय में असंख्याता अनन्ता जीव उत्पन्न होते हैं

(३) अवक्तव्य संचय-एक समय में एक जीव उत्पन्न होता है।

१ नारकी (७), १० भवन पति, ३ विकलेन्द्रिय, १ तिर्यंच पंचेन्द्रिय, १ मनुष्य, १ व्यंतर, १ ज्योतिषी और १ वैमानिक एवं १६ दण्डक में तीनों ही प्रकार के संचय।

पृथ्वी काय आदि ५ स्थावर में अकृत संचय होता है। शेष दो संचय नहीं होते कारण समय समय असंख्य जीव उपजते हैं। यदि किसी स्थान पर १-२-३ आदि संख्याता कहे हों तो वो परकायापेक्षा समझना।

सिद्ध कृत संचय तथा अवक्तव्य संचय है, अकृत संचय नहीं।

अल्प बहुत्व

नारकी में सर्व से कम अवक्तव्य संचय उनसे कृत संचय संख्यात गुणा उनसे अकृत संचय असंख्यात गुणा एवं १६ दण्डक का अल्प बहुत्व जानना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ स्थावर में अल्प बहुत्व नहीं।

सिद्ध में सर्व से कम कृत संचय, उनसे अवक्तव्य संचय संख्यात गुणा।

॥ इति कृत संचय संपूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य--(जीवा जीव)

(श्री भगवती सूत्र, शतक २५ उ० २)

द्रव्य दो प्रकार का है–जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य।

क्या जीव द्रव्य संख्याता, असंख्याता तथा अनन्ता है? अनन्ता है कारण कि जीव अनन्त है।

अजीव द्रव्य संख्याता, असंख्याता तथा क्या अनन्ता है? अनन्ता है। कारण कि अजीव द्रव्य पांच है:-धर्मास्ति काय अधर्मास्ति काय, असंख्याता प्रदेश हैं आकाश और पुद्गल के अनन्त प्रदेश हैं। और काल वर्तमान एक समय है भूतभविष्यापेक्षा अनन्त समय है इस कारण अजीव द्रव्य अनन्ता है।

प्र०–जीव द्रव्य, अजीव द्रव्य के काम में आते हैं कि अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते हैं?

उ०–जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में नहीं आते, परन्तु अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते हैं। कारण कि–जीव अजीव द्रव्य को ग्रहण करके १४ बोल उत्पन्न करते हैं यथा–१ औदारिक २ वैक्रिय ३ आहारिक ४ तेजस ५ कार्मण शरीर, ५ इन्द्रिय, ११ मन, १२ वचन, १३ काया और १४ श्वासो श्वास।

प्र० अजीव द्रव्य के नारकी के नेरिये काम आते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं कि नेरिये के अजीव द्रव्य काम आते हैं ?

उ०—अजीव द्रव्य के नेरिये काम नहीं आते, परन्तु नेरिये क अजीव द्रव्य काम आते हैं। अजीव का ग्रहण करके नेरिये १२ बोल उत्पन्न करते हैं।

(३ शरीर, इन्द्रिय, मन, वचन और श्वासोश्वास)

देवता के १३ दण्डक के प्रश्नोत्तर भी नारकीवत् (१२ बोल उपजावे)

चार स्थावर के जीव ६ बोल (३ शरीर स्पर्शेन्द्रिय काय और श्वासोश्वास) उपजावे वायु काय के जीव ७ बोल ऊपर के ६ और वैक्रिय) उपजावे।

बेइन्द्रिय जीव ८ बोल उपजावे (३ शरीर, २ इन्द्रिय, २ योग, श्वासो श्वास।)

त्रि-इन्द्रिय जीव ९ बोल उपजावे (३ शरीर, ३ इन्द्रिय २ योग, श्वासो श्वास)।

चौरिन्द्रिय जीव १० बोल उपजावे (३ शरीर, ४ इन्द्रिय २ योग, श्वासो श्वास)।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय १३ बोल उपजावे (४ शरीर, ५ इन्द्रिय, ३ योग, श्वासो श्वास।)

मनुष्य सम्पूर्ण १४ बोल उपजावे।

॥ इति द्रव्य-जीवाजीव सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्थान--द्वार

(श्री भगवतीजी सूत्र, शतक २५ उद्देशा ३)

संस्थान=आकृति इसके दो भेद १ जीव संस्थान और २ अजीव संस्थान जीव संस्थान के ६ भेद— १ समचौरस २ सादि ३ निग्रोध परिमण्डल ४ वामन ५ कुब्जक ६ हूंड संस्थान । अजीव संस्थान के ६ भेद– १ परिमंडल (चूड़ी के समान गोल) २ वट्ट (लड्डू समान गोल) ३ त्रंस (त्रिकोन) ४ चौरंस (चौरस) ५ आयतन (लकड़ी समान लम्बा) ६ अनवस्थित (इन पांचों से विपरीत) ।

परिमण्डल आदि छः ही संस्थानों के द्रव्य अनन्त हैं संख्याता या असंख्याता या असंख्याता नहीं ।

इन संस्थानों के प्रदेश भी अनन्त हैं, संख्याता असंख्याता नहीं ।

६ संस्थानों का द्रव्यापेक्षा अल्प बहुत्व

सर्व से कम परिमंडल संस्थान के द्रव्य । उनसे वट्ट के द्रव्य संख्यात गुणा उनसे चौरस के द्रव्य संख्यात गुणा उनसे त्रंस के द्रव्य संख्यात गुणा उनसे आयतन के द्रव्य संख्यात गुणा, उनसे अनवस्थित के द्रव्य असंख्यात गुणा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व भी द्रव्यापेक्षावत् जानना ।

द्रव्य-प्रदेशापेक्षा का एक साथ अल्प बहुत्व

सर्व से कम परिमंडल द्रव्य, उनसे वट्ट द्रव्य संख्यात गुणा उनसे चौरस द्रव्य संख्यात गुणा उनसे त्रंस द्रव्य "
" " आयतन " " " " अनवस्थित "
असं. गुणा. " परिमंडल प्रदेश असंख्यात " वट्ट प्रदेश
सं० " - " चौरस " संख्यात " त्रंस "
" " " आयन " " " अनवस्थित
असंख्यात गुणा ।

॥ इति संस्थान द्वार सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्थान के भांग

(श्री भगवती जी सूत्र, शतक २५ उद्देशा ३)

संस्थान ५ प्रकार का है-१ परिमंडल २ वट्ट ३ त्र्यंस ४ चौरस ५ आयतन ये पांचों ही संस्थान संख्याता, असंख्याता नहीं परन्तु अनन्ता है।

७ नारकी, १२ देवलोक, ६ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला और पृथ्वी के ३५ स्थान में पांच प्रकार के अनन्ता अनन्ता संस्थान हैं एवं ३५+५=१७५ भांगे हुवे।

एक यवमध्य परिमंडल संस्थान में दूसरा परिमंडल संस्थान अनन्त है। एवं यावत् आयतन संस्थान तक अनन्त अनन्त कहना। इसी प्रकार एक यवमध्य परिमंडल के समान अन्य ४ संस्थानों की व्याख्या करना। एक संस्थान में दूसरे पांचों ही संस्थान अनन्त हैं अतः प्रत्येक के ५+५=२५ बोल। इन उक्त ३५ स्थानों में होवे अर्थात् ३५+२५=८७५ और १७५ पहले के मिल कर १०५० भांगे हुवे।

॥ इति संस्थान के भांगे सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खेताणु--वाई

(श्रीपन्नवणा जी सूत्र, तीसरा पद)

तीन लोकों के ६ भेद (भाग) करके प्रत्येक भाग में कौन रहता है ? यह बताया जाता है ।

(१) ऊर्ध्व लोक (ज्योतिषी देवता के ऊपर के तले से ऊपर) में--१२ देवलोक, ३ किल्विषी, ६ लोकांतिक, ६ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान इन ३८ देवों के पर्याप्ता, अपर्याप्ता (७६ देव) तथा मेरु की वापी अपेक्षा बादर तेऊ के पर्याप्ता, अपर्याप्ता सिवाय ४६ जाति के तिर्यंच होवे, एवं ७६+४६=१२२ भेद (प्रकार) के जीव होते हैं।

(२) अधो लोक (मेरु की समभूमि से ६०० योजन नीचे तीर्छा लोक उससे नीचे) में जीव के भेद ११५ हैं-७ नारकी के १४ भेद, १० भवनपति १५ परमाधामी के पर्या० अपर्या० एवं ५० देव, सलीलावति विजय अपेक्षा (१ महाविदेह का पर्या० अपर्या० और संमूर्छिम मनुष्य) ३ मनुष्य और ४८ तिर्यंच के भेद मिल कर १४+५०+३+४८=११५ हैं।

(३) तीर्छा लोक (१८०० योजन) में ३०३ मनुष्य, ४८ तिर्यंच और ७२ देव (१६ व्यन्तर, १० जृंभका १० ज्योतिषी इन ३६ के पर्या० अपर्या०) कुल ४२३ भेद के जीव है ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

(४) ऊर्ध्व--तीर्छा लोक-(ज्योतिषी के ऊपर के तला के प्रदेशी प्रतर के बीच में) में देव गमनागमन के समय और जीव चवकर ऊर्ध्व लोक में तथा तीर्छे लोक जाते गमनागमन के समय स्पर्श करते हैं।

(५) अधो -तीर्छे लोक में भी दोनों प्रतरों को चव कर जाते आते जीव स्पर्शते हैं।

(६) तीनों ही लोक (ऊर्ध्व, अधो और तीर्छा लोक) का देवता, देवी तथा मरणांतिक समुद्‌घात करते जीव एक साथ स्पर्श करते हैं।

२४ दण्डक के जीव उपरोक्त ६ लोक में कहाँ न्यूनाधिक हैं! इसका अल्प बहुत्व।

२० बोल (समुच्चय एकेन्द्रिय, ५ स्थावर ये ६ समुच्चय, ६ पर्याप्ता, ६ अपर्याप्ता, १ समुच्चय और १ समुच्चय तिर्यच) का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में, उनसे अधो तीर्छे लोक में विशेष उससे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीनों लोक में असंख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीनों अधो लोक में विशेष।

३ बोल (समुच्चय नारकी, पर्याप्ता और अपर्याप्ता नारकी का अल्प बहुत्व--सर्व से कम तीन लोक में अधो तीर्छे लोक में असंख्यात, अधो लोक में असंख्यात गुणा।

६ बोल-भवनपति के (१ समुच्चय, १ पर्याप्ता,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ अपर्याप्ता एवं ३ देवी के) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा, उनसे तीनों लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो लोक में असंख्यात गुणा।

४ बोल (तिर्यचनी, समुच्चय देव, समुच्चय देवी, पंचेन्द्रिय, के पर्याप्ता) का अल्प बहुत्व सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीनों लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में ३ बोल संख्यात गुणा और पंचेन्द्रिय का पर्याप्ता असंख्यात गुणा।
एवं तीन मनुष्यनी के) बोल—सर्व से कम तीनों लोक में, उनसे ऊर्ध्व—तीर्छे लोक में मनुष्य असंख्यात गुणा मनुष्यनी संख्यात गुणी उनसे अधो—तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में संख्यात गुणा।

६ बोल-व्यन्तर के (समु० व्यन्तर देव पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं ३ देवी के) बोल—सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में, उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो—तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में संख्यात गुणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ बोल ज्योतिषी के (३ देवके, ३ देवी के ऊपर वत्) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असं० गुणा उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा, उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा

६ बोल-वैमानिक (३ देवी के ऊपर वत्) के-सर्व से कम ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में असंख्यात गुणा।

६ बोल तीन विकलेन्द्रिय के (३ पर्याप्ता, ३ अपर्याप्ता) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक म संख्यात गुणा।

५ बोल (समुच्चय पंचेन्द्रिय, समु० अपर्याप्ता समु०त्रस, त्रस के पर्या० अपर्याप्ता) सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक-में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक म संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व–तीर्छे लोक में अनं० गुणा उनसे आधो--तीर्छे लोक में विशेष लोक में उनसे तीर्छे " " असं० उन से ऊर्ध्व लोक में असं० गुणा उन से अधो लोक में विशेष ।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व--तीर्छे लोक में अनंत गुणा उनसे अधो तीर्छे लोक में विशेष उनसे ऊर्ध्व लोक में अनंत गुणा उन से अधो तीर्छे लोक में अनंत गुणा उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में अनंत गुणा ।

पुद्गल दिशापेक्षा

सर्व से कम ऊर्ध्व दिशा में उनसे अधो दिशा में विशेष उनसे ईशान नैऋत्य कोन में असं० गुणा उनसे अग्नि वायव्य कोन में विशेष उनसे पूर्व दिशा में असं० गुणा उनसे पश्चिम दिशा में विशेष । उनसे दक्षिण दिशा में विशेष और उनसे उत्तर दिशा में विशेष पुद्गल जानना ।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम द्रव्य अधो दिशा में उनसे ऊर्ध्व दिशा में अनन्तगुणा उन से ईशान नैऋत्य कोन में अनन्तगुणा उन से अग्नि वायु कोन में विशेष उन से पूर्व दिशा में असंख्यात गुणा उन से पश्चिम दिशा में विशेष उन से दक्षिण दिशा में विशेष उन से उत्तर दिशा में विशेष ।

॥ इति खेताणु वाई सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवगाहन का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता की ज. अवगाहना उनसे
२ सूक्ष्म वायु काय के अपर्याप्ता की. ज. „ असं. गुणी „
३ „ तेऊ „ „ „ „ „ „ „ „ „
४ „ अप „ „ „ „ „ „ „ „ „
५ „ पृथ्वी „ „ „ „ „ „ „ „ „
६ बादर वायु „ „ „ „ „ „ „ „ „
७ „ तेऊ „ „ „ „ „ „ „ „ „
८ „ अप „ „ „ „ „ „ „ „ „
९ „ पृथ्वी „ „ „ „ „ „ „ „ „
१० „ निगोद „ „ „ „ „ „ „ „ „
११ प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पति के अ० की „ „ „ „ „
१२ सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता की „ „ „ „ „
१३ „ „ „ अपर्या. „ उ. „ विशेष „
१४ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „ „
१५ „ वायु काय „ „ „ ज. „ असं. गुणी „
१६ „ „ „ „ अपर्या. „ उ. „ विशेष „
१७ „ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „
१८ „ तेऊ „ „ „ „ ज. „ असं. गु. „
१९ „ „ „ „ अपर्याप्ता „ उ. „ विशेष „
२० „ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „
२१ „ अप „ „ „ „ ज. „ असं. गुणी „
२२ „ „ „ „ अपर्याप्ता „ उ. „ विशेष „
२३ „ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „
२४ „ पृथ्वी „ „ „ „ ज. „ असं. गुणी „
२५ „ „ „ „ अपर्या „ उ. „ विशेष „

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६	,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,,	,,	,,	,,	,,
२७	बादर वा.,, ,, ,, ,,	ज.	,,	असं. गुणी	,,
२८	,, ,, ,, ,, अपर्याप्ता ,,	उ.	,,	विशेष	,,
२९	,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,,	उ.	,,	,,	,,
३०	,, तेऊ ,, ,, ,, ,,	ज.	,,	असं. गुणी	,,
३१	,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ.	,,	विशेष	,,
३२	,, ,, ,, ,, पर्या. ,,	,,	,,	,,	,,
३३	,, अप ,, ,, ,, ,,	ज.	,,	असं. गुणी	,,
३४	,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ.	,,	विशेष	,,
३५	,, ,, ,, ,, पर्या. ,,	उ.	,,	,,	,,
३६	बादर पृ.,, ,, ,, ,,	ज.	,,	असं. गुणी	,,
३७	,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ.	,,	विशेष	,,
३८	,, ,, ,, ,, पर्या. ,,	,,	,,	,,	,,
३९	,, निगोद ,, पर्या. ,,	ज.	,,	असं. गुणी	,,
४०	,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ.	,,	विशेष	,,
४१	,, ,, ,, पर्या. ,,	,,	,,	,,	,,
४२	प्रत्येक शरीरी बादर वन. पर्या. का	ज.	,,	असं. गुणी	,,
४३	,, ,, ,, ,, अपर्या.	उ.	,, ,,	,,	,,
४४	,, ,, ,, ,, पर्या.	,,	,, ,,	,,	,,

॥ इति अवगाहना अल्प बहुत्व ॥

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

चरम पद

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, दशवाँ पद)

चरम की अपेक्षा अचरम है और अचरम की अपेक्षा चरम है। इनमें कम से कम दो पदार्थ होने चाहिये। नीचे रत्नप्रभादि एकेक पदार्थ का प्रश्न है। उत्तर में अपेक्षा से नास्ति है। अन्य अपेक्षा से अस्ति है। इसी को स्याद्वाद् धर्म कहते हैं।

पृथ्वी ८ प्रकार की है—७ नारकी और ईशी प्राग-भोरा (सिद्ध शिला)

प्रश्न—रत्न प्रभा क्या (१) चरम है ? (२) अचरम है ? (३) अनेक चरम है ? (४) अनेक अचरम है ? (५) चरम प्रदेश है ? (६) अचरम प्रदेश है ?

उत्तर—रत्नप्रभा पृथ्वी द्रव्यापेक्षा एक है। अतः चरमादि ६ बोल नहीं होवे। अन्य अपेक्षा रत्नप्रभा के मध्य भाग और अन्त भाग ऐसे दो भाग करके उत्तर दिया जाय तो—चरम पद का अस्तित्व है। जैसे—रत्न-प्रभा पृथ्वी द्रव्यापेक्षा (१) चरम है। कारण कि मध्य भाग की अपेक्षा बाहर का भाग (अन्त भाग) चरम है। (२) अचरम है। कारण कि अन्त भाग की अपेक्षा मध्य भाग अचरम है। क्षेत्रापेक्षा (३) चरम प्रदेश है। कारण कि मध्य प्रदेशापेक्षा अन्त प्रदेश चरम है और (४) अच-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रम प्रदेश है । कारण कि अन्त प्रदेशापेक्षा मध्य का प्रदेश अचरम है ।

रत्नप्रभा के समान ही नीचे के ३६ बोलों को चार चार बोल लगाये जासक्ते हैं । ७ नारकी, १२ देव लोक, ९ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान, १ सिद्ध शिला, १ लोक और १ अलोक एवं ३६×४=१४४ बोल होते हैं ।

इन ३६ बोलों की चरम प्रदेश में तारतम्यता है । इसका अल्प बहुत्व--

रत्न प्रभा के चरमाचरम द्रव्य और प्रदेशों का अल्प बहुत्व-सर्व से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असंख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, सर्व से कम चरम प्रदेश, उनसे अचरम प्रदेश असंख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष ।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अल्प बहुत्व, सर्व से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असंख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष, इसी प्रकार लोक सिवाय ३५ बोलों का अल्प बहुत्व जानना ।

अलोक में

द्रव्य का अल्प बहुत्व—सर्व से कम अचरम द्रव्य, उन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से चरम द्रव्य असंख्य गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष।

प्रदेश का अल्प बहुत्व-सर्व से कम चरम प्रदेश, उनसे अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

द्रव्य प्रदेश का अल्प बहुत्व-सर्व से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असंख्य गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

लोकालोक में चरमाचरम द्रव्य का अल्प बहुत्व

सर्व से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य असंख्य गुणा, उन से अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष।

लोकालोक में चरमाचरम प्रदेश का अल्प बहुत्वः-सर्व से कम लोक के चरम प्रदेश, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उन से लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उन से लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष।

लोकालोक में द्रव्य-प्रदेश चरमाचरम का अल्प बहुत्व-सर्व से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उन से लोक के चरम द्रव्य असं० गुणा, उनसे अलोक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष ।

एवं ६ बोल, सर्व द्रव्य, प्रदेश और पर्याय १२ बोलों का अल्प बहुत्व—

सर्व से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उन से अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष, उनसे सर्व द्रव्य विशेष, उनसे सर्व प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे सर्व पर्याय अनन्त गुणी ।

॥ इति चरम पद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरमा-चरम

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, दसवां पद)

द्वार ११-१ गति २ स्थिति ३ भव ४ भाषा ५ श्वासोश्वास ६ आहार ७ भाव ८ वर्ण ९ गंध १० रस ११ स्पर्श द्वार ।

१ गति द्वार-गति अपेक्षा जीव चरम भी है और अचरम भी है । जिस भव में मोक्ष जाना है वो गति चरम और अभी भव बाकी है वो अचरम, एक जीव अपेक्षा और २४ दण्डक अपेक्षा ऊपरवत जानना अनेक जीव तथा २४ दण्डक के अनेक जीव अपेक्षा भी चरम अचरम ऊपर अनुसार जानना ।

२ स्थिति द्वार-स्थिति अपेक्षा एकेक जीव, अनेक जीव, २४ दण्डक के एकेक जीव और २४ दण्डक के अनेक जीव स्यात् चरम, स्यात् अचरम है ।

३ भव द्वार-इसी प्रकार एकेक और अनेक जीव अपेक्षा समुच्चय जीव और २४ दण्डक भव अपेक्षा स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है ।

४ भाषा द्वार-भाषा अपेक्षा १९ दण्डक(५ स्थावर सिवाय के) एकेक और अनेक जीव चरम भी है और अचरम भी है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ श्वासोश्वास द्वार-श्वासोश्वास अपेक्षा सर्व चरम भी है, अचरम भी है ।

६ आहार-अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के जीव चरम भी है, अचरम भी है ।

७ भाव-(औदयिक आदि) अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के जीव चरम भी है, अचरम भी है ।

८ से-११ वर्ण,गन्ध,रस,स्पर्श के २० बोल अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के एक और अनेक जीव चरम भी है, अचरम भी है ।

। इति चरमाचरम सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ जीव परिणाम पद ❀

(श्री पन्नवणा सूत्र, तेरहवां पद)

जिस परिणति से परिणमे उसे परिणाम कहते हैं। जैसे जीव स्वभाव से निर्मल, सच्चिदानन्द रुप है। तथापि पर प्रयोग से कषाय में परिणमन हो कर कषायी कहलाता है। इत्यादि । परिणाम दो प्रकार का है- १ जीव परिणाम २ अजीव परिणाम ।

१ जीव परिणाम–१० प्रकार का है–गति, इन्द्रिय, कषाय, लेश्या, योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वेद परिणाम । विस्तार से गति के ४, इन्द्रिय के ५, कषाय के ४, लेश्या के ६, योग के ३, उपयोग के २ (साकार ज्ञान और निराकार दर्शन), ज्ञान के ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान), दर्शन के ३ (सम–मिथ्या–मिश्र दृष्टि), चारित्र के ७ (५ चारित्र, १ देश व्रत और अव्रत), वेद के ३, एवं कुल ४५ बोल है । और समुच्चय जीव में १ अनेन्द्रिय २ अकषाय ३ अलेशी ४ अयोगी और ५ अवेदी । एवं ५ बोल मिलाने से ५० बोल हुवे ।

समुच्चय जीव एव ५० बोल पने परिणमते हैं। अब ये २४ दण्डक पर उतारे जाते हैं।

(१) सात नारकी के दण्डक में २६ बोल पावे १ नरक गति, ५ इन्द्रिय ४ कषाय, ३ लेश्या, ३ योग,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ उपयोग, ६ ज्ञान (३ ज्ञान, ३ अज्ञान) ३ दर्शन, १ असंयम-चारित्र, १ वेद नपुसंक एवं २६ बोल ।

(११) १० भवन पति १ व्यन्तर एवं ११ दण्डक में ३१ बोल पावे-नारकी के २६ बोलों में १ स्त्री वेद और १ तेजो लेश्या बढाना ।

(३) ज्योतिषी और १-२ देवलोक में २८ बोल; ऊपर में से ३ अशुभ लेश्या घटाना ।

(१०) तीसरे से बारहवें देव लोक तक २७ बोल-ऊपर में से १ स्त्री वेद घटाना ।

(१) नव ग्रीयवेक में २६ बोल-ऊपर में से १ मिश्र दृष्टि घटानी ।

(१) पांच अनुत्तर विमान में २२ बोल । १ दृष्टि और ३ अज्ञान घटाना ।

(३) पृथ्वी, अप, वनस्पति में १८ बोल । १ गति, १ इन्द्रिय, ४ कषाय, ४ लेश्या, १ योग, २ उपयोग, २ अज्ञान, १ दर्शन, १ चारित्र, १ वेद एवं १८ ।

(२) तेउ-वायु में १७ बोल--ऊपर में से १ तेजो लेश्या घटाना ।

(१) बेइन्द्रिय में २२ बोल-ऊपर के १७ बोलों में से १ रसेन्द्रिय, १ वचन योग, २ ज्ञान, १ दृष्टि एवं ५ बढ़ाने से २२ हुवे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) त्रि-इन्द्रिय में २३ बोल--ऊपरोक्त २२ में १ घ्राणेन्द्रिय बढानी ।

(१) चौरिन्द्रिय में २४ बोल--२३ में १ चक्षु इन्द्रिय बढानी ।

(१) तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ३५ बोल १ गति, ५ इन्द्रिय,४ कषाय, ६ लेश्या, ३योग, २ उपयोग,६ज्ञान, ३ दर्शन, २ चारित्र, ३ वेद एवं ३५ बोल ।

(१) मनुष्य में ४७ बोल—५० में से ३ गति कम शेष सर्व पावे ।

॥ इति जीव परिणाम पद सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

❀ अजीव परिणाम ❀

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, १३ वाँ पद)

अजीव=पुद्गल का स्वभाव भी परिणमन का है इसके परिणाम के १० भेद हैं-१ बन्धन २ गति ३ संस्थान ४ भेद ५ वर्ण ६ गन्ध ७ रस ८ स्पर्श ९ अगुरुलघु और १० शब्द ।

१ **बन्धन**—स्निग्ध का बन्धन नहीं होवे, (जैसे घी से घी नहीं बंधाय) वैसे ही रुक्ष (लूखा) रुक्ष का बन्धन नहीं होवे (जैसे राख से राख तथा रेती से रेती नहीं बन्धाय) परन्तु स्निग्ध और रुक्ष-दोनों मिलने से बन्ध होता है ये भी आधा आधा (सम प्रमाण में) होवे तो बन्ध नहीं होवे विषम (न्यूनाधिक) प्रमाण में होवे तो बन्ध होवे;जैसे परमाणु परमाणु से नहीं बन्धाय परमाणु दो प्रदेशी आदि स्कन्ध से बन्धाय ।

२ **गति**—पुद्गलों की गति दो प्रकार की है, (१) स्पर्श करते चले (जैसे पानी का रेला और (२) स्पर्श किये बिना चले (जैसे आकाश में पक्षी)

३ **संस्थान**–(आकार) कम से कम दो प्रदेशी जाव अनन्ता परमाणु के स्कन्धों का कोई न कोई संस्थान होता है । इस के पांच भेद ○ परिमंडल, ○ वट्ट, △ त्रिकोन □ चोरस । आयतन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४ भेद—पुद्गल पांच प्रकार से भेदे जाते हैं (भेदाते हैं) (१) खंडा भेद (लकड़ी पत्थर आदि के टुकड़े समान (२) परतर भेद (अबरख समान पुड़) (३) चूर्ण भेद (अनाज के आटे समान) (४) उकलिया भेद (कठोल की फलियां सूख कर फटे उस समान) (५) अणनूंडिया (तालाब की सूखी मिट्टी समान)

५ वर्ण—मूल रंग पांच है-काला नीला लाल, पीला, सफेद, इन रंगों के संयोग से अनेक जाति के रंग बन सकते हैं जैसे-बादामी, केशरी, तपखीरी, गुलाबी, खाखी आदि।

६ गंध—सुगन्ध और दुर्गन्ध (ये दो गन्ध वाले पुद्गल होते हैं।

७ रस—मूल रस पांच हैं—तीखा, कड़वा कषायला, खट्टा, मीठा और क्षार (नमक का रस) मिलाने से षट् रस कहलाते हैं।

८ स्पर्श—आठ प्रकार का है-कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, रुक्ष, स्निग्ध।

९ अगुरु लघु-न तो हलका और न भारी जैसे परमाणु प्रदेश, मन भाषा, कार्मण शरीर आदि के पुद्गल।

१० शब्द—दो प्रकार के हैं-सुस्वर और दुःस्वर।

॥ इति अजीव परिणाम सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बारह प्रकार का तप

(श्री उववाईजी सूत्र)

तप १२ प्रकार का है। ६ बाह्य तप (१ अनशन २ उनोदरी ३ वृत्तिसंक्षेप ४ रस परित्याग ५ काया क्लेश ६ प्रति संलिनता) और ६ आभ्यन्तर तप (१ प्रायश्चित २ विनय ३ वैयावच्च ४ स्वाध्याय ५ ध्यान ६ काउसग्ग ।)

१ अनशन के २ भेद-१ इत्वरीक अल्प काल का तप २ अवकालिक- जावजीव का तप । इत्वरीक तप के अनेक भेद हैं-एक उपवास, दो उपवास यावत् वर्षी तप (१ वर्ष तक के उपवास)। वर्षी तप प्रथम तीर्थंकर के शासन में हो सकता है। २२ तीर्थंकर के शासन में ८ माह और चरम (अन्तिम) तीर्थंकर के समय में ६ माह उपवास करने का सामर्थ्य रहता है।

अवकालिक-(जावजीव का) अनशन व्रत के २ भेद १ एक भक्त प्रत्याख्यान और २ पादोपगमन प्रत्याख्यान । एक भक्त प्रत्या० के २ भेद-(१) व्याघातउपद्रव आने पर अमुक अवधि तक ४ आहार का पच्चखाण करे जैसे अर्जुनमाली के भय से सुदर्शन शेठ ने किया था। (२) निर्व्याघात-(उपद्रव रहित) के दो भेद (१) जावजीव तक ४ आहार का त्याग करे (२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नित्य सेर, आधासेर तथा पाव सेर दूध या पानी की छूट रख कर जावजीव का तप करे ।

पादोपगमन-(वृक्ष की कटी हुई डाल समान हलन चलन किये बिना पड़े रहे । इस प्रकार का संथारा करके स्थिर हो जाना) अनशन के दो भेद-१ व्याघात (अग्नि-सिंहादि का उपद्रव आने से) अनशन करे जैसे सुकोशल तथा अति सुकुमाल मुनियों ने किया । २ निर्व्याघात (उपद्रव रहित) जावजीव का पादोपगमन करे । इनको प्रति क्रमणादि करने की कुछ आवश्यकता नहीं एक प्रत्याख्यान अनशन वाला जरुर करे ।

२ **उनोदरी तप** के दो भेद- द्रव्य उनोदरी और भाव उनोदरी द्रव्य उनोदरी के २ भेद(१)उपकरण उनोदरी (वस्त्र, पात्र और इष्ट वस्तु जरुरत से कम रक्खे-भोगवे) २ भात उनोदरी के अनेक प्रकार है । यथा अल्पाहारी ८ कवल (कवे) आहार करे, अल्प अर्ध उनोदरी वाले १२ कवल ले, अर्ध उनोदरी करे तो १६ कवल ले, पौन उनोदरी करे तो २४ कवल ले, एक कवल उनोदरी करे तो ३१ कवल ले, ३२ कवल का पूरा आहार समझना इस से जितने कवल कम लेवे उतनी ही उनोदरी होवे उनोदरी से रसेन्द्रिय जीताय, काम जीताय, निरोगी होवे ।

भाव उनोदरी के अनेक भेद-अल्प क्रोध, अल्प

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मान, अल्प माया, अल्प लोभ, अल्प राग, अल्प द्वेष, अल्प सोवे, अल्प बोले आदि।

३ वृत्ति संक्षेप (भिक्षाचर्या) के अनेक भेद—अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे। जैसे द्रव्य से अमुक वस्तु ही लेना, अमुक नहीं लेना। क्षेत्र से अमुक घर, गाँव के स्थान से ही लेने का अभिग्रह। काल से अमुक समय, दिन को व महिने में ही लेने का अभिग्रह। भाव से अनेक प्रकार के अभिग्रह करे जैसे बर्तन में से निकालता देवे तो कल्पे, बर्तन में डालता देवे तो कल्पे, अन्य को देकर पीछे फिरता देवे तो कल्पे, अमुक वस्त्र आदि वाले तथा अमुक प्रकार से तथा अमुक भाव से देवे तो कल्पे इत्यादि अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे।

४ रस परित्याग तप के अनेक प्रकार है-विगय (दूध, दही, घी, गुड़, शक्कर, तेल, शहद, मक्खन आदि) का त्याग करे। प्रणीत रस (रस झरता हुवा आहार) का त्याग करे, निवि करे, एकासन करे, आयंबिल करे, पुरानी वस्तु, बिगड़ा हुवा अन्न, लूखा पदार्थ आदि का आहार करे। इत्यादि रस वाले आहार को छोड़े।

५ काया क्लेश तप के अनेक भेद है-एक ही स्थान पर स्थिर हो कर रहे, उकडु-गोदुह-मयुरासन पद्मासन आदि ८४ प्रकार का कोई भी आसन कर के बैठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधु की १२ पडिमा पालना, आतापना लेना वस्त्र रहित रहना, शीत-उष्णता (तड़का) सहन करना परिषह सहना। थूकना नहीं, कुल्ला करना नहीं, दान्त धोने नहीं, शरीर की सार संभाल करना नहीं। सुन्दर वस्त्र पहिरना नहीं, कठोर वचन गाली, मार प्रहार सहना, लोच करना नंगे पैर चलना आदि।

६ प्रति संलिनता तप के चार भेद—१ इन्द्रिय संलिनता २ कषाय संलिनता, ३ योग संलि० ४ विविध शयनासन संलि० (१) इन्द्रिय संलिनता के ५ भेद-(पांचों इन्द्रियों को अपने २ विषय में राग द्वेष करते रोकना) (२) कषाय संलि० के चार भेद-१ क्रोध घटा कर क्षमा करना। २ मान घटा कर विनीत बनना ३ माया को घटा कर सरलता धारण करना ४ लोभ को घटा कर संतोष धारण करना। (३) योग प्रति संलिनता के तीन भेद-मन, वचन, काया को बुरे कामों से रोक कर सन्मार्ग में प्रवर्तावना। (४) विविध शयासन सेवन प्रति संलि० के अनेक भेद हैं-उद्यान चैत्य, देवालय, दुकान, वखार, श्मशान, उपाश्रय आदि स्थानों पर रह कर पाट, पाटले, बाजोट, पाटिये, बिछाने, वस्त्र-पात्रादि फासुक स्थान अंगीकार करके विचरे।

आभ्यन्तर तप का अधिकार

१ प्रायश्चित के १० भेद—१ गुर्वादि सन्मुख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाप प्रकाशे २ गुरु के बताये हुवे दोष और पुनः ये दोष नहीं लगाने की प्रतिज्ञा करे ३ प्रायश्चित प्रतिक्रमण करे ४ दोषित वस्तु का त्याग करे ५ दश, वीश, तीश, चालीश लोगस्स का काउसग्ग करे ६ एकाशन, आयंबील यावत् छमासी तप करावे, (७) ६ छमास तक की दीक्षा घट वे ८ दीक्षा घटा कर सब से छोटा बनावे ९ समुदाय से बाहर रख कर मस्तक पर श्वेत कपड़ा (पाटा) बन्धवा कर साधुजी के साथ दिया हुआ तप करे १० साधु वेष उतरवा कर गृहस्थ वेष में छमाह तक साथ फेर कर पुनः दीक्षा देवे ।

२ विनय के भेद्–मति ज्ञानी, श्रुत ज्ञानी अवधि ज्ञानी, मनः पर्यव ज्ञानी, केवल ज्ञानी आदि की अशातना करे नहीं, इनका बहुमान करे, इनका गुण कीर्तन कर के लाभ लेना । यह ज्ञान विनय जानना ।

चारित्र विनय के ५ भेद्–पांच प्रकार के चारित्र वालों का विनय करना ।

योग विनय के ६ भेद्–मन, वचन, काया ये तीनों प्रशस्त और अप्रशस्त एवं ६ भेद है । अप्रशस्त काय विनय के ७ प्रकार—अयत्ना से चले, बोले, खड़ा रहे, बैठे, सोवे, इन्द्रिय स्वतन्त्र रक्खे, तथा अंगोपांग का दुरुपयोग करे ये सातों अयत्ना से करे तो अप्रशस्त विनय और यत्ना पूर्वक प्रवर्तावे सो प्रशस्त विनय ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहार विनय के ७ भेद–१ गुर्वादि के विचार अनुसार प्रवर्ते, २ गुरु आदि की आज्ञानुसार वर्ते ३ भात पानी आदि लाकर देवे ४ उपकार याद कर के कृतज्ञता पूर्वक सेवा करे ५ गुर्वादि की चिन्ता–दुख जान कर दूर करने का प्रयत्न करे ६ देश काल अनुसार उचित प्रवृत्ति करे ७ निंद्य (किसी को खराब लगे ऐसी) प्रवृत्ति न करे

३ वैयावच्च (सेवा) तप के १० भेद–१ आचार्य की २ उपाध्याय की ३ नव दीक्षित की ४ रोगी की ५ तपस्वी की ६ स्थविर की ७ स्वधर्मी की ८ कुल गुरू की ९ गणावच्छेक की १० चार तीर्थ की वैयावच्च (सेवा–भक्ति) करे।

४ स्वाध्याय तप के ५ भेद–१ सूत्रादि की वांचना लेवे व देवे २ प्रश्नादि पूछकर निर्णय करे ३ पढे हुवे ज्ञान को हमेशा फेरता रहे ४ सूत्र–अर्थ का चिंतवन करता रहे ५ परिषदा में चार प्रकार की कथा कहे।

५ ध्यान तप के ४ भेद–आर्त ध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान।

आर्त्त ध्यान के चार भेद–१ अमनोज्ञ (अप्रिय) वस्तु का वियोग चिंतवे २ मनोज्ञ (प्रिय) वस्तु का संयोग चिंतवे ३ रोगादि से घबरावे ४ विषय–भोगों में आसक्त बना रहे उसकी गृद्धि से दुख होवे। चार लक्षण–१ आक्रंद करे २ शोक करे ३ रुदन करे ४ विलाप करे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रौद्र ध्यान के चार भेद-हिंसा में, असत्य में, चोरी में, और भोगोपभोग में आनन्द माने। चार लक्षण १ जीव हिंसा का २ असत्य का ३ चोरी का थोड़ा बहुत दोष लगावे ४ मृत्यु-शय्या पर भी पाप का पश्चाताप नहीं करे।

धर्म ध्यान के भेद-चार पाये-१ जिनाज्ञा का विचार २ रागद्वेष उत्पत्ति के कारणों का विचार ३ कर्म विपाक का विचार ४ लोक संस्थान का विचार।

चार रुचि-१ तीर्थंकर की आज्ञा आराधन करने की रुचि २ शास्त्र श्रवण की रुचि ३ तत्त्वार्थ श्रद्धा की रुचि ४ सूत्र सिद्धान्त पढ़ने की रुचि।

चार अवलम्बन-१ सूत्र सिद्धान्त की वाचना लेना व देना २ प्रश्नादि पूछना ३ पढ़े हुवे ज्ञान को फेरना ४ धर्म कथा करना चार अनुप्रेक्षा-१ पुद्गल को अनित्य नाशवन्त जाने २ संसार में कोई किसी को शरण देने वाला नहीं ऐसा चिंतवे ४ मैं अकेला हूं ऐसा सोचे ४ संसार स्वरुप विचारे एवं धर्म ध्यान के १६ भेद हुवे।

शुक्ल ध्यान के १६ भेद-१ पदार्थों में द्रव्य गुण पर्याय का विविध प्रकार से विचार करे २ एक पुद्गल का उन्मादादि विचार बदले नहीं ३ सूक्ष्म ईर्यावहि क्रिया लागे परन्तु अकषायी होने से बन्ध न पड़े ४ सर्व क्रिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का छेद करके अलेशी बने । चार लक्षण-१ जीव को शिव रुप-शरीर से भिन्न समझे २ सर्व संग को त्यागे ३ चपलता पूर्वक उपसर्ग सहे ४ मोह रहित वर्ते। चार अव-लंबन-१ पूर्ण क्षमा २ पूर्ण निर्लोभता ३ पूर्ण सरलता ४पूर्ण निरभिमानता चार अनुप्रेक्षा-१ प्राणातिपात आदि पाप के कारण सोचे २ पुद्गल की अशुभता चिंतवे ३ अनन्त पुद्गल परावर्तन का चिंतवन करे ४ द्रव्य के बदलने वाले परिणाम चिंतवे।

६ कायोत्सर्ग तप के दो भेद-१ द्रव्य कायोत्सर्ग २ भाव कायोत्सर्ग। द्रव्य कायोत्सर्ग के चार भेद-१ शरीर के ममत्व का त्याग करे २-सम्प्रदाय के ममत्व का त्यागकरे ३ वस्त्र पात्रादि उपकरण का ममत्व त्यागे ४ आ-हार पानी आदि पदार्थों का ममत्व त्यागे। भाव कायो-त्सर्गके ३ भेद-१ कषाय कायोत्सर्ग (४ कषाय का त्याग करे) २ संसार कायोत्सर्ग (४ गति में जाने के कारण बन्ध करना) ३ कर्म कायोत्सर्ग (८ कर्म बन्ध के कारण जान कर त्याग करे)

इस प्रकार कुल बारह प्रकार के तप के सर्व ३५४ भेद उववाई सूत्र से जानना।

॥ इति बारह तप का विस्तार ॥

इति श्री थोकड़ा संग्रह समाप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीर भगवान् की पवित्र वाणी का
अपूर्व संग्रह

निर्ग्रंथ-प्रवचन

संग्रह कर्ता-प्रखर पंडित मुनिश्री चौथमलजी महाराज

यह ग्रंथ भगवान महावीर के उपदेश रूप समुद्र से निकाले हुए अपूर्व धर्म रत्नों का खजाना है। ग्रंथकारने अपने जीवन के अनुभव और परिश्रम का पूर्ण उपयोग करके इस संग्रह को तैयार किया है।

इसमें गृहस्थ धर्म, मुनि धर्म, आत्म शुद्धि, ब्रह्मचर्य, लेश्या, षट् द्रव्य, नर्क स्वर्ग आदि अनेक विषयों पर जैन सूत्रों में से खोज खोज कर गाथाएं संग्रह की गई हैं। पहिले मूल गाथा-और उसका अर्थ और फिर उसका सरल भावार्थ देकर प्रत्येक विषयको स्पष्ट रूपमें समझाया गया है। अन्त में जिन सूत्रों से गाथाएं संग्रह की गई हैं उनका नाम और अध्याय नं० देकर सोने में सुगन्ध ही कर दिया है। इस एक ग्रंथ द्वारा ही अनेक सूत्रों का सार सहज में प्राप्त होजायगा।

३५० पृष्ठ और सुनहरा जिल्दमें सुसज्जित इस ग्रंथ का मूल्य केवल ॥) मात्र। शीघ्र मंगाइए अन्यथा दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करना पड़ेगी।

पता-श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छप गया ! छप गया !! छप गया !!!

स्था० जैन साहित्य का चमकता हुआ सितारा,

भगवान् महावीर का आदर्श जीवन

लेखक–प्रखर पंडित मुनि श्री चौथमलजी महाराज

सच्ची ऐतिहासिक घटनाओं का भण्डार वैराग्य रस का जीता जागता आदर्श, राष्ट्र--नीति व धर्म-नीति का खजाना सुमधुर--ललित भाषा का प्राण, सजीव भाषा में विरचित भगवान् महावीर का आद्योपान्त जीवन चरित्र छप कर तैयार है। जिसकी जगत् वल्लभ प्रसिद्धवक्ता पं० मुनि श्री चौथमलजी महाराज सा० ने साधुवृत्ति की अनेक कठिनाईयों का सामना करके अपने अमूल्य समय में रचना की है।

संसार की कैसी विकट परिस्थिति में भगवान् का अवतार हुआ? भगवान् ने किस धीरवीरता के साथ उन विकट परिस्थितियों का समूल नाश कर अमर शांति का एक छत्र शासन स्थापित किया, लोक कल्याण के लिये कैसे कैसे असह्य परिषहों को सहन किया? आदि रहस्यपूर्ण घटनाओं का सच्चा हाल पुस्तक के पढ़ने से ही विदित होगा। स्थानाभाव से हम यहां उसका विस्तृत वर्णन नहीं कर सकते। अथाह संसार सागर को पार करने के लिए यह जीवनी प्रगाढ़ नौका का काम देगी। इस की एक एक प्रति तो प्रत्येक सद्गृहस्थ को अवश्य ही अपने पास रखना चाहिए। बड़ी साइज के लगभग ६५० पृष्ठ सुनहरी जिल्द तिसपर भी मूल्य केवल २॥) मात्र। शीघ्र मंगाकर पढ़िये। अन्यथा द्वितीय संस्करण की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

पता–श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवश्य पढ़िये

ज्ञान वृद्धि के लिए पुस्तकें मंगवा कर वितरण कीजिये.

भगवान् महावीर सजिल्द २॥)
(बड़ी साइज़ के ६५० पृष्ठ)
आदर्श मुनि सजिल्द १।)
" गुजराती १।)
जैन सुबोध गुटका ॥।)
समकितसार ॥।)
निर्ग्रंथ प्रवचन सजिल्द ॥)
उद्घोषणा ॥)
महावीर स्तोत्र सार्थ ।-)
सुखसाधन ।-)
उदयपुर में अपूर्व उपकार ।)
इक्षुकाराध्ययन सचित्र ।)
मुखवस्त्रिका निर्णय सचित्र ।)
महाबल मलिया चरित्र ।=)
स्था. की प्राचीनता सिद्धि ।)
व्याख्यान मौक्तिकमाला ।)
भग. महावीर का दिव्यसंदेश ≡)॥
जैन स्तवन मनोहर माला ≡)
" द्वितीयभाग =)
आदर्श तपस्वी ≡)
पार्श्वनाथ चरित्र ≡)
मुखवस्त्रिका की प्रा० सिद्धि ≡)
सीतावनवास सार्थ ≡)

सत्योपदेश भजनमाला =॥)
" तृतीय भाग. -॥)
जैनस्तवन वाटिका =॥)
सद्बोध प्रदीप =)
जैन सुखचैन बहार भा० १ =)
जैन गजल बहार =)
तमाखू निषेध =)
मनोरंजन गुच्छा =)
सुश्रावक अरणकजी =)
अष्टादश पापनिषेध =)
भ्रम निकन्दन)॥।
जम्बू चरित्र -)॥
धर्मबुद्धि चरित्र -)॥
सुश्रावक कामदेवजी -)॥
काव्य विलास -)॥
चम्पक चरित्र -)।
सामायिक सूत्र -)
भक्तामरादि स्तोत्र -)
जैन मनमोहन माला -)
लघु गौतम पृच्छा -)
सविधि प्रतिक्रमण -)
सीता बनवास मूल)॥।
प्रदेशी चरित्र)॥।

पता :- श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org